नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—३५

सूरसागर

[दूसरा खंड]

...वासी जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के निश्चित सिद्धांतों के अनुस...
सूर-समिति की तत्त्वावधानता में संपादित

और

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

...ग] संवत् १९९३ [मूल्य

सूर-समिति के सदस्य

श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय — श्रीरामचंद्र शुक्ल

श्रीकेशवप्रसाद मिश्र — श्रीसभा के साहित्य-मंत्री

श्रीनंददुलारे वाजपेयी

सूचना

सूरसागर का पहला खंड मूल पुस्तक के प्रकाशित हो जाने पर प्रकाशित होगा। उसमें भूमिका, प्रस्तावना और प्रतीकानुक्रमणिका आदि रहेंगी।

निवेदन

हर' का संपादन समाप्त करके स्वर्गीय बाबू जगन्नाथदास जी रत्नाकर ने 'सूरसागर' के संपादन में
हुत परिश्रम और व्यय करके उन्होंने अनेक प्रतियों का संग्रह किया था और अनुक्रम से उनके
थी। इसके अनंतर उन्होंने उसके संपादन में हाथ लगाया था और एक प्रकार से ¾ अंश के
रूप भी लिया था। इस पाठ-शुद्धि के अंतर्गत छंदों का संशोधन, चरणों का क्रम-निरूपण
श्चित पद्धति का अनुसरण आदि संपादन-संबंधी अधिकांश आवश्यक अंग पूरे हो गए थे।
श का संकलन करने के अतिरिक्त अनेक पाठों में से सबसे सुंदर और उपयुक्त पाठ चुनकर रखना
अंश को अंतिम रूप देना बाकी रह गया था कि कराल काल ने उन्हें कवलित कर लिया।
 राधेकृष्णदास ने यह सब सामग्री सभा को अर्पित कर दी और यह इच्छा प्रकट की कि
सपन्न करे। यद्यपि रत्नाकर जी ने स्वयं भी यह निश्चय किया था कि यह ग्रंथ 'काशी-नागरी-
प्रकाशित हो, और छपाई आदि के संबंध में भी उन्होंने कुछ बातें निश्चित की थीं, पर वे उनके
प में परिणत न हो सकीं। उनका स्वर्गवास होने तथा समस्त सामग्री के प्राप्त होने पर सभा
के रत्नाकर जी के निश्चित सिद्धांतों की रक्षा करते हुए यह ग्रंथ संपादित होकर प्रकाशित हो।
 अयोध्यासिंह उपाध्याय, पंडित रामचंद्र शुक्ल, पंडित केशवप्रसाद मिश्र, प्रकाशन-मंत्री तथा
लारे वाजपेयी की एक उपसमिति बनाई। इस कार्य को पंडित नंददुलारे वाजपेयी उक्त समिति
था पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय के निरीक्षण में और उनके परामर्श के अनुसार, कर रहे हैं।
 जिन जिन ग्रंथों से कार्य लिया गया है उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:—

र	विवरण	प्रति-संख्या सकेताक्षर	विवरण
	यह वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई की संवत् १९६४ की छपी हुई प्रति है।		यह संवत् १८६६ ज्येष्ठ शुक्ल ५ बृहस्पतिवार को मोदी गंगाराम जी के पठनार्थ लिखी गई। संपादन-कार्य में इस प्रति से अधिक सहायता नहीं मिली। केवल उसके अधिक पदों का संग्रह मात्र ही किया जा सका है।
	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति संवत् १८८० की लिखी नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है।	(२) (शा)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति जिला शाहजहाँपुर, ग्राम पवायाँ के पं० लालमणि जी मिश्र, वैद्य की है। इस प्रति से संपादन में अधिक सहायता नहीं मिली। केवल अधिक पद ही लिखे जा सके। इसके पश्चात् पुस्तक लौटा देनी पड़ी।
	यह भी सभा की प्रति है। यह संवत् १९१६ की लिखी हुई है।		
	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति लखनऊ-निवासी स्व० श्रीयुत लाला श्यामसुंदरदास जी अग्रवाल वैश्य, मशकगंज के पास है।		

संकेताक्षर	विवरण
(का)	यह पत्राकार हस्तलिखित प्रति 'कांकरौली' राज्य पुस्तकालय की है। कुँवर यशोदासिंह के द्वारा प्राप्त हुई है। यह प्रति संवत् १८८६ में लिखी गई।
(वृ)	यह वृंदावनवाली प्रति संवत् १८१३ में लिपिबद्ध हुई।
(ना) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है। यह संवत् १६०६ में राजा सुजानसिंह के पढ़ने के लिये लिखी गई थी।
(के)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त बाबू केशवदास शाह, रईस, काशी की है। यह सं० १७८६ में लिखी गई। इससे अधिक प्राचीन प्रति अब तक देखने में नहीं आई। यह प्रति कुछ समय के लिये ही प्राप्त हुई थी। यथोचित उपयोग करके यह शीघ्र ही लौटा दी गई।
(कृ)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त राय कृष्णदास जी, रईस, बनारस की है। यह संवत् १६३१ में श्री गयाप्रसाद जी वैश्य की पत्नी के लिये पं० नाथूराम जी गौड़ द्वारा लिखी गई।
(गो)	यह पत्राकार प्रति काशी के रईस बाबू गोकुलदास जी की है। इसके अक्षर बहुत सुंदर और पक्के हैं। कहीं भी वे अस्पष्ट नहीं हैं।
(ज्ञा)	यह पुस्तकाकार प्रति काशी के ज्ञानीमल ज्ञानचंद जी की है। यह संवत् १६०६ में लिखी गई थी।
(ब) ३	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है।

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(१४)	(क)	यह प्रति कलकत्ता लखनऊ दोनों स्थानों से सन् १८८६ की छपी हुई है।
(१५)	(जौ)	यह जौनपुर की पत्राकार हस्तलिखित प्रति पं० गणेशबिहारी जी (मिश्र-बंधुओं में बड़े) द्वारा प्राप्त हुई है। यह संवत् १८५४ में लिखी गई थी।
(१६)	(कां)	यह कांकरौली राज्य की पुस्तक पुराने देशी कागज पर लिखी हुई है। यह गोकुल के किन्हीं रणछोड़लाल जी के लिये लिखी गई थी। इसके लेखक हैं गोकुलदास ब्राह्मण। इन्होंने इसे श्रावण शुक्ला पवित्रा ११ संवत् १६१२ को लिखा था।
(१७)	(पू)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति कलकत्ता के श्रीयुक्त बा० पूर्णचंद जी नाहर की है। इसके पाठ अच्छे हैं। अनेक बार इससे बहुमूल्य सहायता प्राप्त हुई है। इसके अक्षर कई प्रकार के लिखे गए हैं; पर सब सुपाठ्य हैं।
(१८)	(रा)	यह हस्तलिखित पुस्तक दरियाबाद के प्रसिद्ध रईस श्रीयुक्त राय राजेश्वरबली जी की है। यह फारसी लिपि में लिखी गई है। इसकी लिखावट सुंदर है। इसमें नीचे-ऊपर नुकतों का प्रायः अभाव है। इससे इसके पढ़ने में कठिनाई पड़ती है; परंतु इसके कारण पाठ-निर्णय में बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। ऐसे समय में जब कि हिंदी की सभी प्रतियों के पाठों से निराश होना पड़ा है, इसने शुद्ध पाठ बताकर पुनः आशा प्रदान की है। यह संवत् १८८२ में लिपिबद्ध हुई।

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(१९)	(श्या)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति आरंभ में राय बहादुर श्यामसुंदरदास जी के द्वारा प्राप्त हुई थी, इसलिये यह उन्हीं के नाम से इस संस्करण में व्यक्त की गई है। अब यह सभा की संपत्ति है।
(२०)		"राग-कल्पद्रुम" नामक इस ग्रंथ में, जो ३ बड़े भागों में समाप्त हुआ है, महाकवि सूरदास के बहुत से पद प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी हैं जो अन्य ग्रंथों में नहीं मिलते। उनमें से जो प्रामाणिक समझे गए वे इस संस्करण में ग्रहण किए गए हैं। इस विशालकाय ग्रंथ के संग्रहकार प्रसिद्ध संगीतज्ञ 'रागसागर' श्री कृष्णानंद व्यास महोदय हैं। इसका प्रकाशन बंगीय साहित्य-परिषद् की ओर से नागरी और बँगला दोनों लिपियों में किया गया है।
	⌣	यह चिह्न जिन दीर्घ अक्षरों के नीचे हो उन्हें ह्रस्व की भाँति पढ़ना चाहिए।

युगल मूर्ति

प्रथम स्कंध

विनय

मंगलाचरण ✻ राग बिलावल

चरन-कमल बंदौं हरि-राइ[१]।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे[२] कौं सब कछु दरसाइ।
बहिरौ सुनै, गूँग[३] पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार[४] बंदौं तिहिं पाइ ॥१॥

सगुणोपासना ✻ राग कान्हरौ

अबिगत-गति कछु कहत न आवै।
ज्यौं गूँगैं मीठे फल कौ रस अंतरगत हीं भावै।
परम स्वाद सबहीं सु[१] निरंतर अमित तोष उपजावै।
मन-बानी कौं[२] अगम-अगोचर, सो जानै जो पावै।
रूप-रेख-गुन[३]-जाति-जुगति-बिनु निरालंब[४] कित धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातैं सूर सगुन[५]-पद गावै ॥२॥

✻ (क) धनाश्री, कल्याण। (१) राई; इसी भाँति अन्य चरणों में दरसाई, धराई, पाई —१, १४। राय: इसी भाँति अन्य चरणों में दरसाय, धराय, पाय— ३, १६। (२) अँधरे—१४। आँधे—१६। (३) मूक—११। (४) बारंबार नमो पद जाई—१४।

✻ (ख) अल्हैया। (१) जु—१, १६। सौं—२, ३, ८, १४। (२) मैं—३। (३) जम—२, ३। (४) निरालंब मन चकृत धावै—११। (५) सूर सगुन लीला-पद गावै—१, २, ८। सूर सगुन लीला बिधि गावै १३

वासुदेव की बड़ी बड़ाई ।
जगत-पिता, जगदीस, जगत-गुरु, निज[1] भक्तनि की सहत ढिठाई ।
भृगु को चरन राखि[2] उर ऊपर[3], बोले बचन सकल-सुखदाई ।
सिव-बिरंचि मारन कौं धाए, यह[4] गति काहू देव न पाई ।
बिनु बदलैं उपकार करत हैं, स्वारथ बिना करत मित्राई ।
रावन अरि कौ अनुज बिभीषन, ताकौं मिले भरत की नाई[8] ।
बकी कपट करि मारन आई, सो हरि जू बैकुंठ पठाई ।
बिनु दीन्हैं ही देत सूर-प्रभु, ऐसे[9] हैं जदुनाथ गुसाईं ॥२

* राग

करनी करुना-सिंधु की, मुख[8] कहत न आवै ।
कपट हेत परसैं बकी, जननी-गति पावै ।
वेद-उपनिषद जासु[9] कौं, निरगुनहिं बतावै ।
सोइ सगुन ह्वै नंद की दाँवरी बँधावै ।
उग्रसेन की आपदा सुनि सुनि बिलखावै ।
कंस मारि, राजा करै[9], आपहु[10] सिर नावै ।
जरासंध बंदी कटै नृप-कुल जस गावै ।
असमय[11]-नन गौतम-तिया की साप नसावै ।

---

* (ना) बिलावल । [illegible]

यह पद (क) में नहीं है । [illegible] अपुन भक्त कौ—१ । [illegible] ३, ४ । (३) आनि [illegible] । (३) अंतर—

२, ३, ४ । (४) सो—१, १६, १६ । (५) कहि—३, ८ । (६) [illegible] पै यदुपति ठकुराई—२ ।

* (ना) बरहैया बिलावल । (क) बिलावल ।

(७) कहु—१, ३, १६, १६ ।

(८) जस कहै—१, २, [illegible] कियौ—१, २, ३, ४, [illegible] १६, १८ । (१०) आपु [illegible] ३, १६ । (११) असमय पिता ताको शाप नसावै-

लच्छा-गृह तैं काढ़ि कै पांडव गृह ल्यावै ।
जैसैं गैया बच्छ कौं सुमिरन उठि धावै ।
बसन-पास तैं व्रजपतिहिं छन माहिं छुड़ावै ।
दुखित गयंदहिं जानि कै आपुन उठि धावै ।
कलि मैं नामा प्रगट, ताकी छानि छवावै ।
सूरदास की बीनती कोउ लै पहुँचावै ॥४॥

राग सा

ऐसी को करी अरु भक्त काजैं ।
जैसी जगदीस जिय धरी लाजैं ॥

हिरनकस्यप बढ़्यौ उदय अरु अस्त लौं, हठी प्रहलाद चित चरन लायौ
भीर के परे तैं धीर सबहिनि तजी, खंभ तैं प्रगट ह्वै जन छुड़ायौ
ग्रस्यौ गज ग्राह लै चल्यौ पाताल कौं, काल कैं त्रास मुख नाम आयौ
छाँड़ि सुखधाम अरु गरुड़ तजि साँवरौ पवन के गवन तैं अधिक धायौ
कोपि कौरव गहे केस जब सभा मैं, पांडु की बधू जस नैंकु गायौ
लाज के साज मैं हुती ज्यौं द्रौपदी, बढ़्यौ तन-चीर नहिं अंत पायौ
रोर कै जोर तैं सोर घरनी कियौ, चल्यौ द्विज द्वारिका-द्वार ठाढ़ौ
जोरि अंजलि मिले, छोरि तंदुल लए, इंद्र के विभव तैं अधिक बाढ़ौ

---

(१) उधरै सोक-समुद्र तैं । (२) प्रगटियौ—१, २, १८, १६ । प्रगट भयौ—७, ६ । (३) को—६, ८ ।
† यह पद (शा, क) में नहीं है।
(४) ऐसी कौन करी है (करिहै) और भक्त काजै—१, २, १२, १८ । ऐसी कवन करिहै अरु भक्त काजै—३ । (५) जैसा धरी जगदीस जिय माहिं लाजै २, ३, ६, १६, १८ । जैसे धरै (धरैं) जगदीस जिय माहिं लाजै—१, १६ । (६) अ— १, ३, १६, १८, १६ । (७) —६, ८, १८ । (८) वेग— (९) महादुख दीन ह्वै तबै घ कह्यौ—२ । (१०) जाइ—१, २, १

पच्छ¹ कौं ग्रास-बलि-भाग न्यारनि लियौ, गह्यौ गिरि पानि, जस जगत छायौ ।
रहे जिय जानि कै अंध भव त्रास तैं, सूर कामी-कुटिल सरन आयौ ॥५॥

राग रामकली

†कहा न कियौ जन-हित जदुराई ।
प्रथम कह्यौ जो बचन दयारत, तिहिं बस गोकुल गाइ चराई ।
भक्त-बछल वपु धरि नरकेहरि, दनुज दह्यौ, उर दरि, सुरसाँई ।
बलि बल देखि, अदिति-सुत-कारन, त्रिपद व्याज² तिहुँ पुर फिरि आई‡ ।
ग्राह धर बनी क्रीड़ा गज-मोचन और अनंत कथा स्रुति गाई ।
सूर दीन प्रभु-प्रगट-बिरद सुनि अजहुँ दयाल पतत³ सिर नाई ॥६॥

*राग रामकली

जहाँ जहाँ सुमिरे हरि जिहिं बिधि, तहँ तैसैं उठि धाए (हो) ।
दीन-बंधु हरि, भक्त-कृपानिधि, बेद-पुराननि गाए (हो) ।
सुत कुबेर के मत्त-मगन भए, बिषै-रस⁴ नैननि छाए (हो) ।
मुनि सराप तैं भए जमलतरु, तिन्ह हित आपु बँधाए (हो) ।
पट⁵ कुचैल, दुरबल द्विज देखत, ताके तंदुल खाए (हो) ।
संपति दै वाकी पतिनी कौं, मन-अभिलाष पुराए (हो) ।

---

(१) पक्ष को ग्रास बलि भाग [illegible] किया —२, ३, ८ ।

† यह पद केवल (वे, सू, का) में है ।

(२) त्रिपदपल्लव —१ । त्रिपद [illegible]—१६ ।

‡ इस पंक्ति का पाठ स्पष्ट नहीं हो रहा था। प्राप्त प्रतियों के 'त्रिपदपल्लव' अथवा 'त्रिपद-पल्लव' पाठ निरर्थक या अशुद्ध होने के कारण ग्रहण नहीं किए गए। 'त्रिपदपल्लव' के स्थान पर 'त्रिपदपलव' रखने से छंद की संगति तो हो जाती थी किन्तु अर्थ अधिक क्लिष्ट और निर्बल हो पड़ता था। अतः श्रीमद्भागवत से सहायता लेकर इस संस्करण में 'त्रिपद्व्याज' पाठ रखा गया है। (महीं सर्वां हृतां दृष्ट्वा त्रिपद्व्याजयाच्ञया)—भागवत (८, २१, ६)। यों भी महाकवि पर भागवत का ऋण सब को मान्य है।

(३) पतित—१, १६ ।

* (ना, का) आसावरी (क) बिलावल ।

(४) बिषै-स्वाद मन छाए (ह[illegible]—२। सुत कुबेर के मगन [illegible] बिषयारस नैननि छाए (हो)—

(५) वस्त्र कुचैल दीन—१ । व[illegible] कुचिल दुर्बल—२, ६, ८, १६, १[illegible]

जब गज गह्यौ ग्राह जल-भीतर, तब हरि कौं उर ध्याए (हो)
गरुड़ छाँड़ि, आतुर ह्वै धाए, सो ततकाल छुड़ाए (हो)
कलानिधान, सकल-गुन-सागर, गुरु धौं कहा पढ़ाए (हो)
तिहिँ उपकार मृतक सुत जाँचे, सो जमपुर तैँ ल्याए (हो)
तुम मोसे अपराधी माधव, केतिक स्वर्ग पठाए (हो)
सूरदास-प्रभु भक्त-बछल तुम, पावन-नाम कहाए (हो) ॥७॥

* राग

प्रभु[२] कौ देखौ एक सुभाइ।
अति-गंभीर-उदार-उदधि हरि, जान-सिरोमनि राइ।
तिनका[३] सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु-समान।
सकुचि गनत अपराध-समुद्रहिँ बूँद-तुल्य भगवान।
बदन-प्रसन्न-कमल सनमुख ह्वै देखत हौं हरि जैसैँ।
बिमुख भए अकृपा न निमिषहूँ, फिरि चितयौं तौ तैसैँ।
भक्त-बिरह-कातर करुनामय, डोलत पाछैँ लागे।
सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिँ पीठि सो अभागे ॥८॥

†हरि सौं ठाकुर और न जन कौं।
हिँ जिहिँ बिधि सेवक सुख पावै, तिहिँ बिधि राखत मन[४]

युक्ति—१, ६, ८। २, १४। देखौं देखौं एक सुभाइ— * (ना) कान्हरो
गा) नट। (क) सारंग। ६, ८, १६, १८, १९। ③ तिनका † यह पद (क) में
न्हरा। इतनी सेवा कौ फल—२। राई ④ तन—२, ३,
सो हरि कौ एक सुभाव— जितनी सेवा कौ फल १५, १६। —१९।

भूखैं[1] भए भोजन जु उदर कौं, तृषा तोय, पट तन कौं।
लग्यौ[2] फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सँग, औचट गुनि गृह बन कौं।
परम उदार, चतुर-चिंतामनि, कोटि कुबेर निधन कौं।
राखत है जन की परतिज्ञा, हाथ पसारत कन कौं।
संकट परैं तुरत उठि धावत, परम सुभट निज पन कौं।
कोटिक करैं एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौं ॥९॥

* राग धन

हरि सौं मीत न देख्यौ[3] कोई।
बिपति[4]-काल सुमिरत, तिहिं औसर आनि तिरीछौ[5] होई।
ग्राह गहे गजपति मुकरायौ, हाथ चक्र लै धायौ।
तजि बैकुंठ, गरुड़ तजि, श्री तजि[6], निकट दास कैं आयौ।
दुर्वासा कौ स्राप निवार्‌यौ, अंबरीष-पति राखी।
ब्रह्मलोक-परजंत फिर्‌यौ तहँ देव-मुनी-जन साखी।
लाखागृह तैं जरत पांडु-सुत बुधि[7]-बल नाथ, उबारे।
सूरदास-प्रभु अपने जन के नाना त्रास निवारे ॥१०॥

* राग धनाश्री

†राम[8] भक्तबत्सल निज बानौं।
जाति, गोत, कुल, नाम, गनत नहिं, रंक होइ कै[9] रानौं।

---

(१) भूखैं भए—१, २, ३, ४, ५, १४, १५। (२) लग्यौ फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सँग उचित गमन गृह बन कौं—१, १६। लग्यौ फिरत सुरभी के सुत ज्यौं सँग उचित गृह [illegible] कौं—२। लग्यौ फिरत सुरभी के सुत ज्यौं सँग उचट गृह बन कौं—३।

* (ना) सोरठ।

(३) देखौं—१, २। (४) अंत-काल—१, २, ७, ८, १६। (५) प्रतीच्छो—१, २, १५। (६) पति—२, ३। (७) आदीनाथ—६, ८।

* (ना) कान्हरौ।

† यह पद (क, ख) नहीं है।

(८) कृष्न—१६। (९) [illegible] २, १४।

सिव-ब्रह्मादिक कौन जाति प्रभु, हौं अजान नहिँ जानौं ।
हमता[1] जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं, सो हमता क्यौं मानौं ?
प्रगट खंभ तैं दए दिखाई, जद्यपि कुल कौ दानौ ।
रघुकुल राघव कृस्न सदा ही गोकुल कीन्हौं थानौ ।
बरनि न जाइ भक्त[2] की महिमा, बारंबार बखानौं ।
ध्रुव रजपूत, बिदुर दासी-सुत, कौन[3] कौन अरगानौ ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, भक्तनि-हाथ बिकानौ ।
राजसूय मैं चरन पखारे स्याम लिए[4] कर पानौ ।
रसना एक, अनेक स्याम-गुन, कहँ लगि करौं बखानौ ।
सूरदास-प्रभु की महिमा अति, साखी बेद-पुरानौ ॥११॥

* राग [illegible]

काहू[5] के कुल तन न बिचारत ।
अबिगत की गति कहि[6] न परति है, व्याध-अजामिल तारत ।
कौन जाँति अरु पाँति बिदुर की, ताही कैं पग धारत ।
भोजन करत माँगि घर उनकैं, राज-मान-मद टारत ।
ऐसे[7] जनम-करम के ओछे, ओछनि हूँ ब्यौहारत ।
यहै सुभाव सूर के प्रभु कौ, भक्त-बछल-प्रन पारत ॥१२॥

---

[1] [illegible]मता—२। मिथ्या—६, ८। [2] [illegible]—१, २, १९। (३) कौरव [illegible]नौ—२। कौन कौन गुन [illegible]। (४) सबन गुर मानौ—

* (ना) कान्हरौ। (क) धनाश्री।

(५) काहू कौ कुल नाहिँ बिचारत—९, १४, १६। (६) कहौं कहां लौं—६, ८। (७) ऐसे जन्म करम के ओ[illegible] अनुसारत—१। ओछि[illegible] गुह कुल ओछे ओछे ह[illegible] —२।

* राग सारंग

गोबिँद प्रीति सबनि की मानत।
जिहिँ जिहिँ भाइ करत जन सेवा, अंतर[1] की गति जानत।
सबरी[2] कटुक बेर तजि, मीठे चाखि, गोद भरि ल्याई।
जूठनि की कछु संक न मानी, भच्छ किए सत-भाई।
संतत[3] भक्त-मीत हितकारी स्याम बिदुर कैं आए।
प्रेम[4]-बिकल, अति आनँद उर धरि, कदली-छिकुला खाए।
कौरव-काज चले रिषि सापन, साक-पत्र सु अघाए।
सूरदास करुना-निधान प्रभु, जुग जुग भक्त बढ़ाए॥१३॥

* राग रामकली

† सरन गए को[5] को न उबारयौ।
जब जब भीर परी संतनि[6] कौं, चक्र सुदरसन तहाँ सँभारयौ।
भयौ[7] प्रसाद जु अंबरीष कौं, दुरबासा कौ क्रोध निवारयौ।
ग्वालनि हेत धरयौ गोबर्धन, प्रगट इंद्र कौ गर्ब प्रहारयौ।
‡ कृपा करी प्रहलाद भक्त पर, खंभ फारि हिरनाकुस मारयौ।
‡ नरहरि रूप धरयौ करुनाकर, छिनक माहिँ उर नखनि बिदारयौ।

---

* (ना) बिहागरो।
(१) अंतरगत की—१, १४, ८, १९। अंतरगति की जानत —८। (२) बेर चाखि कटु के मीठे भीलिनि दीन्हे जाई—१४, १६, १८। (३) संतनि सुखित—२। (४) अति रस (चाखौ) प्रीति निरंतर साग है खाए—१, १६, १६। अंतर प्रीति परस्पर साग समान है—३। प्रेम-बिकल बिदुर अर्पत प्रभु कदली-छिलका खाए—६, ८, १४, १८।

* (ना) आसावरी।
† यह पद (क) में नहीं है।
(५) काकौं—२। (६) भक्तनि—२। (७) महा प्रसाद भयौ—३, ६।
‡ ये दो चरण (ना, कां, रा) में नहीं हैं तथा (वे, स, का, श्या) में इनका पाठ यह है—"कृपा करी प्रहलाद भक्त कौं, खंभ फारि उर नखहिँ बिदारयौ। नरहरि रूप धरयौ करुनाकर छिनक माहिँ हिरनाकुस मारयौ॥" (ना/२) में यह पाठ है—"कृपा करी प्रहलाद भक्त पर हरनाकुस कौ उदर बिदारयौ। नरहरि रूप धरयौ करुनाकर छिनक माहिँ हरनाकुस मारयौ॥" इन्हीं के आधार पर उपर्युक्त पाठ निर्धारित किया गया है।

ग्राह ग्रसत गज कौं जल बूड़त, नाम लेत वाकौ दुख टार्‌यौ ।
सूर स्याम बिनु और करै को, रंग-भूमि मैं कंस पछार्‌यौ ॥१४॥

* राग

* जन की और कौन पति राखै ?
जाति-पाँति-कुल-कानि न मानत, बेद-पुराननि साखै ।
जिहिं कुल राज द्वारिका कीन्हौ, सो[1] कुल साप तैं नास्यौ ।
सोइ मुनि अंबरीष कैं कारन तीनि भुवन भ्रमि त्रास्यौ ।
जाकौ चरनोदक सिव सिर धरि, तीनि लोक हितकारी ।
सोइ[2] प्रभु पांडु-सुतनि के कारन[3] निज कर चरन पखारी ।
बारह बरस बसुदेव-देवकिहिं कंस महा दुख[4] दीन्हौ ।
तिन प्रभु प्रहलादहिं सुमिरत हीं नरहरि-रूप जु कीन्हौ ।
जग जानत जदुनाथ, जिते[5] जन निज-भुज-स्रम-सुख पायौ ।
ऐसौ को जु[6] न सरन गहे[7] तैं कहत सूर उतरायौ[8] ॥१५॥

राग

‡ जब जब दीननि कठिन परी ।
जानत हौं, करुनामय जन कौं तब तब सुगम करी ।
सभा मँझार दुष्ट दुस्सासन द्रौपदि आनि धरी ।
सुमिरत[9] पट कौ कोट बढ़्यौ तब, दुख-सागर उबरी ।

ना) बिहागरो ।
इ पद (क) में नहीं है ।
सो कुल सापत—१ । (२)
, २, ३, ८ । (३) स्वारथ
३) डर—१, २, १६ । (४)

जननि जिन—८ । (६) जो—१,
२, ३ । न तु—५ । (७) गए—
३ । (८) इतरायौ—१ । उब-
रायौ—२, १६ । उतरायौ—८ ।
‡ यह पद केवल (वे) में

है । अतः इसके परिश
अन्य प्रतियों की सहाय
मिली ।
(९) हरि सुमिरत पट
तब दुख-सागर उबरी ।

ब्रह्म-बान तैं गर्भ उबार्‌यौ, टेरत जरी जरी।
बिपति-काल पांडव-बधु बन मैं राखी स्याम ढरी।
करि भोजन अवसेस जज्ञ कौ[1] त्रिभुवन-भूख हरी।
पाइ[2] पियादे धाइ ग्राह सौं लीन्हौ राखि करी।
नव नव रच्छा करी भगत पर जब जब बिपति परी।
महा मोह मैं पर्‌यौ सूर प्रभु, काहैं सुधि बिसरी? ॥१६॥

* राग

और न काहुहिं जन की पीर।
जब जब दीन दुखी भयौ, तब तब कृपा करी बलबीर
गज बल-हीन बिलोकि दसौं दिसि, तब हरि-सरन पर्‌यौ
करुनासिंधु, दयाल, दरस दै, सब संताप हर्‌यौ
गोपी-ग्वाल-गाय-गोसुत-हित सात दिवस गिरि लीन्हौ
मागध हत्यौ, मुक्त नृप कीन्हे, मृतक बिप्र-सुत दीन्हौ
श्री नृसिंह बपु धर्‌यौ असुर हति, भक्त-बचन प्रतिपार्‌यौ
सुमिरत नाम, द्रुपद-तनया कौ पट अनेक बिस्तार्‌यौ
मुनि-मद मेटि दास-ब्रत राख्यौ, अंबरीष-हितकारी
लाखा-गृह तैं, सत्रु-सैन तैं, पांडव-बिपति निवारी
बरुन-पास ब्रजपति मुकरायौ, दावानल-दुख टार्‌यौ
गृह आने बसुदेव-देवकी, कंस महा खल[3] मार्‌यौ

(१) प्रभु—१, १७। (२) पाय राखि धरी—१। (क) सोरठ।
अपना पन राख्यौ गज सौं
* (ना) नट नारायनी। (३) नट ३

सो श्रीपति जुग[1] जुग सुमिरन-बस, बेद[2] बिमल जस गावै ।
असरन-सरन सूर जाँचत है, को अब[3] सुरति करावै ? ॥१७॥

*राग

†ठकुरायत[4] गिरिधर[5] की साँची ।
कौरव जीति जुधिष्टिर-राजा, कीरति तिहूँ[6] लोक मैं माँची ।
ब्रह्म-रुद्र डर डरत काल कैं, काल डरत भ्रू[7]-भंग की आँची ।
रावन सौ नृप[8] जात न जान्यौ, माया बिषम सीस पर[9] नाँची ।
गुरु-सुत आनि दिए जमपुर तैं, बिप्र सुदामा कियौ अजाची ।
दुस्सासन कटि[10]-बसन छुड़ावत, सुमिरत नाम द्रौपदी बाँची ।
हरि-चरनारबिंद तजि लागत अनत कहूँ, तिनकी मति काँची ।
सूरदास भगवंत भजत जे[11], तिनकी लीक चहूँ जुग खाँची ॥१८॥

राग

‡स्याम गरीबनि हूँ[12] के गाहक ।
दीनानाथ हमारे ठाकुर, साँचे[13] प्रीति-निबाहक ।
कहा बिदुर की जाति-पाँति, कुल, प्रेम-प्रीति के लाहक ।
कह पांडव कैं घर ठकुराई ? अरजुन के रथ-बाहक !
कहा सुदामा कैं धन हो ? तौ सत्य-प्रीति के चाहक ।
सूरदास सठ[14], तातैं हरि भजि आरत के दुख-दाहक ॥१९॥

श्रीपति जुग जुग सुमिरन ...१। (२) देव—१, १६। ...जो—१६। ...ता) कान्हरौ। ...पद (क) में नहीं है। ...ठकुराई—८। (४) गिरि-धर जू की—२, १६, १६। (६) तीनि—१, २, ६, ८, १६। (७) प्रभु-इच्छा-आँची—२। (८) रिपु—८। (९) धरि—१, २, ३, ६, १६। (१०) कर—१, ६, ८, १६। (११) नित—२, ६।

‡ यह पद केवल (न...का) में है। (१२) ही—२, १६... साँचे बिरद कहाइक—२। ...२। (१४) सब भाँतिनि-...

र

जैसैं तुम गज कौ पाउँ छुड़ायौ।
अपने जन कौं दुखित जानि कै पाउँ पियादे धायौ।
जहँ जहँ गाढ़ परी[1] भक्तनि कौं, तहँ तहँ आपु जनायौ[2]।
भक्ति-हेत प्रहलाद उबार्‌यौ, द्रौपदि-चीर बढ़ायौ।
प्रीति जानि हरि गए बिदुर कैं, नामदेव-घर छायौ।
सूरदास द्विज दीन सुदामा, तिहिं दारिद्र नसायौ ॥२०॥

* रा

‡ नाथ अनाथनि ही के संगी।
दीनदयाल, परम[3] करुनामय, जन-हित हरि बहु-रंगी।
§ पारथ-तिय कुरुराज सभा मैं बोलि करन चहै नंगी।
§ स्रवन सुनत करुना-सरिता भए, बढ़यौ बसन उमंगी।
¶ कहा बिदुर की जाति बरन है, आइ साग लियौ मंगी।
कहा कूबरी सील[4]-रूप-गुन? बस भए स्याम त्रिभंगी।
ग्राह गह्यौ गज बल बिनु ब्याकुल, बिकल गात, गति लंगी॥।
धाइ चक्र लै ताहि उबार्‌यौ, मार्‌यौ ग्राह बिहंगी।

यह पद केवल (ना, का) में शुद्ध नहीं है।

(१) परत—२, १६। (२) कहत—२। दुखित—१४, १६, १७।

[illegible]—१६।

* (का) बिलावल।

‡ यह पद (स, क, का, पू) है, पर इनका पाठ किसी प्रति में शुद्ध नहीं है।

(३) ...

§ ये दोनों चरण (स) में नहीं हैं और (क, पू) में इनका पाठ भ्रष्ट है। (का) की सहायता से शुद्ध करके यह पाठ रखा गया है।

¶ यह चरण (... है।

(४) रूप-रासि-

|| इस पंक्ति में यह एक चरण "भक्तन बछल कु... प्रेमिन के प्रभु संग

कहा कहौं हरि केतिक तारे, पावन-पद परतंगी ।
सूरदास यह बिरद स्रवन सुनि, गरजत अधम अनंगी ॥२१॥

†जे जन सरन भजे बनवारी ।
ते ते राखि लिए जग-जीवन, जहँ जहँ बिपति परी तहँ टारी ।
संकट तैं प्रहलाद उबार्यौ, हिरनाकसिप-उदर नख फारी ।
अंबर हरत द्रुपद-तनया कौ दुष्ट-सभा मधि लाज सम्हारी ।
राख्यौ गोकुल बहुत बिघन तैं, कर-नख पर गोवर्धन धारी ।
सूरदास-प्रभु सब सुख-सागर, दीनानाथ, मुकुंद, मुरारी ॥२२॥

‡पारथ के सारथि हरि आप भए हैं ।
भक्त-बछल नाम निगम गाइ गए हैं ।
बाएँ कर बाजि[1]-बाग दाहिन है बैठे ।
हाँकत हरि हाँक देत गरजत ज्यौं ऐंठे ।
छाता लौं छाँह किए सोभित हरि-छाती ।
लागन नहिं देत कहूँ समर-आँच ताती ।
करन-मेघ बान-बूँद भादौं-झरि लायौ ।
जित जित मन अर्जुन कौ तितहिं रथ चलायौ ।
कौरौ-दल नासि नासि कीन्हौं जन-भायौ ।
सरन गए राखि लेत सूर सुजस गायौ ॥२३॥

---

†यह पद केवल (स, ल) में

‡यह पद केवल (स, ल) में है ।

(१) नाग बाज-

※२

[1] स्याम-भजन-बिनु कौन बड़ाई ?

बल, बिद्या, धन, धाम, रूप, गुन और[1] सकल मिथ्या सौंजाई ।
अंबरीष, प्रह्लाद, नृपति बलि, महा ऊँच पदवी तिन पाई ।
गहि सारंग, रन रावन जीत्यौ, लंक बिभीषन फिरी[2] दुहाई ।
मानी हार बिमुख दुरजोधन, जाके जोधा है सौ भाई ।
पांडव पाँच भजे प्रभु-चरननि, रनहिँ जिताए हैँ जदुराई ।
राज[3]-रवनि सुमिरे पति-कारन, असुर-बंदि तैँ[4] दिए छुड़ाई ।
अति आनंद सूर तिहिँ औसर, कीरति निगम कोटि मुख गाई ॥२४॥

राग

[÷] कहा गुन बरनौँ स्याम, तिहारे ।

कुबिजा, बिदुर, दीन द्विज, गनिका[5], सबके काज सँवारे[6] ।
जज्ञ-भाग[7] नहिँ लियौ हेत सौँ रिषिपति पतित बिचारे ।
भिल्लिनि के फल खाए[8] भाव सौँ खाटे-मीठे-खारे ।
कोमल कर गोबर्धन धार्यौ जब[9] हुते नंद-दुलारे ।
दधि-मिस आपु बँधायौ दाँवरि, सुत कुबेर के तारे ।
गरुड़ छाँड़ि प्रभु पायँ पियादे गज-कारन पग धारे ।
अब मोसौँ अलसात जात हौ अधम-उधारनहारे ।

---

[1] (काँ) सारंग ।
[illegible] यह पद केवल (शा, का) [illegible]
।
(१) और सकल सहजाई—२ ।
[illegible] सकल अहि जाई—
१६ । (२) आनि दिवाई—१६ । (३)
चढ़े बिमान मित्र सुग्रीवा असुर
मारि जब सिया छुड़ाई—५ । (४)
नृप सकल—१६ ।

÷ यह पद केवल (शा) में है।

(५) के हित । (
(७) जज्ञ भोग । (८) [illegible]
जबहीँ ते ।

कहँ न सहाय करी भक्तनि की, पांडव जरत उबारे
स्र परी[1] जहँ बिपति दीन पर, तहाँ बिघन तुम टारे ॥२५

† भक्तनि हित तुम कहा न कियौ ?

गर्भ परीच्छित-रच्छा कीन्ही, अंबरीष-ब्रत राखि लियौ
जन प्रह्लाद-प्रतिज्ञा पुरई, सखा बिप्र-दारिद्र हयौ
अंबर हरत द्रौपदी राखी, ब्रह्म-इंद्र कौ मान नयौ
पांडव कौ दूतत्व कियौ पुनि, उग्रसेन कौं राज दयौ
राखी पैज भक्त भीषम की, पारथ कौ सारथी भयौ
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के, नारद-साप निवृत्त कियौ
करि बल-बिगत उबारि दुष्ट तैं, ग्राह ग्रसत बैकुंठ दियौ
गौतम की पतिनी तुम तारी, देव,[2] दवानल कौं अँचयौ
सूरदास-प्रभु भक्त-बछल हरि, बलि-द्वारैं दरबान भयौ ॥२६

* रा

‡ ऐसैहिं जनम बहुत बौरायौ ।

बिमुख भयौ हरि-चरन-कमल तजि, मन संतोष न आयौ
जब जब प्रगट भयौ जल थल मैं, तब तब बहु बपु धारे
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह-बस, अतिहिं किए अघ भारे

ास ।
पद केवल (शा, कां) में है।
ाठ कुछ अस्तव्यस्त से
तएव दोनों का मिलान
पर्युक्त पाठ संशोधित
ा है ।

(२) रानी जसोदा दूध पियौ —
१६ ।
* (कां) ईमन ।
‡ यह पद केवल (क, कां, पू) में है । इसके पाठ बड़े अस्तव्यस्त मिले । तीनों के पाठ मिलाकर

एक पाठ निर्धारित
गया है । विस्तार-भ
नहीं दिए गए ।

नृग, कृमि, बिप्र, गीध, गनिका, गज, कंस-केसि-खल तारे।
अघ, बक, बृषभ, बकी, धेनुक हति, भव-जल-निधि तैं उबारे।
संखचूड़, मुष्टिक, प्रलंब अरु तृनावर्त संहारे।
गज-चानूर हते, दव नास्यौ, ब्याल मथ्यौ, भयहारे।
जन-दुख जानि, जमलद्रुम-भंजन, अति आतुर ह्वै धाए।
गिरि कर धारि इंद्र-मद मर्द्यौ, दासनि सुख उपजाए।
रिपु कच गहत द्रुपद-तनया जब सरन सरन कहि भाषी।
बढ़े दुकूल-कोट अंबर लौं, सभा-माँझ पति राखी।
मृतक जिवाइ दिए गुरु के सुत, ब्याध परम गति पाई।
नंद-बरुन-बंधन-भय-मोचन, सूर पतित सरनाई ॥२७॥

राग धन

* तातैं जानि भजे बनवारी। सरनागत[1] की ताप निवारी
जन-प्रहलाद-प्रतिज्ञा पारी। हिरनकसिपु की देह बिदारी
ध्रुवहिं अभै पद दियौ मुरारी। अंबरीष की दुर्गति टारी
द्रुपद-सुता जब प्रगट पुकारी। गहत चीर हरि-नाम उबारी
ाज, गनिका, गौतम-तिय तारी। सूरदास सठ, सरन तुम्हारी ॥२८॥

राग धन

‡ ऐसे कान्ह[2] भक्त हितकारी।
जहाँ जहाँ जिहिं काल सम्हारे, तहँ तहँ त्रास निवारी।
धर्म-पुत्र जब जज्ञ उपायौ, द्विज मुख ह्वै पन लीन्हौ।
अस्व-निमित उत्तर दिसि कौं पथ गमन धनंजय कीन्हौ।

---

* यह पद केवल (क) में। (१) शरणागत।
‡ यह पद केवल (क) में। (२) भगवंत।

अहिपति-सुता-सुवन सन्मुख ह्वै बचन कह्यौ इक हीनौ।
पारथ विमल बभ्रुवाहन कौं सीस-खिलौना दीनौ।
इतनौ सुनत कुंति उठि धाई, बरषत लोचन नीर।
पुत्र-कबंध अंक भरि लीन्हौ, धरति न इक छिन धीर।
लै लै स्रौन हृदय लपटावति, चुंबति भुजा गँभीर।
त्यागति प्रान निरखि सायक धनु, गति-मति-बिकल-सरीर।
ठाढ़े भीम, नकुल, सहदेवऊ नृप सब कृस्न समेत।
पौढ़े कहा समर-सेज्या सुत, उठि किन उत्तर देत!
थकित भए कछु मंत्र न फुरई, कीनै मोह अचेत।
या रथ बैठि बंधु की गर्जिहिँ पुरवै[1] को कुरुखेत?
काकौ बदन निहारि द्रौपदी दीन दुखी संभरिहै?
काकी ध्वजा बैठि कपि किलकिहि, किहिँ भय दुरजन डरिहैं?
काके हित श्रीपति ह्याँ ऐहैं, संकट रच्छा करिहैं?
को कौरव-दल-सिंधु मथन करि या दुख पार उतरिहैं?
चिंता मानि, चितै अंतर-गति, नाग-लोक कौं धाए।
पारथ-सीस सोधि अकुल, तब जदुनंदन ल्याए।
अमृत-गिरा बहु बरषि सूर-प्रभु, भुज गहि पार्थ उठाए।
अस्व समेत बभ्रुवाहन लै, सुफल जज्ञ-हित आए॥२६॥

रा

†मोहन के मुख ऊपर वारी।
देखत नैन सबै सुख उपजत, बार बार तातैं बलिहारी।

---

[1] पुरवै।

† यह पद केवल (क) में है।

ब्रह्मा बाल बच्छ हरि गयौ, सो तनछन सारिखे सँवारी।
कीन्हौ कोप इंद्र बरषा रितु, लीला लाल गोवर्धन धारी।
राख्यौ लाज समाज माहिँ जब, नाथ नाथ द्रौपदी पुकारी।
तीनि लोक के ताप-निवारन, सूर स्याम सेवक-सुखकारी ॥२०॥

* रा

गोविँद गाढ़े दिन के मीत।
गज अरु ब्रज प्रहलाद, द्रौपदी, सुमिरत हीं निहचीत।
लाखागृह पांडवनि उबारे, साक-पत्र मुख नाए।
अंबरीष-हित साप निवारे, व्याकुल चले पराए।
नृप-कन्या कौ ब्रत प्रतिपारयौ, कपट वेष इक धारयौ।
तामैं प्रगट भए श्रीपति जू, अरि-गन-गर्व प्रहारयौ।
कोटि छ्यानवे नृप-सेना सब जरासंध बँध छोरे।
ऐसे‡ जन परतिज्ञा राखत, जुद्ध प्रगट करि जोरे।
गुरु-बांधव-हित मिले सुदामहिँ, तंदुल पुनि पुनि जाँचत।
भगत-बिरह कौं अतिहीं कादर, असुर-गर्व-बल नासत॥।
संकट-हरन-चरन हरि प्रगटे, बेद बिदित जस गावै।
सूरदास ऐसे प्रभु तजि कै, घर घर देव मनावै ॥२१॥

राग आसावरी—

प्रभु तेरौ बचन भरोसौ साँचौ।
पोषन भरन बिसंभर साहब, जो कलपै सो काँचौ।

पू) कान्हरा।
यह केवल (क, पू) में है।
हैं मन—१४।
[illegible] के अंतहिँ पाए गर्भ

असुरबल नासो रे—१४।
‡ (क) में "ऐसैं जन परतिज्ञा राखत" पंक्ति के बदले यह है "प्रेम बिकलता लखि गोपिनि की बिबिध नाचत।"

‡ यह पद "राग [illegible] संकलित किया गया है

जब गजराज ग्राह सौं अटक्यौ, बली बहुत दुख पायौ।
नाम लेत ताही छिन हरि जू, गरुड़हिँ छाँड़ि छुड़ायौ।
दुस्सासन जब गही द्रौपदी, तब तिहिँ बसन बढ़ायौ।
सूरदास प्रभु भक्तबछल हैँ, चरन सरन हौँ आयौ ॥२२॥

रा

हरै बलबीर बिना को पीर ?
सारँग-पनि प्रगटे सारँग तैँ, जानि दीन पर भीर।
सारँग बिकल भयौ सारँग मैँ, सारँग तुल्य सरीर।
पर्‌यौ काम सारँग-बासी सौं, राखि लियौ बलबीर।
सारँग इक सारँग ह्वै लोट्यौ, सारँगही कैँ तीर।
सारँग[1]-पानि राय ता ऊपर, गए परीच्छत कीर।
गहैँ दुष्ट द्रुपदी कौ सारँग, नैननि बरसत नीर।
सूरदास प्रभु अधिक कृपा तैँ, सारँग भयौ गँभीर ॥२३॥

*रा

हरि के जन सब तैँ अधिकारी।
ब्रह्मा महादेव तैँ को बड़, तिनकी[2] सेवा कछु न सुधारी
जाँचक पैँ जाँचक कह जाँचै ? जौ जाँचै तौ रसना हारी
गनिका-सुत सोभा नहिँ पावत, जाके[3] कुल कोऊ न पिता री

ह पद केवल (का, ना) मैँ दोनों प्रतियों मैँ यह असग मैँ है। पर वस्तुतः का पद है। अतः यह इस ँ यहां रखा गया है। सारँग पानि गए ता ऊपर भए परीच्छत कीर—६।

* (ना) कान्हरौ।

② तिनके सेवक भ्रमत भिखारी—१, ६, ८, १६, १७, १९। तिनहूँ सेवा कछु न सँभारी—२। ③ जिन कुल कोऊ नहीं पितारी—१। कि कोऊ न पता री—३। कुल कोऊ न बतारी (६, ८। जिनके कुल पिता री—१४। मो कहै पिता री—१९।

तिनकौ[1] मानि बैर, हिरनाकुस-रावन-कुटुँब-सहित भई ख्वारी।
जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पाली, कियौ[2] विभीषन राजा भारी।
सिला तरी जल माहिँ सेत बँधि, बलि वह चरन अहिल्या तारी।
जे रघुनाथ-सरन तकि आए, तिनकी सकल आपदा टारी।
जिहिँ गोबिंद अचल ध्रुव राख्यौ, रबि[3]-ससि किए प्रदच्छिनकारी।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु धरनी जननि बोझ कत मारी? ॥२४॥

* राग

जापर दीनानाथ ढरै।
सोइ कुलीन, बड़ौ सुंदर सोइ, जिहिँ पर कृपा करै।
कौन[4] बिभीषन रंक-निसाचर, हरि हँसि छत्र धरै।
राजा कौन बड़ौ रावन तैँ, गर्वहिँ-गर्व गरै[5]।
रंकव[6] कौन सुदामाहू तैँ, आप समान करै।
अधम[7] कौन है अजामील तैँ, जम तहँ जात डरै।
कौन बिरक्त अधिक नारद तैँ, निसि-दिन भ्रमत फिरै।
जोगी कौन बड़ौ संकर तैँ, ताकौँ काम छरै।
अधिक कुरूप कौन कुबिजा तैँ, हरि पति पाइ तरै[9]।
अधिक सुरूप कौन सीता तैँ, जनम बियोग भरै।

...कौ—६। जिहिँ कौ— ...बिभीषन सु अजहुँ राजा ...बिभीषन राज अजहुँ राजा ...बिभीषन अजहूँ राजा ...। बिभीषन आहुक —१६। [3] रबि ससि ...मारी—१, १६। अह ...अहूँ नारी—२। अह ...प्रदच्छिनावत देत न भारी—२। कर प्रदच्छिनावत देत विहारी—६। अह प्रदच्छिनावर्ति देति बिमारी—१४। अह ...धावत देत दहारी—१८।

* (ना) सोरठ। (का) गौरी।

† यह चरण (वे, स, रा, श्या) मेँ नहीँ है।

[4] बंस निसाचर भयौ विभी...षन माथै छत्र धरै—२। —२, ६, ८, १८। [6] ...६, ८। [7] अधम सु (अजामिल हू तैँ—१, [8] अरु—६।

‡ यह चरण (का, रा) मेँ नहीँ है।

[9] धरै—१, २, १

‡यह गति-मति जानै नहिँ कोऊ, किहिँ रस रसिक ढरै।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु फिरि[1] फिरि जठर जरै ॥ ३५।

※

†जाकौँ दीनानाथ निवाजैँ।
भव-सागर मैँ कबहुँ न झूकै, अभय निसाने बाजैँ।
बिप्र सुदामा कौँ निधि दीन्हीँ, अर्जुन रन मैँ गाजैँ।
लंका राज बिभीषन राजैँ[2], ध्रुव आकास बिराजैँ।
मारि कंस-केसी मथुरा मैँ, मेट्यौ सबै दुराजैँ।
उग्रसेन-सिर छत्र धर्‍यौ है, दानव दस[3] दिसि भाजैँ।
अंबर गहत द्रौपदी राखी, पलटि अंध-सुत लाजैँ।
सूरदास प्रभु महा भक्ति तैँ, जाति अजातिहिँ साजैँ ॥

※ रा

जाकौँ मनमोहन अंग करै।
ताकौ केस खसै नहिँ सिर[4] तैँ, जौ जग बैर परै।
हिरनकसिपु-परहार थक्यौ, प्रहलाद न नैँकु डरै।
अजहूँ लगि उत्तानपाद-सुत, अबिचल[5] राज करै।
राखी लाज द्रुपद-तनया की, कुरुपति चीर हरै।
दुरजोधन कौ मान भंग करि बसन-प्रवाह भरै†।

...ा केवल (ना)

...हा निसरै—२।
...न्हरो।
केवल (वे, का)

य १६ ③

हुहूँ—१।
※ (ना) सोरठ।
④ तन तैँ—२। कबहूँ—१६। ⑤ राज करत न मरै—१, १६।
† इसके पश्चात् (वे, स, स्या) में ये दो चरण किंचित्

अंतर के साथ है—
बिप्र भक्त नृग ...
बलि पठि बेद छरै ...
कृपाल, कृपानिधि ...
परै।

जौ सुरपति कोप्यौ ब्रज[1] ऊपर, क्रोध[2] न कछू सरै।
ब्रज-जन[3] राखि नंद को लाला[4], गिरिधर बिरद धरै।
जाकौ बिरद है गर्व-प्रहारी, सो कैसैं बिसरै?
सूरदास भगवंत-भजन करि, सरन गए[5] उबरै ॥२७॥

*

जाकौं हरि अंगीकार कियौ।
ताके कोटि बिघन हरि हरि कै, अभै प्रताप दियौ।
दुरबासा अँबरीष सतायौ, सो हरि-सरन गयौ।
परतिज्ञा राखी मन-मोहन, फिरि[6] तापैं पठयौ।
बहुत सासना दई प्रह्लादहिं, ताहि निसंक कियौ।
निकसि खंभ तैं नाथ निरंतर, निज[7] जन राखि लियौ।
मृतक भए सब सखा जिवाए, बिष-जल जाइ पियौ।
सूरदास-प्रभु भक्तबछल हैं, उपमा कौं न बियौ ॥२८॥

* राग

कहा कमी जाके राम धनी।
मनसा-नाथ मनोरथ-पूरन,[8] सुख-निधान जाकी मौज[9] घनी
अर्थ, धर्म अरु काम, मोच्छ फल, चारि पदारथ देत गनी[1]
इंद्र समान हैं जाके सेवक, नर बपुरे की कहा गनी

...कुल पर—२, ८। ③ ...
...हू न सरै—१, ८, १६।
...ै ब्रजजन—१, ३, ८।
—२, ३, ६, ८। ⑤
६, १६।

* (ना) सारंग।
⑤ नाही पै—६, ८। ⑦
अपनौ—१, २, ३, १६।
* (ना) कान्हरौ।
⑧ पुजवै—२, ६।

पुरवै—२, ८, १६।
⑨ बात—२, ६, ८,
छुनी—१, ६, ८, १६

कहा कृपिन की माया गनियै, करत फिरत अपनी अपनी।
खाइ न सकै खरचि नहिँ जानै, ज्यौँ भुवंग-सिर रहत मनी।
आनँद-मगन राम-गुन गावै, दुख-संताप की काटि तनी।
सूर कहत जे भजत राम कौँ, तिनसौँ हरि सौँ सदा बनी ॥३.

* रा

†हरि के जन की अति ठकुराई।
महाराज, रिषिराज, राजमुनि, देखत रहे लजाई।
निरभय देह, राज-गढ़[1] ताकौ, लोक[2] मनन-उतसाहु।
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ये[3] भए चोर तैँ साहु।
दृढ़ विस्वास कियौ सिंहासन, तापर बैठे भूप।
हरि-जस विमल छत्र सिर ऊपर, राजत परम अनूप।
हरि-पद-पंकज पियौ प्रेम-रस, ताही कैँ रँग रातौ।
मंत्री ज्ञान न औसर पावै, कहत बात[4] सकुचातौ।
अर्थ-काम दोउ रहैँ दुवारैँ,[5] धर्म-मोक्ष सिर नावैँ।
बुद्धि[6] -विवेक विचित्र पौरिया, समय न कबहूँ पावैँ।
अष्ट महा-सिधि द्वारैँ ठाढ़ीँ, कर जोरे, डर लीन्हे।
छरीदार वैराग विनोदी, झिरकि बाहिरैँ कीन्हे।

ना) नट ।
पद (वें) मे विनय-
परीक्षित के पास शुका-
प्रसंग में भी है। (ना)
वल विनय-प्रसंग ही में
प्रतियों में यह शुका-
गमन प्रसंग ही में रखा है। इस
संस्करण में भी इसका विनय में
ही रखा जाना उचित समझा गया।
(१) करि—१, २, ६, ८, १९। ताही को—१४। (२) लोगन—१, २, ६, ८, १४, १६। (३)
सिति—१४। (४)
—१४। (५) दुर
दुरि—१४। (६
बिनै—२, १४।

माया-काल कछू नहिँ व्यापै, यह रस-रीति जो जानै।
सूरदास यह सकल समग्री, प्रभु[1]-प्रताप पहिचानै ॥४०॥

तुम्हरैँ भजन सबहि सिंगार।
जो कोउ प्रीति करै पद-अंबुज, उर मंडत[2] निरमोलक हार
किंकिनि नूपुर पाट पटंबर, मानौ लिये फिरैँ घर-बार
मानुष-जनम पाेत नकली ज्यौँ, मानत भजन-बिना बिस्तार
कलिमल दूरि करन के काजैँ, तुम लीन्हौ जग मैँ अवतार।
सूरदास प्रभु तुम्हरे भजन बिनु, जैसैँ सूकर-स्वान-सियार ॥४१॥

रा[illegible] * राग

बिनती सुनौ दीन की चित दै, कैसैँ तुव गुन गावै?
माया नटी लकुटि[3] कर लीन्हे, कोटिक नाच नचावै।
दर-दर लोभ लागि लिये डोलति, नाना स्वाँग बनावै[4]।
तुम सौं कपट करावति प्रभु जू, मेरी बुधि भरमावै।
मन अभिलाष-तरंगनि[5] करि करि, मिथ्या निसा[6] जगावै।
सोवत सपने मैँ ज्यौँ संपति, त्यौँ दिखाइ बौरावै।
महा मोहिनी मोहि[7] आतमा, अपमारगहिँ लगावै।
ज्यौँ दूती पर-बधू भोरि[8] कै, लै पर-पुरुष दिखावै[9]।
मेरे तो तुम पति, तुमहीँ गति, तुम समान को पावै?
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, को मो[10] दुख बिसरावै ॥४२॥

---

[1] प्रताप—१, ३, ६, [illegible] माद—१४।
[2] [illegible] केवल (स, ल) [illegible]
[illegible] इन—३।

* (ना) आसावरी (का) कान्हरो।
(3) नटी—६, ८, १६। (4) करावै—१। (5) तरंग मगन करि—३। (6) आनि—२। (7) मोह मत्त करि—२। [illegible] —१३। (9) सिखा[illegible]
(10) मो (मन) दुखहि [illegible] ६, ८।

*राग केदारौ

हरि, तुव माया को न बिगोयौ ?

सौ जोजन मरजाद सिंधु की, पल मैं राम बिलोयौ ।

नारद मगन भए माया मैं, ज्ञान-बुद्धि-बल खोयौ ।

साठि पुत्र अरु द्वादस कन्या, कंठ लगाए जोयौ ।

संकर कौ मन हर्यौ कामिनी, सेज छाँड़ि भू सोयौ ।

चारु[1] मोहिनी आइ आँध कियौ, तब नख-सिख तैं रोयौ ।

सौ भैया दुरजोधन राजा, पल मैं गरद समोयौ ।

सूरदास[2] कंचन अरु काँचहिं, एकहिं धगा पिरोयौ ॥ ४३ ॥

*राग सारंग

†(गोपाल) तुम्हरी माया महाप्रबल, जिहिं सब जग बस कीन्हौ (हो) ।

नैंकु चितै, मुसक्याइ कै, सब कौ मन हरि लीन्हौ (हो) ।

पहिरे राती चूनरी, सेत उपरना सोहै (हो) ।

कटि लहँगा नीलौ बन्यौ, को जो देखि न मोहै (हो) ?

---

* (बा) परज; (का, डा[1], कां, सोरठ ।

[1] जारि मोहिनी आढ़ आढ़ किये —१,२,१४ ।

चार मोहिनी आठ आठ किये —३ ।

जारि मोहिनी आध आध किये —६ ।

जोरि मोहनी आध किये —८ ।

चारु मोहिनी आय मनहिं गहि —१६ ।

जार मोहनी आध आध किये —१८ ।

[2] सूरजदास काँच अरु कांचन —१९ ।

* (ना) सोरठ ।

† यह पद (शा, कां) में नहीं है । (वे, स, ल) में यह दो दो स्थानों पर आया है । एक तो "माया-वर्णन" के प्रसंग में और दूसरे "रास-लीला" के प्रसंग में, "श्री राधा-कृष्ण-विवाह" के अंतर्गत । (ना, का, ह, डा[1], पु) में यह केवल "माया-वर्णन" के प्रसंग में पाया जाता है और (के, गो) में केवल "रास-प्रसंग" में । इस संस्करण में इसका यहीं रक्खा जाना उचित समझा गया ।

इसका छंद अनेक प्रतियों में अशुद्ध पाया गया । चरणों का क्रम भी अस्त-व्यस्त था । अधिक शुद्ध प्रतियों की सहायता लेकर दोनों का संशोधन किया गया है । विस्तार-भय से पाठांतर नहीं दिये जा सके ।

नौली अनुरागन रँग्यौ, अमर उपरना राते (हो)।
मनसा अवलोकि कै, असुर महा-मद माते (हो)।
नैकु दृष्टि जहँ परि गई, सिव-सिर टोना लागे (हो)।
जोग-जुगति बिसरी सबै, काम-क्रोध-मद जागे (हो)।
लोक-लाज सब छुटि गई, उठि धाए सँग लागे (हो)।
मुनि थके उतपात कौं, सुक सनकादिक भागे (हो)।
कहँन कहाँ लौं बरनिए, पुरुष न उबरन पावै (हो)।
भरि सोवै सुख-नींद मैं, तहाँ सु जाइ जगावै (हो)।
एकनि कौं दरसन ठगै, एकनि के सँग सोवै (हो)।
एकनि लै मंदिर चढ़ै, एकनि बिरंचि बिगोवै (हो)।
अकथ कथा याकी कछू, कहत नहीँ कहि आई (हो)।
छैलनि कै सँग यौं फिरै, जैसैँ तनु सँग छाईँ (हो)।
इहिँ विधि इहिँ डहके सबै, जल-थल-नभ-जिय जेते (हो)।
चतुर-सिरोमनि नंद-सुत, कहौं कहाँ लगि तेते (हो)।
कछु कुल-धर्म न जानई, रूप सकल जग राँच्यौ (हो)।
बिनु देखैं, तिनुहीँ सुनैं, ठगत न कोऊ बाँच्यौ (हो)।
इहिँ लाजनि मरिए सदा, सब कोउ कहत तुम्हारी (हो)।
सूर स्याम इहिँ बरजि कै, मेटौ अब कुल-गारी (हो)॥४४॥

※

हरि, तेरौ भजन कियौ न जाइ।

कह करौं, तेरी प्रबल माया देति मन[१] भरमाइ।

स०, का०) केसौं, [illegible])

(१) लहर बहाइ—१, २, ३, ६।

जबै आवौं साधु-संगति, कछुक मन ठहराइ।
ज्यौं[१] गयंद अन्हाइ सरिता, बहुरि वहै सुभाइ।
वेष धरि धरि हर्‌यौ पर-धन, साधु-साधु कहाइ।
जैसैं नटवा लोभ-कारन करत स्वाँग बनाइ।
करौं जतन, न भजौं तुमकौं, कछुक मन उपजाइ।
सूर प्रभु[२] की सबल माया, देति मोहिं भुलाइ[३] ॥४५॥

* राग

माधौ जू, मन माया बस कीन्हौ।
लाभ-हानि कछु समुझत नाहीं, ज्यौं पतंग तन दीन्हौ।
गृह दीपक, धन तेल, तूल तिय, सुत ज्वाला अति जोर।
मैं मति-हीन मरम नहिं जान्यौ, पर्‌यौ अधिक करि दौर।
बिबस भयौ नलिनी के सुक ज्यौं, बिन गुन मोहिं गह्यौ।
मैं अज्ञान कछू नहिं समुझ्यौ, परि दुख-पुंज[४] सह्यौ।
बहुतक[५] दिवस भए या जग मैं, भ्रमत फिर्‌यौ मति-हीन।
सूर स्यामसुंदर जौ सेवै,[६] क्यौं होवै गति दीन ॥४६॥

† अब हौं माया-हाथ बिकानौ।
परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस, भज्यौ न श्रीपति रानौ।
हिंसा-मद-ममता-रस भूल्यौ, आसाहीं लपटानौ।
याही करत अधीन भयौ हौं, निद्रा अति न अघानौ।

धोइ गज ज्यौं विमल बहाइ—२। (३) सुमिरै—१।
२। (२) हरि—१, * (का) धनाश्री। † यह पद केवल
। लुभाइ—१, ३, ६, ८। (४) बंध—८। (५) बहुतै—८। में है।

अपने हीं अज्ञान-तिमिर मैं, बिसरयौ परम ठिकानौ ।
सूरदास की एक आँखि है, ताहू मैं कछु कानौ ॥४७॥

* राग

† दीन जन क्यौं करि आवै सरन ?
भ्रम्यौ फिरत सकल जल-थल-मग, सुनहु ताप[1]-त्रय-हरन ।
परम[2] अनाथ, विवेक-नैन बिनु, निगम-ऐन क्यौं पावै ?
पग[3] पग परत कर्म-तम-कूपहिं, को करि कृपा बचावै ?
नहिं कर लकुटि सुमति[4] - सतसंगति, जिहिं अधार अनुसरई ।
प्रबल अपार मोह-निधि दस-दिसि, सुधौं कहा अब करई ।
अनुदिन[5] रटत सभीत, ससंकित, सुकृत सब्द नहिं पावै ।
सूर स्याम-पद-नख-प्रकास बिनु, क्यौं करि तिमिर नसावै ? ॥४८॥

राग

‡ अब सिर परी ठगोरी देव ।
तातैं बिबस भयौं करुनामय, छाँड़ि तिहारी सेव ।
माया-मंत्र पढ़त मन निसि-दिन, मोह-मूरछा आनत ।
ज्यौं मृग नाभि-कमल निज[6] अनुदिन निकट रहत नहिं जानत ।
भ्रम-मद-मत्त, काम-तृष्ना-रस-वेग,[7] न क्रमै गह्यौ ।
सूर एक पल गहरु न कीन्हयौ, किहिं[8] जुग इतौ सह्यौ ! ॥४९॥

(का) कान्हरा ।
यह पद केवल (शा, क,
में है ।
सुनि त्रैतापहरन—
। ② मम अनाथ अवि-
न बिनु सुकृत सब्द सुनि
धावै—१४ । ③ पैठो पंगु निज
कूप सघन में क्यौं करि कृपा
बतावै—१६ । ④ सुभूति—१४ ।
भक्त—१६ । ⑤ अघटित रटत
सभीर सुकृत स्वनि निगम ऐन
नहिं पावै—१४ ।
‡ यह पद केवल
में है ।
⑥ तजि—१४, १
ज्यौं गज नक्र गह्यौ—१
कहि जुग इते रह्यौ—१

†माया देखत ही जु गई।

ना हरि-हित, ना तू-हित, इनमैं एकौ तौ न भई।
ज्यौं मधुमाखी सँचति निरंतर, वन की ओट लई।
व्याकुल होत हरैं ज्यौं सरवस, आँखिनि धूरि दई।
सुत-संतान-स्वजन-वनिता-रति, घन समान उनई[1]।
राखे सूर पवन पाखँड हति, करी[2] जो प्रीति नई[3] ॥५०॥

ग्नि ※

‡माधौ जू, यह मेरी इक गाइ।

अब आज तैं आप-आगैं दई, लै आइयै चराइ
यह अति हरहाई, हटकत हूँ बहुत अमारग जाति
फिरति[4] बेद-बन-ऊख उखारति, सब दिन अरु सब राति
हित करि मिलै लेहु गोकुलपति, अपने गोधन माहँ
सुख सोऊँ सुनि बचन तुम्हारे, देहु कृपा करि बाहँ
निधरक रहौ सूर के स्वामी, जनि[5] मन जानौ फेरि
मन-ममता रुचि सौं रखवारी, पहिलैं लेहु निबेरि ॥५१॥

※

§किते[6] दिन हरि-सुमिरन बिनु खोए।
पर-निंदा रसना के रस करि, केतिक[7] जनम बिगोए

पद केवल (क, पू)

ही—१४। ② करि
③ नहीं—१४।
ा) नट।
पद (का, ड्रा, रा)
।

④ बन बन तृन उखारति सकल दिन अरु राति—२। बन बन अवन उखारत सब दिन अरु सब रात—३। ⑤ जन्म न जाऊँ फेरि—१, १६। जनम न जान्यौ भीर—२।
※ (ना) नट; (कॉ) कान्हरो।
§ यह पद (ग
⑥ इतिक (ए
८। इतने—१४
परतर खोए (खोए)
८, १६। अपने
१५, १६।

तेल लगाइ कियौ रुचि-मर्दन, बस्तर मलि-मलि धोए।
तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै, विषयिनि के मुख जोए।
काल[1] बली तैं सब जग काँप्यौ, ब्रह्मादिक हूँ रोए।
सूर अधम[2] की कहौ[3] कौन गति, उदर भरे, परि[4] सोए॥५२॥

राग बिला

† यह आत्मा पापिनी दहै।
तजि सेवा बैकुंठनाथ की, नीच नरनि कैँ संग रहै।
जिनकौ मुख देखत दुख उपजत, तिनकौँ राजा-राय कहै।
धन[5]-मद-मूढ़नि, अभिमानिनि, मिलि, लोभ लिए दुर्बचन सहै।
भई[6] न कृपा स्यामसुंदर की, अब कहा स्वारथ फिरत बहै?
सूरदास सब-सुख-दाता-प्रभु-गुन बिचारि नहिँ चरन गहै॥५३॥

* राग सार

‡ इहिँ राजस को[7] को न बिगोयौ?
हिरनकसिपु, हिरनाच्छ आदि दै, रावन, कुंभकरन कुल खोयौ।
कंस, केसि, चानूर, महाबल करि निरजीव जमुन-जल बोयौ।
जज्ञ-समय सिसुपाल सुजोधा अनायास लै जोति-समोयौ।
ब्रह्मा-महादेव-सुर-सुरपति नाचत फिरत महा रस भोयौ।
सूरदास[8] जो चरन-सरन रह्यौ, सो जन निपट नीँद भरि सोयौ॥५४॥

---

(१) मरांगा जनम गंवाइ ... रथ अंतकाल बहु रोए—६, ... सब जग कंपित काल ब्याल ... सुर ब्रह्मादिक रोए—१४। ... पतित—८। (३) होसि—२। —३। (४) अरु—२।

† यह पद केवल (शा, कां) में है।

(५) धन मद मूढ़ मिले अभिमानी यह लालच दुरबचन लही—२। (६) भई न कृपा स्यामसुंदर की अपने कहा की जाति भई—२।

* (कां) बिहागरो।

‡ यह पद केवल (क, को ...) में है।

(७) गुन—१४। (८) सू... दास जौं साधु संगति में सो न... नितही नीँद भरि सोयो—१६

‡ फिरि[1] फिरि ऐसोई[2] है करत ।
जैसैं प्रेम पतंग दीप[3] सौं, पावक हू न डरत ।
भव[4]-दुख-कूप ज्ञान करि दीपक, देखत प्रगट परत ।
काल-व्याल, रज-तम-विष-ज्वाला कत जड़ जंतु जरत !
अविहित वाद-विवाद सकल मत इन लगि भेष धरत ।
इहिँ विधि भ्रमत सकल निसि-दिन गत, कछू न काज सरत ।
अगम[5] सिंधु जतननि सजि नौका, हठि क्रम-भार भरत ।
सूरदास-व्रत यहै, कृष्ण भजि, भव-जलनिधि उतरत ॥५५

न . ※

‡ माधौ, नैंकु हटकौ गाइ ।
भ्रमत निसि-बासर अपथ-पथ, अगह गहि नहिँ जाइ
छुधित अति न अघाति कबहूँ, निगम-द्रुम दलि खाइ
अष्ट-दस-घट नीर अँचवति, तृषा तउ न बुझाइ
छहौं रस जौ धरौं आगैं, तउ न गंध सुहाइ
और अहित अभच्छ भच्छति, कला बरनि न जाइ
व्योम, धर, नद, सैल, कानन इते चरि न अघाइ
नील खुर अरु अरुन लोचन, सेत सींग सुहाइ
भुवन चौदह खुरनि खूँदति, सु धौं कहाँ समाइ
ढीठ, निठुर[6], न डरति काहूँ, त्रिगुन ह्वै समुहाइ

। । केदारा ।
पद केवल (क, कां)
पुनि सोई हेत करत—

१६ । ② सोइ—१४ । ③ रूप कौं
—१६ । ④ मन—१६ । ⑤ अगम
सिंधु भव तन नौका तजि—१६ ।
※ (ना) रामकली । (कां)

कान्हरौ ।
‡ यह पद
नहीँ है ।
⑥ निडर—

हरैं खल-बल दनुज-मानव-सुरनि सीस चढ़ाइ ।
रचि-विरचि[1] मुख-भौंह-छवि, लै चलति चित्त चुराइ ।
नारदादि सुकादि मुनिजन थके करत उपाइ ।
नाहिं कहु कैसैं कृपानिधि, सकत सूर चराइ ? ॥५६॥

रा

+ कहत[1] है, आगैं जपिहैं राम ।
बीचहिं भई और की औरै, परयौ काल सौं काम ।
गरभ-बास दस मास अधोमुख[2], तहँ न भयौ बिस्राम ।
बालापन खेलतहीं खोयौ, जोबन जोरत दाम ।
अब तौ जरा निपट नियरानी, करयौ न कछुवै काम ।
सूरदास प्रभु कौं बिसरायौ बिना लिऐँ हरि-नाम ॥५७॥

र

‡ रे मन, जग पर जानि ठगायौ ।
धन-मद, कुल-मद, तरुनी कैं मद, भव[4]-मद, हरि बिसरायौ ।
कलि-मल-हरन, कालिमा-टारन, रसना स्याम न गायौ ।
रसमय जानि सुवा सेमर कौं चौंच घालि पछितायौ ।
कर्म-धर्म, लीला-जस, हरि-गुन, इहिं रस छाँड़[5] न आयौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु कहु कैसैं सुख पायौ ! ॥५८॥

विरंचि मुख भौंह
ले चित चुराइ—२ ।
द (ना, स, ल, कां)

② घट मैं आगे जप्यौ न राम—२ । ③ हुतो सू—२ ।
‡ यह पद (ना, स, ल, कां) में है ।

④ तिहुँ भ
⑤ छांड़ि—२, १६

*

†रे मन, छाँड़ि विषय कौ रँचिबौ ।
कत तू सुवा होत सेमर कौ, अंतहिं[1] कपट न बचिबौ ।
अंतर गहत कनक-कामिनि कौं, हाथ रहैगौ पचिबौ ।
तजि अभिमान, राम कहि बौरे, नतरुक ज्वाला तचिबौ ।
सतगुरु कह्यौ, कहौं तोसौं हौं, राम-रतन[2] धन सँचिबौ ।
सूरदास-प्रभु हरि-सुमिरन बिनु जोगी-कपि ज्यौं नचिबौ ॥५६॥

राग

‡चौपरि जगत मड़े जुग बीते ।
गुन पाँसे, क्रम अंक, चारि गति सारि, न कबहूँ जीते ।
चारि पसार दिसानि, मनोरथ घर, फिरि फिरि गिनि आनै ।
काम-क्रोध-मद-संग मूढ़ मन खेलत हार न मानै ।
बाल-बिनोद बचन हित-अनहित बार बार मुख भाखै ।
मानौ बग्ग बगदाइ प्रथम दिसि आठ-सात-दस नाखै ।
षोड़स जुक्ति, जुवति चित षोड़स, षोड़स बरस निहारै ।
षोड़स अंगनि मिलि प्रजंक पै छ-दस अंक फिरि डारै ।
पंद्रह पित्र-काज, चौदह दस-चारि पढ़े, सर साँधे ।
तेरह रतन कनक रुचि द्वादस अटन जरा जग बाँधे ।

कां) मलार ।
ह पद (ना, स, ल, रा,
) में है ।
अंत कपासनि पचिबौ—
,६ । (२) नाम—२ ।

‡ यह पद केवल (ना,क,पू) में है । तीनों के पाठों में बड़ा भेद है और चरणों की संख्या भी न्यूनाधिक है । (ना) में केवल १६ चरण हैं पर (क,पू) में २० है । पाठ तीनों ही हैं । (ना) का पाठ अन्य अपेक्षा सूरदासजी की प्र कुछ अधिक मिलता है इस संस्करण में वही सं,

नहिं कनि पंथ, पयादि डरनि छकि पंच एकादस ठानै ।
नौ दस आठ प्रकृति तृष्ना सुख सदन सात संधानै ।
पंजा पंच प्रपंच नारि-पर भजत, सारि फिरि मारी ।
चौक चवाउ भरे दुविधा छकि रस रचना रुचि धारी ।
बाल, किसोर, तरुन, जर, जुग सौं सुपक सारि ढिग ढारी ।
सूर एक पौ नाम बिना नर फिरि फिरि बाजी हारी ॥ ६० ॥

राग

† अब कैसैं पैयत[1] सुख माँगे ?
जैसोइ बोइयै तैसोइ लुनियै, कर्मन[2] भोग अभागे ।
तीरथ-व्रत कछुवै नहिं कीन्हौ, दान दियौ नहिं जागे ।
पछिले कर्म सम्हारत नाहीं, करत नहीं कछु आगे ।
बोवत बबुर[3], दाख फल चाहत, जोवत[4] है फल लागे ।
सूरदास तुम राम न भजि कै, फिरत काल सँग लागे ॥ ६१ ॥

‡ रे मन, गोबिँद के ह्वै रहियै ।
इहिँ संसार अपार बिरत ह्वै, जम की त्रास न सहियै ।
दुख, सुख, कीरति, भाग आपनैं आइ परै सो गहियै ।
सूरदास भगवंत-भजन करि अंत बार कछु लहियै ॥ ६२ ॥

§ रे मन, अजहूँ क्यौं न सम्हारै ।
माया-मद मैं भयौ मत्त, कत जनम बादिहीं हारै ।

---

† यह पद (स, ब, शा, ... में है ।
(1) मागत—२ । (2) करि मन—२ । (3) बीब—२ । (4) चितवत—१६ ।
‡ यह पद केवल (स, ब) में है ।
§ यह पद केवल (... शा) में है ।

तू तौ विषया-रंग रँग्यौ है, बिन धोए क्यौं छूटै।
लाख जतन करि देखौ, तेम्हैं बार-बार विष[1] घूँटै।
रस लै-लै औटाइ करत गुर, डारि देत है खोई।
फिरि औटाए स्वाद जात है, गुर तैं खाँड़ न होई।
सेत, हरौ, रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोई।
कारौ अपनौ रंग न छाँड़ै, अनरँग कबहुँ न होई।
कुबिजा भई स्याम-रँग-रातौ, तातैं सोभा पाई।
ताहि सबै कंचन सम तोलैं अरु श्री-निकट समाई।
नंद-नँदन-पद-कमल छाँड़ि कै माया-हाथ बिकानौ।
सूरदास आपुहिं समुझावै, लोग बुरौ जिनि मानौ॥६२॥

† जनम साहिबी करत गयौ।
कांया-नगर बड़ी गुंजाइस, नाहिँन कछु बढ़यौ।
हरि कौ नाम, दाम खोटे लौं, झकि-झकि डारि दयौ।
विषया-गाँव अमल कौ टोटौ, हँसि-हँसि कै उमयौ।
नैन-अमीन, अधर्मिनि कैँ[2] बस, जहँ कौ तहाँ छयौ।
दगाबाज कुतवाल काम रिपु, सरबस[3] लूटि लयौ।
पाप उजीर कह्यौ सोइ मान्यौ, धर्म-सुधन लुटयौ[4]।
चरनोदक कौँ छाँड़ि सुधा-रस, सुरा-पान अँचयौ

—३।
: केवल (स, ल,
इसके चरणों के पाठ

तथा क्रम मेँ भेद है। यहां (स) का
शुद्ध पाठ तथा क्रम रखा गया है।
(२) के सँग पाछे फिरत

धयौ—१८। (
(४) उमयौ—१८

कुबुधि-कमान चढ़ाइ कोप करि, बुधि-तरकस रितयौ।
सदा सिकार करत मृग-मन कौ, रहत मगन भुरयौ।
घेरयौ आइ कुटुम-लसकर मैं, जम अहदी पठयौ।
सूर नगर चौरासी भ्रमि-भ्रमि, घर-घर कौ जु भयौ॥६४॥

राग

* नर तैं जनम पाइ कह कीनौ ?
उदर भरयौ कूकर-सूकर लौं, प्रभु कौ नाम न लीनौ।
श्री भागवत सुनी नहिँ स्रवननि, गुरु गोविंद नहिँ चीनौ।
भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी, मन विषया मैं दीनौ।
झूठौ सुख अपनौ करि जान्यौ, परस प्रिया कैं भीनौ।
अघ कौ मेरु[1] बढ़ाइ अधम तू, अंत भयौ बलहीनौ।
लख चौरासी जोनि भरमि कै फिरि वाहीँ मन दीनौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु ज्यौं अंजलि-जल छीनौ॥६५॥

राग ब

‡ नीकैं गाइ गुपालहिँ मन रे।
जा गाए निर्भय पद पाए अपराधी अनगन रे।
गायौ गीध, अजामिल, गनिका, गायौ पारथ-धन रे।
गायौ स्वपच परम अघ-पूरन, सुत पायौ ब्राम्हन रे।
गायौ ग्राह-ग्रसत गज जल मैं, खंभ बँधे तैं जन रे।
गाए सूर कौन नहिँ उबरयौ, हरि परिपालन पन रे॥६६॥

ह पद केवल (स, ल, शा, कां) मैं है।
मैं है।

(1) भार—१६।

‡ यह पद केवल (स, ल,

* राग

† रह्यो मन सुमिरन कौ पछितायौ ।
यह[1] तन राँचि राँचि करि विरच्यौ, कियौ आपनौ भायौ ।
मन[2]-कृत-दोष अथाह तरंगिनि, तरि नहिँ सक्यौ, समायौ ।
मेल्यौ जाल काल जब खैँच्यौ, भयौ मीन[3] जल-हायौ ।
कीर पढ़ावत गनिका तारी, व्याध[4] परम पद पायौ ।
ऐसो सूर[5] नाहिँ कोउ दूजौ, दूरि करै जम-दायौ ॥ ६७ ॥

राग

‡ सब तजि भजिए नंद-कुमार ।
और भजे तैँ काम सरै नहिँ, मिटै न भव-जंजार ।
जिहिँ जिहिँ जोनि जन्म धारयौ, बहु जोरयौ अघ कौ भार ।
तिहिँ काटन कौँ समरथ हरि कौ तीछन नाम-कुठार ।
वेद, पुरान, भागवत, गीता, सब कौ यह मत सार ।
भव-समुद्र हरि-पद-नौका बिनु कोउ न उतारै पार ।
यह जिय जानि, इहीँ छिन भजि, दिन बीते जात असार ।
सूर[5] पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार ॥ ६८ ॥

* राग सूहा वि

§ यहई[6] मन आनंद-अवधि सब ।
[दे]खि सरूप विवेक-नयन भरि, या सुख तैँ नहिँ और कछू अ[ब]

---

[*] (क, कां) गौरी ।
[†] [य]ह पद (स, ल, शा, [कां]) में है ।
[1] यह तन आप आप करि केयौ आपनो भायो—२ ।
[2] [कृ]त नदी तरंग ते जबहीँ बहेउ चल्यौ जु सवायो—१४ ।
[3] मीन को हायो—१४ ।
[4] अजामील सुख पायो—१४ ।
[‡] यह पद केवल (स, ल, कां) में है ।
[5] सूरदास यह समय पा[इ]... इबौ—१६ ।
[*] (क, कां) विला[वल] ।
[§] यह पद (वे. ना, रा, श्या) में नहीं है ।
[6] यहई सही आनं[द] ... सब—१, १७ ।

चित[1] चकोर-गति करि अतिसय रति, तजि स्रम सघन विषय
चिंतनि चरन-मृदु-चारु-चंद-नख, चलत चिन्ह चहुँ दिसि
जानु सुजघन करभ-कर-आकृति, कटि प्रदेस किंकिनि
ह्रद बिंब नाभि, उदर त्रिवली बर, अवलोकत भव-भय
उरग-इंद्र उनमान सुभग भुज, पानि पदुम आयुध
कनक-वलय, मुद्रिका मोदप्रद, सदा सुभग संतनि
उर बनमाल विचित्र बिमोहन, भृगु-भँवरी भ्रम कौं
तड़ित-बसन घन-स्याम सदृस तन, तेज-पुंज तम कौं
परम रुचिर मनि-कंठ किरनि-गन, कुंडल-मुकुट-प्रभा
बिधु मुख, मृदु मुसुक्यानि अमृत सम, सकल लोक-लोचन
सत्य-सील-संपन्न सुमूरति, सुर-नर-मुनि-भक्तनि
अंग-अंग-प्रति-छवि-तरंग-गति सूरदास क्यों कहि आवै !

† रे मन, आपु कौं पहिचानि ।
सब जनम तैं भ्रमत खोयौ, अजहुँ तौ कछु जानि ।
ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै, सु तौ ताकैं पास ।
भ्रमत हीं वह दौरि ढूँढ़ै, जबहिं पावै बास ।
भरम ही बलवंत सब मैं, ईसहू कैं भाइ ।
जब भगत भगवंत चीन्हैं, भरम मन तैं जाइ ।
सलिल लौं सब रंग तजि कै, एक रंग मिलाइ ।
सूर जो द्वै रंग त्यागै, यहै भक्त सुभाइ ॥७०॥

---

(१) चित चकोर रति करि सोई
१—१४, १७ ।

† यह पद केवल (स, ख) में है ।

राग र

† राम न सुमिर्‌यौ एक घरी।

परम भाग सुकित के फल तैं सुंदर देह धरी।
जिहिँ जिहिँ जोनि भ्रम्यौ संकट-बस, सोइ-सोइ दुखनि भरी।
काम-क्रोध-मद-लोभ-गरब मैं, बिसर्‌यो स्याम हरी।
भैया-बंधु-कुटुंब घनेरे, तिनतैं कछु न सरी।
लै देही घर-बाहर जारी, सिर ठोंकी लकरी।
मरती बेर सम्हारन लागे, जो कछु गाड़ि धरी।
सूरदास तैं कछू सरी नहिँ, परी काल-फँसरी॥ ७१ ॥

‡ नर देही पाइ चित्त चरन-कमल दीजै।
दीन बचन, संतनि-सँग दरस-परस कीजै।
लीला-गुन अंमृत रस स्रवननि-पुट पीजै।
सुंदर मुख निरखि, ध्यान नैन माहिँ लीजै।
गद्‌गद सुर, पुलक रोम, अंग प्रेम भीजै।
सूरदास गिरिधर-जस गाइ गाइ जीजै॥७२॥

* राग

§ जनम सिरानौई सौ लाग्यौ।

रोम रोम, नख-सिख लौं मेरैं, महा अघनि[१] बपु पाग्यौ।
पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ तहँ भरमत भाग्यौ।
तीनौं पन ऐसैंहीं खोए, समय गए पर जाग्यौ

यह पद केवल (स, ल,   मैं है।   मैं है।
) मैं है।   * (कां) सारंग।   (१) अघनि—२
यह पद केवल (स, ल)   § यह पद केवल (शा, कां)

तौ तुम कोऊ तार्यौ नहिँ, जौ, मोसौँ पतित न तार्यौ।
हौं स्रवननि सुनि कहत न एकौ, सूर सुधारौ आग्यौ ॥७३॥

राग न...

† गाइ लेहु मेरे गोपालहिँ ।
नातरु काल-व्याल लेतै हैं, छाँड़ि देहु तुम सब जंजालहिँ ।
अंजलि के जल ज्यौं तन छीजत, खोटे कपट तिलक अरु मालहिँ ।
कनक-कामिनी सौँ मन बाँध्यौ, ह्वै गज चल्यौ स्वान की चालहिँ ।
सकल सुखनि के दानि आनि उर, दृढ़ बिस्वास भजौ नँदलालहिँ ।
सूरदास जो संतनि कौँ हित, कृपावंत मेटत दुख-जालहिँ ॥ ७४ ॥

* राग धनाश्री

‡ जौ[1] हरि-व्रत निज उर न धरैगौ ।
तौ[2] को अस त्राता जु अपुन करि, कर कुठावँ पकरैगौ ।
आन देव की भक्ति-भाइ करि, कोटिक कसब[3] करैगौ ।
सब वे दिवस चारि मन-रंजन, अंत काल बिगरैगौ ।
चौरासी लख जोनि जन्मि जग, जल-थल भ्रमत फिरैगौ ।
सूर सुकृत सेवक सोइ साँचौ, जो स्यामहिँ सुमिरैगौ ॥७५॥

※ राग सारंग

§ अंत के दिन कौं हैँ घनस्याम ।
माता-पिता-बंधु-सुत तौ लगि, जौ लगि जिहिँ[4] कौँ काम ।

---

† यह पद केवल (शा) में है।

* (कां) सारंग ।

‡ यह पद केवल (शा, कां) में है।

(1) जौ हरि तजि व्रत और धरैगो—१६ । (2) सो अपने पायन कौं आपुन कर कुठार पकरैगो—१६ । (3) कपट—१६ ।

※ (कां) कान्हरो ।

§ यह पद केवल (क, कां) में है।

(4) जिय को—१४ ।

मिष-रुधिर-अस्थि अँग जौलौं, तौलौं कोमल चा[illegible]
लगि यह संसार सगौ है जौ लगि लेहि न ना[illegible]
नी जड़ जानत सब सूरख, मानत याहीं धा[illegible]
हि न करत सूर सब भव-हर वृंदावन सौं ठाम ॥ ७६

[illegible]।

† तेरौ तब तिहिं दिन, को हितू हो हरि बिन,
सुधि करि कै छिन, तिहिं चित आनि।
जब अति दुख सहि, कठिन करम गहि,
राख्यौ हो जठर महिं स्रोनित सौं सानि।
जहाँ न काहू कौ गम, दुसह दारुन तम,
सकल बिधि बिषम, खल मल खानि।
समुझि धौं जिय माहिं, को जन सकत नाहिं,
बुधि बल कुल तिहिं, जायौ काकी कानि।
ऐसी आपदा तैं राख्यौ, तोष्यौ, पोष्यौ, जिय दयौ,
मुख - नासिका - नयन - स्रौन - पद - पानि।
सुनि कृतघन, निसि-दिन कौ सखा आपन,
अब जो बिसारयौ करि बिनु पहिचानि।
अजहुँ सँग रहत, प्रथम लाज गहत,
संतत सुभ चहत, प्रिय जन जानि।
सूर सो सुहृद मानि, ईस्वर अंतर जानि,
सुनि सठ, झूठौ हठ-कपट न ठानि ॥७७॥

[illegible] केवल (कं, का)
[illेgible]ाठ तथा छंद की शुद्धि
[illegible]र्वक की गई है।

रा

+ जनम तौ ऐसेहिँ बीति गयौ ।

जैसैँ रंक पदारथ पाए, लोभ बिसाहि लयौ ।
बहुतक जन्म पुरीष-परायन, सूकर-स्वान भयौ ।
अब मेरी मेरी करि बौरे, बहुरौ बीज बयौ ।
नर कौ नाम पारगामी हौ, सो तोहिँ स्याम दयौ ।
तैँ जड़ नारिकेल कपि-कर ज्यौँ, पायौ नाहिँ पयौ ।
रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौ न चयौ ।
सूर नंद-नंदन जेहिँ बिसरयौ, आपुहिँ आपु हयौ ॥७८॥

रा

‡ प्रीतम जानि लेहु मन माहीँ ।

अपनैँ सुख कौँ सब जग बाँध्यौ, कोउ काहू कौ नाहीँ
सुख मैँ आइ सबै मिलि बैठत, रहत चहूँ दिसि घेरे
बिपति परी तब सब सँग छाँड़े, कोउ न आवै नेरे
घर की नारि बहुत हित जासौँ, रहति सदा सँग लागी
जा छन हंस तजी यह काया, प्रेत प्रेत कहि भागी
या बिधि कौ ब्यौपार बन्यौ जग, तासौँ नेह लगायौ
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, नाहक जनम गँवायौ ॥७९

राग

§ क्यौँ तू गोविँद नाम बिसारौ ?

हूँ चेति, भजन करि हरि कौ, काल फिरत सिर ऊपर भ

' पद केवल (क, पू) मैँ है।
‡ पद केवल (क) मैँ है।
र्तन के साथ यह सिक्खों के 'ग्रंथ साहब' मैँ भी पाया जाता है। उसमैँ इसके रचयिता 'नानक' माने गए हैँ।

§ यह पद केव ... है।

सुत-दारा काम न आवैं, जिनहिं लागि आपुनपौ हारैं।
दास भगवंत-भजन बिनु, चल्यौ पछिताइ, नयन जल ढारौ ॥८०॥

राग

‡ जौ अपनौ मन हरि सौं राँचै।
आन उपाय-प्रसंग छाँड़ि कै, मन-बच-क्रम अनुसाँचै।
निसि-दिन नाम लेत हीं[1] रसना, फिरि जु प्रेम-रस माँचै।
इहिं बिधि सकल लोक मैं बाँचै,[2] कौन कहै अब साँचै।
सीत-उष्न, सुख-दुख नहिं मानै, हर्ष-सोक नहिं खाँचै[3]।
जाइ समाइ सूर वा निधि मैं, बहुरि जगत नहिं नाचै ॥८१॥

राग

‡ जो घट अंतर हरि सुमिरै।
ताकौ काल रूठि का करिहै, जो चित चरन धरै।
कोपै तात प्रहलाद भगत कौ, नामहिं लेत जरै।
खंभ फारि नरसिंह प्रगट ह्वै, असुर के प्रान हरै।
सहस बरस गज जुद्ध करत भए, छिन इक ध्यान धरै।
चक्र धरे बैकुंठ तैं धाए, वाकी पैज सरै।
अजामील द्विज सौं अपराधी, अंतकाल बिडरै[4]।
सुत-सुमिरत नारायन-बानी, पार्षद धाइ परैं।
जहँ-जहँ दुसह कष्ट भक्तनि कौं, तहँ तहँ सार करै।
सूरजदास स्याम सेए तैं दुस्तर पार तरै ॥८२॥

---

‡ पद केवल (क, पू)

(1) है—१७। (2) बिरचै—१७। (3) बांचै—१४, १७।

‡ यह पद केवल (

(4) बिगरै।

राग

† करि हरिसौं सनेह मन साँचौ।
निपट कपट की छाँड़ि अटपटी, इंद्रिय बस राखहि किन पाँचै
सुमिरन कथा सदा सुखदायक, विषधर विषय-विषम-विष बाँचै
सूरदास प्रभु हरि के सुमिरौ जौ, तौ आनँद करिकै नाँचै ॥८

राग

‡ हरि बिन अपनौ को संसार।
माया-लोभ-मोह हैँ चाँड़े काल-नदी की धार।
ज्यौं जन-संगति होति नाव मैँ, रहति न परसैँ पार।
तैसैँ धन-दारा-सुख-संपति, बिछुरत लगै न वार।
मानुष-जनम, नाम नरहरि कौ, मिलै न बारंबार।
इहिँ तन छन-भंगुर के कारन, गरबत कहा गँवार!
जैसैँ अंधौ अंध कूप मैँ गनत न खाल-पनार।
तैसेहिँ सूर बहुत उपदेसैँ सुनि सुनि गे कै बार ॥८४॥

राग ध

§ हरि बिनु मीत नहीँ कोउ तेरे।
सुनि मन, कहौँ पुकारि तोसौँ हौँ, भजि गोपालहिँ मेरे।
या संसार विषय-विष-सागर, रहत सदा सब घेरे।
सूर स्याम बिनु अंतकाल मैँ कोउ न आवत नेरे ॥८५॥

---

† यह पद केवल (क) मैँ

‡ यह पद केवल (क) मैँ है।

§ यह पद केवल (व
है।

† जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं ।
या देही कौ गरब न करियै, स्यार-काग-गिध खैहैं ।
तीननि मैं तन कृमि, कै बिष्टा, कै ह्वै खाक उड़ैहैं ।
कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहैं ।
जिन लोगनि सौं नेह करत है, तेई देखि घिनैहैं ।
घर के कहत सवारे काढ़ौ, भूत होइ धरि खैहैं ।
जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहैं ।
तेई[१] लै खोपरी बाँस दै, सीस फोरि बिखरैहैं ।
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति, संतनि मैं कछु पैहै ।
नर-बपु धारि नाहिं जन हरि कौं, जम की मार सो खैहै ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु वृथा सु जनम गँवैहै ॥८६॥

राग बिह

‡ अब तौ यहै बात मन मानी ।
छाड़ौं नाहिं स्याम-स्यामा की वृंदावन रजधानी ।
अन्यौ बहुत लघु धाम बिलोकत छन-भंगुर दुखदानी ।
सर्वोपरि आनंद अखंडित सूर-मरम लपिटानी ॥८७॥

केवल (क) में
(१) तेइ लै बांस दयौ खोपरी मैं ।
‡ यह पद
संकलित किया

† नहिं अस जनम बारंबार ।

पुरबलौ धौं पुन्य प्रगट्यौ, लह्यौ नर-अवतार ।
घटै पल-पल, बढ़ै छिन-छिन, जात लागि न वार ।
धरनि पत्ता गिरि परे तैं फिरि न लागै डार ।
भय-उदधि जमलोक दरसै, निपट ही अँधियार ।
सूर हरि कौ भजन करि-करि उतरि पल्ले-पार ॥८८॥

हमा राग

‡ को को न तर्यौ हरि-नाम लिएँ ।
सुवा पढ़ावत गनिका तारी, व्याध तर्यौ सर-घात किएँ
अंतर-दाह जु मिट्यौ व्यास कौ इक चित ह्वै भागवत किएँ
प्रभु तैं जन, जन तैं प्रभु बरतत, जाकी जैसी प्रीति हिएँ
जौ पै राम-भक्ति नहिं जानी, कहा सुमेरु सम दान दिएँ
सूरजदास विमुख जो हरि तैं, कहा भयौ जुग कोटि जिएँ !॥८

§ अदभुत राम नाम के अंक ।
धर्म-अँकुर के पावन द्वै दल, मुक्ति-बधू-ताटंक ।
मुनि-मन-हंस-पच्छ-जुग, जाकैं बल उड़ि ऊरध जात ।
जनम-मरन-काटन कौं कर्तरि तीछन बहु विख्यात ।
अंधकार-अज्ञान हरन कौं रवि-ससि जुगल-प्रकास ।
बासर-निसि दोउ करैं प्रकासित महा कुमग अनयास ।

---

† पद राग कल्पद्रुम से ... किया गया है ।

‡ यह पद केवल (ना, स, ... ल, कां) में है ।

§ यह पद केव... था) में है

दुहूँ लोक सुखकरन, हरनदुख, वेद-पुराननि साखि ।
भक्ति ज्ञान के पंथ सूर ये, प्रेम निरंतर भाखि ॥६०॥

* अब तुम नाम गहौ मन नागर ।
जातैं काल-अगिनि तैं बाँचौ, सदा रहौ सुख-सागर ।
मारि न सकै, विघन नहिं ग्रासै, जम न चढ़ावै कागर ।
क्रिया-कर्म करतहु निसि-बासर भक्ति कौ पंथ उजागर ।
सोचि बिचारि सकल-स्रुति-सम्मति, हरि तैं और न आगर ।
सूरदास प्रभु इहिं औसर भजि उतरि चलौ भवसागर ॥

‡ हमारे निर्धन के धन राम ।
चोर न लेत, घटत नहिं कबहूँ, आवत गाढ़ैं काम ।
जल नहिं बूड़त, अगिनि न दाहत, है ऐसौ हरि-नाम ।
बैकुंठनाथ सकल सुख-दाता, सूरदास-सुख-धाम ॥६२॥

§ तुम्हरी एक बड़ी ठकुराई ।
प्रति दिन जन-जन कर्म सवासन नाम हरै जदुराई ।
कुसुमित धर्म-कर्म कौ मारग जउ कोउ करत बनाई ।
तदपि बिमुख पाँती सो गनियत, भक्ति हृदय नहिं आई ।
भक्ति पंथ मेरे अति नियरैं जब तब कीरति गाई ।
भक्ति-प्रभाव सूर लखि पायौ, भजन-छाप नहिं पाई ॥६३

केवल (स, ल)   ‡ यह पद केवल (स, ल, श्या, ... कां) में है। यह भी कुछ परिवर्तन ...   से 'ग्रंथ साहब' ... § यह पद के ...

* राग

† बंदौं चरन-सरोज तिहारे।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, ललित त्रिभंगी प्रान-पियारे।
जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिंधु-सुता उर तैं नहिँ टारे।
जे पद-पदुम तात-रिस[1]-त्रासत, मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे।
जे पद-पदुम-परस-जल-पावन-सुरसरि-दरस कटत अघ भारे।
जे पद-पदुम-परस रिषि-पतिनी, बलि[2], नृग, ब्याध, पतित बहु तारे।
जे पद-पदुम रमत बृंदावन अहि[3]-सिर धरि, अगनित रिपु मारे।
जे पद-पदुम परसि ब्रज[4]-भामिनि सरबस दै, सुत-सदन बिसारे।
जे पद-पदुम रमत पांडव-दल दूत भए, सब काज सँवारे।
सूरदास तेई पद-पंकज त्रिबिध-ताप-दुख-हरन[5] हमारे ॥६४॥

* राग।

हरि जू, तुमतैं कहा न होइ?
‡ बोलै गुंग, पंगु गिरि लंघै अरु आवै अंधौ जग जोइ।
पतित अजामिल, दासी कुबिजा, तिनके[6] कलिमल डारे धोइ।
रंक सुदामा कियौ इंद्र-सम, पांडव-हित कौरव-दल खोइ।

(ना) नट नारायणी।
कान्हरा।
यह पद (ना, स, ल, सा, पू., रा, श्या) में दो
रों पर है। एक तो यहाँ
सरे "कालिय-दमन" के
हैं, कालिय की चर्चा की
है। इस संस्करण में
यह यहीं रखा गया है।

(१) सुत—२। (२) औरौ ब्याध अमित खल तारे—१४। (३) सुरभिनि सँग गाइनि बन चारे—२। (४) द्विज—२। (५) हरत—२।

* (ना) ईमन।

‡ इस चरण के अनंतर (ना) में ये दो पंक्तियाँ और हैं
दास इक हुते नृपति-सुत हतन बन सोइ। ढैन व
वियया पाई तारन तरन प्रभु सोइ।

(६) तिनहू के कलि
धोइ—१, ३, ८।

लक मृतक जिवाइ दए प्रभु[1], तब गुरु-द्वारैं आनँद होइ
दास-प्रभु इच्छापूरन, श्रीगुपाल सुमिरौ[2] सब कोइ ॥६

[*]

† बिनती करत मरत हौं लाज।
नख-सिख लौं मेरी यह देही है पाप की जहाज।
और पतित आवत न आँखि-तर देखत अपनौ साज।
तीनौं पन भरि ओर निबाह्यौ तऊ न आयौ बाज।
पाछैं भयौ न आगैं ह्वै है, सब पतितनि सिरताज।
नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज।
अबलौं नान्हे-नून्हे तारे, ते सब बृथा-अकाज।
साँचैं बिरद सूर के तारत, लोकनि-लोक अवाज ॥६६॥

[*]

‡ अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत[3] ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान॥६७॥

जो॰ आयौ दरबारै
म, १६। ②
२, ८, १६।
' धनाश्री ।
केवल (वे, कां)
वे) मेँ यह पद

"माया" के प्रसंग मेँ है। पर
(कां) मेँ विनय के पदों के
साथ मिलता है। इस संस्करण
मेँ यह विनय के पदों मेँ रक्खा
जाता है क्योंकि यह विनय का
ही पद समझ पड़ता है।

* (ना) '
बल।
‡ यह पद
रा) मेँ नहीं
③ निकसि
पारधी तातैं छूट

※ ·

हृदय की कबहुँ न जरनि घटी ।
बिनु गोपाल बिथा या तन की कैसैं जाति कटी ।
अपनी रुचि जित हीं जित ऐंचति इंद्रिय-कर्म[1]-गटी ।
हौं तित हीं उठि चलत कपट लगि, बाँधे नैन-पटी ।
झूठौ मन, झूठी सब काया, झूठी आरभटी[2] ।
अरु झूठनि के बदन निहारत मारत[3] फिरत लटी[4] ।
दिन-दिन हीन छीन भइ काया दुख-जंजाल-जटी ।
चिंता कीन्हैं[5] भूख भुलानी, नींद फिरति उचटी ।
मगन भयौ माया-रस लंपट, समुझत नाहिँ हटी[6] ।
ताकैं मूँड़ चढ़ी नाचति है मीच[7]ऽति नीच नटी ।
किंचित[8] स्वाद स्वान-बानर ज्यौं, घातक रीति ठटी ।
सूर सुजल सींचियै[9] कृपानिधि, निज जन चरन-तटी ॥६·

❀

अब कैं नाथ, मोहिँ उधारि ।
मगन हौं भव-अंबुनिधि मैं, कृपासिंधु मुरारि ।
नीर अति गंभीर माया, लोभ-लहरि तरंग ।
लिए जात अगाध जल कौं गहे ग्राह अनंग ।

ना) देवगंधार ।
ग्रम—१, २, ३ । ②
—२ । आरट्टी—३ ।
—६, ८ । ③ पारत
—२ । ④ सटी—६,
८ । ⑤ के भय—३ । ⑥ नटी—
२ । ⑦ नीच मटी—२ । बीच
बटी—३ । ⑧ खैंचत स्वाद
स्वान पातर ज्यौं—१, ६, ८, १६ ।
⑨ सींचे करनानिधि निज जन
जरनि मिटी—६,
※ (ना) बि
बिलावल ।

मीन इंद्री तनहिं[1] काटत, मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत, उरझि मोह सिवार।
क्रोध-दम्भ-गुमान-तृष्ना पवन अति झकझोर।
नाहिं चितवत देत सुत-तिय, नाम-नौका ओर।
थक्यौ बीच बिहाल, बिह्वल, सुनौ करुना-मूल!
स्याम, भुज गहि काढ़ि लीजै[2], सूर ब्रज कैं कूल ॥९९॥

* राग

माधौ जू, मन हठ कठिन परयौ।
जद्यपि विद्यमान सब निरखत, दुःख सरीर भरयौ
बार-बार निसि-दिन अति आतुर, फिरत दसौं दिसि धाए
ज्यौं सुक सेमर-फूल बिलोकत, जात नहीं बिनु खाए
जुग-जुग जनम, मरन अरु बिछुरन, सब समुझत मत-भेव
ज्यौं दिनकरहिं उलूक न मानत, परि आई यह टेव
हौं कुचील, मति-हीन सकल बिधि, तुम कृपालु जग जान
सूर-मधुप निसि कमल-कोप-बस, करौ कृपा-दिन-भान ॥१००॥

*रा

आछौ गात अकारथ गारयौ।
करी न प्रीति कमल-लोचन सौं, जनम जुवा ज्यौं हारयौ
‡निसि-दिन विषय-बिलासनि बिलसत, फूटि[2] गईं तव चारयौ
‡अब लाग्यौ पछितान पाइ दुख, दीन, दई कौ मारयौ

अतिहि —१, १४, १६।
—१४, १७।
कां) धनाश्री।

* (ना) बिहागरौ।
‡ ये दो चरण (शा, ना/३, रा) में नहीं हैं।

③ बीति गए पल
२। बहुत कियौ हैं
१६।

कामी, कृपन[1], कुचील, कुदरसन, को न कृपा करि तार्‍यौ ।
तातैं कहत दयाल देव-मनि, काहैं सूर बिसार्‍यौ ? ॥१०१॥

* र

माधौ जू, मन सबही बिधि पोच ।
अति उनमत्त, निरंकुस, मैगल, चिंता-रहित, असोच ।
महा मूढ़ अज्ञान-तिमिर महँ, मगन होत सुख मानि ।
तेली के वृष लौं नित भरमत, भजत न सारँगपानि ।
गीध्यौ दुष्ट[2] हेम तस्कर ज्यौं, अति आतुर मति-मंद ।
लुबध्यौ स्वाद[3] मीन-आमिष[4] ज्यौं, अवलोक्यौ नहिं फंद ।
ज्वाला-प्रीति[5] प्रगट सन्मुख हठि[6], ज्यौं पतंग तन जार्‍यौ ।
विषय-असक्त, अमित-अघ-व्याकुल, तबहूँ कछु न सँभार्‍यौ ।
ज्यौं कपि सीत-हतन[7]-हित गुंजा सिमिटि होत लौलीन ।
त्यौं सठ वृथा तजत नहिं कबहूँ, रहत विषय-आधीन ।
सेमर-फूल सुरँग अति निरखत, मुदित होत खग-भूप ।
परसत चोंच तूल उघरत मुख, परत दुःख कैं कूप ।
‡जहाँ गयौ तहँ भलौ न भावत, सब कोऊ सकुचानौ ।
‡ज्ञान और वैराग भक्ति, प्रभु, इनमैं कहूँ न सानौ ।
और कहाँ लौं कहौं एक मुख, या मन के कृत काज ।
सूर पतित तुम पतित-उधारन, गहौ बिरद की लाज ॥१०२॥

कुटिल—१ ।
कों) यथाश्री ।
दीठ—१, १२, १३ ।
। ③ स्वान—२, ६,
, ८, १८ । आमि—१३ । ④
आतुर—१ । ⑤ परति—२ ।
बरत—३ । ⑥ तिहिं—२ ।
⑦ हुतासन—१, २, ३, ४, ८,
१८, १३ ।
‡ ये दो चरण के
ना) में हैं ।

मेरो मन मति-हीन गुसाईं ।

सब सुख-निधि पद-कमल छाँड़ि, स्रम करत स्वान की नाईं
फिरत वृथा भाजन अवलोकत, सूनैं सदन अजान
तिहिँ लालच कबहूँ, कैसैंहूँ, तृप्ति न पावत प्रान
कौर-कौर-कारन कुबुद्धि, जड़, किते सहत अपमान
जहँ-जहँ जात तहाँ तहिँ त्रासत अस्म, लकुट, पद-त्रान
तुम सर्वज्ञ[1], सबै बिधि पूरन, अखिल-भुवन-निज-नाथ
तिन्हैं छाँड़ि यह सूर महा सठ, भ्रमत[2] भ्रमनि कैं साथ ।

*

दयानिधि[3] तेरी गति लखि न परै ।

धर्म अधर्म, अधर्म धर्म करि, अकरन करन करै ।
जय अरु विजय कर्म[4] कह कीन्हौ, ब्रह्म-सराप दिवायौ ।
असुर-जोनि ता ऊपर दीन्ही, धर्म-उछेद करायौ ।
पिता-बचन खंडै सो पापी, सोइ प्रह्लादहिँ कीन्हौ ।
निकसे खंभ-बीच तैं नरहरि, ताहि अभय पद दीन्हौ ।
दान-धर्म बहु कियौ भानु-सुत, सो तुव बिमुख कहायौ ।
बेद-बिरुद्ध सकल पांडव-कुल, सो तुम्हरैं मन भायौ ।
जज्ञ करत बैरोचन कौ सुत, बेद-बिहित[5]-बिधि-कर्मा ।
सो छलि[6] बाँधि पताल पठायौ, कौन कृपानिधि, धर्मा ?

कृतज्ञ सबही—३। ② धनाश्री । (कां) नट । ८। अकर्म कियो का
२. ३ । ③ करुनामय—१, ३, ६, विमल—१, १३ ।
ना) ईमन । (क) १३ । ④ कहा अकरम कियौ— ६, ८, १६, १८ । ⑥

द्विज-कुल-पतित अजामिल विषयी, गनिका-हाथ[1] बिकायौ।
सुत-हित नाम लियौ नारायन, सो बैकुंठ पठायौ।
पतिब्रता जालंधर-जुवती, सो पति-ब्रत तैं टारी।
दुष्ट पुंस्चली, अधम सो गनिका सुवा पढ़ावत तारी।
मुक्ति-हेत जोगी स्रम[2] साधैं, असुर बिरोधैं[3] पावै।
अबिगत गति करुनामय तेरी, सूर कहा कहि गावै॥

अबिगत-गति जानी न परै।
मन-बच-कर्म[4]-अगाध, अगोचर, किहिं बिधि बुधि सँचरै?
अति प्रचंड पौरुष बल पाएँ[5], केहरि भूख मरै।
अनायास[6] बिनु उद्यम कीन्हैं[7], अजगर उदर भरै।
रीतै भरै, भरैं पुनि ढारै, चाहै फेरि भरै।
कबहुँक तृन बूड़ै पानी मैं, कबहुँक सिला तरै।
बागर तैं सागर करि डारै[8], चहुँ दिसि नीर भरै।
पाहन-बीच कमल बिकसावै[9], जल मैं अगिनि जरै।
राजा रंक, रंक तैं राजा, लै सिर छत्र धरै।
सूर पतित तरि जाइ छिनक[10] मैं, जौ प्रभु नैंकु ढरै॥

*

अपनी भक्ति देहु भगवान।
कोटि लालच जौ दिखावहु, नाहिनैं रुचि आन।

...नेह बगायौ—१, २, ... ② स्रम कीनौ—१। ... करि—२। बहु स्रम ... श्रम करि करि— ... ③ बिरोधी—२। ④ अनाम—१, ६, ८, १४, १६, १८, १९। ⑤ मातौ—८, १४। ⑥ बिन आसा—१, १९। ⑦ सहजाहिं—१४। ⑧ रावै— १, ८, १९। ⑨ बिकसाही १, १४, १९। परकारें ... तनक—१, १२। पर...

* (ना) बिल... सारंग। (रा) धन...

जा दिना तैं जनम पायौ, यहै मेरी रीति।
विषय-विष हठि खात, नाहीं डरत करत अनीति।
जरत ज्वाला, गिरत गिरि तैं, स्वकर[1] काटत[2] सीस।
देखि साहस सकुच मानत, राखि सकत न ईस।
‡कामना करि[3] कोटि कबहूँ किए बहु पसु-घात।
‡सिंह-सावक ज्यौं[4] तजैं गृह, इंद्र आदि डरात।
नरक कूपनि[5] जाइ जमपुर पर्‌यौ बार अनेक।
थके किंकर-जूथ जमके, टरत टारैं न नेक।
महा माचल, मारिबे की सकुच नाहिं न मोहिं।
किए प्रन हौं पर्‌यौं द्वारैं, लाज प्रन की तोहिं।
नाहिं काँचौ कृपा-निधि हौं, करौ कहा रिसाइ।
सूर तबहुँ न द्वार छाँड़ै, डारिहौ[6] कढ़िराइ ॥१०६॥

* राग

† जन के उपजत दुख किन काटत ?
जैसैं[7] प्रथम-अषाढ़-आँजु-तृन, खेतिहर निरखि उपाटत।
जैसैं मीन[8] किलकिला दरसत, ऐसैं[9] रहौ प्रभु डाटत।
पुनि पाछैं अघ-सिंधु बढ़त[10] है, सूर खाल किन पाटत ॥१०७॥

— ८। ② ...रग (स, क, रा) ...पि कबहू (कीनौ) १६। कौं कोप ④ जात गृह तजि

इंद्र अधिक—१, ६, ८, १६। ⑤ कुंभी—२। ⑥ काढ़िहौ—२।

* (का) सारंग।

† यह पद (ना) में नहीं है।

⑦ जैसे प्रथम अषाढ़ के वृषनि खेतहर निरखि ...१, १६। ⑧ नैन—८। ...रहु ऐसैं प्रभु दाटत— ...बढ़ैगो—१६।

* रा

कीजै प्रभु अपने बिरद की लाज।

महा पतित, कबहूँ नहिं आयौ, नैंकु तिहारैं काज।
माया सबल धाम-धन-बनिता बाँध्यौ हौं इहिं साज।
देखत-सुनत सबै जानत हौं, तऊ न आयौ[1] बाज।
कहियत पतित बहुत तुम तारे, स्रवननि सुनी अवाज।
दई न जाति खेवट[2] उतराई, चाहत चढ़्यौ जहाज?
लीजै पार उतारि सूर कौं महाराज ब्रजराज।
नई न करन कहत प्रभु, तुम हौ सदा गरीब-निवाज॥१०८॥

* राग

महा प्रभु, तुम्हैं बिरद की लाज।

कृपा-निधान, दानि, दामोदर, सदा सँवारन काज
जब गज-चरन ग्राह गहि राख्यौ, तबहीं[3] नाथ पुकार्‌यौ
तजि कै गरुड़ चले अति आतुर, नक्र[4] चक्र करि मार्‌यौ
निसि-निसि ही रिषि लिए सहस-दस दुरबासा पग धार्‌यौ
ततकालहिं तब प्रगट भए हरि, राजा-जीव उबार्‌यौ
हिरनाकुस प्रहलाद भक्त कौं बहुत सासना जार्‌यौ
रहि न सके, नरसिंह रूप धरि, गहि कर असुर पछार्‌यौ
दुस्सासन गहि केस द्रौपदी, नगन करन कौं ल्यायौ
सुमिरत हीं ततकाल कृपानिधि, बसन-प्रवाह बढ़ायौ

---

*(ना) सारंग।
① आवै बाज—३। ②
, २, ६, ८।

* (ना) नट।
③ तब तुम्हैं—१, २।

④ पकरि चक्र कर
२, ८, ११।

मागधपति बहु जीति महीपति, कछु जिय मैं गरबाए ।
जीत्यौ जरासंध, रिपु मारयौ, बल करि भूप छुड़ाए ।
महिमा अति अगाध, करुनामय भक्त-हेत हितकारी ।
सूरदास पर कृपा करौ अब, दरसन देहु मुरारी ॥१०९॥

* राग धना

सरन आए की प्रभु[1], लाज धरिए ।
सच्यौ नहिं धर्म सुचि, सील, तप, व्रत कछू, कहा मुख लै तुम्हैं विनै करिए
कछू चाहौं कहौं, सकुचि मन मैं रहौं, आपने[2] कर्म लखि त्रास आवै
यहै निज सार, आधार मेरौ यहै, पतित-पावन बिरद बेद गावै
जन्म तैं एक टक लागि आसा रही, बिषय-बिष खात नहिं तृप्ति मानी
जो छिया छरद करि सकल संतनि तजी, तासु तैं मूढ़-मति प्रीति ठानी
पाप-मारग जिते, सबै[3] कीन्हे तिते, बच्यौ[4] नहिं कोउ जहँ सुरति मेरी
सूर अवगुन भरयौ, आइ द्वारैं परयौ, तकै गोपाल, अब सरन[5] तेरी ॥११०

⊛ राग धना

प्रभु[6], मेरे गुन-अवगुन न बिचारौ ।
कीजै[7] लाज सरन आए की, रवि-सुत-त्रास निवारौ ।
जोग[8]-जज्ञ-जप-तप नहिं कीन्हौ, बेद बिमल नहिं भाख्यौ ।
अति रस-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौं, अनत नहीं चित राख्यौ ।

---

* (ना) मारू ।
① उर—१ । जिय—३ ।
② कर्म अपने जानि—१, २, ८, ६ । ③ तेब—१, २, ३, १९ ।
④ तज्यौ—२ । ⑤ ओट—२, ३, ६, ८, १८ ।
⊛ (ना) टोड़ी ।
⑥ प्रभु मेरे अवगुन न बिचारौ—१४ । ⑦ धरि जिय—
१४ । ⑧ मैं न जोग जप [illegible]
ब्रत—६, ८ ।

जिहिँ जिहिँ जोनि फिरयौ संकट-बस तिहिँ[1] तिहिँ यहै कमायौ ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-ग्रसित ह्वै[2] विषय परम विष खायौ ।
जौ गिरिपति मसि घोरि उदधि मैं, लै[3] सुरतरु विधि[4] हाथ ।
मम कृत दोष लिखै[5] बसुधा भरि, तऊ नहीं मिति नाथ ।
तुमहिँ समान और नहिँ दूजौ काहि भजौं हौं दीन ।
कामी[6], कुटिल, कुचील, कुदरसन, अपराधी, मति-हीन ।
तुम तौ[7] अखिल, अनंत, दयानिधि, अबिनासी, सुख-रासि ।
भजन-प्रताप नाहिँ मैं जान्यौ, परयौ[8] मोह की फाँसि[9] ।
तुम सरवज्ञ, सबै बिधि समरथ, असरन-सरन मुरारि ।
मोह[10]-समुद्र सूर बूड़त है, लीजै भुजा पसारि ॥ १११ ॥

* राग

तुम हरि, साँकरे के साथी ।
सुनत पुकार, परम आतुर ह्वै, दौरि छुड़ायौ हाथी ।
गर्भ परीच्छित रच्छा कीन्ही, बेद-उपनिषद साखी ।
बसन बढ़ाइ[11] द्रुपद-तनया की सभा माँझ पति राखी ।
राज-रवनि गाईं व्याकुल ह्वै, दै दै तिनकौं धीरक ।
मागध हति राजा सब छोरे, ऐसे प्रभु पर-पीरक ।
‡कपट रूप निसिचर तन धरिकै अमृत पियौ गुन मानी ।
‡कठिन परैं ताहू मैं प्रगटे, ऐसे प्रभु सुख-दानी ।

। तहँ तहँ—३, ८ । (२) ... , ३, ८ । (३) लै सारद ... ८ । (४) बिन—१, ३, ... (५) लिखौं—३, १६ । ... टी—१३ । (७) अखिल ... [illegible] —१, ३, ८ । तुम ... [illegible] अनंत लोकपति अघ-मोचन सुखरासि—१७ । (८) बँध्यौ—२, ३, ८ । (९) पास—२, ८ । (१०) कृपानिधान—२, ३, ६ ।

* (ना) देवगंधार । (कां) परज ।

(११) बढ़ाए द्रुपदसुता के—२, ३, ६ ।

‡ ये दोनों चरण के ... का, ना, कां, श्या) में हैं ... पाठों में बड़ा अंतर है । ... पाठ जो अधिक सार्थक है ... रक्खा गया है ।

ऐसैं कहौं कहाँ लगि गुन-गन, लिखत अंत नहिं लहिए।
कृपासिंधु उनहीं के लेखैं मम लज्जा निरबहिए।
सूर तुम्हारी आसा निबहै, संकट मैं तुम साथै।
ज्यौं जानौ त्यौं करौ, दीन की बात सकल तुव हाथै॥

तुम बिनु साँकरैं को काकौ।
तुमहीं देहु[1] बताइ देवमनि, नाम लेउँ धौं ताकौ।
गर्भ परीच्छित रच्छा कीनी, हुतौ नहीं बस माँ कौ।
मेटी पीर परम पुरुषोत्तम, दुख मेट्यौ दुहुँ-घाँ कौ।
हा करुनामय कुंजर टेरयौ, रह्यौ नहीं बल, थाकौ।
लागि पुकार तुरत छुटकायौ, काट्यौ बंधन ताकौ।
अंबरीष कौं साप देन गयौ, बहुरि[2] पठायौ ताकौं।
उलटौ गाढ़ परी दुर्बासैं, दहत सुदरसन जाकौं।
निधरक भए पांडु-सुत डोलत, हुतौ नहीं डर काकौ।
चारौं बेद चतुर्मुख ब्रह्मा जस गावत हैं ताकौ।
जरासिंधु कौ जोर उघारयौ, फारि कियौ दै फाँकौ।
छोरी बंदि बिदा किए राजा, राजा ह्वै गए राँकौ।
सभा-माँझ द्रौपदि-पति राखी, पति[3] पानिप कुल ताकौ[4]।
बसन-ओट करि कोट बिसंभर, परन न दीन्हौ झाँकौ।

मन। (का, ना, रा) ८, १६, १८, ३१। (२) हेरि न पायौ ताकौ—२, ६, ८। फिरयौ सुदरसन चाकौ—१६। (३) पति जानै गुन जाको—६, ८, १६।
रज।
दयाल—१, २, ६,

भीर परेँ भीषम-प्रन राख्यौ, अर्जुन कौ रथ हाँकौ ।
रथ तैँ उतरि चक्र कर लीन्हौ, भक्तबछल-प्रन ताकौ ।
नरहरि ह्वै हिरनाकुस मार्‌यौ, काम पर्‌यौ हो बाँकौ ।
गोपीनाथ सूर के प्रभु[1] कैँ बिरद न लाग्यौ टाँकौ ॥११३॥

* राग कान्हरौ

तुम्हरी कृपा गोपाल[2] गुसाईँ, हौँ अपने अज्ञान न जानत ।
उपजत दोष नैन नहिँ सूझत, रवि की किरनि उलूक न मानत ।
सब सुख-निधि[3] हरिनाम महामनि, सो पाएहुँ नाहीँ पहिचानत ।
परम कुबुद्धि, तुच्छ रस-लोभी, कौड़ी लगि[4] मग की रज छानत ।
सिव कौ धन[5], संतनि कौ सरवस, महिमा बेद-पुरान बखानत ।
इते मान यह सूर महा सठ, हरि-नग[6] बदलि, बिषय[7]-बिष[8] आनत ॥११४॥

* राग बिलावल

अपनैँ जान मैँ बहुत करी ।
कौन भाँति हरि कृपा तुम्हारी, सो स्वामी, समुझी न परी ।
दूरि गयौ दरसन के ताईँ[9], ब्यापक[10] प्रभुता सब बिसरी ।
मनसा-बाचा-कर्म-अगोचर सो मूरति नहिँ नैन धरी ।
गुन बिन गुनी, सुरूप रूप बिन, नाम बिना[11] श्री स्याम हरी ।
कृपा-सिंधु, अपराध अपरिमित, छमौ, सूर तैँ सब बिगरी ॥११५॥

---

(१) स्वामी है समुद्र करना —३, १६ ।
* (ना) जैतश्री । (का, इ) [illegible]गावल ।
(२) कृपाल—२ । गोबिँद— । (३) कौ सुख नाम महा- —२, ६ । (४) बदले मग रज छानत—१, ३, ८, १६ । लगि मग मग रज छानत—१४ ।
(५) ध्यान संत कौ—८ । (६) मग—३ । (७) बिघन खल—२ । (८) खरि—१ । खल—३ । खर—८ । धर—१४ ।
* (ना) अरइे बिलावल ।
(९) कारन—२, ८, १४ नाते—१६ । (१०) तुव महिम प्रभुता (बिभुता) बिसरी—२ १४ । (११) लेत—१, ३, ६, ८ १६, १८, १९ ।

राग

तुम प्रभु[1], मोसौं बहुत करी ।

नर-देही दीनी सुमिरन कौं, मो पापी तैं कछु न सरी ।

गरभ-वास अति त्रास, अधोमुख, तहाँ न मेरी सुधि बिसरी ।

पावक-जठर[2] जरन नहिँ दीन्हौ, कंचन सी मम[3] देह करी[4]

जग मैं जनमि पाप बहु कीन्हे, आदि-अंत लौं सब बिगरी[5]

सूर पतित, तुम पतित-उधारन, अपने बिरद की लाज धरी ॥११६॥

* राग

[6]माधौ जू, जौ जन तैं बिगरै ।

तउ[7] कृपाल, करुनामय केसव, प्रभु नहिँ जीय धरै ।

जैसैं जननि-जठर-अंतरगत सुत अपराध करै ।

तौऊ जतन करै अरु पोषै, निकसैं[8] अंक भरै ।

जद्यपि मलय-वृच्छ जड़ काटै, कर कुठार पकरै ।

तऊ सुभाव न[5] सीतल छाँड़ै, रिपु-तन-ताप हरै ।

धर. बिधंसि नल करत किरषि हल, बारि, बीज बिथरै ।

सहि सन्मुख तउ सीत-उष्न कौं, सोई सुफल करै[9] ।

गोपाल—१, २, १६ ।
—२, ८ । ③ मेरी—
। ④ धरी—१, २ ।
ी—२ ।
(ना) नटनारायनी ।
यह पद (स, शा, क) में
एकाधिक स्थानों पर है । एक तो
विनय में और दूसरे किंचित् पाठां-
तर से ब्रह्म-स्तुति में । (ल, के)
में यह केवल ब्रह्मस्तुति में है.
और (वे, ना) में केवल विनय
में । इस संस्करण में भी यह
विनय में ही रक्खा जा
⑥ सुनि—२,
बिगरै—१, ३ । ⑧
तल—१ । सुसील सु
⑨ फरै—१६ ।

रसना द्विज दलि दुखित होति बहु, तउ रिस कहा करै !
छमि[1] सब छोभ जु छाँड़ि, छवै रस लै समीप सँचरै।
कारन-करन, दयालु, दयानिधि, निज[2] भय दीन डरै।
इहिँ कलिकाल-व्याल-मुख-ग्रासित सूर सरन उबरै॥११७॥

* राग कान्हरौ

दीन-नाथ अब बारि तुम्हारी।
पतित उधारन बिरद जानि कै, बिगरी लेहु सँवारी।
बालापन खेलत[3] ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मातैँ।
वृद्ध भए सुधि प्रगटी मोकौँ, दुखित पुकारत तातैँ।
सुतनि तज्यौ, तिय तज्यौ, भ्रात तज्यौ, तन तैँ त्वच भई न्यारी।
स्रवन न सुनत, चरन-गति थाकी, नैन भए जलधारी।
पलित केस, कफ कंठ बिरुंध्यौ, कल न परति दिन-राती।
माया-मोह न छाँड़ै तृष्ना, ये दोऊ दुख-थाती[4]।
अब यह बिथा दूरि करिबे कौँ और न समरथ कोई।
सूरदास-प्रभु करुना-सागर, तुमतैँ होइ सो होई॥११८॥

* राग आसावरी

पतितपावन जानि सरन आयौ।
उदधि-संसार सुभ नाम-नौका तरन, अटल अस्थान निजु निगम गायौ।
व्याध अरु गीध, गनिका, अजामील द्विज, चरन गौतम-तिया[5] परसि पायौ।
अंत औसर अरध-नाम-उच्चार करि सुम्रत गज ग्राह तैँ तुम छुड़ायौ।

---

(१) जद्यपि अंग विभंग होत है है समीप सँचरै—१, ११। छमि सत (छत) छोभ छीर मधु मिस्रित मुख समीप सँचरै—१४, १७।

(२) तजि नहिँ दीन टरै—१।

* (ना) आसावरी।

(३) खेलन मैँ—३।

(४) दाती—१, ११।

* (ना) मारू। (क) धनाश्री।

(५) नारि—१, ३, ६, ८, १४, १६, १८, १९।

अबल प्रह्लाद, बलि दैत्य[1] सुखहीं भजत, दास ध्रुव चरन चित-सीस नायौ।
पांडु-सुत बिपति-मोचन महादास लखि, द्रौपदी-चीर नाना बढ़ायौ।
भक्त-बत्सल कृपा-नाथ असरन-सरन, भार-भूतल-हरन जस[2] सुहायौ।
सूर प्रभु-चरन चित चेति चेतन[3] करत, ब्रह्म-सिव-सेस-सुक-सनक ध्यायौ॥११९॥
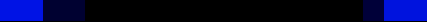
* राग आसावरी

(श्री) नाथ सारंगधर कृपा करि दीन पर, हरन भव-त्रास तैं राखि लीजै।
नाहिँ जप, नाहिँ तप, नाहिँ सुमिरन-भजन, सरन आए की अब लाज कीजै।
जीव जल थल जिते, बेष धरि धरि तिते, अटत दुरगम अगम अचल भारे।
मुसल मुदगर हनत, त्रिबिध करमनि गनत, मोहिँ दंडत धरम-दूत हारे।
बृषभ, केसी, प्रलँब, धेनुक रु पूतना, रजक, चानूर से दुष्ट तारे।
अजामिल गनिका तैं कहा मैं घटि कियौ, तुम जो अब सूर चित तैं बिसारे॥१२०॥

* राग आसावरी

कबहूँ तुम नाहिँन गहरु कियौ।
सदा सुभाव सुलभ सुमिरन बस, भक्तनि अभै दियौ।
गाइ-गोप-गोपीजन-कारन गिरि कर-कमल लियौ।
अघ-अरिष्ट, केसी, काली मथि दावानलहिँ पियौ।
कंस-बंस बधि, जरासंध हति, गुरु-सुत आनि दियौ।
करषत सभा द्रुपद-तनया कौ अंबर अछय[4] कियौ।
सूर स्याम सरबज्ञ कृपानिधि, करुना-मृदुल-हियौ।
काकी सरन जाउँ नँदनंदन[5], नाहिँन और बियौ॥१२१॥

---

(१) बलवंत—२। (२) जन—२, १४। (३) चिंतन—१४।

* (ना) मारू। (का, ना२, कां, रा) धनासिरी। (क) सारंग चर्चरी।

* (ना, कां) सारंग। (का, ना२, क, रा) धनाश्री।

(४) आनि कृपौ—२, १७। (५) करुनामय—१, ८ जदुनंदन—१४।

तातैं तुम्हरौ भरोसौ आवै।
दीनानाथ पतित-पावन, जस बेद-उपनिषद गावै।
जौ तुम कहौ कौन खल तार्‌यौ, तौ हौं बोलौं साखी।
पुत्र-हेत सुर-लोक गयौ द्विज, सक्यौ न कोऊ राखी।
गनिका किए कौन ब्रत-संजम, सुक-हित नाम पढ़ावै।
मनसा करि सुमिर्‌यौ गज बपुरैं[1], ग्राह प्रथम[2] गति पावै।
बकी जु गई घोष मैं छल करि, जसुदा की गति दीनी।
और कहति स्रुति, बृषभ-ब्याध की जैसी गति तुम कीनी।
द्रुपद-सुताहिं दुष्ट दुरजोधन सभा माहिं पकरावै।
ऐसौ और कौन करुनामय, बसन-प्रवाह बढ़ावै?
दुखित जानिकै सुत कुबेर के, तिन्ह लगि आपु बँधावै।
ऐसौ को ठाकुर, जन-कारन दुख सहि, भलौ मनावै?
दुरबासा दुरजोधन पठयौ पांडव-अहित बिचारी।
साक[3] पत्र लै सबै अघाए, न्हात भजे कुस डारी।
देवराज मघ-भंग जानि कै बरष्यौ ब्रज पर आई।
सूर स्याम राखे सब निज कर, गिरि लै भए सहाई ॥१२२॥

❀ २

दीन कौ दयाल सुन्यौ, अभय-दान-दाता।
साँची बिरुदावलि, तुम जग के पितु माता।

[illegible]ा) धनाश्री।
[illegible]ी—३, ८। ② परम
[illegible], ६, १२। ③ सुमि-
[illegible]रत तीनौं लोक अघाए न्हात भज्यौ कुस डारी—१। साक पत्र लै सबै अघाने जन आपदा बिदारी—२।

❀ (ना) भैर

ब्याध-गीध-गनिका-गज इनमैं को ज्ञाता ?
सुमिरत तुम आए तहँ, त्रिभुवन विख्याता ।
केसि-कंस दुष्ट मारि, मुष्टिक कियौ घाता ।
धाए[1] गजराज-काज, केतिक यह बाता ।
तीनि लोक बिभव दियौ तंदुल के खाता ।
सरबस प्रभु रीझि देत तुलसी कैं पाता ।
गौतम की नारि तरी नैंकु परसि लाता ।
और को[2] है तारिबे कौं, कहौ कृपा-ताता ।
माँगत है सूर त्यागि[3] जिहिँ तन-मन राता ।
अपनी प्रभु भक्ति देहु जासौं तुम[4] नाता ॥१२३॥

सो कहा जु मैं न कियौ (जो) सोइ चित्त धरिहौ
पतित-पावन-बिरद साँच (तौ) कौन भाँति करिहौ
जब तैं जग जनम लियौ, जीव नाम[5] पायौ
तब तैं छुटि औगुन इक नाम न कहि आयौ
साधु-निंदक, स्वाद-लँपट, कपटी, गुरु-द्रोही
जेते अपराध जगत, लागत सब मोहीँ
गृह-गृह प्रति द्वार फिर्‌यौ, तुमकौं प्रभु छाँड़े
अंध अंध टेकि चलै, क्यौं न परै गाड़े[6]

ध्रु व राज काज— मम हित करु बाता—३ । (३) धनाश्री ।
१६ । (२) कुटिल त्याग—२, १४ । (४) चित (५) हौं
काहे गर्वाता— राता—२ । है नाता—१६ । खाड़े—२, ३
पतित तारि तारि * (ना) देव साख । (क)

‡सुकृती-सुचि-सेवकजन काहि न जिय भावै।
‡प्रभु की प्रभुता यहै जु दीन सरन पावै।
कमल[1]-नैन, करुनामय, सकल-अँतरजामी।
विनय कहा करै सूर, कूर, कुटिल, कामी॥ १२४॥

* रा

कौन गति करिहौ मेरी नाथ!
हौं तौ कुटिल, कुचील, कुदरसन, रहत बिषय के साथ।
दिन बीतत माया कैं लालच, कुल-कुटुंब कैं हेत।
सिगरी रैनि नींद भरि सोवत जैसैं पसू अचेत।
कागद[2] धरनि, करै द्रुम लेखनि, जल-सायर मसि घोरै।
लिखै गनेस जनम भरि मम कृत, तऊ दोष नहिं ओरै।
‡ गज, गनिका अरु विप्र अजामिल, अगनित अधम उधारे।
‡ यहै जानि अपराध करे मैं तिनहूँ सौं अति भारे।
लिखि लिखि मम अपराध जनम के, चित्रगुप्त अकुलाए।
भृगु रिषि आदि सुनत चकित भए, जम सुनि सीस डुलाए।
परम पुनीत-पवित्र, कृपानिधि, पावन-नाम कहायौ।
सूर पतित जब सुन्यौ बिरद यह, तब धीरज मन आयौ॥ १२५॥

* राग

मेरी कौन गति ब्रजनाथ?
भजन विमुखऽरु सरन नाहीं, फिरत बिषयनि साथ।

दोनों चरण केवल (क)
स्यामसुंदर—१४।

* (ना) बिलावल।
(२) कायर—६।
‡ ये दोनों चरण केवल (वे,
स, श्या) में हैं।
* (ना) भैरवी।

काकैं द्वार जाइ होउँ ठाढ़ौ, देखत काहि सुहाउँ
असरन-सरन नाम तुम्हरौ, हौं कामी, कुटिल, निभाउँ
कलुषी अरु मन मलिन बहुत मैं [1]सेंत-मेंत न विकाउँ
सूर पतितपावन पद-अंबुज, सो[2] क्यौं परिहरि जाउँ ॥१२८

*

दीन-दयाल, पतित-पावन प्रभु, बिरद बुलावत कैसौ ?
कहा भयौ गज-गनिका तारें जो[3] न तारौ जन ऐसौ ।
जो कबहूँ नर जन्म पाइ नहिँ नाम तुम्हारौ लीनौ ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तजि, अनत नहीँ चित दीनौ ।
अकरम, अविधि, अज्ञान, अवज्ञा, अनमारग, अनरीति ।
जाकौ नाम लेत अघ उपजै, सोई[4] करत अनीति ।
इंद्री-रस-बस भयौ, भ्रमत रह्यौ, जोइ कह्यौ सो कीनौ ।
नेम-धर्म-व्रत, जप-तप-संजम, साधु-संग नहिँ चीनौ ।
दरस-मलीन, दीन दुरबल अति, तिनकौं[5] मैं दुख-दानी ।
ऐसौ सूरदास जन हरि कौ, सब अधमनि मैं मानी[6] ॥१२९॥

* राग

मोहिँ[7] प्रभु तुमसौं होड़ परी ।
ना जानौं करिहौ[8] अब कहा तुम नागर नवल हरी ।

सें त्यौ तैं—१४ ।
क्यौ परसाउँ—१४ ।
ना) आसावरी ।
—३, ८ । (६) सो

मैं—१, २, ३ । (५) तिन कैसे
दुखदानी—१ । इहिँ (तिहिँ) को
मैं दुखदानी—२, १६ । सहे
कुमति दुखदानी—८ (६) नामी

१, ३ ।
* (ना) सारं
(७) मोसौं तुमसौं
१० (८) जु १,

हुतीँ जिती जग मैँ अधमाई सो मैँ सबै करी।
अधम[1]-समूह उधारन-कारन तुम जिय जक पकरी।
मैँ जु रह्यौँ राजीव-नैन, दुरि, पाप-पहार-दरी।
पावहु मोहिँ कहाँ तारन कौं, गूढ़-गँभीर खरी।
एक अधार साधु-संगति कौ, रचि पचि मति[2] सँचरी।
याहू[3] सौँज संचि नहिँ राखी, अपनी धरनि धरी।
मोकौँ मुक्ति विचारत हौ प्रभु[4], पचिहौ[5] पहर-घरी।
श्रम तैँ तुम्हैँ पसीना ऐहैं, कत यह टेक[6] करी?
सूरदास बिनती कह बिनवै, दोषनि देह भरी।
अपनौ बिरद सम्हारहुगे तौ यामैँ सब निवरी ॥१२०॥

*

नाथ[7] सकौ तौ मोहिँ उधारौ।
पतितनि मैँ बिख्यात पतित हौँ, पावन नाम तुम्हारौ।
बड़े पतित पासंगहु नाहीँ, अजामिल[8] कौन बिचारौ।
भाजे नरक नाम सुनि मेरौ, जम[9] दीन्यौ हठि तारौ।
छुद्र पतित तुम तारि रमापति, अब न करौ जिय गारौ।
सूर पतित कौँ ठौर नहीँ[10], तौ बहुत बिरद कत भारौ? ॥१

समूहनि उद्धरिबे कों-
। ② कैं—१, ३,
ै गज शुचि नहाइ
बे रज सीस धरी—
) तुम—२। ④
: खरी—२। ⑥

जकनि करी—१। जक पकरी—
३, ८।

* (ना) सारंग।

⑦ कब तुम मोसौ पतित उधारौ—२, ३, ६, ८, १८, १६। नाथ जू अबके मोहिँ उबारो—
१४। ⑧ अजामि
२। ⑨जमनि ि
१४, १६। ⑩
नाम सहारौ —
१८, १६।

तुम कब मो सौं पतित[1] उधार्यौ ।
काहे कौं हरि विरद बुलावत[2], विन मसकत को तार्यौ ।
गीध[3], व्याध, गज, गौतम की तिय, उनकौ कौन निहोरौ ।
गनिका तरी आपनी करनी, नाम भयौ प्रभु तोरौ ।
अजामील[4] तौ विप्र, तिहारौ, हुतौ पुरातन दास ।
नैंकु चूक तैं यह गति कीनी, पुनि बैकुंठ निवास ।
पतित जानि तुम सब जन तारे, रह्यौ[5] न कोऊ खोट ।
तौ जानौं जौ मोहिं तारिहौ, सूर कूर कवि ठोट ॥१३२॥

*

पतित-पावन हरि, विरद तुम्हारौ कौनैं नाम धर्यौ ?
हौं तौ दीन, दुखित, अति दुरबल, द्वारैं रटत[6] पर्यौ ।
चारि पदारथ दिए, सुदामा तंदुल भैंट धर्यौ ।
द्रुपद-सुता की तुम पति राखी, अंबर दान कर्यौ ।
संदीपन सुत तुम प्रभु दीने, विद्या-पाठ कर्यौ ।
वेर सूर की निठुर भए प्रभु, मेरौ कछु न सर्यौ ॥१३३॥

* र

† आजु हौं एक-एक[7] करि टरिहौं ।
कै[8] तुमहीं कै हमहीं, माधौ, अपनै भरोसैं लरिहौं ।

...भम—६ । (२) बहत
(३) व्याध गीध पूतना
...नकौ कहा निहोरौ—
अजामील द्विज जन्म जन्म
(४) रह्यौ—२, ३ ।

* (ना) भैरव । (क) परज ।
(काँ) सारंग ।
(६) रहत—२,३ ।
* (क) कल्यान । (काँ)
सोरठ ।

† यह पद (
मे नहीं है ।
(७) कोद—१...
कहा डरपावत हौ ...
पर लरिहौं १४

हौं तौ पतित सात पीढ़िनि कौ, पतितै[1] ह्वै निस्तरिहौं।
अब[2] हौं उघरि नच्यौ चाहत हौं, तुम्हैं[3] बिरद बिन करिहौं।
कत[4] अपनी परतीति नसावत, मैं पायौ हरि हीरा[5]।
सूर[6] पतित तबहीं[7] उठिहै, प्रभु, जब हँसि दैहौ बीरा ॥१२४॥

कहावत ऐसे त्यागी दानि।
चारि पदारथ दिए सुदामहिं अरु गुरु के सुत आनि।
रावन के दस मस्तक छेदे, सर[1] गहि सारँग-पानि।
लंका दई बिभीषन जन कौं, पूरबली पहिचानि।
बिप्र[2] सुदामा कियौ अजाची, प्रीति पुरातन जानि।
सूरदास सौं[3] कहा निहोरौ[4], नैननि हूँ की हानि! ॥१२५॥

मोसौं बात सकुच तजि कहियै।
कत ब्रीड़त[10], कोउ और बतावौ, ताही के ह्वै रहियै।
कैधौं तुम पावन प्रभु नाहीं, कै कछु मो मैं झोलौ[11]।
तौ हौं अपनी फेरि सुधारौं, बचन एक जौ बोलौ।
तीन्यौ पन मैं ओर निबाहे, इहै स्वाँग कौं काछे।
सूरदास कौं यहै बड़ौ दुख, परत सबनि के पाछे ॥१२६॥

...य ऐसी धरिहैं—
...ौ अइ बनी जग
(३) अब तौ तुम
... क्यौं मन मानै
(४) हीरा—१६।
...ची तब थपिहौं जो
—१४। सूर स्याम
...ँ जो न दैहौ हँसि

हीरा—१३।

* (ना) इमन। (का) बिला-वल।

(६) कर गहि सारँग बान—६, ८, १६। (७) ध्रुव प्रह्लाद अमर करि राखे सुरपति ऊपर जानि—१६। (८) कौं—२, ८। (९) निठुर मधु—१, ८, १६। बिठुरई—१४।

* (ना) बिह सारंग।

(१०) भरमावत कहु काके—२, ३, रावल है तुम काके—६, ८, १८। २, ३, ६, ८, १६।

* राग

प्रभु, हौं बड़ी बेर कौ ठाढ़ौ ।
और[1] पतित तुम जैसे तारे, तिनहीं[2] मैं लिखि काढ़ौ ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौं यातैं[3] ।
मरियत लाज पाँच[4] पतितनि मैं, हौं अब[5] कहौ घटि कातैं ?
कै प्रभु हारि मानि कै बैठौ, कै करौ बिरद सही ।
सूर पतित जौ झूठ कहत है, देखौ खोजि बही ॥१३७॥

❀ राग

प्रभु, हौं सब पतितनि कौ टीकौ ।
और पतित सब दिवस चारि के, हौं तौ[6] जनमत ही कौ ।
बधिक, अजामिल, गनिका तारी और पूतना ही कौं ।
मोहिं छाँड़ि तुम और उधारे, मिटै सूल क्यौं जी कौ ?
कोउ न समरथ अघ करिबे कौं, खैंचि कहत हौं लीकौ ।
मरियत लाज सूर पतितनि मैं, मोहूँ[7] तैं को नीकौ ! ॥१३८॥

राग

† हौं तौ पतित-सिरोमनि, माधौ !
अजामील बातनि हीं तार्‌यौ, हुतौ जु मोतैं आधौ ।
कै प्रभु हार मानि कै बैठौ, कै अबहीं निस्तारौ ।
सूर पतित कौं और ठौर नहिं, है हरि-नाम सहारौ ॥१३९॥

[illegible]) बगारी। (कां) मारू। [illegible]मैं और पतित सब तारे —१७। ② तिनहूँ तैं —१। तिनहूँ तैं लखि। ③ तातैं —३, ८।

④ बचे—२। ⑤ हौं ही हौं घटि कातें—६। * (ना) नट। (क, कां) धनाश्री। ⑥ जनमांतर ही कौ—१[illegible]

१४। नृप जनमत ही ⑦ कहत सबनि मैं [illegible] १४।-हमहू मे को नीके † यह पद (ना) है।

१४

*

माधौ जू, मोतैं और न पापी।
घातक, कुटिल, चवाई, कपटी, महाक्रूर, संतापी।
लंपट, धूत, पूत दमरी कौ, विषय-जाप कौ[1] जापी।
भच्छि अभच्छ, अपान पान करि, कबहुँ न मनसा धापी।
कामी, विवस कामिनी कैं रस, लोभ-लालसा थापी।
मन-क्रम-वचन दुसह सबहिनि सौं कटुक-वचन-आलापी।
जेतिक अधम उधारे प्रभु तुम, तिनकी गति मैं नापी।
सागर-सूर विकार भरयौ जल, बधिक[2]-अजामिल वापी॥१४०

*

हरि, हौं सब पतितनि-पतितेस[3]।
और न सरि करिबे कौं दूजौ, महामोह मम देस[4]।
आसा कैं सिंहासन बैठ्यौ, दंभ-छत्र सिर तान्यौ।
अपजस अति नकीब कहि टेरयौ, सब सिर आयसु मान्यौ।
मंत्री काम-क्रोध निज, दोऊ अपनी अपनी रीति।
दुबिधा[5]-दुंद रहै निसि-बासर, उपजावत बिपरीति।
मोदी लोभ, खवास मोह के, द्वारपाल अहँकार।
पाट बिरध[6] ममता है मेरैं, माया कौ अधिकार।
दासी तृष्ना भ्रमत टहल-हित, लहत न छिन बिश्राम।

) सोरठ। (क) नट, १, २, ३, ८, १६। ८, १६। ④ दे
* (ख) नट। ८, १६। ⑤ का
—१४। ② पतित— ③ कौं ईस—२, ३, ६, ८। ⑥ अहं—

अनाचार-सेवक सौं मिलिकै करत चवाइनि[1] काम
बाजि मनोरथ, गर्व मत्त गज, असत[2]-कुमत रथ-सूत
पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्ट-मति दूत
गढ़वै भयौ नरकपति मोसौं, दीन्हे रहत किवार
सेना साथ बहुत भाँतिन कौ, कीन्हे पाप अपार
निंदा जग उपहास करत, मग बंदीजन जस गावत
हठ, अन्याय, अधर्म, सूर नित[3] नौबत द्वार बजावत ॥१४१

† साँचौ सो लिखहार कहावै ।
काया-ग्राम मसाहत करि कै, जमा बाँधि ठहरावै
मन-महतो करि कैद अपने मैं, ज्ञान-जहतिया लावै
माँड़ि माँड़ि खरिहान क्रोध कौ, पोता-भजन भरावै
बट्टा काटि कसूर भरम कौ, फरद तलै लै डारै
निहचै एक असल पै राखै, टरै न कबहूँ टारै
करि अवारजा प्रेम प्रीति कौ, असल तहाँ खतियावै
दूजे करज दूरि करि दैयत, नैंकु न तामैं आवै
मुजमिल जोरै ध्यान कुल्ल कौ, हरि सौं तहँ लै राखै
निर्भय रूपै लोभ छाँड़िकै, सोई वारिज राखै

गुनो काम—३, १८।
कुसत रथ सूत—
नट—६, ८।
पद (वे, स, ब, शा,

वृ, का, श्या) में है। इसका
पाठ सब प्रतियों में बड़ा ध्वस्त-
व्यस्त तथा भ्रष्ट है। उन सब
के पाठों को मिलाकर भाव तथा

अर्थ पर ध्यान रख
पाठ-संशोधन किया

जमा-खरच नीकैं करि राखै, लेखा समुझि बतावै।
सूर आपु गुजरान मुहासिब, लै जवाब पहुँचावै ॥१४२॥

* राग

†हरि, हौं ऐसौ अमल कमायौ।
साबिक जमा हुती जो जोरी, मिनजालिक तल ल्यायौ
वासिल बाकी, स्याहा मुजमिल, सब अधर्म की बाकी
चित्रगुप्त सु होत मुस्तौफी, सरन गहूँ मैं काकी
मोहरिल पाँच साथ करि दीने, तिनकी बड़ी बिपरीति
जिम्मैं उनके, माँगैं मोतैं, यह तौ बड़ी अनीति
पाँच-पचीस साथ अगवानी, सब मिलि काज बिगारे
सुनी तगीरी, बिसरि गई सुधि, मो तजि भए नियारे
बढ़ौ तुम्हार बरामद हूँ कौ लिखि कीनौ है साफ
सूरदास की यहै बीनती, दस्तक कीजै माफ ॥१४३॥

❀ राग

हरि[1], हौं सब पतितनि कौ राजा।
निंदा पर-मुख पूरि रह्यौ जग, यह निसान नित बाजा[2]।
तृष्ना देसऽरु सुभट मनोरथ, इंद्री खड्ग[3] हमारी।
मंत्री काम कुमति दीबे कौं, क्रोध रहत प्रतिहारी।

ना) बिलावल। (कां)नट।
· पद (वे, ना, स्र, कां,
है। सभी प्रतियों में
ठ बड़ा अस्त-व्यस्त है।
तथापि सब पाठों को मिलाकर,
अर्थानुरोध का ध्यान रखते हुए,
इसे शुद्ध तथा सार्थक बनाने
की चेष्टा की गई है।

* (ना) बिहा
धनाश्री।
① प्रभु—१।(
६। ③ किरिचि—

गज-अहँकार चढ़्यौ दिग-विजयी, लोभ-छत्र करि[1] सीस ।
फौज[2] असत-संगति की मेरैं, ऐसौ हौं मैं ईस ।
मोह-मया बंदी गुन गावत, मागध दोष-अपार ।
सूर पाप कौ गढ़ दृढ़ कीन्हौ, मुहकम लाइ किवार ॥१४४॥

*

† हरि, हौं सब पतितनि कौ राउ ।
को करि सकै बराबरि मेरी, सो धौं[3] मोहिं बताउ ।
व्याध, गीध अरु पतित पूतना, तिनतैं[4] बड़ौ जु और ।
तिनमैं अजामील, गनिकादिक, उनमैं मैं सिरमौर ।
जहँ-तहँ सुनियत यहै बड़ाई, मो समान नहिं आन ।
और हैं आजकाल के राजा, मैं तिनमैं सुलतान ।
अब लगि प्रभु तुम बिरद बुलाए, भई न मोसौं भैंट ।
तजौ बिरद कै मोहिं उधारौ, सूर कहै[5] कसि[6] फैंट ॥१

❀

हरि, हौं सब पतितनि कौ नायक ।
को करि सकै बराबरि मेरी, और[7] नहीं कोउ लायक ।
जो प्रभु अजामील कौं दीन्हौ, सो पाटौ लिखि पाऊँ ।
तौ बिस्वास होइ मन मेरैं, औरौ पतित बुलाऊँ ।

ारि—२, १२, १३ । ②
ान भज्यौ निज भुव तजि
पति ईस—१७ ।
ना) नट । (का, ग्)

† यह पद (ल, कां) में नहीं है ।
③ तो—१ । ④ मैं बड़ि जो और—१ । ⑤ गही—१, ३, १३ । ⑥ हँसि—२, ३, १८ ।

* (क, कां)
⑦ को इतन
और नाहिंनै—१

बचन बाहँ[1] लै चलौं गाँठि दै, पाऊँ[2] सुख अति भारी।
यह मारग चौगुनौ चलाऊँ, तौ पूरौ ब्यौपारी।
यह[3] सुनि जहाँ तहाँ तैं सिमिटैं, आइ होइ इक ठौर।
अब कैं तौ आपुन[4] लै आयौ, बेर बहुर की और।
होड़ा होड़ी मनहिं भावते किए पाप भरि पेट।
ते[5] सब पतित पाय-तर डारौं, यहै हमारी भेंट।
बहुत भरोसौ जानि तुम्हारौ, अघ कीन्हे भरि भाँड़ौ।
लीजै बेगि निबेरि तुरतहीं सूर पतित कौ टाँड़ौ ॥१२६

*

मोसौं पतित न और गुसाईं।
अवगुन मोपैं अजहुँ न छूटत, बहुत पच्यौ अब ताईं।
जनम जनम तैं हौं भ्रमि आयौ कपि गुंजा की नाईं।
परसत[6] सीत जात नहिं क्यौंहूँ, लै लै निकट बनाई[7]।
मोह्यौ[8] जाइ कनक-कामिनि-रस, ममता[9] मोह बढ़ाई।
जिह्वा-स्वाद मीन ज्यौं उरझ्यौ, सूझी नहीं फँदाई।
सोवत मुदित भयौ सपने मैं पाई निधि जो पराई।
जागि परैं कछु हाथ न आयौ, यौं जग की प्रभुताई[10]।
सेए[11] नाहिं चरन गिरिधर के, बहुत करी अन्याई।
सूर पतित कौं ठौर कहूँ नहिं, राखि लेहु सरनाई ॥१[illegible]

—१, २। (२) होइ —६, ८। (३) पतित [illegible]ुन्यौ जब स्रवन गहीं। (४) अपनौ—१। [illegible],८,१४। अपने—
१६। (५) सबै पतित पायनि तर—१, ३, ८।
* (ना) भैरव। (क) टोड़ी।
(६) ता परसत पायौ सीत न कबहूँ—१४। (७) बताई—२।
[illegible]बपाई—१४, १७ [illegible]
१५, १७। (९) [illegible]
(१०) निठुराई—६ [illegible]
परसे १, ३, १६ [illegible]

राग जंगला—तित

† मो सम कौन कुटिल खल कामी ।
तुम सौँ कहा छिपी करुनामय, सब के अंतरजामी !
जो तन दियौ ताहि बिसरायौ, ऐसौ नोन-हरामी ।
भरि भरि द्रोह बिषै कौँ धावत, जैसैँ सूकर ग्रामी ।
सुनि सतसंग होत जिय आलस, बिषयिनि सँग बिसरामी ।
श्रीहरि-चरन छाँड़ि बिमुखनि की निसि-दिन करत गुलामी ।
पापी परम[1], अधम, अपराधी, सब पतितनि मैँ नामी ।
सूरदास प्रभु अधम-उधारन सुनियै श्रीपति स्वामी ॥१४८॥

* राग धना

हरि, हौँ महापतित, अभिमानी ।
परमारथ सौँ बिरत[2], बिषय-रत, भाव-भगति नहिँ नैँकहु जानी ।
निसि-दिन दुखित मनोरथ करि करि, पावतहूँ तृष्ना न बुझानी ।
सिर पर मीच[3], नीच नहिँ चितवत, आयु घटति ज्यौँ अंजुलि-पानी ।
बिमुखनि[4] सौँ रति[5] जोरत दिन-प्रति, साधुनि सौँ न कबहुँ पहिचानी ।
तिहिँ बिनु रहत नहीँ निसि बासर, जिहिँ सब दिन रस-बिषय[6] बखानी ।
माया[7]-मोह-लोभ के लीन्हैँ, जानी न बृंदाबन रजधानी ।
नवल किसोर जलद[8]-तनु सुंदर, बिसर्‌यौ सूर सकल-सुख-दानी ॥१४९॥

---

† यह पद (शा) तथा राग-क्रम से संकलित किया गया है ।
(१) पतित ।
* (ना) मालश्री । (कां) कान्हरा ।
(२) पीठि—१ । (३) काल—१, २, ३, १४, १६ । (४) बिषियनि—२ । (५) हित—८ । (६) रीति—१४ । (७) माया मोह लो[भ] नहिँ जाने (जामैं) ऐसी बृंदाब[न] रजधानी—१, १६ । (८) जल[द] सुंदर बपु—६, ८ ।

* राग धना

माधौ जू, मोहिं काहे की लाज ।
‡जनम जनम यौंहीं भरमायौ, अभिमानी, बेकाज ।
जल[1]-थल जीव जिते जग, जीवन निरखि दुखित भए देव !
गुन[2]-अवगुन की समुझ न संका, परि[3] आई यह टेव ।
अब[4] अनखाइ कहौं, घर अपनैं राखौ बाँधि-विचारि ।
सूर स्वान के पालनहारैं आवति है नित गारि ॥१५०

⊛ राग सा

माधौ जू, सो अपराधी हौं ।
जनम पाइ कछु भलौ न कीन्हौ, कहौ[1] सु क्यौं निबहौं ?
सब सौं बात[1] कहत जमपुर की गज-पिपीलिका लौं ।
पाप-पुन्य कौ फल दुख सुख है, भोग[7] करौ जोइ गौं ।
मोकौं पंथ बतायौ सोई नरक कि सरग लहौं ।
काकैं बल हौं तरौं गुसाईं, कछु न भक्ति मो मौं ।
हँसि बोलौ जगदीस जगत-पति, बात तुम्हारी यौं ।
करुना-सिंधु कृपाल, कृपा[8] बिनु काकी सरन तकौं ।

(ना) सोरठ । (क, का)
।
इस चरण के पश्चात् (क,
) दो पंक्तियाँ अधिक है —
(अ)कर्म किए करुनामय
के साज । निसिबासर
स रुचि ते कबहुँ न आयौ

① बहुत बार जलथल जग जायो भ्रमि आयौ दिन देव—१४ । ② अवगुन की कुछ सकुच न संका—१४, १७ । ③ परी आनि—१६ । ④ सरबस खाइ रह्यौ घर बैठ्यौ करौ न कछू विचारि—१, २, ३, ६, ८, १६, १८, १९ ।

⊛ (ना) भोपाली ।
⑤ धरौ न मन मैं भा- ३, १६, १८ । ⑥ रीति- १६, । ⑦ लोग करै जि १७ । ⑧ कृपानिधि भजौ को क्यौं—१, २, ६, ८, कृपानिधि तजौं सरन को क १८ ।

बात सुने तैं बहुत हँसौगे, चरन-कमल की सौँ।
मेरी देह छुटत जम पठए, जितक दूत घर मौँ।
लै लै ते हथियार आपने, सान धराए त्यौँ।
जिनके दारुन दरस देखि कै, पतित करत म्यौं म्यौँ।
दाँत चबात चले जमपुर तैं, धाम हमारे कौँ।
ढूँढ़ि फिरे घर कोउ न बतायौ, स्वपच कोरिया लौँ।
रिस भरि गए परम किंकर तब, पकर्‌यौ छुटि न सकौँ।
लै लै फिरे नगर मैं घर घर, जहाँ मृतक हो हौँ।
ता रिस मैं मोहिं बहुतक मार्‌यौ, कहँ लगि बरनि सकौँ।
हाय हाय मैं पर्‌यौ पुकारौँ, राम-नाम न कहौँ।
ताल-पखावज चले बजावत, समधी सोभा कौँ।
सूरदास की भली बनी है, गजी गई अरु पौँ॥

* राग

थोरे जीवन भयौ[1] तन भारौ।

कियौ न संत-समागम कबहूँ, लियौ न नाम तुम्हारौ।
अति उनमत्त मोह-माया-बस नहिं कछु बात बिचारौ।
करत उपाव न पूछत[2] काहू, गनत न खाटौ-खारौ।
इंद्री-स्वाद-बिबस निसि-बासर, आप अपुनपौ हारौ।
जल औंड़े[3] मैं चहुँ दिसि पैर्‌यौ, पाउँ कुल्हारौ मारौ।

...) देसाख। (का, ...) केदार। (का)

(१) बहु—१, ६, ८, १६। (२) सूझत कबहूँ—२, ३, ६, ८। (३) जल उनमत्त मीन ज्यौं बपुरो—१, १६। जल बुदबुद ... बपुरौ—२।

बाँधी मोट पसारि त्रिविध गुन, नहिँ कहुँ बीच उतारौ।
देख्यौ सूर विचारि सीस परी, तब तुम सरन पुकारौ।

* रा

अब मैं नाच्यौ बहुत गुपाल।
काम-क्रोध कौ पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल।
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा-सब्द-रसाल।
भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल।
तृष्ना नाद करति घट भीतर, नाना विधि दै ताल।
माया कौ कटि फेँटा बाँध्यौ, लोभ-तिलक दियौ भाल।
कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिँ काल।
सूरदास की सबै अबिद्या दूरि करौ नँदलाल॥ १५३॥

* राग

ऐसैँ करत अनेक जन्म गए, मन संतोष न पायौ।
दिन-दिन अधिक दुरासा लाग्यौ, सकल लोक भ्रमि आयौ।
सुनि-सुनि स्वर्ग, रसातल, भूतल, तहाँ-तहाँ उठि धायौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-अगिनि तैँ कहूँ न जरत बुझायौ।
सुत[1]-तनया-बनिता-बिनोद-रस, इहिँ[2] जुर-जरनि जरायौ।
मैं अग्यान अकुलाइ, अधिक लै, जरत माँझ घृत नायौ।
‡भ्रमि-भ्रमि अब हार्‌यौ हिय अपनैं, देखि अनल जग छायौ।
‡सूरदास-प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, कैसैँ जात नसायौ! ॥१५४॥

[illegible]ा, का) सारंग।
[illegible]) ईमन (क) सारंग।
[illegible]क चंदन—१, २, ३,
१२। ② यह जर
जरनि वितायौ—१।
‡ ये दोनों चरण (ना, स, रा) में नहीं हैं। इन दोनों में सूरदास का नाम छठी पंक्ति में इस तरह रक्खा [illegible]
"मैं अग्यान अकुला[illegible]
जरत माहिँ घृत नायो[illegible]

* रा

जनम तौ बादिहिँ गयौ सिराइ।
हरि-सुमिरन नहिँ गुरु की सेवा, मधुवन बस्यौ न जाइ।
अब की बार मनुष्य-देह धरि, कियौ[1] न कछू उपाइ।
भटकत फिरयौ स्वान की नाईँ नैँकु जूठ कैँ चाइ।
कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन, बिमल-बिमल जस गाइ।
प्रेम सहित पग बाँधि घूँघुरू, सक्यौ न अंग नचाइ।
श्रीभागवत सुनी नहिँ स्रवननि[2] नैँकहु[3] रुचि उपजाइ।
आनि भक्ति करि, हरि-भक्तनि के कबहुँ न धोए पाइ।
अब[4] हौँ कहा करौँ करुनामय, कीजै कौन उपाइ।
भव-अंबोधि, नाम-निज-नौका, सूरहिँ लेहु चढ़ाइ॥१५५॥

⊛ रा

माधौ जू, तुम कत जिय बिसरयौ?
जानत सब अंतर की करनी, जो मैं करम करयौ।
पतित-समूह सबै तुम तारे, हुतौ जु लोक भरयौ।
हौं उनतैँ न्यारौ करि डारयौ, इहिँ दुख जात मरयौ।
फिरि-फिरि जोनि[5] अनंतनि भरम्यौ, अब सुख-सरन परयौ।
इहिँ अवसर कत बाहँ छुड़ावत, इहिँ डर अधिक डरयौ।
हौं पापी, तुम पतित-उधारन, डारे हौं कत देत?
जौ जानौ यह सूर पतित नहिँ, तौ तारौ निज हेत॥१५६॥

---

(1) बिभास (कां)सारंग। ज्यौं न आन उपाइ—८, १८, ११। (2) कबहुँ—३, ६। (3) मन मैँ—८। (4) तुम सौं कहा कहौं करुनासै बिनती बहुत बनाइ—६, ८।

* (ना) बड़हंर गूजरी (रा) धनाश्री। (5) ज्यौं अनीति मैँ

* राग

जौ पै तुमहीं बिरद बिसारौ।
तौ कहौ कहाँ जाइ करुनामय, कृपिन करम कौ मारौ!
दीन-दयाल, पतित-पावन, जस बेद बखानत चारौ।
सुनियत कथा पुराननि, गनिका[1], ब्याध, अजामिल तारौ।
राग[2]-द्वेष, बिधि-अबिधि,असुचि-सुचि, जिहिं[3] प्रभु जहाँ सँभारौ।
कियौ न कबहुँ बिलंब कृपानिधि, सादर सोच निवारौ।
अगनित[4] गुन हरि नाम तिहारैं, अजौं अपुनपौ धारौ।
सूरदास-स्वामी[5], यह जन अब करत करत स्रम हारौ॥ १५७॥

* राग

ऐसे[6] और बहुत खल तारे।
चरन-प्रताप, भजन-महिमा कौं,[7] को कहि सकै तुम्हारे?
दुखित गयंद, दुष्ट-मति गनिका, नृग नृप कूप उधारे।
बिप्र बजाइ चल्यौ सुत कैं हित, कटे[8] महा दुख भारे।
ब्याध, गीध, गौतम की नारी, कहौ कौन ब्रत धारे?
केसी, कंस, कुबलया, मुष्टिक, सब सुख-धाम सिधारे।
उरजनि कौं बिष बाँटि लगायौ, जसुमति की गति पाई।
रजक - मल्ल - चानूर - दवानल - दुख - भंजन सुखदाई।

ना) गौरी (ना) देव-
क) कान्हरा।
दिस (दस) दिस—२,
गमन—८। ② राग
,२। ③ जिन प्रभु जितै
सँभारयौ—१। ④ इहँ लगि
नाम रूप गुनगन सब आज अपुन
पन धारौ—२, ६, ८, १८। ⑤
प्रभु चितवत काहे न—१, १४।
* (ना) बिलावल (क)
धनाश्री।
⑥ जैसे—१, २,
१४, १८, १९। ⑦
८, १६। ⑧ काटि—
१४, १६।

नृप सिसुपाल महा पद[1] पायौ, सर-अवसर नहिँ जान्यौ।
अघ-बक-तृनावर्त-धेनुक हति, गुन गहि दोष न मान्यौ।
पांडु-वधू पटहीन सभा मैँ, कोटिनि बसन पुजाए।
विपति काल सुमिरत तिहिँ[2] अवसर जहाँ[3] तहाँ उठि धाए।
गोप-गाइ-गोसुत जल-त्रासत, गोबर्धन कर धारयौ।
संतत दीन, हीन,[4] अपराधी, काहैँ सूर बिसारयौ? १५८॥

* राग

बहुरि की कृपाहू कहा कृपाल?
विद्यमान जन दुखित जगत मैँ, तुम प्रभु दीन-दयाल!
जीवत जाँचत कन[5]-कन निर्धन, दर-दर रटत बिहाल।
तन छूटे तैँ धर्म नहीँ कछु, जौ दीजै मनि-माल[6]।
कह दाता जो द्रवै न दीनहिँ देखि दुखित ततकाल[7]।
सूर स्याम कौ कहा निहोरौ, चलत बेद की चाल॥१५६॥

❀ राग

† कौन सुनै यह बात हमारी?
समरथ और देखौँ तुम बिनु, कासौँ बिथा कहौँ बनवारी?
तुम अबिगत, अनाथ के स्वामी, दीन-दयाल, निकुंज[8]-बिहारी।
सदा सहाइ करी दासनि की, जो उर धरी सोइ प्रतिपारी।

सर मासौ—२, ३, ८। भीतर—१, २, ३, ८, ③ तहीँ तहीँ—१, २, ④ महा—१, २, ३,

* (ना) देवगिरि; (शा, का, क, काँ, रा) नट।

⑤ गुनगनि—२। रानि रानि—२। ⑥ लाल—२, ३, १४। ⑦ कलिकाल—१, २, ३, ४, १४, १६।

❀ (ना) विहागरौ।

† यह पद (ना/३) मे है।

⑧ भक्त हितकारी—

अब किहिँ सरन जाउँ जादौपति, राखि लेहु बलि, त्रास निवारी।
सूरदास चरननि की बलि-बलि, कौन खता[1] तैँ कृपा बिसारी? १

※ राग

जैसैँ राखहु तैसैँ रहौँ।
जानत हौ दुख-सुख सब जन के, मुख करि कहा कहौँ?
कबहुँक भोजन लहौँ कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौँ।
कबहुँक चढ़ौँ तुरंग, महा गज, कबहुँक भार बहौँ।
कमल-नयन, घन-स्याम-मनोहर, अनुचर भयौ रहौँ।
सूरदास-प्रभु भक्त-कृपानिधि, तुम्हरे चरन गहौँ॥ १६१ ॥

⊛ राग

कब लगि फिरिहौँ दीन बह्यौ[2]?
सुरति-सरित-भ्रम-भौँर-लोल मैँ, मन परि[3] तट न लह्यौ।
बात-चक्र बासना[4]-प्रकृति मिलि, तन[5]-तृन तुच्छ गह्यौ।
उरझ्यौ बिबस कर्म-निर अंतर, स्रमि सुख-सरनि चह्यौ।
बिनती करत डरत करुनानिधि, नाहिँन परत रह्यौ।
सूर[6] करनि तरु रच्यौ जु निज कर, सो कर नाहिँ गह्यौ॥ १६

× राग

तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी।
जिन कैँ बस अनिमिष अनेक गन अनुचर अज्ञाकारी।

गुसा—१, १६। गुसाईँ
थ्या—६।
ना) बिहागरौ (कां)
।
ना) सारंग।
भयौ—१, २, ३, ६, ८,

१६। (३) परचत न लह्यौ
१। तर तट न लह्यौ—३। परचत
न लयौ—६, ८। तिरपति न
लह्यौ—१८। (४) तृष्ना—१, ३,
६, ८, १६। (५) हौं तृन तुच्छ
गह्यौ—१, ३, १६। तरुनी

तुच्छ गह्यौ—२, १६।
करन वर रच्यौ जु नि
कर नाहिँ गह्यौ—१, १
करन तर रच्यौ जु नि
नहिँ हसैँ कह्यौ—६, ८
× (ना) देवगंधार

बहत पवन, भरमत ससि-दिनकर, फनपति सिर न डुलावै ।
दाहक गुन तजि सकत न पावक, सिंधु न सलिल बढ़ावै[१] ।
सिव-बिरंचि-सुरपति-समेत सब सेवत प्रभु-पद चाए[२] ।
जो कछु करन कहत सोई सोइ कीजत अति अकुलाए[३] ।
तुम अनादि, अविगत, अनंत-गुन-पूरन परमानंद ।
सूरदास पर कृपा करौ प्रभु, श्रीवृंदाबन-चंद ॥ १६३ ॥

* राग मला[र]

तुम तजि और[४] कौन पै जाउँ ?
काकैं द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर हथ कहाँ बिकाउँ ?
ऐसौ को दाता है समरथ, जाके दिऐं अघाउँ ।
अंत काल तुम्हरैं सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं दाउँ[५] ।
रंक सुदामा कियौ अजाची, दियौ अभय-पद ठाउँ ।
कामधेनु, चिंतामनि, दीन्हौं कल्पवृच्छ-तर छाउँ ।
भव-समुद्र अति देखि भयानक, मन मैं अधिक डराउँ ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनौ प्रन,[६] सूरदास बलि जाउँ ॥१६४॥

* राग सारंग

† अब धौं कहौ, कौन दर जाउँ ?
तुम जगपाल, चतुर चिंतामनि, दीनबंधु सुनि नाउँ ।

[...]वै—१, २, ३, १६ । [...]—२, १८ । जाई— ③ अकुलानैं—२, [...]ाई—३, ६, ८ । [...]) सूहो । [...] नृपति कैं—१, ३, [...]ावैं—१, २, ३ । ठावैं—६, १६, १८, १६ । ⑥ जन—८, १६ ।

* (क) धनाश्री ।

† यह पद (वे, वृ, रा, श्या) में नहीं है । (ना, स, ल, शा, इं, कां) में यह द्रौपदी-प्रकरण में रक्खा गया है । पर (क) में यह विनय के पदों के साथ संकलित है । वस्तुतः यह पद विनय का है । इसमें द्रौपदी का रूपक मात्र है । अतः हमने इसको विनय में ही रखना उचित समझा ।

माया कपट[1]-जुवा, कौरव-सुत, लोभ, मोह, मद भारी।
परबस परी सुनौ करुनामय, मम मति[2]-तिय अब हारी।
क्रोध-दुसासन गहे लाज-पट, सर्व अंध-गति मेरी।
सुन, नर, मुनि, कोउ निकट न आवत, सूर समुझि हरि[3]-चेरी ॥१६५।

* राग मारू

मेरी तौ गति-पति तुम, अनतहिँ दुख पाऊँ।
हौं कहाइ तेरौ, अब कौन कौ कहाऊँ?
कामधेनु छाँड़ि कहा अजा लै दुहाऊँ।
हय गयंद उतरि कहा गर्दभ-चढ़ि धाऊँ।
कंचन-मनि खोलि डारि, काँच[4] गर बँधाऊँ?
कुमकुम कौ लेप[5] मेटि, काजर मुख लाऊँ?
पाटंबर-अंबर तजि, गूदरि पहिराऊँ?
अंब सुफल छाँड़ि, कहा सेमर कौं धाऊँ?
सागर की लहरि छाँड़ि, छीलर कत[6] न्हाऊँ?
‡सूर कूर, आँधरौ, मैं द्वार पर्‍यौ गाऊँ ॥१६६॥

※ राग आसावरी

† स्याम-बलराम कौं[7] सदा गाऊँ।
राम बिनु दूसरे देव कौं, स्वप्न हूँ माहिँ[8] नहिँ हृदय[9] ल्याऊँ

रूप—२, १४। ② —२। ③ मोहि) भैरव चर्चरी। कंठ नाऊँ—२। ④ १६। ⑥ कत—१।

‡ (का, शा) में इस पद का पहला चरण नहीं है। उसके बदले अंत में यह एक चरण अधिक है—
"सुनियै रै कान स्याम-
सुंदर बलि जाऊँ॥"

* (ना, का शा) मारू (कां) केदारा।
† यह पद (शा) में नहीं है।
⑦ गुन—८। ⑧ नाहिं नै—८। ⑨ सीस नाऊँ—२

जप, यहै तप, यहै मम नेम-व्रत, यहै मम प्रेम, फल यहै ध्याऊँ
मम ध्यान, यहै ज्ञान, सुमिरन यहै, सूर-प्रभु देहु[1] हौं यहै पाऊँ ॥१६७

* राग देवगंधार

† मेरौ मन अनत कहाँ सुख[2] पावै ।
जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै ।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै ।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ दुरमति कूप खनावै ।
जिहिं मधुकर[3] अंबुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील-फल भावै[4] ।
सूरदास-प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ॥ १६८ ॥

* राग सारंग

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान[5] ।
छूटि गऐं कैसैं जन[6] जीवत, ज्यौं पानी बिनु प्रान ।
जैसैं मगन नाद-रस[7] सारँग, बधत बधिक बिन[8] बान ।
ज्यौं चितवत ससि ओर चकोरी, देखत ही सुख[9] मान ।
जैसैं कमल होत अति[10] प्रफुलित, देखत दरसन भान ।
सूरदास-प्रभु-हरि-गुन मीठे, नित प्रति सुनियत कान ॥१६९॥

---

८ । देह—१६ ।
*; सारंग । (का, ना ३)

, ४) में यह पद
र्गत उद्धव-गोपी-
भी आया है । परन्तु
के अनुसार इस संस्क-
रण में यह यहीं रक्खा गया है ।

(२) सचु—१६ । (३) मधु मधुर अंबु —१६ । (४) खावै—१, ३ ।

* (ना) बिलावल । (ना ३) केदारा ।

(५) प्रान—२ । ध्यान—८ । (६) जिय—६, ८ । (७) सुनि —१, १४, १६ । सौं—२, ३ । (८) तन—१, २, ३, १६ । (९) सुच (सुचि)—३ , ६, १४, १८, १६ । (१०) परिफुल्लित—१, ३, ४, १६ ।

* रा

जौ हम भले बुरे तौ तेरे ।
तुम्हैं हमारी लाज-बड़ाई, बिनती सुनि प्रभु मेरे ।
सब तजि तुम सरनागत आयौ, दृढ़[1] करि चरन गहे रे ।
तुम प्रताप-बल बदत[2] न काहूँ, निडर भए घर-चेरे ।
और देव सब रंक-भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे ।
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा तैं, पाए सुख जु घनेरे ॥१७०॥

* राग

हमैं नँदनंदन मोल लिये ।
जम के फंद काटि मुकराए, अभय अजाद[3] किये ।
भाल तिलक, स्रवननि तुलसीदल, मेटे अंक बिये ।
मूँड़्यौ मूँड, कंठ बनमाला, मुद्रा-चक्र दिये ।
सब कोउ कहत गुलाम स्याम कौ, सुनत सिरात हिये ।
सूरदास कौं और बड़ौ सुख, जूठनि खाइ जिये ॥१७१॥

× राग

† भक्त-बछल प्रभु, नाम[4] तुम्हारौ ।
जल-संकट तैं राखि लियौ गज, ग्वालनि हित गोवर्धन धारौ
द्रुपद-सुता कौ मिट्यौ महादुख, जबहीं सो हरि टेरि पुकारौ
हौं अनाथ, नाहिँन कोउ मेरौ, दुस्सासन तन करत उघारौ

ा, क) कान्हरौ । (का,
ग ।
नेज कर—१, २, ३, ६,
(२) डरत—२ ।

* (ना) ईमन । (डू) सारंग ।
(क) धनाश्री ।
(३) अजात—१ । अनंद—
८ । प्रताप—१६ ।

× (का) के
† यह पद (ना,
में है ।
(४) बिरद—१६

भूप अनेक बंदि तैं छोरे, राज-रवनि जस अति बिस्तारौ
कीजै लाज नाम[1] अपने की, जरासंध सौं असुर सँघारौ
अंबरीष कौ साप निवारौ, दुरवासा कौं चक्र सँभारौ
बिदुर दास कैं भोजन कीन्हौ, दुरजोधन कौ मेट्यौ गारौ
संतत दीन, महा अपराधी, काहैं सूरज क्रूर बिसारौ !
सो कहि नाम रह्यौ प्रभु तेरौ, बनमाली, भगवान, उधारौ ॥१७२॥
रा

† हरि, हौं महा अधम संसारी ।
आन समुझि मैं बरिया ब्याही, आसा कुमति कुनारी ।
धर्म-सत्त मेरे पितु-माता, ते दोउ दिये बिडारी ।
ज्ञान-बिबेक बिरोधे दोऊ, हुते बंधु हितकारी ।
बाँध्यौ बैर दया भगिनी सौं, भागि दुरी सु बिचारी ।
सील-सँतोष सखा दोउ मेरे, तिन्हैं बिगोवति भारी ।
कपट-लोभ वाके दोउ भैया, ते घर के अधिकारी ।
तृष्ना बहिनि, दीनता सहचरि, अधिक प्रीति बिस्तारी ।
अति निसंक, निरलज्ज, अभागिनि, घर घर फिरत न हारी ।
मैं तौ बृद्ध भयौ वह तरुनी, सदा बयस इकसारी ।
याकैं बस मैं बहु दुख पायौ, सोभा सबै बिगारी ।
करियै कहा, लाज मरियै जब अपनी जाँघ उघारी ।
अधिक कष्ट मोहिं परयौ लोक मैं, जब यह बात उचारी ।
सूरदास प्रभु हँसत कहा हौ, मेटौ बिपति हमारी ॥१७३॥

रह्यौ नाम की—२ ।

† यह पद केवल (ना) तथा रागकल्पद्रुम में है ।

† तिहारे आगैं बहुत नच्यौ ।
निसि-दिन दीन-दयाल, देवमनि, बहु विधि रूप रच्यौ ।
कीन्हे स्वाँग जिते जाने[1] मैं, एकौ तौ न बच्यौ ।
सोधि[2] सकल गुन काछि दिखायौ, अंतर हो जो सच्यौ ।
जो[3] रीझत नहिं नाथ गुसाईं, तौ कत जात जँच्यौ ?
इतनौ कहौ, सूर पूरौ दै, काहैं मरत पच्यौ ॥१७४॥

‡ भवसागर[4] मैं पैरि न लीन्हौ ।
इन पतितनि कौं देखि[5] देखि कै पाछैं सोच न कीन्हौ
अजामील-गनिकादि आदि दै, पैरि पार गहि पेलौ
संग लगाइ बीचहीं छाँड्यौ, निपट अनाथ, अकेलौ
अति गंभीर, तीर नहिं नियरैं, किहिं विधि उतर्यौ जात
नहीं अधार नाम अवलोकत, जित-तित गोता खात
मोहिं देखि सब हँसत परस्पर, दै दै तारी तार[6]
उन[7] तौ करी पाछिले की गति, गुन तोर्यौ बिच धार
पद-नौका की आस लगाए, बूड़त हौं बिनु छाहँ
अजहूँ सूर देखिबौ करिहौ, बेगि गहौ किन बाहँ ? ॥१७५

---

i) धनाश्री ।
पद (ना, स, ल, शा,
) में है ।
ा में है—२ । ②
मन विरत दिखायौ—
कत नहीं सुबिंद दया-
निधि क्यौं कछु जात जँच्यौ—२ ।
* (का) गौरी ।
‡ यह पद (ना, शा, क, की
पू) में है ।
④ में अवसागर—१४,
१६, १७ । ⑤ देखा देखी १५
देखी देखा—१७ ।
१६ । भीर—१७
कथा पाछिले के
गुर दिखाय पुनि
१६, १७ ।

† भरोसौ नाम कौ भारी।

प्रेम सौं जिन नाम लीन्हौ, भए अधिकारी।
ग्राह जब गजराज घेर्यौ, बल गयौ हारी।
हारि कै जब टेरि दीन्हौ, पहुँचे गिरिधारी।
सुदामा-दारिद्र भंजे, कूबरी तारी।
द्रौपदी कौ चीर बढ़्यौ, दुस्सासन गारी।
बिभीषन कौं लंक दीनी, रावनहिं मारी।
दास ध्रुव कौं अटल पद दियौ, राम-दरबारी।
सत्य भक्तहिं तारिबे कौं, लीला बिस्तारी।
बेर मेरी क्यौं ढील कीन्ही, सूर बलिहारी॥१७६॥

*

‡ तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत।

लालच लागि[1] कोटि देवनि के, फिरत कपाटनि खोलत
जब लगि सरबस दीजै उनकौं, तबहीं लगि यह प्रीति
फल माँगत फिरि जात मुकर ह्वै, यह देवनि की रीति
एकनि कौं जिय-बलि दै पूजे, पूजत नैंकु न तूठे
तब पहिचानि सबनि कौं छाँड़े, नख-सिख लौं सब झूठे
कंचन मनि तजि काँचहिं सैंतत, या माया के लीन्हे
चारि पदारथ हूँ कौ दाता, सु तौ बिसर्जन कीन्हे

---

† केवल (ना) में है।
) मारि। (पू) कान्हरो।

‡ यह (स, ल, शा, क, का, पू) में है।

(१) लागि ब...
कर्न कपाट न खोल...

तुम कृतज्ञ, करुनामय, केसव, अखिल लोक के नायक।
सूरदास हम दृढ़ करि पकरे, अब ये चरन सहायक ॥१७७॥

† प्रभु मेरे, मोसौं पतित उधारौ।
कामी[1], कृपिन, कुटिल, अपराधी, अघनि भर्‍यौ बहु भारौ।
तीनौ पन मैं भक्ति न कीन्ही, काजर हू तैं कारौ।
अब आयौ हौं सरन तिहारी, ज्यौं जानौ त्यौं तारौ।
गीध-व्याध-गज-गनिका उधरी[2], लै लै नाम तिहारौ।
सूरदास प्रभु कृपावंत ह्वै, लै भक्तनि मैं डारौ ॥१७८॥

‡ जानिहौं अब बाने की बात।
मोसौं पतित उधारौ प्रभु जौ, तौ बदिहौं निज तात।
गीध, व्याध, गनिका अरु अजामिल, ये को आहिँ बिचारे।
ये सब पतित न पूजत मो सम, जिते पतित तुम तारे।
जौ तुम पतितनि के पावन हौ, हौं हूँ पतित न छोटौ।
बिरद आपुनौ और तिहारौ, करिहौं लोटक-पोटौ।
कै हौं पतित रहौं पावन ह्वै, कै तुम बिरद छुड़ाऊँ।
द्वै मैं एक करौं निरवारौ, पतितनि-राव कहाऊँ।
सुनियत है, तुम बहु पतितनि कौं, दीन्हौ है सुखधाम।
अब तौ आनि पर्‍यौ है गाढ़ौ, सूर पतित सौं काम ॥१७९॥

---

†द (स, ल, शा, कां)
① महा कुटिल क्रोधी—१६।
② तारी—३, १६।
‡ यह पद को[illegible] में है।

राग जैतश्री

† तव विलंब नहिँ कियौ, जबै हिरनाकुस मारचौ ।
तव विलंब नहिँ कियौ, केस गहि कंस पछारचौ ।
तव विलंब नहिँ कियौ, सीस दस रावन कट्टे ।
तव विलंब नहिँ कियौ, सबै दानव दहपट्टे ।
कर[1] जोरि सूर विनती करै, सुनहु न हो रुकुमिनि-रवन !
काटौ[2] न फंद मो अंध के, अब बिलंब कारन कवन ? ॥१८०॥

* राग धनाश्री

‡ ताहू सकुच सरन आए की होत जु निपट निकाज ।
जद्यपि बुधि-बल-बिभव-बिहूनौ, बहत कृपा करि लाज ।
तृन जड़, मलिन, बहत बपु राखै, निज कर गहै जु जाइ ।
कैसैँ कूल-मूल आस्रित कौँ तजै आपु अकुलाइ ?
॥तुम प्रभु अजित, अनादि, लोक-पति, हौँ अजान, मतिहीन ।
॥कछुव न होत निकट उत लागत, मगन होत इत दीन ।
परिहस-सूल प्रबल निसि-बासर, तातैँ यह कहि आवत ।
सूरदास गोपाल-सरनगत भएँ न को गति पावत ॥१८१॥

※ राग सोरठ

§ (हरि) पतित-पावन, दीन-बंधु, अनाथनि के नाथ ।
संतत सब लोकनि स्तुति, गावत यह गाथ ।

---

† यह छप्पय केवल (स, ल, रा) में है ।

(१) सूरदास विनती करै सुनौ प्रभौ रुकुमिनि रवन—३ । (२) काटत दुख मो अंध के अब बिलंब कारन कवन—३ ।

* (कां) कान्हरा ।

‡ यह पद (स, ल, क, कां) में है ।

॥ ये दो चरण (स, कां) में नहीँ हैँ ।

※ (कां) मारू ।

§ यह पद (स, ल, शा, क, कां) में है ।
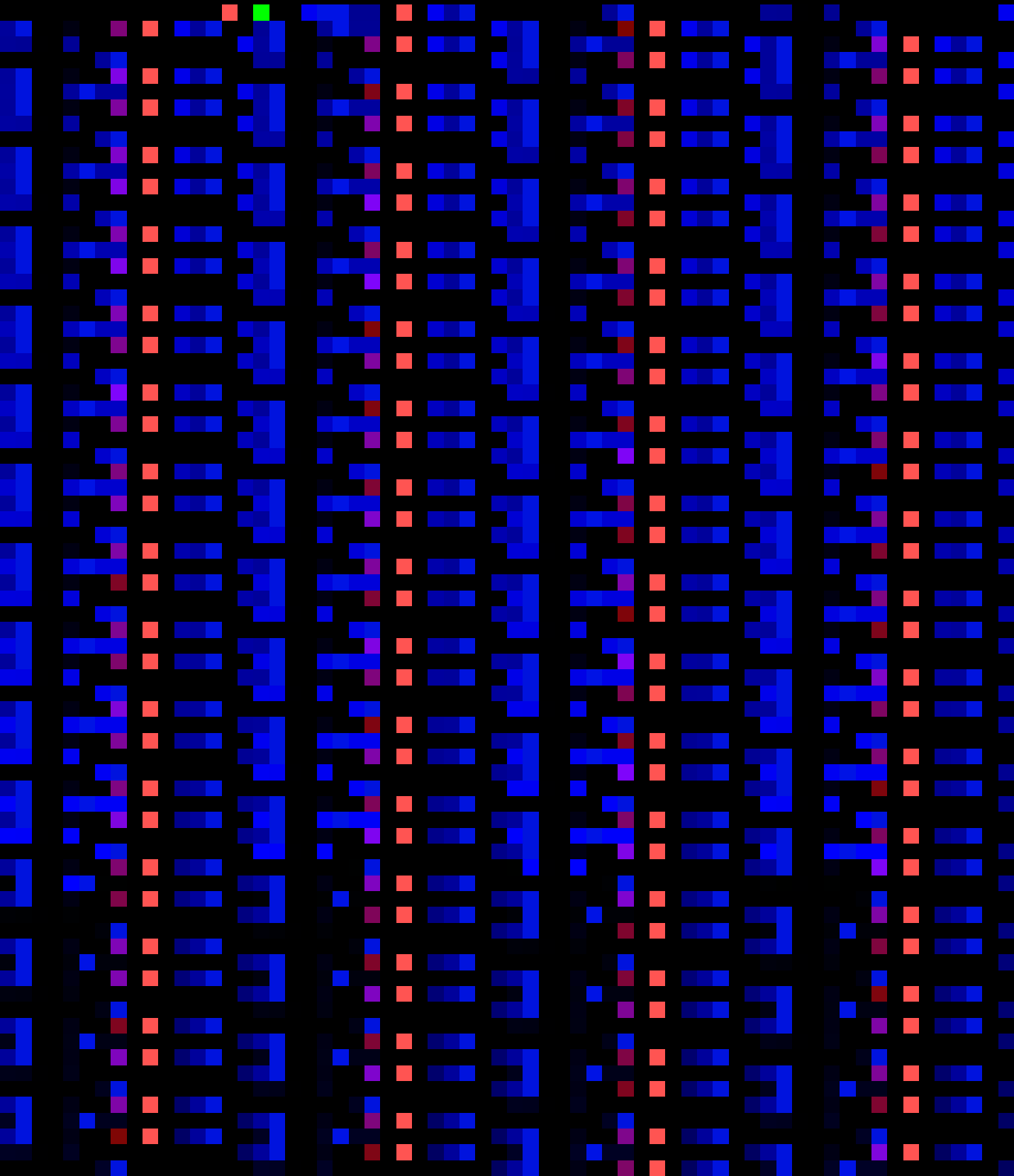
मोसौ कोउ पतित नहिँ अनाथ - हीन - दीन।
काहे न निस्तारत प्रभु, गुननि-अँगनि-हीन।
गज, गनिका, गौतम-तिय मोचन मुनि-स्राप।
अरु जन - संताप - दवन, हरन-सकल-पाप।
मनसा-वाचा-कर्मना, कछू कहाँ राखि?
सूर सकल अंतर कै तुम्हहीँ हौ साखि ॥१८२॥

*

† जौ प्रभु, मेरे दोष बिचारैँ।
करि अपराध अनेक जनम लौँ, नख-सिख भरौ बिकारैँ
पुहुमि पत्र करि सिंधु मसानी गिरि-मसि कौँ लै डारैँ
सुर-तरुवर की साख लेखिनी, लिखत सारदा हारैँ
पतित-उधारन बिरद बुलावैँ, चारौँ बेद पुकारैँ
सूर स्याम हौँ पतित-सिरोमनि, तारि सकैँ तौ तारैँ ॥१८

‡ हमारी तुमकौँ लाज हरी।
जानत हौ प्रभु, अंतरजामी, जो मोहिँ माँझ परी।
अपनैँ औगुन कहँ लौँ बरनौँ, पल पल, घरी घरी।
अति प्रपंच की मोट बाँधिकै अपनैँ सीस धरी।

हुन—२, १४, १६।
तुम्हहिँ साखि—१६।
) कान्हरो।

† यह पद (स, ल, शा, क, पू) में है। इस पद के पाठ में बड़ी क्लिष्टता तथा अबोधता थी। प्रतियों को मिलाकर किया गया है।

‡ यह पद केव

खेवनहार न खेवट मेरैं, अब मो नाव अरी ।
सूरदास प्रभु, तव चरननि की आस लागि उबरी ॥१८९

† प्रभु जू, यौं कीन्ही हम खेती ।
बंजर भूमि, गाउँ हर[1] जोते, अरु जेती की तेती ।
काम-क्रोध दोउ बैल बली मिलि, रज-तामस सब कीन्हौ ।
अति कुबुद्धि मन हाँकनहारे, माया-जूआ दीन्हौ ।
इंद्रिय - मूल - किसान, महातृन - अग्रज - बीज बई ।
जन्म जन्म की विषय-वासना, उपजत लता नई ।
पंच-प्रजा अति प्रबल बली मिलि, मन-विधान जौ कीनौ ।
अधिकारी जम[2] लेखा माँगै, तातैं हौं आधीनौ ।
घर मैं गथ नहिं भजन तिहारौ, जौन दियैं मैं छूटौं ।
धर्म जमानत मिल्यौ न चाहै, तातैं ठाकुर लूटौं ।
अहंकार पटवारी कपटी, झूठौ लिखत बही ।
लागै धरम, बतावै अधरम, बाकी सबै रही ।
सोई करौ जु बसतै रहियै, अपनौ धरियै नाउँ ।
अपने नाम की बैरख बाँधौ, सुबस बसौं इहिं गाउँ ।
कीजै कृपा-दृष्टि की बरषा, जन की जाति लुनाई ।
सूरदास के प्रभु सो करियै, होइ न कान-कटाई ॥ १८५॥

---

† केवल (स, ब) से पाठ बड़े अशुद्ध थ दोनों की सहायता से पद को सुबोध बनाने की चेष्टा की गई है

(1) और—२ ।
(2) अस १, ४

१ प्रभु जू, हौं तौ महा अधर्मी ।

अपत, उतार, अभागौ, कामी, विषयी, निपट कुकर्मी
घाती, कुटिल, ढीठ, अति क्रोधी, कपटी, कुमति, जुलाई
औगुन की कछु सोच न संका, बड़ौ दुष्ट, अन्याई
बटपारी, ठग, चोर, उचक्का, गाँठि-कटा, लटबाँसी
चंचल, चपल, चबाइ, चौपटा, लिये मोह की फाँसी
चुगुल, ज्वारि, निर्दय, अपराधी, झूठौ, खोटौ-खूटा
लोभी, लौंद, मुकरबा, झगरू, बड़ौ पढ़ैलौ, लूटा ।
लंपट, धूत, पूत दमरी कौ, कौड़ी कौड़ी जोरै
कृपन, सूम, नहिँ खाइ खवावै, खाइ मारि कै औरै ।
लंगर, ढीठ, गुमानी, टूँडक, महा मसखरा, रूखा ।
मचला, अकलै-मूल, पातर, खाउँ खाउँ करै भूखा ।
निर्घिन, नीच कुलज, दुर्बुद्धी, भौंडू, नित कौ रोऊ ।
तृष्ना हाथ पसारै निसि-दिन, पेट भरै पर सोऊ ।
बात बनावन कौं है नीकौ, वचन-रचन समुझावै ।
खाद-अखाद न छाँड़ै अब लौं, सब मैँ साधु कहावै ।
महा कठोर, सुन्न हिरदै कौ, दोष देन कौं नीकौ ।
बड़ौ कृतघ्नी और निकम्मा, बेधन, राँकौ-फीकौ ।
महा मत्त, बुधि-बल कौ हीनौ, देखि करै अंधेरा ।
बमनहिँ खाइ, खाइ सो डारै, भाषा कहि कहि टेरा ।
मूकू, निंद, निगोड़ा, भौंड़ा, कायर, काम बनावै ।
कलहा, कुही, मूष रोगी अरु काहूँ नैँकु न भावै ।

---

२ केवल (स, ल) में है ।

पर-निंदक, परधन कौ द्रोही, पर-संतापनि बोरौ
औगुन और बहुत हैं मो मैं, कह्यौ सूर मैं थोरौ ॥ १०

*

+ अधम की जो देखौ अधमाई ।

सुनु त्रिभुवन-पति, नाथ हमारे, तौ कछु कह्यौ न जाई ।
जब तैं जनम-मरन-अंतर हरि, करत न अघहिं अघाई ।
अजहूँ लौं मन मगन काम सौं, विरति[1] नाहिँ उपजाई ।
परम कुबुद्धि, अजान ज्ञान तैं, हिय जु बसति जड़ताई ।
पाँचौ देखि प्रगट ठाढ़े ठग, हठनि ठगौरी खाई ।
सुमृति-बेद मारग हरि-पुर कौ, तातैं लियौ भुलाई ।
कंटक-कर्म कामना-कानन कौ मग दियौ दिखाई ।
हौं कहा कहौं, सबै जानत हौ, मेरी कुमति कन्हाई[2] ।
सूर पतित कौं नाहिँ कहूँ गति, राखि लेहु सरनाई ॥

‡ तातैं विपति-उधारन गायौ ।
स्त्रवननि साखि सुनी भक्तनि मुख, निगमनि भेद बतायौ
सुआ पढ़ावत जीभ लड़ावति, ताहि विमान पठायौ
चरन-कमल परसत रिषि-पतिनी, तजि पषान, पद पायौ
सब-हित-कारन देव, अभय पद, नाम प्रताप बढ़ायौ
आरतिवंत सुनत गज-क्रंदन, फंदन काटि छुड़ायौ

) ईमन ।
द (स, ल, शा, क,
" है ।

(१) विप्रति नहिँ उपजाई—
१४ । जुवतिनि रुचि उपजाई—
१६ । (२) कमाई ३ ।

‡ यह पद के
है ।

पावँ[1] अवार मु धारि रमापति, अजन्म करन जन्म पायौ[2] ।
सूर क्रूर कहैं मेरी विरियाँ विरद किते बिसरायौ ॥१८८॥

राग

ऐसौ कब करिहौ गोपाल ।
मनसा-नाथ, मनोरथ-दाता[3], हौ प्रभु दीनदयाल ।
चरननि चित्त निरंतर अनुरत, रसना चरित-रसाल ।
लोचन सजल, प्रेम-पुलकित तन, गर अंचल, कर माल ।
इहिं विधि लखन, झुकाइ रहैं जम अपनैं हीं भय भाल ।
सूर सुजस-रागी न डरत मन, सुनि जातना कराल ॥१८

राग

‡ ऐसे प्रभु अनाथ के स्वामी ।
दीनदयाल[4], प्रेम-परिपूरन, सब-घट-अंतरजामी ।
करत विवस्त्र द्रुपद-तनया कौं, सरन सब्द कहि आयौ ।
पूजि अनंत कोटि बसननि हरि, अरि कौ गर्व गँवायौ ।
सुत-हित विप्र, कीर-हित गनिका, नाम[5] लेत प्रभु पायौ ।
छिनक भजन, संगति-प्रताप तैं, गज अरु ग्राह छुड़ायौ ।
नर-तन, सिंह-बदन, बपु कीन्हौ, जन लगि भेष बनायौ ।
निज जन दुखी जानि भय तैं अति, रिपु हनि, सुख उपजायौ ।

पावनवारि सिधारि । (२)
... पद केवल (शा, क,
है ।
... रन—९, १६ ।
... र चरण के पश्चात् (कां)

में ये दो पंक्तियाँ और हैं—
पीत बसन मणि भूषित भूषण
जन देखत किहिं काल ।
बाहिर भीतर सब अँग सुंदर
घन तन नैन बिशाल ।
इनमें से पहिली पंक्ति कुछ पाठांतर

के साथ (शा) में भी है
‡ यह पद केवल ...
कां) में है ।
(४) ऐसे दीन ...
पोरक—१४ । (५) पर ...
१४ ।

तुम्हरी कृपा गुपाल गुसाईं, किहिँ किहिँ स्रम न गँवायौ
सूरजदास अंध, अपराधी, सो काहैँ बिसरायौ ॥ १६० ॥

राग

† तौ लगि बेगि हरौ किन पीर ?
जौ लगि आन न आनि पहूँचै, फेरि परैगी भीर ।
अबहिँ[1] निबरौ समय, सुचित है, हम तौ निधरक कीजै ।
औरौ[2] आइ निकसिहैँ तातैं, आगैँ है सो लीजै ।
जहाँ तहाँ तैँ सब आवैँगे[3], सुनि सुनि सस्तौ नाम ।
अब तौ पर्यौ रहैगौ दिन-दिन तुमकौँ ऐसौ काम ।
यह[4] तौ बिरद प्रसिद्ध भयौ जग, लोक-लोक जस कीन्हौ ।
सूरदास प्रभु समुझि देखियै, मैं बड़ तोहिँ करि दीन्हौ ॥१६१

* राग

‡ माधौ जू, हौं पतित-सिरोमनि ।
और न कोई लायक देखौं, सत-सत अघ प्रति रोमनि
अजामील, गनिकाऽरु ब्याध, नृग, ये सब मेरे चटिया[5]
उनहूँ जाइ सौंह दै पूछौ, मैं करि पठयौ सटिया
यह प्रसिद्ध सबही कौ संमत, बड़ौ बड़ाई पावै
ऐसौ को अपने ठाकुर कौ इहिँ बिधि महत घटावै

पद [illegible] (रा, कां)

[illegible]गहिँ बिस्वकर्मा सें सोचत
[illegible]तौ निधरक करहु —२ ।
निकट आनि लगि

पापिन अरु आगें हैं लच्छ—२ ।
(३) उठि आए—२ । (४) बिरद प्रसिद्ध भयौ मोही तैं लोक-लोक जस लीनौ—१६ ।

* (कां) सारंग ।

‡ यह पद केवल [illegible] पू) में है ।
(५) जुअटा—२ । सौंह देवाय किन पूछौ सुअटा २ ।

नाहक मैं लाजनि मरियत है, इहाँ आइ सब नासी ।
यह तौ कथा चलैगी आगैं, सब पतितनि मैं हाँसी ।
सूर सुमारग फेरि चलैगौ, बेद-बचन उर धारौ ।
बिरद छुड़ाइ लेहु बलि[1] अपनौ, अब इहि तैं हठ पागौ ॥१६२॥

*जिन[1] जिनहीं केसव[2] उर गायौ ।
तिन तुम पै गोबिंद-गुसाईं, सबनि अभै[3]-पद पायौ ।
सेवा[4] यहै, नाम सर-अवसर जो काहूहिं कहि आयौ ।
कियौ बिलंब न छिनहुँ कृपानिधि, सोइ सोइ निकट बुलायौ ।
मुख्य अजामिल मित्र हमारौ, सो मैं चलत बुझायौ ।
कहाँ[6] कहाँ लौं कहौं कृपन कौ, तिनहुँ न स्रवन सुनायौ ।
ब्याध, गीध, गनिका, जिहिं कागर, हौं तिहिं चिठि न चढ़ायौ ।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं, सूर सबै[7] बिसरायौ ॥१६३॥

राग नट

*बिरद मनौं[8] बरियाइन छाँड़े ।
तुम सौं कहा कहौं करुनामय, ऐसे प्रभु तुम टाढ़े[9] ।
सुनि सुनि साधु-बचन ऐसौ सठ, हठि औगुननि हिरानौ ।
धोयौ चाहत कीच भरौ पट, जल सौं रुचि नहिं मानौ ।

बन—१६ ।
का) ईमनै ।
पद केवल (शा, क,
है ।
जतन जतन जन हरि
—४ । (२) के सँग—

१४ । (४) अतुल पौ—१४, १६ ।
ये दोनों चरण (क) में
नहीं हैं ।
(५) याही नाम सार तेहिं औसर
जा काहू कहि आयौ—१६ ।
(६) और कहाँ लगि ज्ञान कृपिन

कौ काहू स्रम न पि
(७) सबैं—१४, १६
* यह पद केवल (
(८) मानौ बर
छाँड़े । (९) ठाढ़े ।

जो मेरी करनी तुम हेरौ, तौ न करौ कछु लेखौ
मूर पतित तुम पतित-उधारन, विनय-दृष्टि अब देखौ ॥ १६४॥

* रा

‡ जन यह कैसे कहै गुसाइँ ?
तुम विनु दीनबंधु[1], जादवपति, सब फीकी ठकुराई ।
अपने मैं कर-चरन-नैन-मुख, अपनी सी बुधि पाई ।
काल-कर्म-बस फिरत सकल प्रभु, तेऊ हमरी नाइँ ।
पराधीन, पर बदन निहारत, मानत मूढ़ बड़ाई ।
हँसैं हँसत, बिलखैं बिलखत हैं, ज्यौं दर्पन मैं झाईं
‖ लियैं दियौ चाहैं सब कोऊ, सुनि समरथ जदुराई !
देव[2], सकल व्यापार परस्पर, ज्यौं पसु-दूध-चराई ।
¶ तुम विनु और न कोउ कृपानिधि, पावै पीर पराई ।
सूरदास के त्रास हरन कौं कृपानाथ-प्रभुताई ॥ १६५ ॥

रा

‡ इक कौं आनि ठेलत पाँच !
करुनामय, कित जाउँ कृपानिधि, बहुत नचायौ नाच ।
सबै क्रूर मोसौं ऋन चाहत, कहौ कहा तिन दीजै !
बिना दियैं दुख देत दयानिधि, कहौ कौन विधि कीजै !

) मारू । ‖ यह चरण (शा, कां) में है ।
ट (शा. क, कां, पू) नहीं है । ‡ यह चरण (क
② सूर— ८, १६ । ‡ यह पद केव
१ दयाल देवमनि—१ । ¶ यह चरण (शा) में नहीं में है ।

थाती प्रान तुम्हारी मोपै, जनमत हीँ जो दीन्हौ
सो मैं बाँटि दई पाँचनि कौं, देह जमाननि लीन्हौ
मन राखैं तुम्हरे चरननि पै, निन निन जो दुख पावैं
मुकरि जाइ, कै दीन वचन सुनि, जमपुर बाँधि पठावैं
लेखौ करत लाख ही निकसत, को गनि सकत अपार
हीरा जनम दियौ प्रभु हमकौं, दीन्हौ बात सम्हार
गीता-वेद-भागवत मैं प्रभु, यौं बोले हैं आथ
जन के निपट निकट सुनियत हैं, सदा रहत हौ साथ
जब जब अधम करी अधमाई, तब तब टास्यौ नाथ
अब तौ मोहिं बोलि नहिं आवै, तुमसौं क्यौं कहौं गाथ
हौं तौ जाति गँवार, पतित हौं, निपट निलज, खिसिआनौ
तब हँसि कह्यौ सूर-प्रभु सो तौ, मोहूँ सुन्यौ घटानौ

+ हरि जू, मोसौ पतित न आन।
मन-क्रम-वचन पाप जे कीन्हे, तिनकौ नाहिँ प्रमान
चित्रगुप्त जम-द्वार लिखत हैं, मेरे पातक भारि
तिनहूँ त्राहि करी सुनि औगुन, कागद दीन्हे डारि
औरनि कौं जम कैं अनुसासन, किंकर कोटिक धावैं
सुनि मेरी अपराध-अधमई, कोऊ निकट न आवैं
हौं ऐसौ, तुम वैसे पावन, गावत हैं जे तारे
अवगाहौं पूरन गुन स्वामी, सूर से अधम उधारे ॥१

+ केवल (क, का)

† मोसौ पतित न और हरे[1] ।

जानत हौ प्रभु अंतरजामी, जे[2] मैं कर्म करे
ऐसौ अंध, अधम, अविवेकी, खोटनि[3] करत खरे
विषयी[4] भजे, विरक्त न सेए, मन धन-धाम धरे
ज्यौं माखी, मृगमद-मंडित-तन परिहरि, पूय[5] परै
त्यौं मन मूढ़ विषय-गुंजा गहि, चिंतामनि बिसरै[6]
ऐसे[7] और पतित अवलंबित, ते छिन माहिँ तरे
सूर पतित, तुम पतित[8]-उधारन, बिरद कि लाज धरे

‡ मेरो वेर क्यौँ रहे सोचि ?

काटि कै अघ-फाँस पठवहु, ज्यौँ दियौ गज मोचि
कौन करनी घाटि मोसौं, सो करौं फिरि काँधि
न्याइ कै नहिँ खुनुस कीजे, चूक पल्लैँ वाँधि
मैं कछू करिवे न छाँड्यौ, या सरीरहिँ पाइ
तऊ मेरौ मन न मानत, रह्यौ अघ पर छाइ
अब कछू हरि कसरि नाहीँ, कत लगावत बार
सूर-प्रभु यह जानि पदवी, चलत वैलहिँ आर ॥१६६

) माऊ ।
: केवल (क, कां,
—१३ । ② जो मैं
२ । ③ खोटी करत

खरी—१७ । ④ विषइनि भजै
विरक्ति न सेवै नत क्रम ध्यान
धरी—१७ । ⑤ पुरइ परी—१७ ।
⑥ बिसरी—१७ । ⑦ हारे ग्राम
करत जम किंकर तहाँ न टेक

टरी—१७ । (
विरद की लाज
* (का)
‡ यह पद
पू) में है ।

अपनें हीं अँखियानि[1] दोष तैं, रविहिं उलूक न मानत
अतिमय सुकृत-रहित, अघ-व्याकुल, वृथा स्रमित रज छानत
सुनु अयनाप-हरन, करुनामय, संतत दीनदयाल
सूर कुटिल[2] राखौ सरनाई, इहिं व्याकुल[3] कलिकाल ॥२०१॥

रा

† प्रभु, तुम दीन के दुख-हरन ।
स्याममुंदर, मदन-मोहन, बान असरन-सरन ।
दूर देखि सुदामा आवत, धाइ परस्यौ चरन ।
लच्छ सौं बहु लच्छ दीन्हौ, दान अवढर-ढरन ।
छल कियौ पांडवनि कौरव, कपट-पासा ढरन ।
खाय विष, गृह लाय दीन्हौ, तउ न पाए जरन ।
बूड़तहिं ब्रज राखि लीन्हौ, नखहिं गिरिवर धरन ।
सूर प्रभु कौ सुजस गावत, नाम-नौका तरन ॥२०२॥

* राग

भक्ति बिना जौ कृपा न करते, तौ हौं आस न करतौ ।
बहुत पतित उद्धार किए तुम, हौं तिनकौं अनुसरतौ ।
सुख मृदु-बचन जानि मति जानहु, सुद्ध पंथ पग धरतौ ।
कर्म-बासना छाँड़ि कबहुँ नहिं साप[4] पाप आचरतौ ।

भिमान—१४ । ② ।। ③ अवसर—१६ । पद केवल (क, कां, ; (कां) में दूसरी है । (क, पू) में

अंत के चार चरणों के स्थान पर ये दो चरण हैं—
बधे कौरव अंज कीन्हौ भयो गिरिवर धरन । सूर प्रभु की कृपा जापर भक्त जन सब तरन ॥

* (कां) सारंग
† यह पद केवल (में है ।
④ सोच—१६ ।

सुजन-भेष-रचना प्रति जनमनि, आयौ पर-धन हरतौ ।
धर्म-धुजा अंतर कछु नाहीं, लोक दिखावत फिरतौ ।
परतिय-रति-अभिलाष निसा-दिन, मन-पिटरौ लै भरतौ ।
दुर्मति, अति अभिमान, ज्ञान[1] बिन, सब साधन तैं टरतौ ।
उदर-अर्थ चोरी हिंसा करि, मित्र-बंधु सौं लरतौ ।
रसना-स्वाद-सिथिल, लंपट ह्वै, अघटित भोजन करतौ[2] ।
यह ब्योहार लिखाइ, रात-दिन, पुनि जीतौ पुनि मरतौ ।
रवि-सुत-दूत धारि नहिं सकते, कपट घनौ उर धरतौ[3] ।
साधु-सील, सद्रूप पुरुष कौ, अपजस बहु उच्चरतौ ।
औघड़-असत-कुचीलनि सौं मिलि, माया-जल मैं तरतौ ।
कबहुँक राज-मान-मद-पूरन, कालहु तैं नहिं डरतौ ।
मिथ्या वाद आप-जस सुनि सुनि, मूछहिं पकरि अकरतौ[4] ।
इहिं विधि उच्च-अनुच तन धरि धरि, देस बिदेस बिचरतौ ।
तहँ सुख मानि, बिसारि नाथ-पद, अपनैं रंग बिहरतौ ।
अब मोहिं राखि लेहु मनमोहन, अधम-अंग पद परतौ ।
खर-कूकर की नाईं मानि सुख, विषय-अगिनि मैं जरतौ ।
तुम गुन की जैसै मिति नाहिं न, हौं अघ कोटि बिचरतौ ।
तुम्हैं-हमैं प्रति बाद भए तैं गौरव काकौ गरतौ ?
मोतैं कछू न उबरी हरि जू, आयौ चढ़त-उतरतौ ।
अजहूँ सूर पतित-पद तजतौ, जौ औरहु निस्तरतौ ॥२०३॥

...ल मैं—१६ । (२) ... ।। ये आठ चरण (का) में
। (३) करतो—१६ । नहीं हैं ।
-१४, १६ ।

* राग बि

तुम्हरौ नाम तजि प्रभु जगदीसर, सु तौ कहौ मेरे और कहा बल
बुधि-बिबेक-अनुमान आपनैं, सोधि गह्यौ सब सुकृतनि कौ फल
वेद, पुरान, सुमृति, संतनि कौं, यह आधार मीन कौं ज्यौं जल
अष्ट सिद्धि, नव निधि, सुर-संपति, तुम बिनु तुसकन कहुँ न कछू लल
अजामील, गनिका, जु ब्याध, नृग, जासौं जलधि तरे ऐसेउ खल
सोइ प्रसाद सूरहिँ अब दीजै, नहीँ बहुत तौ अंत एक पल ॥२०४

⊛ राग

‡ अब हौं हरि, सरनागत आयौ।
कृपानिधान, सुदृष्टि हेरियै, जिहिँ पतितनि अपनायौ।
ताल, मृदंग, झाँझ, इंद्रिनि मिलि, बीना, बेनु बजायौ।
मन मेरैं नट के नायक ज्यौं तिनहीँ नाच नचायौ।
उघट्यौ सकल सँगीत रीति[1]-भव अंगनि अंग बनायौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह की, तान-तरंगनि गायौ।
सूर अनेक देह धरि भूतल, नाना भाव दिखायौ।
नाच्यौ नाच लच्छ चौरासी, कबहुँ न पूरौ पायौ ॥२०५॥

× राग

§ मन बस होत नाहिँनै मेरैं।
जिनि बातनि तैं बह्यौ फिरत हौं, सोई[2] लै लै प्रेरै।

कां) ईमन।
पद केवल (क, कां)
दोनों चरण (क) में

⊛ (कां) बिहागरौ।
‡ यह पद केवल (क, कां) में है।
(1) भीत—१६।
× (कां) सारंग।

§ यह पद केवल (क
ग) में है।
(2) तेई बात अनेरे—
१०।

कैसैं[1] कहौं-सुनौं जस तेरे, औरै आनि घनेरे ।
तुम[2] तौ दोष लगावन कौं सिर, बैठे देखत नेरे ।
कहा करौं, यह चर्‍यौ बहुत दिन, अंकुस बिना मुकेरे ।
अब करि सूरदास प्रभु आपुन, द्वार पर्‍यौ है तेरे ॥२०६॥

† मैं तौ अपनी कही बड़ाई ।
अपने कृत तैं हौं नहिं बिरमत, सुनि कृपालु ब्रजराई
जीव न तजै स्वभाव जीव कौ, लोक बिदित दृढ़ताई
तौ क्यौं तजै नाथ अपनौ प्रन ? है प्रभु की प्रभुताई
पाँच लोक मिलि कह्यौ, तुम्हारैं नहिं अंतर मुकताई
तब सुमिरन-छल दुर्मर के छिन, माला तिलक बनाई
काँपन लागी धरा, पाप तैं ताड़ित लखि जदुराई
आपुन भए उधारन जग के, मैं सुधि नीकैं पाई
अब मिथ्या तप, जाप, ज्ञान सब, प्रगट भई ठकुराई
सूरदास उद्धार सहज गनि, चिंता सकल गँवाई ॥२०७

‡ अब मोहिं सरन राखियै नाथ !
कृपा करी जो गुरुजन पठए, चह्यौ जात गह्यौ हाथ
अहंभाव तैं तुम बिसराए, इतनेहिं छूट्यौ साथ
भवसागर मैं पर्‍यौ प्रकृति-बस, बाँध्यौ फिर्‍यौ अनाथ

1 कहौं करौं कछु ... त घेरे—१४, १७ ।
(२) तापर दोष लगावन कौ सिर बैठो देखत नेरे—१४, १७ ।
† यह पद को...
‡ यह पद को...

भ्रमित भयौ, जैसैं मृग चितवत, देखि देखि भ्रम-पाथ।
जनम न लख्यौ संत की संगति, कह्यौ-सुन्यौ गुन-गाथ।
कर्म, धर्म, तीरथ बिनु राधन, ह्वै गए सकल अकाथ।
अभय-दान दै, अपनौ कर धरि सूरदास कैं माथ॥२०८॥

रा

† अब मोहिं मज्जत[1] क्यौं न उबारौ?
दीनबंधु, करुनानिधि स्वामी, जन के दुःख निवारौ।
ममता-घटा, मोह की बूँदैं, सरिता मैन अपारौ।
बूड़त कतहुँ थाह नहिं पावत, गुरुजन-ओट-अधारौ।
गरजत क्रोध-लोभ कौ नारौ, सूझत कहुँ न उतारौ।
तृष्ना-तड़ित चमकि छनहीं-छन, अह-निसि यह तन जारौ।
यह भव-जल कलिमलहिं गहे है, बोरत सहस प्रकारौ।
सूरदास पतितनि के संगी, बिरदहिं नाथ, सम्हारौ॥२०९॥

राग

‡ जगतपति नाम सुन्यौ हरि, तेरौ

....।
मन चातक जल तज्यौ स्वाति-हित, एक रूप ब्रत धार्‌यौ।
नैंकु वियोग मीन नहिं मानत, प्रेम-काज बपु हार्‌यौ।
राका-निसि केते अंतर ससि, निमिष चकोर न लावत।
निरखि पतंग बानि नहिं छाँड़त, जदपि जोति तनु तावत।

ह पद केवल (क)

(१) मीजत।

‡ यह पद केवल (क, पू)

में है। दोनों प्रतियों मे

दूसरा चरण नहीं मिल

कीन्हे नेह-निबाह जीव जड़, ते इत-उत नहिँ चाहत
जैहैं काहि समीप सूर नर, कुटिल बचन-दव दाहत ॥२१०

* राग

† जौ पै यहै बिचार परी।
तौ कत कलि-कलमष लूटन[1] कौं, मेरी देह धरी?
जौ नाहीँ अनुसरत[2] नाम जग, बिदित बिरद कत कीन्हौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह कैं, हाथ बाँधि कत दीन्हौ?
मनसा और मानसी सेवा, दोउ अगाध करि जानौं।
होहु कृपालु कृपानिधि, केसव, बहु अपराध न मानौं।
काकौ गृह, दारा, सुत, संपति, जासौं कीजै हेत?
सूरदास प्रभु दिन उठि मरियत, जम कौं लेखौ देत ॥२११॥

‡ भजहु न मेरे स्याम मुरारी।
सब संतनि के जीवन हैँ हरि, कमल-नयन प्यारे हितकारी
या संसार-समुद्र, मोह-जल, तृष्ना-तरँग उठति अति भारी
नाव न पाई सुमिरन हरि कौ, भजन-रहित बूड़त संसारी
दीन-दयाल, अधार सबनि के, परम सुजान, अखिल अधिकारी
सूरदास किहिँ तिहिँ तजि जांचे, जन-जन-जाँचक होत भिखारी

पू) धनाश्री।
ह पद केवल (क. पू)

(1) टूटन—१४। (2) स्व-समानौ कीजत—१४। तुम करत—१७।

‡ यह पद के मेँ है।

राग धना

† हारौ[1] जानि परौ हरि मेरी ।
माया-जल बूड़त हौं, तकि तट चरन-सरन धरि तेरी ।
भव सागर, बोहित बपु मेरौ, लोभ-पवन दिसि चारौ ।
सुत-धन-धाम-त्रिया[2]-हित औरै लद्यौ बहुत विधि भारौ ।
अब भ्रम-भँवर परयौ ब्रज-नायक, निकसन की सब बिधि की ।
सूर सरद-ससि-बदन दिखाएँ उठै लहर जलनिधि की ॥२१३॥

राग रामकल

‡ अनाथ के नाथ प्रभु कृष्न स्वामी ।
नाथ[3] सारंगधर, कृपा करि मोहिँ पर, सकल अघ-हरन हरि गरुड़गामी
परयौ भव-जलधि मैं, हाथ धरि काढ़ि मम दोष जनि धारि चित काम-कामी
सूर बिनती करै, सुनहु नँद-नंद तुम, कहा कहौं खोलि कै अँतरजामी ॥२१४

राग धना

§ अदभुत जस बिस्तार करन कौं हम जन कौ बहु हेत ।
भक्त-पावन कोउ कहत न कबहूँ, पतित-पावन कहि लेत ।
जय अरु विजय कथा नहिँ कछुवै, दसमुख-बध-बिस्तार ।
जद्यपि जगत-जननि कौ हरता, सुनि सब उतरत पार ।
सेसनाग के ऊपर पौढ़त, तेतिक नाहिँ बड़ाई ।
जातुधानि-कुच-गर मर्दत तब, तहाँ पूर्नता पाई ।

---

† यह पद केवल (क, पू) में है। इसके प्रथम चरण का पाठ दोनों में बिलकुल एक है, परन्तु उसका कुछ अर्थ नहीं लगता। अतः पूरे पद के भाव तथा अर्थ के अनुरोध से उपर्युक्त पाठ निर्धारित कर उसे सार्थक करने की चेष्टा की गई है।

(१) हिराजिनि परेउ (रयौ) हरि मेरी—१४, १७। (२) तृषा—१४।

‡ यह पद केवल (क) में है।

(३) श्रीनाथ।

§ यह पद केवल (क) में है।

धर्म कहैं, सर-सयन गंग-सुत, नैनिक नाहिं संतोष।
सुत सुमिरन आतुर छिन उभरन, नाम भयौ निर्दोष।
धर्म-कर्म-अधिकारिनि सौं कछु नाहिं न तुम्हैं काज।
भू-भर-हरन प्रगट तुम भूतल, गावत संत-समाज।
भार-हरन बिरुदावलि तुम्हरी, मेरे क्यौं न टरावौ ?
सूरदास-सत्कार किए तैं ना कछु घटै तुम्हारौ ॥२१५॥

रा

† हरि जू, हौं यातैं दुख-पात्र।
श्रीगिरिधरन-चरन-गति ना भई तजि विषया-रस मात्र
हुतौ आढ्य तब कियौ असद्व्यय, करी न ब्रज-बन-जात्र
पोषे नहिँ तुव दास प्रेम सौं, पोष्यौ अपनौ गात्र
भवन सँवारि, नारि-रस लोभ्यौ, सुत, वाहन, जन, भ्रात्र
महानुभाव निकट नहिँ परसे, जान्यौ न कुल-विचात्र
छल-बल करि जित-तित हरि पर-धन, धायौ सब दिन-रात्र
सुद्धासुद्ध बोझ बहु बह्यौ सिर, कौपि जु करी लै गात्र
हृदय कुचील काम-भू-तृष्ना-जल-कलिमल है पात्र
ऐसे कुमति जाट सूरज कौं प्रभु बिनु कोउ न धात्र ॥२१६

मेरैं हृदय नाहिँ आवत हौ, हे गुपाल, हौं इतनी जानत
कपटी, कृपन, कुचील, कुदरसन, दिन उठि विषय-बासना बानत

[…]ह पद केवल (क) में है।

† यह पद केवल (क) में है।

ज्यौं करक. साधु अनाथुहिं, केहरि कैं सँग धेनु बँधाने।
रह विपरीति जानि तुम जन की, अंतर दै विच रहे लुकाने।
ज्यौं राजा-सुत होइ भिखारी, लाज परे ते जाइ बिकाने।
सूरदास प्रभु अपने जन कौं कृपा करहु जौ लेहु निदाने॥२१७॥

राग

प्रभु, मैं पीछौ लियौ तुम्हारौ।
तुम तौ दीनदयाल कहावत, सकल आपदा टारौ।
महा कुबुद्धि, कुटिल, अपराधी, औगुन भरि लियौ भारौ।
सूर क्रूर की याही बिनती, लै चरननि मैं डारौ॥२१८॥

राग मुलतानी धनाश्री

मेरी सुधि लीजौ हो ब्रजराज।
और नहीं जग मैं कोउ मेरौ, तुमहिं सुधारन-काज।
गनिका, गीध, अजामिल तारे, सबरी औ गजराज।
सूर पतित पावन करि कीजै, बाहँ गहे की लाज॥२१९॥

राग खेमावती

हमारे प्रभु, औगुन चित न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारौ, सोई पार करौ।
इक लोहा पूजा मैं राखत, इक घर बधिक परौ।
सो दुविधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरौ।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक बरन है, गंगा नाम परौ।

---

‡ राग-कल्पद्रुम से ... गया है।

‡ यह पद राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।

§ यह पद राग-कल्प... संकलित किया गया है

तन मारा, ज्यौं मल्ल कहावत, सूर सु मिलि त्रिगोरा ।
कै इनकौ निरधार कीजियै, कै प्रन जात टरौ ॥२२०॥

राग सुलतानी-तिताल

† अब मेरी राखौ लाज मुरारी ।
संकट मैं इक संकट उपजौ, कहै मिरग सौं नारी ।
और कछू हम जानति नाहीं, आई सरन तिहारी ।
उलटि पवन जब बावर जरियौ, स्वान चल्यौ सिर झारी ।
नाचत-कूदत मृगिनी लागी, चरन-कमल पर वारी ।
सूर स्याम-प्रभु अविगत-लीला, आपुहिं आपु सँवारी ॥२२१॥

यमुना-स्तुति

राग रामकली

‡ भक्त जमुने सुगम, अगम औरैं ।
प्रात जो न्हात, अघ जात ताके सकल, नाहिं जमहू रहत हाथ जोरैं ।
अनुभवी जानहीं बिना अनुभव कहा, प्रिया जाकौ नहीं चित्त चोरै ।
प्रेम के सिंधु कौ मर्म जान्यौ नहीं, सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं ? ॥२२२॥

राग रामकली

§ फल फलित होत फल-रूप जानैं ।
देखिहू सुनिहु नहिं ताहि अपनौ कहैं, ताकी यह बात कोउ कैसैं मानैं ।
ताहि कौं हाथ निरमोल नग दीजियै, जोइ नीकैं परखि ताहि जानैं ।
सूर कहि क्रूर तैं दूर बसियै सदा, जमुन कौ नाम लीजै जु छानैं ॥२२३॥

---

† यह पद राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है ।

‡ यह पद केवल (क) में है ।

§ यह पद केवल (क) में है ।

श्रीभागवत-प्रसंग

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारविंद उर धरौ।
हरि की कथा होइ जब जहाँ। गंगाहू चलि आवै तहाँ।
जमुना, सिंधु, सरस्वति आवै। गोदावरी बिलंब न लावै।
सर्व तीर्थ कौ बासा तहाँ। सूर हरि-कथा होवै जहाँ॥२२४॥

...त वर्णन ❀ राग सारंग

† श्रीमुख चारि स्लोक दए ब्रह्मा कौं समुझाइ।
ब्रह्मा नारद सौं कहे, नारद व्यास सुनाइ।
व्यास कहे सुकदेव सौं द्वादस स्कंध बनाइ।
सूरदास सोई कहै पद[1] भाषा करि गाइ॥२२५॥

...सुक-जन्म-कथा × राग बिलावल

§ व्यास कह्यौ जो सुक सौं गाइ। कहौं सो सुनौ संत चित लाइ।
व्यास पुत्र-हित बहु तप कियौ। तब नारायन यह बर दियौ।
ह्वै है पुत्र भक्त अति ज्ञानी। जाकी जग मैं चलै कहानी।
यह बर दै हरि कियौ उपाइ। नारद मन संसय उपजाइ।

---

* (२१/३) सारंग।
† यह पद (ना, श्या) में नहीं है।

❀ (ना) कान्हरा।
‡ यह पद (श्या) मे नहीं है।

(१) बिधि—२।
× (ना) बिभास।
§ यह पद (श्या) में नहीं

तब नारद गिरिजा पै गए। तिनसौं या विधि पूछन भए
मुंडमाल सिव-ग्रीवा कैसी ? मोसौं बरनि सुनावौ तैसी
उमा कही मैं तो नहिं जानी। अरु सिवहूँ मोसौं न बखानी
नारद कह्यौ अब पूछौ जाइ। बिनु पूछैं नहिं देहिं बताइ
उमा जाइ सिव कौं सिर नाइ। कह्यौ सुनौ बिनती सुरराइ
मुंडमाल कैसी तव ग्रीवा ? याकौ मोहिं बतावौ भीवा
सिव बोले तब बचन रसाल। उमा आहि यह सो मुंडमाल
जब जब जनम तुम्हारौ भयौ। तब तब मुंडमाल मैं लयौ
उमा कह्यौ सिव तुम अविनासी। मैं तुम्हरे चरननि की दासी
मेरे हित इतनौ दुख भरत। मोहिं अमर काहे नहिं करत
तब सिव-उमा गए ता ठौर। जहाँ नहीं छितिया कोउ और
सहस-नाम तहँ तिन्हैं सुनायौ। जातैं आपु अमर-पद पायौ
तहाँ हुतौ इक सुक कौ अंग। तिहिं यह सुन्यौ सकल परसंग
ताकौं सिव मारन कौं धायौ। तिन उड़ि अपुनौ आपु बचायौ
उड़त-उड़त सुक[1] पहुँच्यौ तहाँ। नारि ब्यास की बैठी जहाँ
सिवहू ताके पाछैं धाए। पै ताकौं मारन नहिं पाए
ब्यास-नारि तबहीं मुख बायौ। तब तनु तजि मुख माहिं समायौ
द्वादस बर्ष गर्भ मैं रह्यौ। ब्यास[2] भागवत तबहीं[3] कह्यौ
बहुरौ जब जदुपति समुझायौ। तेरी माता बहु दुख पायौ
तू जिहिं हित नहिं बाहर आवै। सो हमसौं कहि क्यौं न सुनावै

---

(१) सो—२, १६, १८। सह्यौ—८ (३) तब तिहि—१, ३।
ब तेहि माता बहु दुख

प्रभु तुव माया मोहिं भ्रमावत । तातैं मैं बाहर नहिं आवत ।
हरि कह्यौ अब न व्यापिहै माया । तब वह गर्भ छाँड़ि जग आया ।
माया मोह ताहि नहिं गह्यौ । सुन्यौ ज्ञान सो सुमिरन रह्यौ ।
जैसैं सुक कौं व्यास पढ़ायौ । सूरदास तैसैं कहि गायौ ॥२२६॥

श्रीभागवत के वक्ता-श्रोता

* राग बिलाव

व्यासदेव जब सुकहिं पढ़ायौ । सुनि कै सुक सो हृदय बसायौ ।
सुक सौं नृपति परीच्छित सुन्यौ । तिनि पुनि भली भाँति करि गुन्यौ ।
सूत सौनकनि सौं पुनि कह्यौ । बिदुर सो मैत्रेय सौं लह्यौ ।
सुनि भागवत स्रवनि सुख पायौ । सूरदास सो बरनि सुनायौ ॥२२७॥

सूत-सौनक-संवाद

* राग बिलावल

सूत व्यास सौं हरि-गुन सुने । बहुरो तिन निज मन मैं गुने ।
सो पुनि नैमिषार मैं आयौ । तहाँ रिषिनि कौ दरसन पायौ ।
रिषिनि कह्यौ हरि-कथा सुनावौ । भली भाँति हरि के गुन गावौ ।
प्रथमहिं कह्यौ व्यास-अवतार । सुनौ सूर सो अब चित धार ॥२२८॥

व्यास-अवतार

× राग बिलावल

§ हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
व्यास-जनम भयौ जा परकार । कहौं सो कथा, सुनौ चित धार ।

---

(१) रह्यौ—१ ।
* (ना) बिभास ।
† यह पद (स्या) में नहीं है ।
(२) सुन—२, ८, १८ । (३) स्रवनि—२ । परम—१६ । महा—१८ ।
* (ना) बिभास ।
‡ यह पद (स्या) में नहीं है ।
(४) सुन्यौ—६, ८, १८ (५) गुन्यौ—६, ८, १८ । (६) भागवत—३ ।
× (ना) बिभास । (रा) बिलावल ।
§ यह पद (स्या) में नहीं है

सत्यवती मच्छोदरि नारि । गंगा-तट ठाढ़ी सुकुमारि
तहाँ परासर रिषि चलि आए । बिवस होइ तिहिँ कौँ बच छाए
रिषि कह्यो ताहि, जान-रति देहि । मैं न करौं तौहिँ सो लेहि
तू कुमारिका बहुरो होइ । तोकौं नाम धरै नहिँ कोइ
मेरौ कह्यौ न जौ तू करै । देहौं साप, सहा दुख भरै
सत्यवती सराप-भय मान । रिषि कौ बचन कियौ परमान
जोजनगंधा काया करी । मच्छ-बास ताकी सब हरी
ब्यासदेव ताकैं सुत भए । होत जनम बहुरो बन गए
देखौ काम-प्रताप अधिकाई । कियौ परासर अस रिषिराई
प्रबल सत्रु आहि यह मार । यातैं संतौ, चलौ सँभार
या विधि भयौ ब्यास-अवतार । सूर कह्यौ भागवत विचार ॥२२६

भागवत-अवतरण का कारण राग बि

भयौ भागवत जा परकार । कहौं, सुनौ सो अब चित धार
सतजुग लाख बरस की आइ । त्रेता दस सहस्र कहि गाइ
द्वापर सहस एक की भई । कलिजुग सत संवत रहि गई
सोऊ कहन सुनन कौं रही[3] । कलि-मरजाद जाइ[4] नहिँ कही
तातैं हरि करि ब्यास अवतार । करी संहिता बेद-बिचार
बहुरि पुरान अठारह किये । पै तउ सांति न आई हिये

---

(1) मछुरी (मछरी) बत—२, ३, १६, १८। (2) मछ घाए—१। तिनि पार—२,३,६,१८। तिन पार लगाए—८।

* (ना) मैंग।

† यह पद (स्या) में नहीं है।

(3) भाई—१,३,६ कही नहिं जाई—१, ३

(4) कीनी संमरा—२।

तब नारद तिनकैं ढिग आइ। चारि स्लोक कहे समुझाइ।
ये ब्रह्मा सौं कहे भगवान। ब्रह्मा मोसौं कहे बखान।
सोइ अब मैं तुमसौं भाषे। कहौ भागवत इन हिय राखे।
श्री भागवत सुनै जो कोइ। ताकौं हरि-पद-प्रापति होइ।
ऊँच नीच ब्यौरौ न रहाइ। ताकी साखी मैं, सुनि भाइ।
जैसैं लोहा कंचन होइ। ब्यास, भई मेरी गति सोइ।
दासी-सुत तैं नारद भयौ। दोष दासपन कौ मिटि गयौ।
ब्यासदेव तब करि हरि-ध्यान। कियौ भागवत कौ ब्याख्यान।
सुनै भागवत जो चित लाइ। सूर सो हरि भजि भव तरि जाइ॥२३०॥

राग सारंग

† कह्यौ सुक श्री भागवत-बिचार।
जाति-पाँति कोउ पूछत नाहीं, श्रीपति कैं दरबार।
श्रीभागवत सुनै जो हित करि, तरै सो भव-जल पार[४]।
सूर सुमिरि सो[५] रटि निसि-बासर, राम-नाम निज सार॥२३१॥

नाम-माहात्म्य

* राग कान्हरौ

‡ बड़ो है राम नाम की ओट।
सरन गएँ प्रभु काढ़ि देत नहिँ, करत कृपा कैं कोट।

---

(१) नाम भागवत यातैं राखे—२। (२) बड़ाई—१, ६, ८। (३) मैं—२।
† यह पद (रुया) में नहीं है। (४) धार—१। (५) गुन—१, ६, ८।
* (ना) बिलावल।
‡ यह पद (रुया) में नहीं है।

बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ौ को छोट ?
सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट ॥२३२॥

* राग

सोइ भलौ जो रामहिं गावै ।
स्वपचहु श्रेष्ठ होत पद सेवत, बिनु गोपाल द्विज-जनम न[1] भावै ।
बाद-बिवाद, जज्ञ-ब्रत-साधन, कितहूँ[2] जाइ. जनम डहकावै ।
होइ अटल जगदीस-भजन मैं, अनायास[3] चारिहूँ फल पावै ।
कहूँ ठौर नहिं चरन-कमल बिनु, भृंगी ज्यौं दसहूँ दिसि धावै ।
सूरदास प्रभु संत-समागम, आनँद अभय निसान बजावै ॥२३३॥

राग

काहु के बैर कहा सरै ।
ताकी सरवरि करै सो झूठौ जाहि गुपाल बड़ौ करै ।
ससि-सन्मुख जो धूरि उड़ावै, उलटि ताहि कैं मुख परै ।
चिरिया कहा समुद्र उलीचै, पवन कहा परबत टरै ?
जाकी कृपा पतित ह्वै पावन, पग परसत पाहन तरै ।
सूर केस नहिं टारि सकै कोउ, दाँत पीसि जौ जग मरै ॥२३४॥

* राग

है हरि-भजन कौ परमान ।
नीच पावैं ऊँच पदवी, बाजते नीसान ।
भजन[4] कौ परताप ऐसौ, जल तरै पाषान ।
अजामिल अरु भीलि[5] गनिका, चढ़े जात बिमान ।

सा) कान्हरा । (का) ... गँवावै—६ । (२) कित कहूँ—२ गनिहूँ—६, ८, १८ । (३) सेवा ताकु चारि—१, ३, ६, १४ । ... (सा) रामकली । (४) हरि भजन—२ भील—१५

चलत तारे सकल मंडल, चलत ससि अरु भान।
भक्त ध्रुव कौं अटल पदवी, राम के दीवान।
निगम जाकौ सुजस गावत, सुनत संत सुजान।
सूर हरि की सरन आयौ, राखि लै भगवान ॥२३५॥

विदुर-गृह भगवान-भोजन

* राग बिलावल

हरि, हरि, हरि, सुमिरौ सब कोइ। ऊँच नीच हरि गनत न दोइ।
बिदुर-गेह हरि भोजन पाए। कौरव-पति कौं मन नहिं ल्याए।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। सूर स्याम भक्तनि मन भाइ[1] ॥२३६॥

* राग बिलावल

भए पांडवनि के हरि दूत। गए जहाँ[2] कौरवपति धूत।
उन सौं जो हरि वचन सुनाए[3]। सूर कहत सो[4] सुनौ चित लाए ॥२३७॥

राग बिलावल

"सुनि राजा दुर्जोधना, हम तुम पैं आए।
'पांडव-सुत जीवत मिले, दै[5] कुसल पठाए।
'छेम-कुसल अरु दीनता, दंडवत सुनाई[6]।
'कर जोरे बिनती करो, दुरबल-सुखदाई[7]।
'पाँच गाउँ पाँचौ जननि, किरपा करि दीजै।
'ये तुम्हरे कुल-बंस हैं, हमरी सुनि लीजै।"
"उनकी मोसौं दीनता, कोउ कहि न सुनावौ।
'पांडव-सुत अरु द्रौपदी कौं मारि गड़ावौ[8]।

---

* (ना) भोपाली।
(१) भाइ—१, ३, ६, ८, १५।
* (ना) बिभास।

(२) तहाँ जहँ कौरौ पूत—८। (३) उचारे—२। (४) सोई चित धारे—२। सुनियो चित लाए—१६ (५) तिन हमहिँ २

(६) सुनाए—२। (७) अधि-काए—२। दुख पाई—८। (८) कढ़ावो—१, ८, १६।

'राजनीति जानौ नहीं, गो-सुत चरवारे।
'पीवौ छाँछ अघाइ कैं, कब के रथवारे!"
"गाइ-गाउँ के वत्सला मेरे आदि म्हाई।
इनकी लज्जा नहिं हमैं, तुम राज-बड़ाई।"
भीषम-द्रोन-करन सुनैं, कोउ मुखहु न बोलैं।
ये पांडव क्यौं गाड़िए, धरनी-धर डोलैं।
हम कछु लेन न देन मैं, ये बीर तिहारे।
सूरदास प्रभु उठि चले, कौरव-सुत हारे॥२३८॥

*

ऊधौ, चलौ बिदुर कैं जइयै।
दुरजोधन कैं कौन काज जहँ आदर-भाव न पइयै
गुरुमुख नहीं बड़े अभिमानी, कापै सेव करइयै
टूटी छानि, मेघ जल बरसैं, टूटौ पलँग बिछइयै
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौं, तिया कहै प्रभु अइयै
सकुंचत फिरत जो बदन छिपाए, भोजन कहा मँगइयै
तुम तौ तीनि लोक के ठाकुर, तुम तैं कहा दुरइयै
हम तौ प्रेम-प्रीति के गाहक, भाजी-साक छकइयै
हँसि हँसि खात, कहत मुख महिमा, प्रेम-प्रीति अधिकइयै
सूरदास-प्रभु भक्तनि कैं बस, भक्तनि प्रेम बढ़इयै॥२३९

...ा — १, १६। ② काढ़िए—१, ...) है—१, २, १६। ...) सारंग। ...—२, ८।

‖ यह चरण (स, का, रा) में नहीं है। ⑤ नहिं राजा—२। ⑥ सेवा कहा—८। ¶ यह चरण (स) में

नहीं है। (ना... स्थान पर यह पं... साग मटर की रे... खगइयै। ⑦ निसिदि...

* राग

हरि ठाढ़े रथ चढ़े दुवारे।
तुम गम्कक, आगैं ह्वै देखौ, भक्त भवन किधौं अनत सिधारे।
सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीन्हौ, कौरव-सुत कछु काज हँकारे।
तहँ आए जदुपति सुनियत[1] हैं, कमल-नयन हरि हितू हमारे।
जिनकौं[2] मिलन गए पति तेरे, सो ठाकुर ये बिदित[3] तुम्हारे।
सूर[4] सुनत संभ्रम उठि दौरी, प्रेम-मगन, तन-दसा विसारे॥२४०॥

* राग

प्रभु जू, तुम हो अंतरजामी।
तुम लायक भोजन नहिँ गृह मैं अरु नाहीँ गृह-स्वामी।
हरि कह्यौ साग-पत्र[5] मोहिँ अति प्रिय, अम्रित ता सम नाहीँ।
बारंबार सराहि सूर प्रभु, साग विदुर घर खाहीँ॥२४१॥

-दुर्योधन-संवाद

× रा

क्यौं दासी-सुत कैं पग धारे?
भीषम-करन-द्रोन-मंदिर तजि, मम गृह तजे मुरारे!
सुनियत हीन, दीन, वृषली[1]-सुत, जाति-पाँति तैं न्यारे।
तिनकैं जाइ कियौ तुम भोजन, जदु-कुल लाजनि मारे।

ना) बिहागरा। (कां)

[illegible]अत—१, १६। ② [illegible] गर्धा पति मेरो ते बिदित (बड़े) हमारे—६, ८ १६। ③ प्रभू १, १६। बड़े—२, ६, ८। ④ सूरज प्रभु सुनि संभ्रम धाए प्रेम मगन तन बसन बिसारे—१, २, ३, ६, ८, १६।

* (ना) नट।

⑤ पत्र जो १, १६। प्रीति-युत—३।

× (ना) भैरव : सारंग।

① गृह-लंपट—२ भाँतिन—८।

हरि जू कह्यौ, सुनौ दुरजोधन, सत्य सुवचन हमारे।
सोइ निरधन, सोइ कृपन दीन हैं, जिन मम चरन बिसारे।
तुम साकट, वै भगत-भागवत[1], राग-द्वेष तैं न्यारे।
सूरदास प्रभु नंदनँदन कहैं, हम ग्वालनि-जुठिहारे ॥२४२॥

※ २

"हम तैं बिदुर कहा है नीकौ ?
'जाकैं रुचि सौं भोजन कीन्हौ, कहियत[2] सुत दासी कौ।
"द्वै बिधि भोजन कीजै राजा, बिपति परैं कै प्रीति
तेरैं प्रीति न मोहिं आपदा, यहै बड़ी बिपरीति
'ऊँचे मंदिर कौन काम के, कनक-कलस जो चढ़ाए,
'भक्त-भवन मैं हौं जु बसत हौं, जद्यपि तृन करि छाए,
'अंतरजामी नाउँ हमारौ, हौं अंतर की जानौं
'तदपि सूर मैं भक्तवछल हौं, भक्तनि हाथ बिकानौं" ॥२४३॥

※ २

"हरि[3], तुम क्यौं न हमारैं आए ?
'षट-रस ब्यंजन छाँड़ि रसोई, साग बिदुर-घर खाए।
'ताके झुगिया[4] मैं तुम बैठे कौन बड़प्पन पायौ ?
'जाति[5]-पाँति कुलहू तैं न्यारौ, है दासी कौ जायौ।"
"मैं तोहिं सत्य कहौं दुरजोधन, सुनि तू बात हमारी।
'बिदुर हमारौ प्रान पियारौ, तू बिषया-अधिकारी।

---

[1] भक्त भागवत वेई—

※ (राग) जैतश्री।

(२) सुनियत—१।

※ (राग) नट नारायनी।

(३) प्रभु जू—६, ८।

(४) धाम जाय तुम— [illegible]

[5] जानत जाति पाँति नैं ६, ८।

'जाति-पाँति सबकी हौं जानौं, बाहिर छाक मँगाई।
'ग्वालनि कैं सँग भोजन कीन्हौं, कुल कौं लाज लगाई।
'जहँ अभिमान तहाँ मैं नाहीं, यह भोजन विष लागै।
'सत्य पुरुष सो दीन गहत है, अभिमानी कौं त्यागै।
'जहँ जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहाँ तहाँ उठि धाऊँ।
'भक्तनि के हौं संग फिरत हौं, भक्तनि हाथ बिकाऊँ।
'भक्तबछल है बिरद हमारौ, बेद सुमृतिहूँ गावैं।"
सूरदास प्रभु यह निज महिमा, भक्तनि काज बढ़ावैं ॥२४४॥

द्रौपदी-सहाय

* राग बिलावल

हरि, हरि, हरि, सुमिरौ सब कोइ। नारि-पुरुष हरि गनत न दोइ।
द्रुपद-सुता की राखी लाज। कौरव-पति[1] कौ पारयौ ताज।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। सूर स्याम भक्तनि सुखदाइ[2]॥२४५॥

* राग बिलावल

कौरव पासा कपट बनाए। धर्म-पुत्र कौं जुआ खिलाए।
तिन हारयौ सब भूमि-भँडार। हारी बहुरि द्रौपदी नार।
ताकौं पकरि सभा मैं ल्यावै[3]। दुस्सासन कटि-बसन छुड़ावै[4]।
तब वह हरि सौं रोइ पुकारी। सूर राखि मम लाज मुरारी॥२४६॥

× राग सारंग

अब कछु नाहिंन नाथ, रह्यौ!
सकल सभा मैं पैठि[5] दुसासन, अंबर आनि गह्यौ।

---

* (ना) विभास। (रा) ...ल।
(१) सुत—६, ८। (२) बलि—१, १८। जुबताइ—२। हित आइ—८।
* (ना) परज।
(३) लाए—१, ३, ६, ८, १६, १८। ल्याइ—२। (४) छुड़ाए—१, ३, ६, ८, १६, १८। छुड़ाइ—२।
× (का, ना, रा) नट।
(५) बैठि—१, २, ३, ८, १६।

हारि सकल भंडार-भूमि, आपुन बन-बास लह्यौ।
एकै[1] चीर हुतौ मेरे पर, सो इन हरन चह्यौ।
हा जगदीस! राखि इहिं अवसर, प्रगट पुकारि कह्यौ।
सूरदास उमँगे दोउ नैना, सिंधु[2]-प्रवाह बह्यौ॥ २४७॥

राग

† राखौ पति गिरिवरगिरि-धारी!

अब तौ नाथ, रह्यौ कछु नाहिंन, उघरत माथ अनाथ पुकारी
बैठी सभा सकल भूपनि की, भीषम-द्रोन-करन ब्रतधारी
कहि न सकत कोउ बात बदन पर, इन पतितनि सो अपति बिचारी
पांडु-कुमार पवन से डोलत, भीम गदा कर तैं महि डारी
रही न पैज प्रबल पारथ की, जब तैं धरम-सुत घरनी हारी
अब तौ नाथ न मेरौ कोई, बिनु श्रीनाथ-मुकुंद-मुरारी
सूरदास, अवसर के चूकैं, फिरि पछितैहौ देखि उघारी॥२४८

* राग का

‡ मो अनाथ के नाथ हरी!

ब्रह्मादिक, सनकादिक, नारद, जिहिं समाधि नहिं ध्यान टरी।
बूड़त स्याम, थाह नहिं पावौं, दुस्सासन-दुख-सिंधु परी[3]।
भक्त-बछल प्रभु नाम सुमिरि कै, ता कारन मैं सरन धरी।
भीषम, द्रोन, करन, अस्थामा, सकुनि सहित काहू न सरी।
महापुरुष[4] सब बैठे देखत, केस गहत थरहरि[5] न करी।

---

① इतनक—२, ३। ②
न—१, १६।
† यह पद केवल (स्या) में है।

* (का, ना) बिलावल। स्या) में नहीं है।
(कां) सारंग।
‡ यह पद (वे, ह, रा,

③ मरी—२, ८। ④
बीर—२। ⑤ कछु घर—

त्राहि-त्राहि द्रौपदी पुकारी, गई बैकुंठ अवाज खरी
सूर स्याम फिरि कहा करौगे, जब लैहै इक वसन हरी ॥२४६

+ जब गहि राजसभा मैं आनी।
द्रुपद-सुता पट-हीन करन कौं दुस्सासन अभिमानी।
परे अब या नृपति-सभा पैं, कहति प्रजा अकुलानी।
बैठे हँसत करन, दुर्जोधन, रोवति द्रौपदि रानी!
जित देखति तित कोऊ नाहीँ, टेरि कहति मृदु बानी।
हा जदुनाथ, कमल-दल-लोचन, करुनामय, सुखदानी!
गरुड़ चढ़े देखे नँदनंदन ध्यान-चरन-लपटानी।
सूरदास प्रभु कठिन बिपति सौं राखि लियौ जग जानी॥२५०॥

※ रा

‡ इत-उत देखि द्रौपदी टेरी।
ऐंचत वसन, हँसत कौरव-सुत[२], त्रिभुवन-नाथ, सरन हौं तेरी
सरवस दै अंबर तन बाँध्यौ, सोउ अब हरत, जाति पति मेरी
क्रोधित देखि हँसे कौरव-कुल, मानौ मृगी सिंह बन घेरी
गहि दुस्सासन केस सभा मैं, बरबस[३] लै आयौ ज्यौं चेरी
पांडव सब पुरुषारथ छाँड़्यौ, बाँधे कपट-बचन की बेरी
हा जदुनाथ द्वारिका-वासी, जुग-जुग भक्त-आपदा फेरी
वसन-प्रवाह बढ़्यौ सुनि सूरज, आरत बचन कहे जब टेरी ॥२५१

---

† यह पद केवल (स, ल, ... में है।
‡ यह पद (वे, रा, स्या) में नहीं है।
(२) कुल—१, २, ६, १... परबस—२, ३, ८।
※ (का) सारंग।
(१) दसा द्रौपदी हेरी ३

* राग बिलावल

जिनकी लाज गुपालहिं मेरी।

तिनकौं नाहिं बधू हौं जिनकी, अंबर हरत[1] सबनि तन हेरी।

पति अति रोष मारि मनहीं मन, भीषम दई बचन बँधि बेरी।

हा जगदीस, द्वारिकावासी, भई अनाथ, कहति हौं टेरी।

बसन-प्रवाह बढ़्यौ जब जान्यौ, साधु-साधु, सबहिनि मति फेरी।

सूरदास-स्वामी जस प्रगट्यौ, जानी[2] जनम-जनम की चेरी ॥२५२॥

† राग रामकली

प्रभु[3], मोहिं राखियै इहिं ठौर।

केस गहत कलेस पाऊँ, करि दुसासन जोर।

करन, भीषम, द्रोन, मानत नाहिं कोउ निहोर।

पाँच[4] पति हित हारि बैठे, रावरें[5] हित मोर।

धनुष-बान सिरान, कैधौं, गरुड़ वाहन खोर।

चक्र काहु चोरायौ[6], कैधौं, भुजनि बल भयौ थोर।

सूर के प्रभु कृपा-सागर[7], चितै लोचन-कोर।

बढ़्यौ[8] बसन-प्रवाह जल ज्यौं, होत जय-जय सोर ॥२५३॥

---

* (ना) कान्हरा।

(१) लेत—२, ३, ६, ८, १८। (२) जनम-जनम की भई सु चेरी—६, ८।

† यह पद केवल (स, ल, शा) में है

(३) हरि—२। (४) सबै भूपति—२। (५) सदा चक्र चोरायौ काहू कौ भुजनि बल थोर—२। (६) चोराइ लीन्हौ—२। (७) करिकै—३। (८) बाढ़्यौ बसन प्रकास लाग्यौ करन जय जय सोर—२।

राग

† लाज[1] मेरी राखौ स्याम हरी।

हा-हा करि द्रौपदी पुकारी, बिलँब न करौ घरी।
दुस्सासन[2] अति दारुन रिस करि, केसनि करि[3] पकरी।
दुष्ट[4]-सभा मिलाय दुरजोधन, चाहत नगन करी।
भीषम, द्रोन, करन, सब[5] निरखत, इनतैं[6] कछु न सरी।
|| अर्जुन-भीम महाबल जोधा, इनहूँ मौन धरी।
|| अब मोकौं धरि रही न कोऊ, तातैं[6] जाति मरी।
¶ मेरैं मात-पिता-पति-बंधू, एकै टेक हरी।
¶ जय-जयकार भयौ त्रिभुवन मैं, जब द्रौपदि उबरी।
सूरदास प्रभु सिंह-सरन-गति स्यारहिं[7] कहा डरी॥२५४॥

* १

निबाहौ[7] बाहँ गहे की लाज।
द्रुपद-सुता भाषति, नँदनंदन, कठिन बनी है आज।
भीषम, द्रोन, करन, दुरजोधन, बैठे सभा बिराज।
तिन देखत मेरौ पट काढ़त, लीकैं लगौ तुम लाज।

---

†यह पद केवल (स, ल, ... है। (स) तथा (शा) में बड़ा अंतर है और ... संख्या भी न्यूनाधिक ... रिक होने के कारण (शा) ... सन-प्रकाश बड़ौ कला- ... हारि परैं पंक्ति निकाल

(1) अब मोहिं गोबिँद लाज परी—३।

|| ये चरण (शा) में नहीं हैं।

(2) इन पर रोष कियौ दुस्सासन बरबट केस धरी—२। (3) कौं—१। (4) महामूढ़—१। (5) कुंतीसुत—२।

¶ ये चरण ... नहीं हैं।

(6) गीदड़ तैं।

* (ना) अलति ... कौं) देवगंधार।

(7) निबहौ—... निबहियो—२। (8) नहिं—२। नैंक ... १८।

खंभ फारि हरनाकुस मार्यौ, जन[१] प्रह्लाद निवाज ।
जनक-सुता-हित हत्यौ लंकपति, बाँध्यौ सागर-पाज[२] ।
गदगद स्वर, आतुर, तन पुलकित, नैननि नीर-समाज ।
दुखित द्रौपदी जानि जगतपति, आए खगपति त्याज ।
गुरु चीर भीर[३]-तन-कृस्ना, ताकैं भए जहाज ।
काढ़ि काढ़ि थाक्यौ दुस्सासन, हाथनि उपजी खाज ।
विकल[४] मान खोयौ कौरव-पति, पारे सिर कौ ताज ।
सूरज प्रभु यह भाँति सदाई, भक्त-हेत महराज ॥२५॥

[५]

[६] टाढ़ौ कृष्न-कृष्न यौं बोलै ।
जैसैं कोऊ विपति परे तैं, दूरि धर्यौ धन खोलै ।
पकर्यौ चीर दुष्ट दुस्सासन, विलख बदन भइ डोलै ।
जैसैं राहु-नीच ढिग आएँ, चंद्र-किरन झकझोलै ।
जाकैं मीत नंदनंदन से, ढकि लइ पीत पटोलै ।
सूरदास ताकौं डर काकौ, हरि गिरिधर[७] के ओलै ॥२६॥

*[८]

तुम्हरी कृपा बिनु[९] कौन उबारै ?
अर्जुन, भीम, जुधिष्ठिर, सहदेव, सुमति[१०] नकुल[११] बलभारै ।

...नूप धर्यौ—१, ...। (२) गाज—१, ...द (वें, स, टू) ...पर मिलता है । ...यह पद के अंत

...में है । (३) बहुरि—१ । भर—१८, फेर—१६ । (४) विकल अमान कर्यौ कौरवपति—१ । व्याकुल मान गयौ कौरवपति—२ । ...। यह पद केवल (वें, इ,

...स्था) में है । (६) गिरिवर— * (ना) ... (८) कर कौ स— ...सुनत—६, ८ । (७)...

केस पकरि ल्यायौ दुस्सासन, राखी लाज, मुरारे
नाना बसन बढ़ाइ दिए प्रभु, बलि-बलि नंद-दुलारे
नगन न होति, चकित भयौ राजा, सीस धुनै, कर मारै
जापर कृपा करैं करुनामय, ता दिसि कौन निहारै
जो जो जन निस्चै करि सेवै, हरि निज बिरद सँभारै
सूरदास प्रभु अपने जन कौं, उर तैं नैंकु न टारै ॥२५७॥

द्रौपदी हरि सौं टेरि कही।
तुम जिनि सहौ स्यामसुंदर वर, जैती मैं जु सही।
तुम पति पाँच, पाँच पति हमरैं, तुम सौं कहा रही?
भीषम, करन, द्रोन देखत, दुस्सासन बाहँ गही।
पूरे चीर, अंत नहिँ पायौ, दुरमति हारि लही।
सूरदास प्रभु द्रुपद-सुता कौं, हरि जू लाज ठही ॥२५८॥

राग

जौ मेरे दीनदयाल न होते।
तौ मेरी अपत करत कौरव-सुत, होत पंडवनि ओते।
कहा भीम के गदा धरैं कर, कहा धनुष धरैं पारथ?
काहु न धरहरि करी हमारी, कोउ न आयौ स्वारथ।
समुझि-समुझि गृह-आरति अपनी, धर्मपुत्र मुख जोवै।
सूरदास प्रभु नंद-नंदन-गुन गावत निसि-दिन रोवै ॥२५९॥

---

१ केवल (स, ख) ... आ, नु, का) मे है। ... बिह स्वारथ—२
① जो—२। ② कहा ... आपनी—२, ३, १
१ (आ, म, ल, रा, ... नकुल सहदेव करत हैं और सुभट ... बच सोहै ६ ८

पांडव-राज्याभिषेक राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ।
हरि पांडव[1] कौं ज्यौं दियौ राज। पुनि सो राज, राज ज्यौं त्याज।
बहुरौ भयौ परीच्छित राजा। ताकौं साप बिप्र-सुत साजा।
सुनि हरि-कथा मुक्त सो भयौ। सूत सौनकनि सौं सो कह्यौ।
कह्यौं सु कथा सुनौ चित धारि। सूर कहै भागवत बिचारि ॥२६०॥

भीष्मोपदेश, युधिष्ठिर-प्रति राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
भारत जुद्ध होइ जब बीता। भयौ जुधिष्ठिर अति भयभीता।
गुरुकुल[2]-हत्या मोतैं भई। अब यौं कैसी करिहैं दई।
करौं तपस्या, पाप निवारौं। राज-छत्र नाहीं सिर धारौं।
लोगनि तिहिं बहु बिधि समुझायौ। पै तिहिं मन-संतोष न आयौ।
तब हरि कह्यौ टेक परिहरौ। भीष्म[3] पितामह कहै सो करौ।
हरि-पांडव रन-भूमि सिधाए। भीषम देखि बहुत सुख पाए।
हरि कह्यौ, राज न करत धर्मसुत। कहत हतै मैं भ्रात[4] तात-सुत।
गुरु-हत्या मोतैं है आई। कह्यौ सो छूटै कौन उपाई?
राजधर्म तब भीषम गायौ। दानापद्द पुनि मोच्छ सुनायौ।

* (ना) बिश्राम।
† यह पद (शा, कां, ग) नहीं है।
(1) पंडौ—२। पांडव कौ हौ—८। पंडुनि—१६। (2) अनुसार—२, ३, ६।
* (ना) बिश्राम।
(3) कुरुकुल—५, १६, १६।
(4) भीषमपिता—२, ३, ६, ८।
(5) भ्रात भ्रात सुत—१, ६, १६, १८, १६। भ्रात तात सुत—माता गुरु सुत—२। भ्रात ६ सुत—८।

र कों संदेह न गयौ। तब भीषम नृप सौं यौं क
र नृ देखि बिचार। कारन करनहार करत
: किएँ कछू नहिँ होइ। करता-हरता आपुहिँ सं
सुमिरि राज तुम करौ। अहंकार चित तैं परि
र किएँ लागत पाप। सूर स्याम मेटैं संताप॥२

※ राग

करी गोपाल की सब होइ।

जो अपनौ पुरुषारथ मानत, अति झूठौ है सोइ।
साधन, मंत्र, जंत्र, उद्यम, बल, ये सब डारौ धोइ।
जो कछु लिखि[1] राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिँ कोइ।
दुख सुख, लाभ-अलाभ समुझि[2] तुम, कतहिँ[3] मरत हौ रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, स्याम-चरन मन पोइ॥२६२॥

※ राग

होत[4] सो जो रघुनाथ ठटै।

पचि-पचि रहैँ सिद्ध, साधक, मुनि, तऊ न बढ़ै-घटै।
जोगी जोग[5] धरत मन अपनैँ, सिर[6] पर राखि जटै।
ध्यान धरत महादेव रु ब्रह्मा, तिनहूँ पै न छटै[7]।
जती, सती, तापस आराधैँ, चारौँ बेद रटै।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, करम-फाँस[8] न कटै॥२६३॥

) सोरठ। ※ (ना) सोरठ। —६, ८, १६, १८।
र (कों) मैं ④ होत वही जो राम ठटै— तपि तपसी आराध
२। ⑤ जुगति—२। ध्यान—८। ⑧ रेख—१, १६।
—२। ③ सहज— ⑥ आसिर—१, २, ३। ⑦
काहि—२। पटै—२। घटी—३, १२। घटै

भावी काहू सौं न टरै।
कहँ वह राहु, कहाँ वै रवि-ससि, आनि सँजोग परै।
मुनि वसिष्ठ पंडित अति ज्ञानी, रचि-पचि लगन धरै।
तात-मरन, सिय-हरन, राम बन-बपु धरि बिपति भरै।
रावन जीति कोटि तैंतीसौ, त्रिभुवन राज करै।
मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै, भावी-बस सो मरै।
अरजुन के हरि हुते[1] सारथी, सोऊ[2] बन निकरै।
द्रुपद-सुता कौ राजसभा, दुस्सासन चीर हरै।
हरिचंद सौ को जगदाता, सो घर नीच भरै।
जौ गृह छाँड़ि देस बहु धावै, तउ वह संग फिरै।
भावी कैं बस तीन लोक हैं, सुर नर देह धरै।
सूरदास प्रभु रची[3] सु ह्वैहै, को करि सोच मरै। ॥२६४॥

*१

तातैं[4] सेइयै श्री जदुराइ।
संपति बिपति, बिपति तैं संपति, देह[5] कौ यहै सुभाइ।
तरुवर फूलै, फरै, पतझरै[6], अपने कालहिं पाइ।
सरवर नीर भरै, भरि[7] उमड़ै, सूखै, खेह[8] उड़ाइ।
द्वितिया-चंद बढ़त ही बाढ़ै, घटत-घटत घटि जाइ।
सूरदास संपदा-आपदा, जिनि कोऊ पतिआइ[9] ॥२६५॥

—१। (२) तऊ जु ३, ८, १२। तेऊ १६। (३) रचौ—२।

* (ना) अड़ाना। (४) यातें—२। (५) इन—२। देह धरे कौ भाइ—८। (६)

परिहरै—१, ३।। फिर—२, १६।। (९) पछिताइ—६

*

इहिँ बिधि कहा घटैगौ तेरौ ?
नंदनंदन करि घर कौ ठाकुर, आपुन ह्वै रहु चेरौ।
कहा भयौ जौ संपति बाढ़ी, कियौ बहुत घर घेरौ।
कहुँ हरि-कथा, कहूँ हरि-पूजा, कहुँ संतनि कौ डेरौ।
जो बनिता-सुत-जूथ सकेले, हय-गय-बिभव घनेरौ।
सबै समर्पौ सूर स्याम कौं, यह साँचौ मत मेरौ ॥२६६॥

न में भगवान की भक्तवत्सलता का प्रसंग *

भक्तवछल श्री जादवराइ।
भीषम की परतिज्ञा राखी, अपनौ बचन फिराइ।
भागवत माहिँ कथा यह बिस्तृत, कहत होइ बिस्तार।
सूर भक्त-वत्सलता बरनौं, सर्व कथा कौ सार ॥२६७॥

दुर्योधन का कृष्ण-गृह-गमन ×

भक्तवछलता प्रगट करी।
मन संकल्प बेद की आज्ञा, जन के काज प्रभु दूरि धरी
भारतादि दुरजोधन, अर्जुन, भेंटन गए द्वारिकापुरी
कमलनैन पौढ़े सुख-सेज्या, बैठे पारथ पाइतरै

ना, कां) घनतेरौ। सूर स्याम गुरु—१। सब तजि (३) निर्गुन स
पद (सु) में नहीं है। सुमिरौ सूर स्याम—८, १६। सार—२।
हय गय रथनि घनेरौ— ‡ (ना) जैतश्री × (ना) प
हय रथ कटक घनेरौ— ‡ यह पद (सु, कां) में (४) करी—२,
(२) सब तजि सुमिरहु नहीं है। -८, -६। परी

'अविगत, अविनासी, पुरुषोत्तम, हाँकत[1] रथ कै[2] आन ।
'अचरज कहा पार्थ जौ बेधै, तीनि लोक इक बान !"
"अब तौ हौं तुमकौं तकि आयौ, सोइ रजायसु दीजै ।
'जातैं रहै छत्रपन मेरौ, सोइ मंत्र कछु कीजै ।
'जा महाइ पांडव-दल जीतौं, अर्जुन कौ रथ लीजै ।
'नातरु कुटुँव सकल संहरि कै, कौन काज अब जीजै ?"
"तेरैं काज करौं पुरुषारथ[3], जथा जीव घट माहीँ ।
'यह न कहौं, हौं रन चढ़ि जीतौं, मो मति नहिँ अवगाही ।
'अजहूँ चेति, कह्यौ करि मेरौ, कहत पसारे बाहीँ ।
'सूरदास सरवरि को करिहै, प्रभु पारथ द्वै नाहीँ" ॥२६९॥

भीष्म-प्रतिज्ञा

* राग मलार

आजु जौ हरिहिँ न सस्त्र[4] गहाऊँ ।
तौ लाजौं[5] गंगा जननी कौं, सांतनु-सुत न कहाऊँ ।
॥ स्यंदन[6] खंडि महारथि खंडौं, कपिध्वज सहित गिराऊँ ।
पांडव[7]-दल-सन्मुख ह्वै धाऊँ, सरिता-रुधिर बहाऊँ ।
इती न करौं सपथ तौ[8] हरि की, छत्रिय-गतिहिँ न पाऊँ ।
सूरदास रनभूमि विजय बिनु, जियत न पीठि दिखाऊँ ॥२७०॥

---

(१) बैठ्यौ रथ की कान—२ । (२) किस्यान—६ । जो आन—८ । (३) बल पौरुष—२ ।
* (ना) धुरिया मलार । (कां) मारु ।
(४) अस्त्र—८ । (५) लज्जा—३ ।
॥ ये दो चरण (का) में नहीँ हैँ ।
(६) सब दल खंडि—२ । स्यंदन सहित—१६ । (७) पांडु-सुतन—८ । (८) मोहिँ—१, २, ३, ८ ।
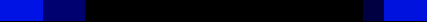
सुदर्सन-सुवन रनभूमि आए।
बान-बरषा लगे करन अति क्रुद्ध ह्वै, पार्थ-अवसान तब सब भुलाए।
कह्यौ करि कोप प्रभु अब प्रतिज्ञा तजौ, नहीं तो युद्ध निजु हम हराए।
सूर-प्रभु, भक्तबत्सल-बिरद आनि उर, नाहिं या बिधि बचन कहि सुनाए ॥२

अर्जुन के प्रति भगवान् के वचन　　　　* राग बिहागरा

हम भक्तनि के, भक्त हमारे।
सुनि अर्जुन परतिज्ञा मेरी, यह ब्रत टरत न टारे।
भक्तनि काज लाज हिय धरि कै, पाइ पियादे धाऊँ।
जहँ-जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहँ-तहँ जाइ छुड़ाऊँ।
जो भक्तनि सौं बैर करत है, सो बैरी निज मेरौ।
देखि बिचारि भक्त-हित-कारन, हाँकत हौं रथ तेरौ।
जीतैं जीति भक्त अपने कैं, हारैं हारि बिचारौं।
सूरदास सुनि भक्त-बिरोधी, चक्र सुदरसन जारौं ॥२७२॥

भगवान का चक्र-धारण　　　　* राग म

गोबिंद कोपि चक्र कर लीन्हौ।
छाँड़ि आपनौ प्रन जादवपति, जन कौ भायौ कीन्हौ।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै, चले चरन अति धाए।
मनु[1] संचित भू-भार उतारन, चपल भए अकुलाए।

---

* (ना) बिहागरा। (का,) मलार।
(ना) धनाश्री। (का, ई, अ) मलार।
(१) मनु संचित भू-भार उतारन चलत भए अकुलाए—१, ११।
अन्य लेकर भू-भार......— मन लेकर भू-भार बहुत है. ६, ८, १८।

कञ्चुक अंग मैं उड़त पीतपट, उन्नत बाहु बिसाल ।
स्रवन[1] स्रोनकन, तन सोभा, छबि-घन बरसत मनु लाल ।
सूर सु भुजा समेत सुदरसन देखि बिरंचि भ्रम्यौ ।
मानौ आन सृष्टि करिबे कौं, अंबुज नाभि जम्यौ ॥

※

अरु[2] मेरी परतिज्ञा जाउ ।
इत पारथ कोप्यौ है हम पर, उत भीषम भट-राउ ।
रथ तैं उतरि चक्र कर लीन्हौ, सुभट सामुहैं आए ।
ज्यौं[3] कंदर तैं निकसि सिंह, झुकि, गज-जूथनि पर धाए ।
आइ निकट श्रीनाथ निहारे, परी तिलक पर दीठि ।
सीतल भई चक्र की ज्वाला, हरि हँसि दीन्ही पीठि ।
जय-जय-जय चिंतामनि स्वामी, सांतनु-सुत यौं भाखै ।
तुम बिनु ऐसौ कौन दूसरौ, जो मेरौ प्रन राखै ।
साधु-साधु सुरसरी-सुवन तुम, नहिं[4] प्रन लागि डराऊँ ।
सूरजदास भक्त दोऊ दिसि, कापर चक्र चलाऊँ ॥

भीष्म का संवाद ※ र

"कहौ पितु, मोसौं सोइ सतिभाव ।
जातैं दुरजोधन-दल जीतौं, किहिं बिधि करौं उपाव" ।

सवत मनु सोभा — ६, ८, १६ ।

) धनार्थी । परतिज्ञा रही कि — ८ ।

[3] ये दो चरण (स. रा) में नहीं हैं ।

[3] ज्यौं सारंग जूथ मैं पैठत केहरि अति बल पाए — २ । [4] बिचारी — १, २, ६, १८, १९ ।

भ्रचाम्यौ — १६ । ६, ८, १६ ।

※ (ना) जैत बिलावल । (रा)

तुम बिनु प्रभु को पूजा करै। जो भक्तनि कैं बस अनुसरै।
नव रत्नन सुर-नर-मुनि दुर्लभ। मोकौं भयौ सो अतिहीं सुलभ।
दूरि नहीं गोबिंद वह काल। सूर कृपा कीजै गोपाल ॥२७७॥

* राग सारंग

गोबिंद, अब न दूरि वह काल।
दीनानाथ, देवकी-नंदन, भक्तवछल गोपाल।
मैं भीषम, तुम कृष्न सारथी, किये पीतपट लाल।
बहुत सनाह समर सर बेधे, ज्यौं[१] कंटक नल-नाल।
तुम्हरैं चरन-कमल मो मस्तक, कत ताकौं सर-जाल?
सूरदास जन जानि आपनौ, देहु अभय की माल ॥२७८॥

* राग मलार

वा पट पीत की फहरानि।
कर धरि चक्र, चरन की धावनि, नहिं बिसरति वह बानि।
रथ तैं उतरि चलनि[२] आतुर ह्वै, कच रज की लपटानि।
मानौ सिंह सैल तैं निकस्यौ[३], महा मत्त गज जानि।
जिन गोपाल मेरौ प्रन राख्यौ, मेटि बेद की कानि।
सोई सूर सहाइ हमारे, निकट भए हैं आनि ॥२७९॥

इन दो चरणों के स्थान पर (का. ३) में ये दो चरण हैं—
अनयज्ञान प्रभु मोकौं दीजै।
सूरदास प्रभु इतनौ कीजै॥

* (ना) देवगंधार।
(१) कनक बेल ज्यौं ताल—१, १६। कंटक तुल्य सुमाल—२, ८।

* (ना) धुरिया मलार।
(२) धवनि—१, २, ३, १६।
(३) रै —२।

※
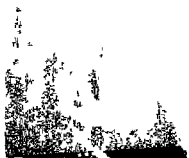
अब[1] वै बिपदा हू न रहीं।
मनसा करि सुमिरत है जब-जब, मिलते तब-तबहीं।
अपने दीन दास कैं हित लगि, फिरते संग-सँगहीं।
लेते राखि पलक गोलक ज्यौं, संतत तिन सबहीं।
रन अरु बन, बिग्रह, डर आगैं, आवत जहाँ-तहीं।
राखि लियौ तुमहीं जग-जीवन, त्रासनि तैं सबहीं।
कृपा-सिंधु की कथा[2] एक रस, क्यौं करि जाति कहीं।
कीजै कहा सूर सुख-संपति, जहँ जदुनाथ नहीं? ॥२

धृतराष्ट्र का वैराग्य तथा वन-गमन ❀ राग

कौरवपति ज्यौं बन कौं गयौ। धर्मपुत्र बिरक्त पुनि भयौ
बरनि सुनाऊँ ता अनुसार। सूत कह्यौ जैसैं परकार
भारतादि कुरुपति की जथा[3]। चली पांडवनि की जब कथा
बिदुर कह्यौ मति करौ अन्याइ। देहु पांडवनि राज बटाइ
कुरुपति कह्यौ, धाम मम त्याइ। पांडु-सुतनि की करत सहाइ
याकौं ह्याँ तैं देहु निकारि। बहुरि न आवै मेरे द्वारि
बिदुर सस्त्र सब तबहिं उतारि। चल्यौ तीरथनि मुंड उघारि
भारत कै बीतैं पुनि आयौ। लोगनि सब वृत्तांत सुनायौ

) कल्यान।
पद (वे, र, रा) में
जिन प्रतियों में यह
में पाठांतर बहुत हैं।

उन्हें मिलाकर ऊपर लिखा पाठ
निर्धारित किया गया है।
(१) अब—२। पर—८।
(२) कृपा (कथा) सुनत हीं

नाहीं परति कही—२
❀ (ना) भैरवी
(३) तथा—२।
२, १६।

तब पूछ्यौ, कुरुपति हैं कहाँ ? कह्यौ, पांडु-सुत-मंदिर जहाँ
राजा सेव भली बिधि करै । दंपति-आयसु सब अनुसरै
विदुर कह्यौ, देखौ हरि-माया । जिन यह सकल लोक भरमाया
इहिँ माया सब लोगनि छल्यौ । जिहिँ हरि कृपा करी सो हल्यौ
इनके पुत्र एक सौ मुए । तिन्हैँ बिसारि सुखी ये हुए
अब मैं उनकौं ज्ञान सुनाऊँ । जिहिँ तिहिँ बिधि बैराग्य उपाऊँ
बहुरौ धर्म-पुत्र पै आयौ । राजा देखि बहुत सुख पायौ
करि सन्मान कह्यौ या भाइ । करी हमारी बहुत सहाइ
लाखा-गृह तैं जरत उबारे । अरु बालापन तैं प्रतिपारे ।
कौन-कौन तीरथ फिरि आए ? विदुर सकल वृत्तांत सुनाए ।
बहुरि कह्यौ, हरि-सुधि कछु पाई ? कह्यौ न कछु, रह्यौ सिर नाई ।
बहुरौ कुरुपति कैं ढिग आए । पूछे समाचार सतिभाए ।
कह्यौ, जुधिष्ठिर सेवा करत । तातैं बहुत अनंदित रहत ।
कह्यौ, सुतनि-सुधि आवति कबहीं? कह्यौ, भाविवै कैं बस सबहीं ।
विदुर कह्यौ, सत पुत्र तुम्हारे । पांडु-सुतनि सो सकल सँहारे ।
तिनकैं गृह तुम भोजन करत । अरु पुनि कहत सुखी हम रहत ।
धिक तुम, धिक या कहिबे ऊपर । जीवित रहिहौ कौ लौं भू पर ।
स्वान-तुल्य है बुद्धि तुम्हारी । जूठनि काज सहत दुख भारी ।
द्रौपदि के तुम बसन छिनाए । इनि तब राज बहुत दुख पाए ।
इनकैं गृह रहि तुम सुख मानत । अति निलज, कछु लाज न आनत ।
जीवनि-आस प्रबल श्रुति लेखी । साच्छात सो तुममैं देखी ।

दिन प्रति—८। (२) पुत्र—१, ६, ८, १६, १८, १९। (३) कस—२। क्यों—

काल-अगिनि सबही जग जारत । तुम कैसे कैँ जिअन विचारत ?
आयु तुम्हारी गई सिराइ । बन चलि भजौ द्वारिकाराइ ।
कुरुपति कह्यौ अंध हम दोइ । बन मैं भजन कौन विधि होइ ?
बिदुर कह्यौ, सेवा मैं करिहौं । सेवा करत नैंकु नहिं टरिहौं ।
अर्ध निसा तिनकौं लै गयौ । प्रात भए नृप बिस्मय भयौ ।
बूड़ि मुए, कै कहुँ उठि गए । तिनकैं सोच नृपनि बहु तए ।
उहाँ जाइ कुरुपति बल-जोग । दियौ छाँड़ि तन कौ संजोग ।
गंधारी सहगामिनि कियौ । बिदुर भक्त तीरथ-मग लियौ ।
तिहिं अंतर नारद तहँ आए । नृप कौं सब बृत्तांत सुनाए ।
नृप कैं मन उपज्यौ बैराग । भजौं सूर-प्रभु अब सब त्याग ॥२८

राग, पांडव-राज्य-त्याग, उत्तर-गमन

* राग स

[1]हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि-बियोग पांडव तजि राज । गए बन, भयौ परीच्छित-राज ।
कहौं सु कथा, सुनौ चित धारि । सूर कह्यौ भागवतऽनुसारि ॥२८

का द्वारिका जाना और शोक-समाचार लाना

* राग बिला

राजा सौं अर्जुन सिर नाइ । कह्यौ, सुनौ बिनती महराइ ।
बहु दिन भए, हरि-सुधि नहिं पाई । आज्ञा होइ तौ देखौं जाई ।
यह कहि पारथ हरि-पुर गए । सुन्यौ, सकल जादव छै भए ।

जीवन न विचारत—१,
अप जियत—६, ८ ।
– १, ३, ६, ८, ११ ।

* (ना) बिभास । (ना) बिलावल ।
[1] यह पद (शा) में नहीं है ।

* (ना) रामकली ।

अर्जुन सुनत नैन जल धार । परयौ धरनि पर ग्वाइ पछार ।
तब दारुक संदेस सुनायौ । कह्यौ, हरि जू जो गीता गायौ ।
सो[1] सुरूप हिरदै महँ आन । रहियौ करत सदा मम[2] ध्यान ।
तब अर्जुन मन धीरज धारि । चले संग लै जे नर[3]-नारि ।
तहँ भिल्लनि[4] सौं भई लराई । लूटे सब, बिन स्याम-सहाई ।
अर्जुन बहुत दुखित तब भए । इहाँ अपसगुन होत नित नए ।
रोवैं वृषभ, तुरग अरु नाग । स्यार बोंम, निसि बोलैं काग ।
कंपै भुव, वर्षा नहिं होइ । भयौ सोच[5] नृप-चित यह जोइ ।
इहिं अंतर अर्जुन फिरि आयौ । राजा कैं चरननि सिर नायौ ।
राजा ताकौं कंठ लगाइ । कह्यौ, कुसल हैं जादवराइ ?
बल, बसुदेव, कुसल सब लोइ ? अर्जुन यह सुनि दीन्हौ रोइ ।
राजा कह्यौ, कहा भयौ तोहिं । तू क्यौं कहि न सुनावै मोहिं ।
काहू असत्कार[6] तोहिं कियौ । कै कहि दान न द्विज कौं दियौ ।
कै सरनागत कौं नहिं राख्यौ । कै तुमसौं काहू कटु भाष्यौ ।
कै हरि जू भए अंतर्धान । मोसौं कहि तू प्रगट बखान ।
तब अर्जुन नैननि जल डारि । राजा सौं कह्यौ बचन उचारि ।
सूरज-प्रभु बैकुंठ सिधारे । जिन[7] हमरे सब काज सँवारे ॥

सो सरूप मम हिरदै— ८, १८, १९ । ② । ③ बर—८ । ④ कावनि—२, ३, ६, ८, १६, १८, १९ । ⑤ सु (स) चेत नृपति —२, ३, ४ । ⑥ तिरस्कार— २, ३, १६, १८ । ⑦ (तिन) जिन को काम —२, ३, १८, १९ ।

✻ राग धनाश्री

हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ ?

मीड़त[1] हाथ, सीस धुनि ढोरत, रुदन करत नृप, पारथ।
थाके हस्त, चरन-गति थाकी, अरु थाक्यौ पुरुषारथ।
पाँच बान मोहिँ संकर दीन्हे, तेऊ गए अकारथ।
जाकैं संग सेत-बँध कीन्हौ, अरु जीत्यौँ महभारथ।
गोपी हरी सूर के प्रभु बिनु, रहत[2] प्रान किहिँ स्वारथ ! ॥२८७॥

❀ राग बिलावल

यह सुनि राजा रोइ पुकारे। भीमादिक रोए पुनि सारे।
रोवन सुनि कुंती तहँ आई। कह्यौ, कुसल जादौ-जदुराई ?
अर्जुन कह्यौ, सबै लरि मुए। हरि-बिनु सब अनाथ हम हुए।
कुंती प्रान तजे धरि ध्यान। जीवन-मरन उनहिँ[3] भल जान।
राज परीच्छित कौं नृप दीन्हौ। बज्रनाभ[4] मथुरापति कीन्हौ।
द्रुपद-सुता समेत सब भाई। उत्तर दिसा गए हरि[5] ध्याई।
जोग पंथ करि उन तनु तजे। सूर सबै तजि[6] हरि-पद भजे ॥२८८॥

परीक्षित की रक्षा तथा उनका जन्म

राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि परीच्छितहिँ गर्भ-मँझार। राखि लियौ निज कृपा-अधार।

ना) धुरिया मलार।
) मलार।
① उहिँ धुनत सीस कर
, २। मूड़ धुनत सिर
रत—६, ८। ② घटत न ③ प्रान पदारथ—१, ६, ८, १६। रहत न प्रान पदारथ—२। छुटत न प्रान पदारथ—१६।

❀ (ना) भैरव।

③ उन्हैं फल—२। ④ बिन्चरि नाथ—२। बृजनायक—८। ⑤ हर्षाई—१। ⑥ ते—१, ३, १२।

कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। जो हरि भजै, सो सुख पाइ॥
भारत जुद्ध बितत जब भयौ। दुरजोधन अकेल[1] रहि गयौ॥
अस्वत्थामा तापैं जाइ। ऐसी भाँति कह्यौ समुझाइ॥
हमसौं तुमसौं बाल-मिताई। हमसौं कछु न भई[2] मित्राई॥
अब जो आज्ञा मोकौं होइ। छाँड़ि बिलंब करौं मैं[3] सोइ॥
||राज गए का दुख नहिं कोइ। पांडव राज नहीं जो होइ॥
उनके मुएँ हियैं सुख होइ। जौ करि सकौ, करौ अब सोइ॥
हरि सर्बज्ञ बात यह जानि। पांडु-सुतनि सौं कही बखानि॥
आज सरस्वति[4]-तट रहौ सोइ। पै यह बात न जानै कोइ॥
पांडव हरि की आज्ञा पाइ। तजि ग्रह, रहे सरस्वति जाइ॥
काहू सौं यह कहि न सुनाई। उहाँ जाइ सब रैनि बिताई॥
अस्वत्थामा निसि तहँ आए। द्रौपदि-सुत तहँ सोवत पाए॥
उनके सिर लै गयौ उतारि। कह्यौ, पांडवनि[5] आयौ मारि॥
बिन देखैं ताकौं सुख भयौ। देखे तैं दूनौ दुख ठयौ॥
ये बालक तैं वृथा सँहारे[6]। कहि[7], कुरुपति तजि प्रान सिधारे॥
अस्वत्थामा भय करि भग्यौ। इहाँ लोग सब सोवत जग्यौ॥
द्रौपदि देखि सुतनि दुख पायौ। अर्जुन सौं यह बचन सुनायौ॥
अस्वत्थाम[8] न जब लगि मारौ। तब लगि अन्न न मुख मैं डारौ॥
हरि-अर्जुन रथ पर चढ़ि धाए। अस्वत्थामा पै चलि आए॥

अकेल तहँ रह्यौ—१, गायल तहँ रह्यौ—३, घायल तहँ भयौ—१८। ② सिवकाई—२। ③ अब—१, २, ३, ८, १६। || ये दो चरण (१६) में नहीं हैं। ④ सुरसरी—८। ⑤ दुरजोधन—१, ३, १६ ⑥ मारे—१, ११। ⑦ २, ३, १६। ⑧ अब लगि मारौ—१।

अस्वत्थामा अस्त्र चलायौ। अर्जुन हूँ ब्रह्मास्त्र पठायौ।
उन दोउनि सौं भई लराई। अर्जुन तब दोउ लिए बुलाई।
अस्वत्थामा कौं गहि ल्याए। द्रौपदि सीस मूँड़ि मुकराए।
याकैं मारैं हत्या होइ। मनि लै छाँड़ौ सोभा खोइ।
अस्वत्थामा बहुरि रिस्याइ। ब्रह्म-अस्त्र कौं दियौ चलाइ।
गर्भ परीच्छित जारन गयौ। तब हरि ताहि जरन नहिं दयौ।
रूप चतुर्भुज गर्भ-मँझारि। ताकौं तासौं लियौ उबारि।
जन्म परीच्छित कौ जब भयौ। कह्यौ, चतुर्भुज कहँ अब गयौ?
पुनि जब हरि कौं देख्यौ जोइ। पाइ सँतोष सुखी भयौ सोइ।
राजा जन्म-समय कौं देखि। मन मैं पायौ हर्ष विसेषि।
गर्भ-परीच्छित रच्छा करी। सोई कथा सकल विस्तरी।
श्रीभगवान कृपा जिहिं करै। सूर सो मारैं काके मरै? ॥२८

[...]-कथा * राग

हरि, हरि-भक्तनि कौं सिर नाऊँ। हरि, हरि-भक्तनि के गुन गाऊँ।
हरि, हरि-भक्त एक, नहिं दोइ। पै यह जानत बिरला कोइ।
भक्त परीच्छित हरि कौ प्यारौ। गर्भ-मँझार हुतौ जब बारौ।
ब्रह्म-अस्त्र तैं ताहि बचायौ। जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ।
बहुरि राज ताकौ जब भयौ। मिस दिगविजय चहूँ दिसि गयौ।
परजा सकल धर्म-रत देखी। ताकैं मन भयौ हर्ष बिसेखी।
कुरुच्छेत्र मैं पुनि जब आयौ। गाइ, वृषभ तहँ दुःखित पायौ।

मुयौ जियत न देख्यौ
[...] १ ।

* (ना) विभास। (का, ड़ाँ, कौ, रा) बिलावल।

तासु वृषभ कैं पग त्रय नाहिँ । रोवति गाइ देखि करि ताहिँ
वृषभ धर्म, पृथ्वी सो गाइ । वृषभ कह्यौ तासौं या भाइ
मेरैं हेत दुखी तू होत । कै अधर्म तो ऊपर[1] होत
गो कह्यौ, हरि बैकुंठ सिधारे । सत-व्रत उनहीं संग पधारे
दया, धर्म, संतोषहु गयौ । ज्ञान, छमादिक सब लय भयौ
जज्ञ, सराध न कोऊ करै । कोऊ धर्म न मन मैं धरै
अरु तुमकौं बिनु पाइनि देखि । मोहिँ होत है दुःख बिसेखि
सूद्रराज[2] इहिँ अंतर आयौ । वृषभ-गाइ कौं पाइ चलायौ
ताहि परीच्छित खड्ग उठाइ । बहुरौ बचन कह्यौ या भाइ
तू को, कौन देस है तेरौ ? कै छल गह्यौ राज सब मेरौ
या विधि नृपति परीच्छित कह्यौ । पै वासौं उत्तर नहिँ लह्यौ
कह्यौ वृषभ सौं, को दुखदाइ ? तासु नाम मोहिँ देहु बताइ
इंद्र होइ ताहू कौं मारौं । तुम्हरौ यह संताप निवारौं
वृषभ कह्यौ तुम ऐसेहि राउ । पै मैं लेउँ कौन कौ नाउँ
कोउ कहै हरि-इच्छा दुख होइ । द्वितिया दुखदायक नहिँ कोइ
कोउ कहै करम होइ दुख-दाता । काहूँ दुख नहिँ देत विधाता
कोउ कहै सत्रु होइ दुखदाई । सो तौ मैं न कीन्हि सत्राई
काकौं नाम बताऊँ तोकौं । दुखदायक अदृष्ट[3] मम मोकौं
कहियत[4] इतने दुख-दातार । तुमहीं देखौ करौ विचार
तब विचार करि राजा-देख्यौ । सूद्र नृपति कलिजुग करि लेख्यौ

ुम पर अच्छोत—१ । १, १६ । (३) अरिष्ट सम मोकौं—
अंतर राजा सूद्र आयो— १ । (४) कहत आपने—१, १६ ।

१

वृषरु धर्म अरु पृथ्वी गाइ। इनकौं यहै भयौ दुखदाइ
ताहि कह्या तू बड़ौ अधर्मी। तो समान नहिँ और कुकर्मी
छमा, दया, तप पग तैँ काट्यो। छाँड़ि देस मम, यह कहि डाँट्यौ
तिन कह्यौ, मो मैं एक भलाई। तुमसौं कहौं, सुनौ चित लाई
धर्म विचारत मन मैं होइ। मनसा पाप लगै नहिँ कोइ
राज तुम्हारौ है सब ठौर। तुम बिनु नृपति न द्वितिया और
जौन ठौर माहिँ आज्ञा होइ। ताही ठौर रहौं मैं जोइ
कह्यौ, हरि-विमुखऽरु वेस्या जहाँ। सुरापान, वधिकनि गृह तहाँ
जूआ खेलत जहाँ जुआरी। ये पाँचौ हैँ ठौर तुम्हारी
पाँचौ होहिँ नृपति ये जहाँ। मोकौं ठौर बतावहु तहाँ
तब नृप ताकौं कनक बतायौ। कनक-मुकुट लखि सो लपटायौ
इक दिन राइ अखेटहिँ गयौ। ता वन माहिँ पियासौ भयौ
रिषि समीक कैँ आस्रम आयौ। रिषि हरि-पद सौं ध्यान लगायौ
राजा जल ता रिषि सौं माँग्यौ। ताकौ मन हरि-पद सौं लाग्यौ
राजा कौं उत्तर नहिँ दियौ। तब मन माहिँ क्रोध तिन कियौ
यह सब कलिजुग कौ परभाउ। जो नृप कैँ मन भयउ कुभाउ
रिषि की कपट-समाधि बिचारि। दियौ भुजंग मृतक गर डारि
रिषि समाधि महँ त्यौंही रह्यौ। स्रृंगी रिषि सौं लरिकनि कह्यौ
स्रृंगी रिषि तब कियौ विचार। प्रजा-दोष करै नृपति गुहार
नृपति-दोष कहियै किहिँ जाइ। दियौ साप तिहिँ तच्छक खाइ
दै करि साप पिता पहँ आयौ। देख्यौ सर्प पिता-गर नायौ।
रोवन लग्यौ मृतक सो जान। रुदन सुनत छूट्यौ रिषि-ध्यान

सुत सौं कह्यौ कहा भयौ तोहिं । क्यौं न सुनावत निज दुख मोहिं ?
स्रृंगी रिषि तब कहि समुझायौ । नृप भुजंग तव ग्रीवा नायौ ।
यह अपराध बड़ौ उन कीन्हौ । तच्छक डसन साप मैं दीन्हौ ।
रिषि कह्यौ बहुत बुरौ तैं कीन्हौ । जो यह साप नृपति कौं दीन्हौ ।
तुव सराप तैं मरिहै सोइ । यह अपराध मोहिं सब होइ ।
सुख सौं बसत राज उनकैं सब । दुख पैहैं सो सकल प्रजा अब ।
ताकी रच्छा हरि जू करी । हरी-अवज्ञा तुम अनुसरी ।
इत राजा मन मैं पछिताइ । मैं यह कियौ बड़ौ अन्याइ ।
जाकैं हृदय बुद्धि यह आवै । ताकौ फल सो भलौ न पावै ।
रिषि सिष्यहिं भेज्यौ समुझाइ । नृप सौं कहि तू ऐसी जाइ ।
मम सुत साप दियौ या भाइ । सप्तम दिन तोहिं तच्छक खाइ ।
स्रृंगी यह कीन्हौ बिनु जानैं । होत कहा अब के पछितानैं ।
तातैं तुम उपाइ सो करौ । जातैं भव-सागर कौं तरौ ।
नृप सुनि, लाग्यौ करन बिचार । सप्तम दिन मरिबौ निरधार ।
जज्ञ-दान करि सुरपुर जैयै । तहाँ जाइ कै सुख बहु पैयै ।
बहुरि कह्यौ सुरपुर कछु नाहिं । पुन्य-छीन तिहिं[1] ठौर गिराहिं ।
तातैं सुत, कलत्र, सब त्यागं । गहौं एक हरि-पद अनुराग ।
बहुरि कह्यौ, अबकौ कहा त्याग । खोयौ जन्म बिषय-सुख-लाग ।
सूर न हरि-पद सौं चित लायौ । इत-उत देखत जनम गँवायौ ॥

---

[1] बहुरि—२, ३ ।

* राग

इत-उत देखत जनम गयौ ।

या झूठी माया कैं कारन[1], दुहुँ दृग अंध भयौ ।
जनम-कष्ट तैं[2] मातु दुखित भई, अति दुख प्रान सह्यौ ।
वै त्रिभुवनपति विसरि गए तोहिं, सुमिरत क्यौं न रह्यौ ?
श्रीभागवत सुन्यौ नहिं कबहूँ, बीचहिं भटकि मर्‌यौ[3] ।
सूरदास कहै, सब जग बूड़्यौ, जुग-जुग भक्त तर्‌यौ[4] ॥२६१॥

※ राग

† जनम सिरानौ अटकैं-अटकैं ।

राज-काज, सुत-वित की डोरी, बिनु विवेक फिर्‌यौ भटकैं ।
कठिन जो[5] गाँठि परी माया की, तोरी जाति न झटकैं ।
ना हरि-भक्ति[6], न साधु-समागम, रह्यौ बीचहीं लटकैं ।
ज्यौं बहु कला काछि दिखरावै, लोभ न छूटत नट कैं ।
सूरदास सोभा क्यौं पावै, पिय-बिहीन धनि मटकैं ॥२६२॥

× राग

जनम सिरानौ ऐसैं-ऐसैं ।

कै घर-घर भरमत जदुपति बिनु, कै सोवत, कै बैसैं ।

(ना) नट। (कां)
।
लालच—१, ३, १९।
य (पाप) दुखित भये
। (३) मुयौ—१, २,
३, १८, १९। (४) जियौ—१, २,
३, १८, १९।
※ (ना, का, ना, कां) नट।
† यह पद (२) में नहीं है।
(५) फँदा जु रच्यौ माया को
तोरयौ—६। कुफंद रच्यौ
(६) भजन—१, १६, १९
× (ना) बिलाव

कै कहुँ खान-पान-रमनादिक, कै कहुँ बाद अनैमैं।
कै कहुँ रंक, कहूँ[1] ईस्वरता, नट-बाजीगर जैमैं।
चेत्यौ नाहिँ, गयौ टरि औसर, मीन बिना जल जैमैं।
यह गति भई सूर की ऐसी, स्याम मिलैं धौं कैमैं ॥२६३॥

✻ राग

बिरथा जन्म लियौ संसार।
करी[१] कबहुँ न भक्ति हरि की, मारी जननी भार।
जज्ञ, जप, तप नाहिँ कीन्ह्यौ, अल्प मति बिस्तार।
प्रगट[२] प्रभु नहिँ दूरि हैँ, तू, देखि नैन पसार।
प्रबल माया[३] ठग्यौ सब जग, जनम जूआ हार।
सूर हरि कौ सुजस गावौ, जाहि[५] मिटि भव-भार ॥२६४॥

✻ राग

काया हरि कैँ काम न आई।
भाव-भक्ति जहँ हरि-जस सुनियत, तहाँ जात अलसाई।
लोभातुर ह्वै काम मनोरथ, तहाँ सुनत उठि धाई।
चरन-कमल सुंदर[६] जहँ हरि के, क्यौंहुँ न जाति[७] नवाई।
जब लगि स्याम-अंग नहिँ परसत, अंधे ज्यौं भरमाई।
सूरदास भगवंत-भजन तजि, विषय परम विष खाई ॥२६५॥

कै ईस्वर पदवी—२, ३, ।
का, ना, की, रा)
री न कबहूँ—१, २।

③ प्रगट ब्रह्म दुरयौ (दूरि) नहीँ—१, २, ३, ७४। ④ अविद्या—१, २, ३, ६, १६, १८। तृष्ना—१४। ⑤ जिहिँ मिटै—३।

✻ (ना) कान्हर
⑥ मंदिर जहँ ह
२, ३। ⑦ जाति लि
सीस—८।

रा

† सबै दिन गए विषय के हेत ।
तीनौं पन ऐसैं हीं खोए[1], केस भए सिर सेत
आँखिनि अंध, स्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत
गंगा-जल तजि पियत कूप-जल, हरि तजि पूजत प्रेत
मन-बच-क्रम जौ भजै स्याम कौं, चारि पदारथ देत
ऐसौ प्रभु छाँड़ि क्यौं भटकै, अजहूँ चेति अचेत
राम नाम बिनु क्यौं छूटौगे, चंद गहैं ज्यौं केत
सूरदास कछु खरच न लागत, राम नाम मुख लेत ॥२६६

* रा

जौ तू राम-नाम-धन[2] धरतौ ।
अबकौ जन्म, आगिलौ तेरौ, दोऊ जन्म सुधरतौ ।
¶जम कौ त्रास सबै मिटि जातौ, भक्त नाम तेरौ परतौ ।
¶तंदुल-घिरत समर्पि स्याम कौं, संत-परोसौ करतौ ।
होतौ नफा साधु की संगति, मूल गाँठि नहिं[3] टरतौ ।
सूरदास बैकुंठ-पैंठ मैं, कोउ न फैंट पकरतौ ॥२६७॥

ह पद (शा) में
खेतए—६, ८। बीते

|| ये दो चरण (बे, ना, स, कां, रा, स्या) में नहीं हैं ।
* (ना) बिलावल ।
② चित—६, ११ ।

¶ ये दोनों चरण रा) में नहीं है ।
③ तें न—११ ।

* राग

† सबनि सनेहौ छाँड़ि दयौ ।

हा जदुनाथ ! जरा तन ग्रास्यौ, प्रतिभौ[1] उतरि गयौ ।
सोइ तिथि-वार-नछत्र-लगन-ग्रह, सोइ जिहिँ ठाट ठयौ ।
तिन अंकनि कोउ फिरि नहिँ बाँचत, गत[2] स्वारथ समयौ ।
सोइ धन-धाम, नाम सोई, कुल सोई जिहिँ बिढ़यौ ।
अब सबही कौ बदन स्वान लौं, चितवत दूरि भयौ ।
बरष दिवस[3] करि होत पुरातन, फिरि-फिरि लिखत नयौ ।
निज कृति-दोष बिचारि सूर प्रभु, तुम्हरी सरन गयौ ॥

* रा

‡ है मैं एकौ तौ न भई ।

ना हरि भज्यौ, न गृह सुख पायौ, वृथा[4] बिहाइ गई ।
ठानी हुती और कछु मन मैं, औरै आनि ठई ।
अबिगंत-गति कछु समुझि परत नहिँ, जो कछु करत दई ।
|| सुत-सनेहि-तिय सकल कुटुँब मिलि, निसि-दिन होत खई ।
|| पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई ।
|| विषय-बिकार-दवानल उपजी, मोह-बयारि लई[5] ।
|| भ्रमत-भ्रमत बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टेँव गई ।

क) कल्यान । (कां)

पद (ना, शा, क, कां,
। इसका पाठ पाँचों
में बड़ा अस्तव्यस्त है ।
ताकर शुद्ध पाठ रखने की
चेष्टा की गई है ।

(१) प्रति ज्यौं—२ । प्रत
जो—१ । प्रतिमा—१४ । पति
ज्यौं—१६ । (२) जगत स्वार्थ—
१७ । (३) बरष प्रति—२ । बरष
तन—१७ ।

(ना) देवगि
‡ यह पद (शा)
(४) बाच—२, ३,
|| ये चारों चरण
ा) में नहीं हैं ।
(५) बई—१६ ।

हान कहा अबकै पछिताएँ, बहुत[1] बेर बितई।
सूरदास सेये न कृपानिधि, जो सुख सकल मई ॥२९९॥

* राग

यह सब मेरीयै[2] आइ कुमति।
अपनैं हीं अभिमान-दोष दुख पावत हौं मैं अति।
जैसैं केहरि उझकि कूप-जल, देखत अपनी प्रति।
कूदि पर्यौ, कछु मरम न जान्यौ, भई आइ सोइ गति।
ज्यौं गज फटिक सिला मैं देखत, दसननि डारत हति।
जौ तू सूर सुखहिँ चाहत है, तौ करि[3] विषय-विरति ॥३००॥

* राग

झूठेहीं[4] लगि जनम गँवायौ।
भूल्यौ[5] कहा स्वप्न के सुख मैं[6], हरि सौं चित न लगायौ।
कबहुँक बैठ्यौ रहसि-रहसि कै, ढोटा गोद खिलायौ।
कबहुँक फूलि सभा मैं बैठ्यौ, मूँछनि ताव दिवायौ।
टेढ़ी चाल, पाग सिर टेढ़ी, टेढ़ैं-टेढ़ैं धायौ।
सूरदास प्रभु क्यौं नहिँ चेतत[7], जब लगि काल न आयौ ॥२

हानी सिर बितई—१। ...जु बई—१६। ...ना) यमन। (क) ...मेरे सिर आई—२। मेरे

अइ कुमति ३। मेरी आइ—८। ③ क्यौं विषय परत—१,८,१६। * (ना) बिहागरा। (रा) धनाश्री। ④ झूठहि—१, ३। ⑤

भयौ कहा सपने—२, ६ ...को—१, ३, ६, ८, १ ...सेवत—८।

* रा

जग मैं जीवन ही कौ नानौ।

मन विछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात[1] पुछानौ

मैं-मेरी कबहूँ नहिं कीजै, कीजै पंच-सुहानौ

विषयासक्त रहत निसि-बासर, सुख सियरौ, दुख तानौ

साँच-झूठ करि माया जोरी, आपुन रूखौ खानौ

सूरदास कछु[2] थिर न[3] रहैगौ, जो आयौ सो जानौ ॥३०२

* रा

कहा लाइ तैं[4] हरि सौं तोरी?

हरि सौं तोरि कौन सौं जोरी?

सिर पर धरि न चलैगौ कोऊ, जो[5] जतननि करि माया जोरी

राज-पाट सिंहासन बैठौ, नील पदुम हूँ सौं कहै थोरी

मैं-मेरी करि जनम गँवावत, जब लगि नाहिं परति जम-डोरी

|| धन-जोवन-अभिमान अल्प जल, काहे कूर[6] आपनी बोरी

हस्ती देखि बहुत मन-गर्वित[7], ता मूरख की मति है थोरी

सूरदास भगवंत-भजन बिनु, चले खेलि फागुन की होरी ॥३

× रा

विचारत ही लागे दिन जान।

सजल देह, कागद तैं कोमल, किहिं विधि राखै प्रान

(ना) भैरव। (का, ३)) कान्हरा। देखि बुझातो—२। बात —३। ② कोऊ थिर १६। ③ नहिं रहई—

१। न रहाई—३। * (ना) विभास। ④ मैं—२, १६, १८। ⑤ अनेक जतन—१, २, ११। || यह पंक्ति (ना, स, रा)

में नहीं है। ⑥ बूड़—६। —२, १६। ⑦ ज्यौं—६, ८। × (ना, का)

जोग न जज्ञ, ध्यान नहिँ सेवा, संत-संग नहिँ ज्ञान।
जिह्वा-स्वाद, इंद्रियनि-कारन, आयु घटति दिन मान।
और उपाइ नहीँ रे बौरे, सुनि तू यह दै कान।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपान ॥२०४॥

※ राग धना

† अब मैँ जानी, देह बुढ़ानी।
सीस, पाउँ, कर[1] कह्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी।
आन कहत, आनै कहि आवत, नैन-नाक बहै पानी।
मिटि गइ चमक-दमक अँग-अँग की, मति[2] अरु दृष्टि हिरानी।
नाहिँ रही कछु सुधि तन-मन की, भई जु बात बिरानी[3]।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपानी ॥२०५॥

५ ※ राग देवगंध

‡ रे मन, सुमिरि हरि हरि हरि !
सत जज्ञ नाहिँ न नाम सम, परतीति करि करि करि।
हरि-नाम हरिनाकुस बिसार्‌यौ, उठ्यौ बरि बरि बरि।
प्रह्लाद-हित जिहिँ असुर मार्‌यौ, ताहि डरि डरि डरि।

ना) बिलावल। (का, जैतश्री। (का) सारंग। ह पद (शा) मेँ

बर—१, २, ६, ८, १८, (२) दृष्टि = मति जु—१, २, ६, ८, १६।

|| इस चरण के पहले (वे, का, ना, श्या) मेँ ये दो चरण अधिक हैँ—
नारी गारी बिनु नहिँ बोलै पूत करै कलकानी।
घर मैँ आदर कादर कैसौ खीझत रैनि बिहानी।

(३) पुरानी—१, ६, १६

※ (ना) सोरठ। (का, रा) केदारा।

‡ यह पद (शा) नहीँ है।

गज-गीध-गनिका-व्याध के अघ गए गरि गरि गरि
रस-चरन-अंबुज बुद्धि-भाजन, लेहि भरि भरि भरि
द्रौपदी के लाज[1] कारन, दौरि परि परि परि
पांडु-सुत के विघन जेते, गए टरि टरि टरि
करन, दुरजोधन, दुसासन, सकुनि, अरि अरि अरि
अजामिल[2] सुत-नाम लीन्हें, गए तरि तरि तरि
चारि फल के दानि हैं प्रभु, रहे फरि फरि फरि
सूर श्री गोपाल हिरदैं[3] राखि धरि धरि धरि ॥३०६

※ र

करि मन, नंद-नंदन-ध्यान ।
सेव चरन-सरोज सीतल, तजि विषय-रस-पान ।
जानु-जंघ त्रिभंग सुंदर, कलित कंचन-दंड ।
काछनी कटि पीतपट-दुति, कमल-केसर-खंड ।
मनौ[4] मधुर मराल-छौना, किंकिनी-कल-राव ।
नाभि-ह्रद, रोमावली-अलि, चले सहज सुभाव ।
कंठ मुक्तामाल, मलयज, उर बनी बनमाल ।
सुरसरी कैं तीर मानौ लता स्याम तमाल ।
बाहु-पानि सरोज-पल्लव, धरे मृदु मुख बेनु ।
अति बिराजत बदन-विधु पर सुरभि-रंजित[5]-रेनु ।

स चरण के पश्चात् शेष
दो मात्राएँ कम हैं ।
काज आछे दाउ—२ ।
हेत अजामिल—१, २,
३, ६, ८, १५, १९ । ③ के गुन
हृदय—१, ८, १५, १६ ।
※ (ना) सोरठ ।
④ जनु (मनु) मराल
प्रवाल—१, २, ६,
मंडित—१, २, ३,
१६ ।

अधर, दसन, कपोल, नासा, परम सुंदर नैन।
चलित कुंडल गंड-मंडल, मनहुँ निर्तत मैन।
कुटिल भ्रू[1] पर तिलक रेखा, सीस सिखिनि[2]-सिखंड।
मनु मदन धनु-सर सँधानें, देखि घन-कोदंड।
सूर श्रीगोपाल की छबि, दृष्टि भरि-भरि लेहु।
प्रानपति की निरखि सोभा, पलक परन न देहु ॥२०७॥

*

† भजि मन, नंद[3]-नंदन-चरन।
परम पंकज अति मनोहर, सकल सुख के करन।
सनक-संकर ध्यान[4] धारत, निगम-आगम[5] बरन।
सेस, सारद, रिषय नारद, संत चिंतत सरन।
पद-पराग-प्रताप-दुर्लभ, रमा कौ[6] हित-करन।
परसि गंगा भई पावन, तिहूँ पुर धर[7]-धरन।
चित्त चिंतन करत जग[8]-अघ हरत, तारन-तरन।
गए तरि लै नाम केते, पतित हरि-पुर-धरन।
जासु पद-रज-परस गौतम-नारि-गति[9]-उद्धरन
जासु महिमा प्रगटि केवट, धोइ पग सिर धरन।
‡ कृष्न-पद-मकरंद पावन, और नहिँ सरवरन।
सूर भजि चरनारविंदनि, मिटै जीवन-मरन ॥२०८॥

भ्रू—३, ६। ②
, ३, ६, १६।
) सोरठ। (क)
(श)में नहीं है।

③ चरन संकट हरन—१४, १६। ④ ध्यान ध्यावत—१, २, ३, १४, १८, १६। योगि ध्यावत—८। ⑤ असरन सरन—६, १४। अवरन चरन—१, २, ३, १६। ⑥ लोहित—१, २, १६।

मोहित—२, ११, ८। मोहित—हरन—६। दुरि कृत—२, १८।
|| यह च[...] नहीं है।

† रे मन, समुझि सोचि-विचारि ।
भक्ति बिनु भगवंत दुर्लभ, कहत निगम पुकारि ।
धारि पासा साधु-संगति, फेरि रसना-सारि ।
दाउँ अबकैं पर्‌यौ पूरौ, कुमति[1] पिछली हारि ।
राखि सतरह, सुनि अठारह, चोर पाँचौ मारि ।
डारि दै तू तीनि काने, चतुर चौक निहारि ।
काम क्रोधऽरु[2] लोभ मोह्यौ, ठग्यौ[3] नागरि नारि ।
सूर श्रीगोविंद-भजन बिनु, चले दोउ कर झारि ॥२०९

‡ होउ मन, राम-नाम कौ गाहक ।
चौरासी लख जीव[4]-जोनि मैं भटकत फिरत अनाहक ।
भक्तनि-हाट बैठि अस्थिर ह्वै, हरि नग[5] निर्मल लेहि ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तू, सकल दलाली[6] देहि ।
करि हियाव, यह सौंज लादि कै, हरि कैं पुर लै जाहि ।
घाट-बाट कहुँ अटक होइ नहिं, सब कोउ देहि निबाहि ।
और बनिज मैं नाहीं[7] लाहा, होति मूल मैं हानि ।
सूर स्याम कौ सौदा साँचौ, कह्यौ हमारौ मानि ॥२१०॥

...द (शा) में ... बिरखि—२ । ...

* (ना) कल्यान । (शा) केदारा ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

...—२ । (२) मद—...ो—६, ८ । (३) ... ६, ८, १९ ।

(४) जिया—... १९ । (५) गुन—... लन—६, ८ । ... है—८ ।

* राग

† रे मन, राम सौं करि हेत ।
हरि-भजन की बारि करि लै, उबरै तेरौ खेत ।
मन सुवा, तन पींजरा, तिहिँ[1] माँझ राखै चेत ।
काल फिरत बिलार-तनु धरि, अब धरी तिहिँ लेत ।
सकल विषय-विकार तजि, तू[2] उतरि सायर-सेत ।
सूर भजि गोबिंद के[3] गुन, गुर बताए देत ॥ २११ ॥

* राग

‡ मन-बच-क्रम मन, गोबिँद सुधि करि ।
सुचि-रुचि सहज समाधि साधि सठ, दीनबंधु करुनामय उर धरि
मिथ्या बाद-बिवाद छाँड़ि दै, काम-क्रोध-मद-लोभहिँ परिहरि
चरन-प्रताप आनि उर अंतर, और सकल सुख या सुख तरहरि
बेदनि कह्यौ, सुमृतिहूँ भाष्यौ, पावन-पतित नाम निज नरहरि
जाकौ सुजस सुनत अरु गावत, जैहै पाप-बृंद भजि भरहरि
परम उदार, स्याम-घन-सुंदर, सुखदायक, संतत हितकर हरि
दीनदयाल, गोपाल, गोपपति, गावत गुन आवत ढिग ढरहरि
अति भयभीत निरखि भवसागर, घन ज्यौं घेरि रह्यौ घट घरहरि
जब जम-जाल-पसार परैगौ[3], हरि बिनु कौन करैगौ धरहरि
अजहूँ चेति मूढ़, चहुँ दिसि तैं उपजी[4] काल-अगिनि झर[5] झरहरि
सूर काल-बल-ब्याल ग्रसत है, श्रीपति-सरन परत किन फरहरि ?॥ २१

* (ना) सोरठ। (का) ...ली।
† यह पद (शा) में ... है।
(1) रे बंध्यौ रहत निकेत— २, ३। (2) तौ तरै सायर— ६, ८। (3) कौ यौं— २, ३।
* (क) नट।
‡ यह पद (शा) में नहीं है और (क) में दो स्थानों पर है।
(4) करैगौ— २। (5) ... —६, ८। काल अगि[नि] ... परिहैं झरहरि— १६। (6) ... २, ३।

*

तिहारौ कृष्न कहत कह जात ?
बिछुरैं मिलन बहुरि कब ह्वैहै, ज्यौं तरुवर के पात ।
सीत-बात[1]-कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात ।
प्रान लए जम जात, मूढ़-मति देखत जननी-तात ।
छन इक माहिँ कोटि जुग बीतत, नर की केतिक बात ?
यह जग-प्रीति सुआ-सेमर ज्यौं, चाखत ही उड़ि जात ।
‖ जम कैँ फंद परयौ नहिँ जब लगि, चरननि किन लपटात ?
कहत सूर बिरथा यह देही, एतौ[2] कत इतरात ॥३१३॥

† हरि की सरन महँ तू आउ ।
काम-क्रोध-बिषाद-तृष्ना, सकल जारि बहाउ ।
काम कैँ बस जो परै जमपुरी ताकौं बास ।
ताहि निसि-दिन जपत रहि जो सकल-जीव-निवास ।
कहत यह बिधि भली तासौं, जो तू छाँड़ै देहि ।
सूर स्याम सहाइ हैँ तौ आठहूँ सिधि लेहि ॥३१४॥

*

‡ दिन दस लेहि गोबिँद गाइ ।
छिन न चितत चरन-अंबुज, बादि जीवन जाइ ।

धनाश्री । (का.
) केदारा ।
-१, १६ ।
गाँ) में इस चरण
—
१ फिरत सीस पर
मृग ज्यौं नाद सुजात ।
(२) इतौ कहा—१, १६ ।
अंतरगति—२, १८ । अंतर कत—
३ ।
† यह पद केवल (शा)
में है
* (ना. क
रा) केदारा ।
‡ यह पद
नहीं है

दूरि जब लौं जरा रोगऽरु चलति इंद्री भाइ
आपुनौ कल्यान करि लै, मानुषी तन पाइ।
रूप जोबन सकल मिथ्या, देखि जनि गरबाइ।
ऐसेंहीं अभिमान-आलस, काल ग्रसिहै आइ।
कूप खनि कत जाइ रे नर, जरत भवन बुझाइ।
सूर हरि कौ भजन करि लै, जनम-मरन नसाइ ॥२१५॥

† दिन द्वै लेहु गोबिंद गाइ।
मोह-माया-लोभ लागे[1], काल घेरै[2] आइ
बारि[3] मैं ज्यौं उठत बुदबुद, लागि बाइ बिलाइ।
यहै तन-गति जनम-झूठौ, स्वान-काग न खाइ।
कर्म-कागद बाँचि देखौ, जौ[4] न मन पतियाइ
अखिल लोकनि भटकि आयौ, लिख्यौ मेटि न जाइ।
सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा घेर्‌यौ आइ
सूर हरि की[5] भक्ति कीन्हैं, जन्म-पातक जाइ ॥२१६॥

*

† मन, तोसौं किती कही समुझाइ।
नंद-नंदन के चरन-कमल भजि, तजि पाखँड-चतुराइ

केवल (शा, क,　　१४। (४) जौ न तन बनि आइ—　　† यह प

२। (५) कौ भजन कीजै (कीन्हें)　　नहीं है।

।—२। (२) घेरथौ　　—१४, १६।

पानि—१। नीर—　　* (ना) नट नारायणी।

सुख-संपति, दारा-सुत, हय-गय, छूट सबै[1] समुदाइ ।
छनभंगुर[2] यह सबै स्याम बिनु, अंत नाहिं सँग जाइ ।
जनमत-मरत बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जैहै जनम गँवाइ ॥३१७॥

† अब मन, मानि[3] धौं राम दुहाई ।
मन-बच-क्रम हरि-नाम हृदय धरि, ज्यौं गुरु बेद बताई ।
महा कष्ट दस मास गर्भ बसि[4], अधोमुख-सीस रहाई ।
इतनी[5] कठिन सही[6] तैं केतिक, अजहूँ न तू समुझाई !
मिटि गए राग[7]-द्वेष सब तिनके, जिन हरि प्रीति लगाई ।
सूरदास प्रभु[8]-नाम की महिमा, पतित[9] परम गति पाई ॥

ⓢ गा

‡ बौरे मन, रहन अटल करि जान्यौ[10] ।
धन-दारा-सुत-बंधु-कुटुँब-कुल, निरखि निरखि बौरान्यौ[11] ।
जीवन जन्म अल्प सपनौ सौ, समुझि देखि मन माहीं ।
बादर-छाहँ, धूम-धौराहर, जैसैं थिर न रहाहीं ।
जब लगि डोलत, बोलत, चितवत[12], धन-दारा हैं तेरे ।
निकसत हंस, प्रेत कहि तजिहैं, कोउ न आवै नेरे ।

—१४ । (२) छनहो
) अड़ाना । (क)
(शा) में नहीं है ।
—२ । देहैं—६,

८ । (४) में ६, ८ । (५) अटकनि कठिन सहनि तैं निकस्यौ—६, ८ । (६) सही तू निकस्यौ—६, १६ । (७) रोग दोष—३ । (८) हरि—३, ६, ८ । (९) पतितनि को गति दाई—८ ।

(ना) मा
बनाश्री ।
‡ यह पद (
(१०) आना—
१६ । (११) बौरान
८, १८, १६ । (१

मूरख, मुग्ध[1], अजान, मूढ़मति, नाहीं कोऊ तेरौ।
जो कोऊ तेरौ हितकारी, सो कहै काढ़ि सवेरौ।
घरी[2] इक सजन-कुटुँब मिलि बैठैं, रुदन बिलाप कराहीं।
जैसैं काग काग के मूएँ, काँ-काँ करि उड़ि जाहीं।
कृमि-पावक तेरौ तन भखिहैं, समुझि देखि मन माहीं।
दीन-दयाल सूर हरि[3] भजि लै, यह औसर फिरि नाहीं ॥३१९॥

※ राग

† ते[4] दिन बिसरि गए इहाँ आए।
अति उन्मत्त मोह-मद छाक्यौ, फिरत केस बगराए।
जिन दिवसनि तैं जननि-जठर मैं रहत बहुत दुख पाए।
अति संकट मैं भरत भँटा लौं, मल मैं मूँड़ गड़ाए।
बुधि-बिवेक-बल-हीन, छीन-तन, सबही[5] हाथ पराए।
तब[6] धौं कौन साथ रहि[7] तेरैं, खान-पान पहुँचाए।
तिहिं न करत चित अधम अजहूँ लौं, जीवत जाके ज्याए।
सूर सो मृग ज्यौं बान सहत नित[8] बिषय ब्याध के गाए ॥३२०॥

※ राग धन'

‡ रे मन, निपट निलज अनीति।
जियत की कहि को चलावै, मरत बिषयनि[9] प्रीति।

न। (२) घरी एक
मिलि बैठे रुदन
(३) भजि लै अब—

...गोपाली। (क)
...न्हरा।

† यह पद (शा) में नहीं है।

(४) वे—६, ८। (५) हित—
८। (६) कहि—६, १६। (७)
हो—१, २, ३, ६, १६।

‖ ये चारों चरण (ना
रा) में नहीं हैं।

(८) सिर—१६।

※ (ना) देवगंधार।

‡ यह पद (शा) में नहीं

(९) बिषया—१, ३, १'

स्वान कुब्ज, कुपंगु[1], कानौ, स्रवन-पुच्छ[2]-विहीन।
भग्न भाजन कंठ, कृमि सिर, कामिनी-आधीन।
निकट आयुध वधिक धारे, करत तीच्छन धार।
अजा-नायक मगन क्रीड़त, चरत[3] वारंवार।
देह छिन-छिन होति छीनी, दृष्टि देखत लोग।
सूर स्वामी सौं विमुख ह्वै, सती[4] कैसे भोग ? ॥

*

† बौरे मन, समुझि-समुझि कछु चेत।
इतनौ[5] जन्म अकारथ खोयौ, स्याम चिकुर भए सेत।
तब लगि सेवा करि निस्चय सौं, जब लगि हरियर[6] खेत।
सूरजदास[7] भरम जनि भूलौ, करि विधना सौं हेत ॥

*

‡ रे सठ, बिन गोविंद सुख नाहीं।
तेरौ दुःख दूरि करिबे कौं, रिधि-सिधि फिरि-फिरि जाहीं।
सिव, विरंचि, सनकादिक मुनिजन इनकौ[8] गति अवगाहीं।
जगत-पिता जगदीस-सरन बिनु, सुख तीनौं पुर नाहीं।
और सकल मैं देखे-ढूँढ़े[9], बादर[10] की सी छाहीं।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, दुख कबहूँ नहिं जाहीं ॥

—२। ② पुच्छा-
३, ८, १६। ③
.। मुदित—६।
।
ना) सारंग।
द (ना, स, ख)

में नहीं है।
④ अपनौ—६, ८। ⑥
हरवा—१, १६। ⑦ सूरदास
भरमौ—६, ८।
* (ना) अहीरी। (का, ना,
कां, रा) कान्हरा।

‡ यह पद (
है।
⑧ उनहुँ कि
ढूँढे—१। ⑩
सी छाहीं—८, ८

मन, तोसौं कोटिक बार कही।

समुझि न चरन[1] गहे गोबिंद के, उर अघ-सूल सही।
सुमिरन, ध्यान, कथा हरिजू की, यह एकौ न रही[2]।
लोभी, लंपट, बिषयिनि सौं हित, यौं तेरी निबही।
छाँड़ि कनक-मनि रतन अमोलक, काँच[3] की किरच गही।
ऐसौ तू है चतुर बिबेकी, पय तजि पियत मही।
ब्रह्मादिक, रुद्रादिक, रबि-ससि, देखे सुर सबही।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, सुख तिहुँ लोक नहीं।

मन[4] रे, माधव सौं करि प्रीति।

काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तू, छाँड़ि सबै बिपरीति।
भौंरा भोगी बन भ्रमै, (रे) मोद[5] न मानै ताप[6]।
सब[7] कुसुमनि मिलि रस करै, (पै) कमल बँधावै आप।
सुनि परमिति पिय प्रेम की, (रे) चातक चितवन[8] पारि।
घन-आसा सब दुख सहै, (पै) अनत न जाँचै बारि।
देखौ करनी कमल की, (रे) कीन्हौं रबि[9] सौं हेत।
प्रान तज्यौ, प्रेम न तज्यौ, (रे) सूख्यौ सलिल समेत।

) सूहा। (कां) ... १४। (३) गुंज की गरज नाहीं— ... (४) मना रे
६, ८। ... (५) मूड़—२, ...
... (ना) में ... (ना) मारंग। (क) ... (६) माप—३, ...
बिलावल। (कां) सोरठ। ... (७) सब सुमननि ...
...नाथौ—१४। (२) ... यह पद (ना) में ... १४। (८) चंत...
६, १४। नाहीं— ... नहीं है। ... (९) जल—१ ...

दीपक पीर न जानई, (रे) पावक परत पतंग ।
तनु तौ तिहिँ ज्वाला जर्यौ, (पै) चित न भयौ रस-भंग ।
मीन बियोग न सहि सकै, (रे) नीर न पूछै बात ।
देखि जु तू ताकी गतिहिँ, (रे) रति न घटै तन जात ।
परनि[1] परेवा प्रेम की, (रे) चित लै चढ़त अकास ।
तहँ चढ़ि तीय[2] जो देखई, (रे) भू पर[3] परत निसास ।
सुमिरि सनेह कुरंग कौ, (रे) स्रवननि राच्यौ राग ।
धरि न सकत पग पछमनौ, (रे) सर सनमुख उर लाग ।
देखि जरनि, जड़, नारि, की, (रे) जरति प्रेत[4] के संग ।
चिता न चित फीकौ भयौ, (रे) रच्यौ[5] जु पिय कैं रंग ।
लोक-वेद बरजत सबै, (रे) देखत नैननि त्रास ।
चोर न चित चोरी तजै, (रे) सरबस सहै बिनास ।
सब रस कौ रस प्रेम है, (रे) बिषयी खेलै सार ।
तन-मन-धन-जोबन खसै, (रे) तऊ न मानै हार ।
तैं जो रतन पायौ भलौ, (रे) जान्यौ साधि[6] न साज ।
प्रेम-कथा अनुदिन सुनै, (रे) तऊ न उपजै लाज ।
सदा सँघाती आपनौ, (रे) जिय कौ जीवन-प्रान ।
सु[7] तैं[8] बिसार्यौ सहज हीँ, (रे) हरि, ईस्वर, भगवान ।
वेद, पुरान, सुमृति सबै, (रे) सुर-नर सेवत जाहि ।
महा मूढ़ अज्ञान मति, (रे) क्यौं न सँभारत ताहि ?

...रेवा कौ रनौ चाहत ...चढ़न) अकास —१, ...हि—२, ३, १४ । तेहि (तिहि)—६, ८ । (३) पवन आंड़ि हर स्वास —१, १६ । (४) प्रीति—२, ३ । प्रेम—८ । (५) रंगौ—२, ३, ८, समान—१, १६ बिसर्यौ—१ । नैं

खग-मृग-मीन-पतंग लौं, (रे) मैं सोधे सब ठौर
जल-थल-जीव जिते तिते, (रे) कहौं कहाँ लगि और
प्रभु पूरन पावन सखा, (रे) प्रानिन हूँ कौ नाथ
परम दयालु कृपालु हैं, (रे) जीवन जाकैं हाथ
गर्भ-वास अति त्रास मैं, (रे) जहाँ न एकौ अंग
सुनि सठ, तेरौ प्रानपति, (रे) तहँउ न छाँड़्यौ संग
दिन-रार्ती[1] पोषत रह्यौ, (रे) जैसैं[2] चोली पान
वा दुख तैं तोहिं काढ़ि कै, (रे) लै दीनौ पय-पान
जिन जड़ तैं चेतन कियौ, (रे) रचि[3] गुन[4]-तत्त्व-विधान[5]
चरन, चिकुर, कर, नख, दए, (रे) नयन, नासिका, कान
असन, बसन बहु विधि दए, (रे) औसर औसर आनि
मातु-पिता-भैया मिले, (रे) नई रुचि नई पहिचानि
सजन कुटुँब परिजन बढ़े, (रे) सुत-दारा-धन-धाम
महामूढ़ विषयी भयौ, (रे) चित आकर्ष्यौ काम
खान-पान-परिधान[6] मैं[7], (रे) जोबन गयौ सब बीति[8]।
ज्यौं बिट[9] पर-तिय[10]-सँग बस्यौ, (रे) भोर भए भई[11] भीति
जैसैं सुखहीं तन[12] बढ़्यौ, (रे) तैसैं तनहिं[13] अनंग।
धूम बढ़्यौ, लोचन खस्यौ[14], (रे) सखा न सूझ्यौ संग।

...राति—१। (२) ...पान—१। (३) ...१६। (४) कै—...—३। विधान—...तनारि—६, ८।
(७) रस—१, १६। सुख—६, ८। (८) बितीत—१, १६। (९) पति—२, ३, ६, ८, १६। (१०) परि परतीय बस—१, १६। (११) भय-भीत—१, २। भयौ भीत—
१६। (१२) मन—३, ८, १४, १६। १। नेह—८। (... गह्यौ—१६।

जस जान्यौ, सब जग सुन्यौ, (रे) बाढ़्यौ अजस अपार ।
बीच न काहू तब कियौ, (जब) दूतनि दीन्ही[1] मार ।
कहा[2] जानै कैवाँ[3] मुवौ, (रे) ऐसैं[4] कुमति, कुमीच ।
हरि सौं[5] हेत बिसारि कै, (रे) सुख चाहत है नीच !
जौ पै जिय लज्जा नहीं, (रे) कहा कहौं सौ बार ?
एकहु आँक[6] न हरि भजे, (रे) रे सठ, मूर गँवार ॥३२५॥

※ राग कल्या...

† धोखैं ही धोखैं डहकायौ ।
समुझि न परी, बिषय-रस गीध्यौ, हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ ।
ज्यौं कुरंग जल देखि अवनि[6] कौ, प्यास न गई चहूँ[7] दिसि धायौ ।
जनम-जनम बहु करम किए हैं, तिनमैं आपुन आपु बँधायौ ।
ज्यौं सुक सेमर सेव[8] आस लगि, निसि-बासर हठि[9] चित्त लगायौ ।
रीतौ परचौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयौ तूल, ताँबरौ आयौ ।
ज्यौं कपि डोरि बाँधि बाजीगर, कन-कन कौं चौहटैं नचायौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, काल-ब्याल पै आपु डसायौ[10] ॥३२६॥

राग बिला...

‡ धोखैं ही धोखैं[11] बहुत बह्यौ[12] ।
मैं जान्यौ सब संग चलैगौ, जहँ कौ तहाँ रह्यौ ।

---

(१) काढ़्यौ बार—१ । दीन्हौ ...१ । (२) को—८, १४ । (३) ...—१ । (४) सो मति—८ । ...ग—२, ३ ।
※ (ना) कान्हरा । (कां) ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।
(६) अद्भुत सौ (सौ)—६, ८ । पिवन को —१४ । (७) दसौं—३ । (८) फल आसा—२ । सो आसा—३, ६, ८ । सेइ—१४ । (९) हित—१६ । (१०) ...चायौ—२ ।

‡ यह पद ना, न, स, में है ।
(११) धोखौं—२, ३ । (१२) भयौ—२, ३ ।

तीरथ गवन कियौ नहिं कबहूँ, चलतहिं चलन दह्यौ।
सूरदास सठ[1] तब हरि सुमिर्यौ, जब कफ कंठ गह्यौ ॥२

※ रा

† जनम गँवायौ ऊआबाई[2]।
भजे न चरन-कमल जदुपति के, रह्यौ बिलोकत छाईं[3]।
धन-जोबन-मद ऐंड़ौ-ऐंड़ौ, ताकत नारि पराई।
लालच-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौं, सोऊ हाथ न आई।
रंच काँच-सुख लागि मूढ़-मति[4], कंचन-रासि गँवाई।
सूरदास प्रभु छाँड़ि सुधा-रस, बिषय[5] परम बिष खाई ॥२

※ राग

‡ भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ।
बालापन खेलतहीं खोयौ, तरुनाई[6] गरबानौ।
बहुत प्रपंच किये माया के, तऊ न अधम[7] अघानौ।
जतन-जतन करि माया जोरी, लै गयौ रंक न रानौ।
॥ सुत-बित[8]-बनिता-प्रीति[9] लगाई, झूठे भरम भुलानौ।
लोभ-मोह तैं चेत्यौ नाहीं, सुपनैं ज्यौं डहकानौ।
बिरध भएँ कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम कैं हाथ बिकानौ ॥२२

---

१ ।
बिहागरो ।
(शा) में
बराई—१, ८ ।
१४ । ④ कत—

२ ३, ५, ८ । ⑤ मरत बिषय—
१४ ।
※ (ना) पंचम ।
‡ यह पद (शा) में
नहीं है ।
⑥ तरुना पैं—१, २, ६,

१४ । तरुनापन—३,
भये—१४ । ⑦ पतित
१६ । ⑧ पितु—६, ८
लगायौ—१, १६ ।
|| ये दोनों चरण
ल, क, रा) में नहीं

† (मन) राम-नाम-सुमिरन बिनु, बादि जनम खोयौ ।
रंचक सुख कारन, तैं अंत क्यौं बिगोयौ ?
साधु-संग[१], भक्ति बिना, तन अकारथ जाई ।
ज्वारी ज्यौं हाथ मारि, चालैं छुटकाई[३] ।
दारा-सुत, देह-गेह, संपति सुखदाई ।
इनमैं कछु नाहिं तेरौ, काल-अवधि आई ।
काम-क्रोध-लोभ-मोह-तृष्ना मन मोयौ[४] ।
गोबिंद-गुन[५] चित बिसारि, कौन नींद सोयौ !
सूर कहै चित बिचारि, भूल्यौ भ्रम अंधा ।
राम-नाम भजि[६] लै, तजि और सकल धंधा ॥

‡ भक्ति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ ।
पाउँ चारि, सिर स्रृंग, गुंग मुख, तब कैसैं गुन गैहौ ?
चारि पहर दिन चरत फिरत बन, तऊ न पेट अघैहौ ।
टूटे कंध अरु फूटी नाकनि, कौ लौं धौं भुस खैहौ ।
लादत, जोतत लकुट बाजिहैं, तब कहँ मूँड़ दुरैहौ ?
|| सीत, घाम, घन, बिपति बहुत बिधि, भार तरैं मरि जैहौ ।

बचैरी । (कां) मैंहा ।
यह (शा) में
—१, २, ३, १३,
। ② सँगति —१,
टकाई—१ । छुट-

काई—६, ८ । ④ मोह्यौ—२,
३, १४ । पोयौ—१६ ⑤ कौं
—१६ । ⑥ लै भजि करि । (कं)
—१, १६ । निज कामी —२,
३, १५ ।
※ (ना) नह । (आं)

स्वारंभ ।
‡ यह पद
नहीं है ।
⑦ कोयौ को ।
| यह चरण
रा) में नहीं है

हरि-संतनि कौ कह्यौ न मानत, कियौ आपुनौ पैहौ ।
सूरदास भगवत-भजन बिनु, मिथ्या[१] जनम गँवैहौ ॥३२

राग

तजौ[१] मन, हरि-बिमुखनि कौ संग ।
जिनकैं संग कुमति उपजति है, परत भजन मैं भंग ।
कहा होत पय-पान कराऐं, बिष नहिं तजत भुजंग ।
कागहिं कहा कपूर चुगाऐं, स्वान न्हवाऐं गंग ।
खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन-अंग ।
गज कौं कहा सरित[३] अन्हवाऐं, बहुरि धरै वह ढंग ।
पाहन पतित[४] बान[५] नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग ।
सूरदास कारी[६] कामरि पै, चढ़त न दूजौ रंग ॥३२

* राग

† रे मन, जनम अकारथ खोइसि ।
[illegible] की भक्ति न कबहूँ कीन्हौं, उदर भरे परि सोइसि
-दिन फिरत रहत मुँह बाए, अहमिति[७] जनम बिगोइसि
पसारि पर्‌यौ दोउ नीकैं, अब[८] कैसी कह होइसि
जमनि सौं आनि बनी है, देखि-देखि मुख रोइसि
स्याम बिनु कौन छुड़ावै, चले जात भाई[९] पोइसि ॥३३

[illegible]रणा (ना, स, कां, [illegible] । [illegible] —११ । (२) बुद्धि [illegible] । (३) न्हवाए [illegible] धरै मोहि छग— [illegible] सलिता...—११ ।

(४) पैठ—२ । (५) बाँस—१ । (६) खल कारी कामरि—१, ३, १८ । प्रभु कारी कामरि—११ ।

* (ना) बिहागरौ । (कां) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(७) अहंकार करि—२, ६, ८, १२ । (८) अ[illegible] कहा होइस—१ । (९) [illegible] ६, ८ ।

† तब तैं गोविंद क्यौं न सँभारे ?

भूमि परे तैं सोचन लागे, महा कठिन दुख भारे ।
अपनौ पिंड पोषिबे कारन, कोटि सहस जिय मारे ।
इन पापनि तैं क्यौं उबरौगे, दामनगीर तुम्हारे ।
आपु लोभ-लालच कैं कारन, पापनि तैं नहिं हारे ।
सूरदास जम कंठ गहे तैं, निकसत प्रान दुखारे ॥

‡ रे मन मूरख, जनम गँवायौ ।

करि अभिमान विषय-रस गीध्यौ, स्याम-सरन नहिं आयौ ।
यह संसार सुवा-सेमर ज्यौं, सुंदर देखि लुभायौ ।
चाखन लाग्यौ रुई गई उड़ि, हाथ कछू नहिं आयौ ।
कहा होत अब के पछिताएँ, पहिलैं पाप कमायौ ।
कहत सूर भगवंत-भजन बिनु, सिर धुनि-धुनि पछितायौ ॥

§ औसर हार्‌यौ रे, तैं हार्‌यौ ।

नुष-जनम पाइ नर बौरे, हरि कौ भजन बिसार्‌यौ

) सूहो । (का, ना, सारंग । पद (शा) में न गिरह—२ । ② तेहारे—१ । कहुँ न —२. १६ । ③ कफ—२ । ④ तब—३ ।

‡ (ना, का) सारंग । (श) गुजरी । यह पद (शा) में नहीं है । ये दो चरण (का) में नहीं हैं ।

⑤ उड़ि गई— ⑥ क्यौं न—२ । नाहिं—१४ । ⑦ सूर । (ना) अनु) परज । (शा । यह पद (नहीं है ।

रुधिर[१] बूँद तैं साजि कियौ तन, सुंदर रूप सँवारयौ।
जठर-अगिनि अंतर उर[२] दाहत, जिहिं दस मास उबारयौ।
जब तैं जनम लियौ जग भीतर, तब तैं तिहिं प्रतिपारयौ।
अंध, अचेत, मूढ़मति, बौरे, सो प्रभु क्यौं न सँभारयौ।
पहिरि पटंबर, करि आडंबर, यह तन झूठ[३] सिँगारयौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ, तिया-रति, बहु बिधि काज बिगारयौ।
मरन भूलि, जीवन थिर जान्यौ, बहु उद्यम जिय धारयौ।
सुत-दारा कौ मोह अँचै बिष, हरि-अमृत-फल डारयौ।
झूठ-साँच करि माया जोरी, रचि-पचि भवन सँवारयौ।
काल-अवधि पूरन भई जा दिन, तनहूँ त्यागि सिधारयौ।
प्रेत-प्रेत तेरौ नाम परयौ, जब[४], जैं बरि बाँधि निकारयौ।
जिहिं सुत कैं हित बिमुख गोबिंद तैं, प्रथम तिहीं मुख जारयौ।
भाई-बंधु-कुटुंब-सहोदर, सब मिलि यहै बिचारयौ।
जैसे कर्म, लहौ फल तैसे, तिनुका तोरि उचारयौ।
सतगुरु कौ उपदेस हृदय धरि, जिन भ्रम सकल निवारयौ।
हरि भजि, बिलँब छाँड़ि सूरज सठ, ऊँचैं टेरि पुकारयौ ॥३३

द्वि-संवाद   * राग

चकई री, चलि चरन-सरोवर, जहाँ न प्रेम-बियोग।
जहँ भ्रम-निसा होति नहिं कबहूँ, सोइ सायर सुख जोग

पानि के बुंद तैं पिंड ...थे—८। (२) अरध सुख ...,४, ८, १४, १६, १८, १६। (३) झाठ—१। (४) हसारयौ—१, २, ३, ८, १४, १२। (५) नर मौरा—२। * (ना, का) का बिलावल।

जहाँ[1] सनक-सिव हंस, मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास
प्रफुलित कमल, निमिष नहिँ ससि-डर, गुंजत निगम सुवास
जिहिँ सर सुभग[2] मुक्ति-मुक्ताफल, सुकृत-अमृत-रस पीजै
सो सर छाँड़ि कुबुद्धि बिहंगम, इहाँ कहा रहि कीजै
लछमी-सहित होति नित क्रीड़ा, सोभित सूरजदास
अब न सुहात विषय-रस-छीलर[3], वा[4] समुद्र की आस ॥३३॥

राग

[*] चलि सखि, तिहिँ सरोवर जाहिँ ।
जिहिँ सरोवर कमल कमला, रवि बिना बिकसाहिँ ।
हंस उज्जल पंख[4] निर्मल, अंग मलि-मलि न्हाहिँ ।
मुक्ति-मुक्ता अनगिने[5] फल, तहाँ[6] चुनि[7]-चुनि खाहिँ ।
अतिहिँ मगन महा मधुर रस, रसन[8] मध्य समाहिँ ।
पदुम-बास सुगंध-सीतल, लेत पाप नसाहिँ ।
सदा प्रफुलित रहैँ, जल बिनु निमिष नहिँ कुम्हिलाहिँ ।
सघन[10] गुंजत बैठि उन पर भौंरहू[11] बिरमाहिँ ।
देखि नीर जु छिलछिलो जग[12], समुझि कछु मन माहिँ ।
सूर क्यौं नहिँ चलै उड़ि तहँ, बहुरि उड़िबौ नाहिँ ॥३

जहाँ सनक से मीन हंस
...निगम —१, ९, १४।
...त—२। ③ छीलर—
④ हरि—२, ३, ६, ८।
(...कां) कान्हरा।

* यह पद (ना) में नहीं है।
② पंखि—३। ③ अंबु के ... १, १०। अंब के—६, ८। ④ तिन्हें—१, १४। ⑤ चुनि

चुनि—२, ३। ... २, ६, ८। ⑪ ...ई, हैं—१। ⑫ अति—१, ६,

* राग रा

† भृंगी री, भजि स्याम[1]-कमल-पद, जहाँ न निसि कौ त्रास।
जहँ बिधु-भानु समान, एक[2] रस, सो बारिज सुख-रास।
जहँ किंजल्क भक्ति नव-लच्छन, काम-ज्ञान रस एक।
निगम, सनक, सुक, नारद, सारद, मुनि जन भृंग अनेक।
सिव-बिरंचि खंजन मनरंजन, छिन-छिन करत प्रवेस।
अखिल कोष तहँ भर्यौ सुकृत-जल, प्रगटित स्याम-दिनेस।
सुनि मधुकरि[3], भ्रम तजि कुमुदनि कौ, राजिवबर की आस।
सूरज प्रेम-सिंधु मैं प्रफुलित, तहँ चलि करै निवास ॥३३९॥

* राग दे

‡ सुआ, चलि ता बन कौ रस पीजै।
जा बन राम-नाम अम्रित-रस, स्रवन[4]-पात्र भरि लीजै।
को तेरौ पुत्र, पिता तू काकौ, घरनी, घर कौ तेरौ ?
काग[5]-स्रृगाल-स्वान कौ भोजन, तू कहै मेरौ-मेरौ !
बन बारानसि मुक्ति-क्षेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ।
सूरदास साधुनि की संगति, बड़े भाग्य जौ पाऊँ ॥३४०॥

(ना) आसावरी। (क) ।(कां) कान्हरा।
ह पद (ल, शा) में ।
चरन—१, २, ३, ६, १८, १६। ② प्रभा
नख—१, ६, ८, १६। ③ मधुःकरी भरम तजि निर्भय राजिव रवि—१।

* (कां) कान्हरा।
‡ यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीं है।

④ स्रवत—६। कराल—१। ⑤ काल क ८। काग कराल—१

राग बि

सुक नृप ओर कृपा करि देख्यौ । धन्य भाग तिन अपनौ लेख्यौ ।
बिनती करी चरन सिर नाइ । सप्त दिवस सब[1] मेरी आइ ।
तउ कुटुंब कौ मोह न जात । तन-धन-लोभ आइ लपटात ।
जानि बूझि मैं होत अजान । उपजत नाहीं मन मैं ज्ञान ।
अरु तनु छूटत बहु दुख होइ । तातैं सोच रहै[2] नहिं कोइ ।
बिना सोच[3] सुमिरन क्यौं होइ । आज्ञा होइ करौं अब सोइ ।
सुक कह्यौ, तन-धन कुटुँब बिहाइ । हरि-पद भजौ, न और उपाइ ।
आयु भग्न[4]-घट-जल ज्यौं छीजै । अह-निसि हरि-हरि सुमिरन कीजै ।
नृप षट्वांग पूर्व इक भयौ । सु तौ द्वै घरी मैं तरि गयौ ।
सात दिवस तेरी तौ आइ । कहौं भागवत, सुनि चित लाइ ।
सुनि हरि-कथा धरौ हरि-ध्यान । सब जग जानौ स्वप्न समान ।
या बिधि जौ हरि-पद उर धरिहौ । निस्संदेह सूर तौ[5] तरिहौ ॥३

राग बि

हरि-जस-कथा सुनौ चित लाइ । ज्यौं षट्वांग तर्‌यौ गुन गाइ ।
नृप षट्वांग भयौ भुव माहिँ । ताके सम द्वितिया कोउ नाहिँ ।
इक दिन इंद्र तासु घर आयौ । राजा उठि कै सीस नवायौ ।
धनि मम गृह, धनि भाग हमारे । जौ तुम चरन कृपा करि धारे ।

रहि—२, ८ । (२) हरत (३) त्वचा—१, १६ । (४) अंजुली—६, ८ । (५) सब—२ । सब—१६ ।

अब मोकौं जो आज्ञा होइ । आयसु मानि करौं मैं[1] सोइ ।
इंद्र कह्यौ, मम करौ सहाई । असुरनि सौं है हमैं लराई ।
इंद्रपुरी षट्वांग सिधाए । नाम सुनत सो[2] सकल पराए ।
सुरपति सौं नृप आज्ञा माँगी । उन कह्यौ, लेहु कछू बर माँगी ।
नृपति कह्यौ, कहौ मेरी आइ । बर लैहौं पुनि सीस चढ़ाइ ।
दोइ मुहूरति आयु बताई । नृप बोल्यौ तब सीस नवाई ।
तुरत देहु मोहिं घर पहुँचाइ । तरौं जाइ तहँ हरि-गुन गाइ ।
एक मुहूरत मैं भुव[3] आयौ । एक मुहूरत हरि-गुन गायौ ।
हरि-गुन गाइ परम पद लह्यौ । सूर नृपति सुनि धीरज गह्यौ ॥२४३॥

① सब—१ । अब—३, ८ । ② सब असुर—६, ८ । ③ फिरि—१, २, १६ ।

द्वितीय स्कंध

* राग बिलावल

‖ हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । ‖ हरि चरनारबिंद उर धरौ ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर[1] नाइ । राजा सौं बोल्यौ या भाइ ।
तुम[2] कह्यौ सप्त दिवस मम आइ । कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ ।
चिंता छाँड़ि, भजौ जदुराइ । सूर तरौ, हरि के गुन गाइ ॥ १ ॥
॥३४४॥

राग सारंग

† कह्यौ सुक श्रीभागवत बिचारि ।
हरि की भक्ति जुगै जुग बिरधै, आन धर्म दिन चारि ।
चिंता तजौ परीच्छित राजा, सुनि सिख[3] साखि[4] हमारि ।
कमल-नैन की लीला गावत, कटत अनेक बिकार ।
सतजुग सत, त्रेता तप कीजै, द्वापर पूजा चारि ।
सूर भजन कलि केवल कीजै, लज्जा-कानि निवारि ॥ २ ॥
॥३४५॥

---

* (ना) बिभास ।
‖ ये दो चरण (का, ङ्गा) [नहीं] हैं ।
① चित लाइ—१, १६ ।
② जो कहौ—६ ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
③ सुख—१ । ④ साधु-[म]द । सार—१६ ।

* राग बिलावल

† गोबिँद-भजन करौ इहिँ बार ।
संकर पारबती उपदेसत, तारक मंत्र लिख्यौ स्त्रुति-द्वार ।
अस्वमेध जज्ञहु जौ कीजै, गया, बनारस अरु केदार ।
राम नाम-सरि तऊ न पूजै, जौ तनु गारौ जाइ हिवार ।
सहस बार जौ बेनी परसौ, चंद्रायन कीजै सौ बार ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम के दूत खरे हैँ द्वार ॥ ३ ॥
॥२४६॥

राग केदारौ

‡ है हरि नाम कौ आधार ।
और इहिँ कलिकाल नाहीँ, रह्यौ बिधि-ब्यौहार ।
नारदादि सुकादि मुनि[1] मिलि, कियौ बहुत बिचार ।
|| सकल स्त्रुति-दधि मथत पायौ[2], इतोई घृत-सार ।
दसौं दिसि तैँ कर्म रोक्यौ[3], मीन कौं ज्यौं जार ।
सूर हरि कौ सुजस गावत, जाहि मिटि भव-भार ॥ ४ ॥
॥२४७॥

नाम-महिमा

* राग बिलावल

§ हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि हरि सुमिरत सब सुख होइ ।
हरि-समान द्वितिया नहिँ कोइ । स्त्रुति-सुम्रिति देख्यौ सब जोइ ।

---

* (ना) कल्यान । (ना २) रंग । (कां) रामकली ।

† इस पद के पाठों में [illegible]ड़ा हेर-फेर है । चरणों की संख्या [illegible]ा छंद में भी भिन्नता है । [illegible]ब प्रतियों का निरीक्षण करके यह [illegible]ठ निर्धारित किया गया है ।

‡ यह पद (शा) में [illegible]हीं है ।

(1) शंकर—१४ ।

|| (ना, कां) में इस चरण के पश्चात् ये दो चरण अधिक हैं— नाव जजरी (जर्जरि) जरा श्रासति कियौ बिष ब्यौहार । दाम गाँठी आहि नाहीँ कैसे उतरौं पार ॥

(2) काढ्यौ—१, ३, ८, १६ ।

(3) बंधन—१६ ।

* (ना) बिभास ।

§ यह पद (ल) में नहीं है । इसके पूर्वापर क्रम में कुछ अंतर है । (ना) का क्रम विशेष संगत प्रतीत होता है, अतः इस संस्करण में उसे ही ग्रहण किया गया है । चरणों की संख्या भी अधिकांश (ना) की भाँति रक्खी गई है । "हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि हरि सुमिरत सब सुख होइ ।" यह टेक का चरण तीन बार आया है ।

हरि सुमिरत होइ सु होइ । हरि चरननि चित राखौ
हरि सुमिरन मुक्ति न होइ । कोटि उपाइ करौ जौ
हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि सुमिरे तैं सब सुख
मित्र हरि गनत न दोइ । जो सुमिरै ताकी गति
हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि के गुन गावत सब
रंक हरि गनत न दोइ । जो गावहि ताकी गति
हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि सुमिरे तैं सब सुख
हरि हरि सुमिर्यौ जो जहाँ । हरि तिहिँ दरसन दीन्ह्यौ
बिनु सुख नहिँ इहाँ न उहाँ । हरि हरि हरि सुमिरौ जहँ
बातनि की एकै बात । सूर सुमिरि हरि-हरि दिन-र

जो सुख होत गुपालहिँ गाएँ ।
सो सुख होत न जप-तप कीन्हैं, कोटिक तीरथ न्हाएँ
दिएँ लेत नहिँ चारि पदारथ, चरन-कमल चित लाएँ
तीनि लोक तृन-सम करि लेखत, नंद-नँदन उर आएँ
बंसीबट[1], बृंदावन, जमुना तजि बैकुंठ न जावैं[2]
सूरदास हरि कौ सुमिरन करि, बहुरि न भव[3]-जल आवै[4]

---

(1) अड़ाना । जाये—१, ३ । जा हैं—२ । जाइ —२ । (4) आ
कुल बृंदावन जमुना —६ । जाइ—८ । जायेँ—१२ । —२ । आई-
ठहिँ जाइ—८ । (2) (3) भव चलि—१, १६ । भुव तल आयेँ—१३ ।

* राग केदारौ

† सोइ रसना, जो हरि-गुन गावै ।
नैननि की छबि यहै चतुरता, जौ मुकुंद-मकरंदहिँ ध्यावै ।
निर्मल चित तौ सोई साँचौ, कृष्न बिना जिहिँ और न भावै ।
स्रवननि की जु यहै अधिकाई, सुनि हरि-कथा सुधा-रस पावै ।
कर तेई जे स्यामहिँ सेवैं, चरननि चलि बृंदावन जावै ।
सूरदास जैयै बलि वाकी, जो हरि जू सौं प्रीति बढ़ावै ॥ ७ ॥
॥३५०॥

राग सारंग

‡ जब तैं रसना राम कह्यौ ।
मानौ धर्म साधि सब बैठ्यौ, पढ़िबे मैं धौं कहा रह्यौ ।
प्रगट प्रताप ज्ञान-गुरु-गम तैं, दधि मथि घृत लै, तज्यौ मह्यौ ।
सार कौ सार, सकल सुख कौ सुख, हनूमान-सिव जानि गह्यौ ।
नाम-प्रतीति भई जा जन कौं, लै आनँद, दुख दूरि दह्यौ ।
सूरदास धनि-धनि वह प्रानी, जो हरि कौ ब्रत लै निबह्यौ ॥ ८ ॥
॥३५१॥

भक्ति की महिमा

* राग सारंग

§ गोबिँद सौं पति पाइ, कहँ मन अनत लगावै ?
स्याम-भजन बिनु सुख नहीँ, जौ दस दिसि धावै ।

(ना) ईमन । (क) (का) सारंग । यह पद (शा) में । मकरंद मुकुंदहिँ—१, मकरंद मुकुंद दिखावै । ② जो यहै चतुरता—जो चरनारबिंद रस प्यावै, १८ । ④ रस—१, १६ । ⑤ ताके—१, २, ३, १६ ।

‡ यह पद (शा) में नहीँ है ।

⑥ अब—२ । ⑦ गुन—८ । ⑧ कह्यौ—१, ६, ८ ।

* (ना) अलिहया बिलावल । (का) कान्हरा ।

§ इस पद का छंद सभी प्रतियों में सदोष है । इसके अधिकांश चरणों में १३ + १० = २३ मात्राएँ हैं किंतु कुछ में इस नियम का उल्लंघन करके २४ अथवा २५ मात्राएँ भी रख दी गई हैं । इस संस्करण में इस पद की २३ मात्राएँ स्वीकार की गई और प्रतियों की सहायता से शुद्ध करके रक्खी गई हैं ।

पति कौ ब्रत जो धरै तिय, सो सोभा पावै।
आन पुरुष कौ नाम लै, पतिब्रतहिं लजावै।
गनिका उपज्यौ पूत, सो कौन कौ कहावै ?
बसत सुरसरी तीर, मँदमति कूप खनावै।
जैसैं स्वान कुलाल के, पाछैं लगि धावै।
आन देव हरि तजि भजै, सो जनम गँवावै।
|| फल की आसा चित्त धरि, जो बृच्छ बढ़ावै।
|| महा मूढ़ सो मूल तजि, साखा जल नावै।
सहज भजै नँदलाल कौं, सो सब सचुपावै।
सूरदास हरि नाम लै, दुख निकट न आवै ॥ ९ ॥

॥३५२॥

* राग कान्हरं

जाकौ मन लाग्यौ[1] नँदलालहिं[2], ताहि और नहिं भावै (हो)।
¶ जौ लै मीन दूध मैं डारै, बिनु[3] जल नहिं सचुपावै (हो)।
¶ अति[4] सुकुमार डोलत रस-भीनौ, सो[5] रस जाहि पियावै (हो)।
ज्यौं गूँगौ गुर खाइ अधिक रस, सुख-सवाद न बतावै (हो)।
जैसैं सरिता मिलै सिंधु कौं, बहुरि प्रवाह न आवै (हो)।
ऐसैं सूर कमल-लोचन तैं, चित नहिं अनत डुलावै (हो) ॥ १० ॥

॥३५३॥

|| ये दो चरण (ना, स, रा) नहीं हैं।

* (ना, कां) आसावरी।

① लागौ—६, ८, १८। ② सौं—२।

¶ ये दो चरण (वे) में नहीं हैं।

③ नीर भरे सचु पावै—२। नीरहिं में सचु पावै—८। नीर भखे सुख पावै—१६, १८। ④ अति सुमार—२। ज्यौं सुग डोलै रन भीतर—१४। ⑤ १ न काहु जनावै (हो)—२, १

* राग विहाग

जौ मन कबहुँक हरि कौं जाँचै ।
आन प्रसंग-उपासन[1] छाँड़ै, मन-बच-क्रम अपनैं उर साँचै ।
निसि-दिन स्याम सुमिरि जस गावै, कल्पन[2] मेटि प्रेम रस माँचै ।
यह व्रत धरे लोक मैं बिचरै, सम करि गनै महामनि-काँचै ।
सीत-उष्न, सुख-दुख नहिं मानै, हानि[3]-लाभ कछु सोच न राँचै ।
जाइ समाइ सूर वा[4] निधि मैं, बहुरि न उलटि जगत मैं नाचै ॥ ११ ॥
॥३५४॥

* राग बिलावल

जनम-जनम, जब-जब, जिहिं-जिहिं जुग, जहाँ-जहाँ जन जाइ ।
तहाँ-तहाँ हरि चरन-कमल-रति सो[5] दृढ़ होइ रहाइ ।
स्रवन सुजस सारंग-नाद-बिधि, चातक-बिधि मुख नाम ।
नैन चकोर सतत[6] दरसन ससि, कर अरचन अभिराम ।
सुमति सुरूप सँचै स्रद्धा-बिधि, उर-अंबुज अनुराग ।
नित प्रति अलि जिमि गुंज मनोहर, उड़त[7]जु प्रेम-पराग ।
औरौ सकल सुकृत श्रीपति-हित, प्रति[8]फल-रहित सुप्रीति ।
नाक[9] निरै, सुख दुःख, सूर नहिं, जिहि की भजन प्रतीति ॥ १२ ॥
॥३५५॥

---

* (ना) कान्हरौ। (का, ना/३,) केदारा। (कॉ) आसावरी। (१) आन व्रत—६, ८। उपाय कै—१६। (२) गलियन मत्त। कामन—६, ८, १६। (३) भए—१, १६। आये गये नहिं राँचै—३, १४। (४) महा—२, ३।

* (ना) अड़ानो।

(५) जो—१। वह सुधि बुद्धि—२। (६) संत सुनियत—२। संत संतत—६, ८। लखत संतत—१६। (७) आवत—१, ६, ८, १४। उद्यम—१८। (८) तन मन रहत सुप्रीति—१, ८, १६। सकल रहित करि प्रीति—२। (९) नहिं तिहिं स्वर्ग नर्क सुख दुख कछु सूरज भक्ति परतीति—२। स्वर्ग नर्क दुख सुख न सूजै प्रभु जिनके—३।

दा

अचंभौ इन लोगनि कौ आवै ।
छाँड़ैं स्याम-नाम[1]-अम्रित-फल, माया-बिष-फल भावै[2]
निंदत मूढ़ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै
मानसरोवर छाँड़ि हंस तट काग[3]-सरोवर न्हावै
पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै
चौरासी लख जोनि स्वाँग धरि, भ्रमि-भ्रमि जमहिँ[4] हँसावै
मृगतृष्ना आचार-जगत[5] जल, ता सँग मन ललचावै
कहत[6] जु सूरदास संतनि मिलि हरि जस काहे[7] न गावै

† भजन बिनु कूकर-सूकर जैसौ ।
जैसैं घर बिलाव[8] के मूसा, रहत बिषय[9]-बस वैसौ
बग-बगुली अरु गीध-गीधिनी, आइ जनम लियौ तैसौ
उनहूँ कैं गृह, सुत, दारा हैं, उन्हैं भेद कहु कैसौ
जीव मारि कै उदर भरत हैं, तिनकौ लेखौ ऐसौ
सूरदास[10] भगवंत-भजन बिनु, मनौ[11] ऊँट-बृष[12]-भैंसौ

) गौरी ।
रिस फल कौ—१, ावै—२, ३ । (३) ④ लोग—२, ३, यहि हतावै—६, ८। । (६) कहि अब—
२, ८ । (७) गाय गवावै—२ ।
* (ना) नट । (क) टोड़ी । (कां) धनाश्री ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
(८) बिलाव मूसा डर बसत
इंद्रियनि—१८ ८, १६ । (१० मरमै सूरज का २, १८ । (११) —१ । ज्यों १६ । (१२) खर

*

† भजन बिनु जीवत जैसैँ प्रेत ।
मलिन मंदमति डोलत घर-घर, उदर भरन कैँ हेत ।
|| मुख कटु बचन, नित्त पर[१]-निंदा, संगति-सुजस न लेत ।
|| कबहूँ[२] पाप करैँ पावत धन, गाड़ि[३] धूरि तिहिँ देत ।
गुरु-ब्राह्मन अरु संत-सुजन के, जात न कबहुँ निकेत ।
सेवा नहिँ भगवंत-चरन की, भवन[४] नील कौ खेत ।
कथा नहीँ गुन गीत सुजस हरि, सब[५] काहूँ दुख देत ।
ताकी कहा कहौँ सुनि सूरज, बूड़त कुटुँब समेत ।।
||

*

‡ जिहिँ तन हरि भजिबौ[६] न कियौ ।
सो तन सूकर-स्वान-मीन ज्यौँ, इहिँ सुख कहा जियौ ?
¶ जो जगदीस ईस सबहिनि कौ, ताहि न चित्त दियौ ।
¶ प्रगट जानि जदुनाथ बिसार्‌यौ, आसा-मद[७] जु पियौ ।
चारि पदारथ के प्रभु दाता, तिन्हैँ न मिल्यौ हियौ ।
सूरदास रसना बस अपनैँ, टेरि न नाम लियौ ।। १६

।।३५६

जैतश्री ।
ट (शा) मेँ
रण (ना, स, का,
हैँ ।
पर) निंदा सगुन
पुसखेत १, १४ ।

(२) कबहुँ न पुन्य करै बेस्या कौं गाँठि धूति धन देत—६, ८ । (३) गाँठि धूत तहँ—१, १४ । (४) लुनै जो बोवै खेत—२, ३, १८ । (५) साधत देव अचेत (अनेत) —१, १४ ।
* (ना) देवगंधार । (का)

बिलावल ।
‡ यह पद
नहीँ है ।
(६) भजनौ—
¶ ये दो च
मेँ नहीँ हैँ ।
(७) मधु २

-महिमा ❋ राग केद

जा दिन संत पाहुने आवत ।
तीरथ कोटि सनान[1] करैं फल जैसौ दरसन पावत ।
|| नयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकैं चरन-कमल चित लावत ।
मन-बच-कर्म और नहिं जानत, सुमिरत औ सुमिरावत ।
|| मिथ्याबाद-उपाधि-रहित ह्वै, बिमल-बिमल जस गावत ।
¶ बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत ।
¶ संगति रहैं साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत ।
सूरदास[2] संगति करि तिनकी, जे हरि-सुरति करावत ॥१७॥
॥२६०॥

-साधन ❋ राग धन

† हरि-रस तौ[3]ऽब जाइ कहुँ लहियै ।
गएँ सोच आएँ नहिं आनँद, ऐसौ मारग गहियै ।
कोमल बचन, दीनता सब सौं, सदा अनंदित रहियै ।
बाद-बिवाद, हर्ष-आतुरता[4], इतौ द्वंद[5] जिय सहियै ।
ऐसी जो आवै या मन मैं, तौ सुख कहँ लौं कहियै ।
अष्ट[6] सिद्धि, नव निधि, सूरज प्रभु, पहुँचै जो कछु चहियै ॥१८॥
॥२६१॥

(ना) गौरी । (क) बिहा-
(कां) सारंग ।
(१) समान करन—२, ३,

ये दो चरण (का, ना/२)
ीं हैं ।
¶ ये दो चरण (ना- स- क-
काँ, रा) में नहीं हैं ।

(२) सूरदास या जन्म मरन तैं तुरत परम गति पावत—१, १६ ।

* (ना) भैरवी । (क) गुर्जरी । (काँ) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(३) तौ कबहुँ जाइ लहि
१ । तौ पै कहुँ जाइ लहिए—
(४) अंतरता—२, ३, १८ ।
रता—६, ८ । (५) दंड—
१६ । दंड सब—२ । दुः
—३ । (६) अष्ट महा सिरि
जहाँ लगि बिलसै—१७ ।

* राग

† जौ लौं मन-कामना[1] न छूटै ।
तौ कहा जोग-जज्ञ-ब्रत कीन्हैं, बिनु कन तुस कौं कूटै ।
कहा सनान कियैं तीरथ के, अंग भस्म, जट-जूटै ?
कहा पुरान जु पढ़ैं अठारह, ऊर्ध्व धूम के[2] घूटैं ।
जग सोभा[3] की[4] सकल बड़ाई, इनतैं कछू न खूटै ।
|| करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै[5] ।
|| काम, क्रोध, मद, लोभ सत्रु हैं; जो इतननि सौं छूटै ।
सूरदास तबहीं तम नासै, ज्ञान-अगिनि-झर फूटै ॥१६॥
॥२६२॥

राग

भक्ति-पंथ कौं जो अनुसरै । सुत-कलत्र सौं हित परिहरै
असन-बसन की चिंत न करै । बिस्वंभर सब जग कौं भरै
पसु जाके द्वारे पर होइ । ताकौं पोषत अह-निसि सोइ
जो प्रभु कैं सरनागत आवै । ताकौं प्रभु क्यौं[6] करि बिसरावै
मातु[7]-उदर मैं रस पहुँचावत । बहुरि रुधिर तैं छीर बनावत
असन-काज प्रभु बन-फल करे[8] । तृषा-हेत जल-झरना भरे[9]
पात्र स्थान हाथ हरि दीन्हे । बसन-काज बल्कल प्रभु कीन्हे

ना) नाइकी । (क) —६,८ । ③ सोना—१ । सुभाव ⑤ लूटै—१,
—३ । ④ पुनि—२ । कैसैं—१४ । ⑦
पद (शा) में नहीं है । || ये दो चरण (क) में असन—२, ३ । ⑧
कालिमा—२ । ② गर नहीं हैं । ⑨ झरे—१, ३, ६,

सज्जा पृथ्वी करी बिस्तार । गृह गिरि-कंदर करे अपार ।
तातैँ सब चिंता करि त्याग । सूर करौ हरि-पद अनुराग ॥२०॥
॥३६३॥

राग बिलावल

भक्ति-पंथ कौँ जो अनुसरै । सो अष्टांग जोग कौँ करै ।
यम, नियमासन, प्रानायाम । करि अभ्यास होइ निष्काम ।
प्रत्याहार - धारना - ध्यान । करै जु छाँड़ि बासना आन ।
क्रम-क्रम सौँ पुनि करै समाधि । सूर स्याम भजि मिटै उपाधि ॥२१॥
॥३६४॥

वर्णन

* राग धनाश्री

† सबै दिन एकै से नहिँ जात ।
सुमिरन-भजन[1] कियौ करि हरि कौ, जब लौं तन-कुसलात ।
कबहूँ कमला चपल पाइ कै, टेढ़ैँ टेढ़ैँ जात ।
कबहूँ मग-मग धूरि बटोरत, भोजन कौँ बिलखात ।
॥ या देही कौ गरब करत[2], धन-जोबन के मदमात ।
॥ हौँ बड़, हौँ बड़, बहुत कहावत, सूधैँ कहत न बात ।
॥ बाद-बिबाद सबै दिन बीतैँ, खेलत ही अरु खात ।
॥ जोग न जुक्ति, ध्यान नहिँ पूजा, बिरध भएँ पछितात ।

(ना) बड़हंस ।

यह पद (शो) मेँ नहीँ है । …त्र प्रतियों मेँ इस पद के …था चरणोँ की संख्या मेँ …द पाया जाता है । यह …दासजी के प्रसिद्ध पदों मेँ से है और बहुधा लोग इसको गाते हैँ । ये पाठ-भेद तथा संख्या-भेद इसी के परिणाम जान पड़ते हैँ । इस संस्करण का पाठ निर्धारित करने मेँ सभी प्रतियोँ की सहायता ली गई है और अर्थ की संगति का अधिक ध्यान रक्खा गया है

(१) ध्यान—१ ।

॥ ये चरण (स) मेँ नह… हैँ ।

(२) बावरौ (गँवारौ) तव फिरत इतरात (अकुलात)—६, ८, १९ ।

|| तातैं कहत सँभारहि रे नर, काहे कौं इतरात ?
|| सूरदास भगवंत-भजन बिनु, कहूँ नाहिँ सुख गात ॥ २२ ॥
॥३६५॥

* राग सारंग

† गरब गोबिंदहिँ भावत नाहीँ।
कैसी करी हिरनकस्यप सौं, प्रगट होइ छिन माहीँ !
जग जानै करतूति कंस की, बृष मारयौ बल-बाहीँ।
ब्रह्मा[1] इंद्रादिक पछिताने, गर्ब धारि मन माहीँ।
जौबन-रूप-राज-धन-धरती जानि[2] जलद की छाहीँ।
सूरदास हरि भजौ गर्ब तजि, बिमुख अगति[3] कौं जाहीँ ॥ २३ ॥
॥३६६॥

* राग कान्हरौ

बिषया[4] जात हरष्यौ गात।
ऐसे अंध, जानि निधि[5] लूटत, परतिय सँग लपटात।
बरजि रहे सब, कह्यौ न मानत, करि-करि जतन उड़ात।
परै अचानक त्यौं रस-लंपट, तनु तजि जमपुर जात।
यह तौ सुनी ब्यास के मुख तैं, परदारा दुखदात।
रुधिर-मेद, मल-मूत्र, कठिन कुच, उदर[6] गंध-गंधात।

|| इन दो चरणों के स्थान पर (वे, स, का, ना/इ, श्या) में ये दो चरण हैं—
"बालापन खेलत ही खोयौ तरुनापै अलसात।
सूरदास अवसर के बीते रहिहौ पुनि पछितात ॥"

* (ना) कान्हरा। (क) टोड़ी।

† यह पद (शा) में नहीं है।

(1) ब्रह्मादिक नारद —३। (2) बादर की सी—६, ८। (3) नर्क—३।

* (ना) देवगंधार।

(4) मखियाँ मरि गईं ध्यौं खात १६। मखिया जात मरष्यौ (ध्यौं) खात—१८। (5) तैं मूरख —१, २, ३, १६। मूरख जो—६, ८। (6) तन दुर्गंध गँधात—२, ३, १८।
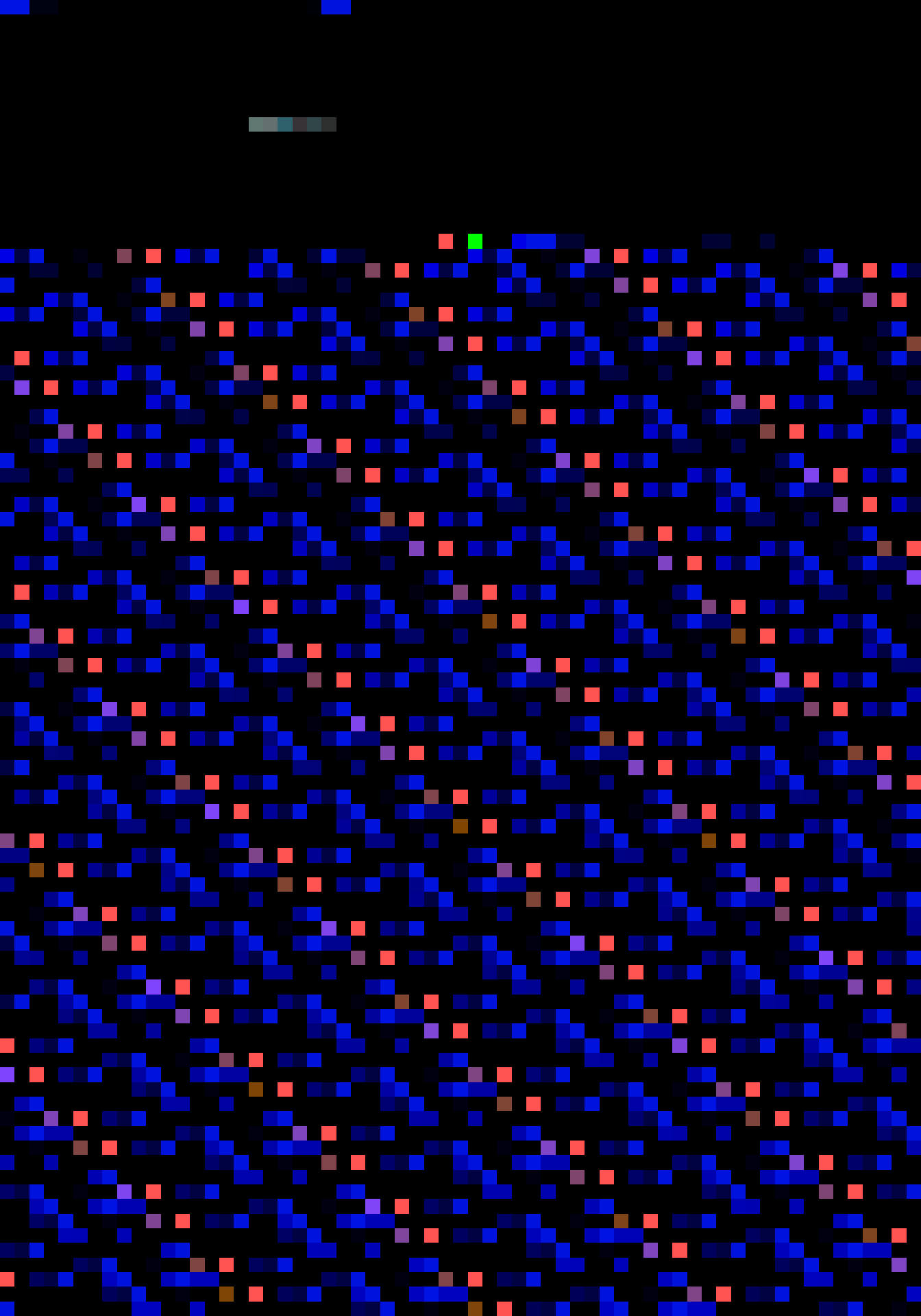
तन-धन-जोबन ता हित खोवत, नरक की पाछैं बात ।
जो[1] नर भलौ चहत तौ सो तजि, सूर स्याम[2] गुन गात ॥ २४

॥२६७

न ※ र

† जौ लौं सत-सरूप नहिं सूझत ।
तौ लौं मृग[3]मद नाभि बिसारे, फिरत सकल बन बूझत ।
अपनौ[4] मुख मसि-मलिन मंदमति, देखत दर्पन माहीं ।
ता कालिमा मेटिबे कारन, पचत पखारत छाहीं ।
तेल-तूल-पावक-पुट भरि[5] धरि, बनै न बिना प्रकासत ।
कहत बनाइ दीप की बतियाँ, कैसैं धौं[6] तम नासत !
सूरदास यह[7] मति आए बिन, सब दिन गए अलेखे ।
कहा जानै दिनकर की महिमा, अंध नैन बिन देखे ! ॥ २५ ॥

॥२६८॥

❀

अपुनपौ आपुन[8] ही बिसर्‍यौ ।
जैसैं स्वान काँच-मंदिर मैं, भ्रमि-भ्रमि भूकि मर्‍यौ ।

जो प्रभु चाहत है सो तौ
(२) प्रभू—१ । प्रगट—३ ।
(ना) सारंग ।
यह पद (शा) में नहीं है ।
मनमनि कंठ...—२,३ ।

(४) अपनौ ही मुख मलिन—
१, ३, १३ । (५) धरि—२, ३ ।
(६) ही—२, ३ । कै—१३ । (७)
जब यह मति आवै वै दिन गए
अलेखे—२, ३, ८ ।

※ (ना) धना
(८) आपहि मैं—
ते बिगर्‍यौ—८ ।

॥ ज्यौं[1] सौरस मृग-नाभि बसत है, द्रुम-तृन सूँघि[2] फिरयौ ।
॥ ज्यौं सपने मैं रंक भूप भयौ, तसकर अरि पकरयौ ।
ज्यौं केहरि प्रतिबिंब देखि कै, आपुन कूप परयौ ।
जैसैं गज लखि फटिकसिला मैं, दसननि जाइ अरयौ ।
मर्कट मूँठि छाँड़ि नहिं दीनी, घर-घर-द्वार फिरयौ ।
सूरदास नलिनी कौ सुवटा[3], कहि कौनैं पकरयौ[4] ॥ २६ ॥
॥३६६॥

रूप-वर्णन * राग

नैननि निरखि स्याम-स्वरूप ।
रह्यौ घट-घट[5] व्यापि सोई, जोति-रूप अनूप ।
चरन सप्त पताल जाके, सीस है आकास ।
सूर-चंद्र-नछत्र-पावक, सर्ब तासु प्रकास ॥२७॥
॥३७०॥

. * राग

† हरि जू की आरती बनी ।
अति बिचित्र रचना रचि राखी, परति न गिरा गनी ।
कच्छप[6] अध आसन अनूप अति, डाँड़ी सहस[7]फनी ।
मही सराव, सप्त सागर घृत, बाती सैल घनी ।

चरण (ना, स) में
।
ारि—१, ११। हरि प्रभु
हैं बसतु है (है प्रभु
ं बसत हैं) द्रुम तृन

सोधि—६, ८। (२) सोधि
सरयौ ११। (३) सुवना—२,
३, ८। (४) जकरयौ—१।
* (ना) सोरठ।
(५) घन—११।

* (ना) गौरी।
धनाश्री। (कां) सारं
† यह पद (शा) में
(६) कच्छवादि—२
शेष फनी—१, २, ३, ८, १

उड़त[1] फूल उड़गन नभ अंतर, अंजन घटा घनी।
नारदादि सनकादि प्रजापति, सुर-नर-असुर-अनी।
काल-कर्म-गुन-ओर-अंत नहिँ, प्रभु इच्छा रचनी।
यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी।
सूरदास सब प्रगट[2] ध्यान मैं अति बिचित्र सजनी ॥२८॥
॥२७१॥

* राग

श्री सुक के सुनि बचन, नृप, लाग्यौ करन बिचार।
झूठे नाते जगत के, सुत-कलत्र-परिवार।
चलत न कोऊ सँग चलै, मोरि रहै मुख नारि।
आवत गाढ़ैं काम हरि, देख्यौ सूर बिचारि ॥२९॥
॥२७२॥

* राग

† हरि बिनु कोऊ काम न आयौ।
इहिँ माया झूठी प्रपंच लगि, रतन सौ जनम गँवायौ।

उड़ि पतँग परत ...बर—२। उड़त ...र तारे—६, ८। ... का, ना, काँ,श्या) के पश्चात् यह एक ...तर से अधिक है— ...चत नाना बिधि गति अपनी अपनी।

(२) प्रकृति धातु मय—१, १६।

* (ना) गौरी। (का ना, रा) सारंग। (काँ) आसावरी

* (ना) धनाश्री।

† इस पद के पाठ तथा चरणों की संख्या में प्रतियों में अंतर है। इ... में विशेषतः (वे) त... का अनुसरण किया ... सामान्य पाठांतर अन्य ... भी संकलित कर दिए

तामैं[1] तैं ततछनहीं काढ्यौ, पल भर[2] रहन न पायौ
हौं तव[3] संग जरौंगी[4], यौं कहि, तिया धूति धन खायौ।
|| चलत रही चित चोरि, मोरि मुख, एक[5] न पग पहुँचायौ।
बोलि बोलि सुत-स्वजन-मित्रजन, लीन्यौ सुजस सुहायौ।
¶ पर्‌यौ जु काज अंत की बिरियाँ; तिनहुँ[6] न आनि छुड़ायौ।
¶ आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड़ लड़ायौ।
¶ तोरि लयौ कटिहू कौ डोरा, तापर बदन जरायौ।
¶ पतित-उधारन, गनिका-तारन, सो मैं सठ बिसरायौ।
लियौ न नाम कबहुँ धोखैं हूँ, सूरदास पछितायौ ॥२०॥
॥३७२॥

* राग दे

सकल तजि, भजि मन चरन मुरारि।
स्रुति, सुम्रिति[7], मुनि जन सब भाषत, मैं हूँ कहत पुकारि।
जैसैं[8] सुपनैं सोइ देखियत, तैसैं यह संसार।
जात बिलै ह्वै छिनक मात्र मैं, उघरत नैन-किवार।

ड़े चले पछिताइ बहुत
त्रास दिखायौ—८।
।
रण (का) में
सँग चलौं तिया

कहि धूति धूति धन खायौ—२।
तेरे सँग जरिहौं यह कहि—१६।
(४) चलौंगी —२, ३, ८। (५)
पग एकौ हूँ न पठायौ—३।
¶ ये चरण (रा) में
नहीं हैं।

(६) केहु न आनि छुड़ा
* (ना) देव साख
(७) स्मृति अर
(८) जैसो सुपनो-
१६। जैसे सपन रैन
तैसो...—८।

बारंबार[1] कहत मैं तोसौं, जनम-जुआ जनि हारि ।
पाछैं भई सु भई सूर जन, अजहूँ समुझि[2] सँभारि ॥
॥३१

*

† अजहूँ सावधान किन होहि ।
माया विषम भुजंगिनि कौ विष, उतर्‍यौ नाहिँन तोहि ।
कृष्न सुमंत्र जियावन[3] मूरी, जिन जन[4] मरत जिवायौ ।
बारंबार निकट स्रवननि ह्वै, गुरु-गारुड़ी सुनायौ ।
|| बहुतक[5] जीव देह अभिमानी, देखत ही इन खायौ ।
||कोउ-कोउ उबर्‍यौ साधु-संग, जिन स्याम[6] सजीवनि पायौ ।
जाकौ[7] मोह-मैर अति छूटै, सुजस गीत के गाएँ ।
सूर मिटै[8] अज्ञान-मूरछा, ज्ञान-सुमेषज[9] खाएँ ॥३२॥
॥२७५॥

शुकदेव के प्रति परीक्षित-वचन

*

नमो[10] नमो हे कृपानिधान ।
चितवत कृपा-कटाच्छ तुम्हारैं, मिटि[11] गयौ तम-अज्ञान

---

(1) बारै बार—१। (2) ... —२, ३, ६ ८, १६, १८, ...

... (ना) ईमन। (का, ना/२, क) ... (कां) सारंग।

... यह पद (शा) मे नहीं है।

(3) सुधावन—२। (4) जग ... २।

|| ये चरण (ना, स, क, रा) में नहीं हैं।

(5) भौतिक देह जीय अभिमानी देखत ही दुख लायौ—१, १३। यह छनभंग देह अभिमानी देखत ही दुख पायो—६, ८। (6) राम—१, १६। (7) जाग्यौ—१, ३। (8) गई—२, ८, १८।

(9) मूरि के—१, ...

* (ना) काफी ... कां) केदार। (रा...

(10) नमो न मे... —१, ६, ८, १६ ... कृपानिधान—२ ... कृपानिधान (कि...) १८। (11) छूटि...

मोह-निसा कौ लेस रह्यौ नहिं, भयौ बिबेक-बिहान ।
आतम-रूप सकल घट दरस्यौ, उदय कियौ[1] रवि-ज्ञान ।
मैं-मेरो अब रही न मेरैं, छुट्यौ देह-अभिमान ।
भावै परौ[2] आजुही यह तन, भावै रहौ अमान ।
मेरैं जिय अब यहै लालसा, लीला श्री भगवान ।
स्रवन करौं निसि-बासर हित सौं, सूर तुम्हारी आन ॥३३॥
॥३७६॥

शुकदेव-वचन * राग सारंग

कह्यौ सुक, सुनौ परीच्छित राव ।
ब्रह्म अगोचर मन-बानी तैं, अगम, अनंत-प्रभाव ।
भक्तनि हित अवतार धारि जो करी लीला संसार ।
कहौं ताहि जो सुनै[3] चित्त दै, सूर तरै सो पार ॥३४॥
॥३७७॥

देव-कथित नारद-ब्रह्मा-संवाद * राग बिलावल

† नारद ब्रह्मा कौं सिर नाइ । कह्यौ, सुनौ त्रिभुवन-पति[4]-राइ ।
सकल सृष्टि यह तुमतैं होइ । तुम सम[5] द्वितिया और न कोइ ।

---

(१) भयौ अब ज्ञान—२ । करै—३

* (कां) विहागरो ।

(३) सुनै चित्त दै सूर तरै भव—६, ८ ।

* (ना) विभास । (कां) सारंग ।

† (ना, स, का, ३) में इस पद के आदि में ये दो अतिरिक्त चरण मिलते हैं—

सुक कह्यौ हरि लीला ज्यौं ब्यास । कही सु कहौं सुनौ अब तास ॥

(४) के—८ । (५) ते दूसर—८ ।

धरत कौन कौ ध्यान ? यह तुम मोसौं करौ[2]
करता-हरता भगवान । सदा करत मैं तिनकौ
सौं कह्यौ विधि जिहिँ[3] भाइ । सूर कह्यौ त्यौं ही सु

चतुर्विंशति अवतार-वर्णन

रद के प्रति

जो हरि करै सो होइ, करता राम हरी ।
ज्यौं दरपन-प्रतिबिंब, त्यौं सब सृष्टि करी ।
आदि निरंजन, निराकार, कोउ हुतौ न दूसर ।
रचौं सृष्टि-बिस्तार, भई इच्छा इक औसर ।
त्रिगुन प्रकृति तैं महत्तत्व, महत्तत्व तैं अहँकार ।
मन-इंद्री-सब्दादि-पँच, तातैं कियौ बिस्तार
सब्दादिक तैं पंचभूत सुंदर प्रगटाए ।
पुनि सबकौ रचि अंड, आपु मैं आपु समाए ।
तीनि लोक निज देह मैं, राखे करि बिस्तार ।
आदि पुरुष सोई भयौ, जो प्रभु अगम अपार ।
नाभि-कमल तैं आदि पुरुष मोकौं प्रगटायौ ।
खोजत जुग गए बीति, नाल कौ अंत न पायौ ।
तिन[4] मोकौं आज्ञा करी, रचि सब सृष्टि बनाइ[5] ।

, १६ । (२) कहौ) या—१, २, ८ ।

* (ना) परज । (र्का) आसावरी ।

(४) त —१, १६

थावर-जंगम, सुर-असुर, रचे सबै मैं आइ
मच्छ, कच्छ, बाराह, बहुरि नरसिंह रूप धरि
बामन, बहुरौ परसुराम, पुनि राम रूप करि
बासुदेव सोई भयौ, बुद्ध[1] भयौ पुनि सोइ
सोई कल्की होइहै, और न द्वितिया कोइ
ये दस हरि-अवतार, कहे पुनि और चतुरदस
भक्तबछल भगवान, धरे तन भक्तनि कैं बस
अज, अबिनासी, अमर प्रभु, जनमै-मरै न सोइ
नटवत[2] करत कला सकल, बूझै बिरला कोइ
सनकादिक, पुनि ब्यास, बहुरि भए हंस रूप हरि
पुनि नारायन, ऋषभदेव, नारद, धनवंतरि
दत्तात्रेयऽरु[3] पृथु बहुरि, जज्ञपुरुष-बपु धार
कपिल, मनू[4], हयग्रीव पुनि, कीन्हौ ध्रुव अवतार
भूमिरेनु कोउ गनै, नछत्रनि गनि समुझावै
कह्यौ चहै अवतार, अंत सोऊ नहिं पावै
सूर कहौ क्यौं कहि सकै, जन्म-कर्म-अवतार
कहे कछुक गुरु-कृपा तैं श्रीभागवतऽनुसार

—१६। (२) नटवर
गारद दत्तात्रेय हरि
। (४) मोहिनी

पृथु हयग्रीव सु—१। मोहिनी
हयग्रीव है—१६।

की उत्पत्ति * राग बिल

ब्रह्मा यौं[1] नारद सौं कह्यौ। जब मैं नाभि-कमल मैं रह्यौ।
खोजत नाल कितौ जुग गयौ। तौहू मैं कछु मरम न लयौ।
भई अकास बानी तिहिँ बार। तू ये चारि श्लोक बिचार।
इन्हैं बिचारत ह्वैहै ज्ञान। ऐसी भाँति कह्यौ भगवान।
ब्रह्मा सो नारद सौं कहे। ब्यास सोइ नारद सौं लहे।
ब्यास कह्यौ मोसौं बिस्तार। भयौ भागवत या परकार।
सोई अब मैं तोसौं भाषौं। तेरे हृदै न संसय राखौं।
मूल भागवत के ये चारि। सूर भली बिधि इन्हैं बिचारि ॥३

॥३

श्लोक श्रीमुख-वाक्य * राग ब

पहिलै हौं ही हो तब[2] एक।
अमल, अकल, अज, भेद-बिवर्जित, सुनि[3] बिधि बिमल बिबेक।
सो हौं एक अनेक भाँति करि सोभित नाना भेष।
ता पाछैं इन गुननि गए तैं, हौं रहिहौं[3] अवसेष।
सत मिथ्या, मिथ्या सत लागत, मम माया सो जानि।
रबि[4], ससि, राहु सँजोग बिना ज्यौं, लीजतु है मन मानि।
ज्यौं गज फटिक मध्य न्यारौ बसि, पंच प्रपंच बिभूत।
ऐसैं मैं सबहिनि तैं न्यारो, मनिनि[6] ग्रथित ज्यौं सूत।

---

* (ना) बिभास। * (ना) भैरव। ३। (४) जु रहौं—२, ३
(१) पुनि—६, ८, १६। (२) बपु—२। (३) इहिँ—२। २, ३। (६) मनि ग्रंथित—

||ज्यौं जल मसक जीव-घट अंतर, मम माया इमि जानि।
||सोई जस सनकादिक गावत, नेति नेति कहि मानि।
प्रथम ज्ञान, विज्ञानक द्वितिय मत[1], तृतिय भक्ति कौ भाव।
सूरदास सोई समष्टि[2] करि, व्यष्टि दृष्टि मन लाव ॥३८॥
॥३८१॥

|| ये चरण (वे, ना, स, रा) में नहीं हैं।

(१) पद—१, १६। मत—८।

(२) सम सुचियत गुप्त दृष्टि मैं ल्याव—२। मधुर मिष्ट रस गुप्त दृष्ट मन लाव—६, ८।

तृतीय स्कंध

क-वचन ※ राग बिला.

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारविंद उर धरौ ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर[1] नाइ । राजा सौँ बोल्यौ[2] या भाइ ।
कहौँ हरि-कथा, सुनौ चित लाइ । सूर तरौ[3] हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥३८२॥

का पश्चात्ताप राग सोर

† हरि जु सौँ अब मैँ कहा कहौँ ?
प्रभु अंतरजामी सब जानत, हौँ सुनि सोचि रहौँ ।
आयसु दियौ, जाउ बदरीवन, कहँ सो कियौ चहौँ ।
तन-मन-बुधि जड़ देह दयानिधि, क्यौँ करि लै निबहौँ ?
अपनी करनी बिचारि गुसाईँ, काहे न सूल सहौँ ।
मैँ इहिँ ज्ञान ठगीँ ब्रजबनिता, दियौ सु क्यौँ न लहौँ ?
प्रगट पाप-संताप सूर अब, कापर हठै गहौँ ?
और इहाँउ बिवेक-अगिनि के बिरह-बिपाक दहौँ ॥२॥

॥३८३॥

(ना) बिभास ।
) चित लाइ—१ । ② बोले
८ । ③ दास—२, ३ ।

† यह पद केवल (वे, ना, काँ) में है । (ना) में यह इसी स्थान पर है किंतु (वे, काँ) में एकादश स्कंध में आता है । वत के अनुसार इसका यहीँ र आना उचित है ।

† तुम्हरी गति न कछु कहि जाइ।
दीनानाथ, कृपाल, परम सुजान जादौराइ।
कहत पठवन बदरिका मोहिँ, गूढ़ ज्ञान सिखाइ।
सकुचि साहस करत मन मैँ, चलत परत न पाइ।
पिनाकहु के दंड लौँ तन, लहत बल सतराइ।
कहा करौँ चित चरन अटक्यौ, सुधा-रस कैँ चाइ।
मेरी है इहिँ देह कौ हरि, कठिन सकल उपाइ।
सूर सुनत न गयौ तबहीँ खंड-खंड नसाइ॥३॥

॥३८४॥

दुर-संवाद

* राग

‡ जब हरि जू भए अंतर्धान। कहि ऊधव सौँ तत्त्वज्ञान।
कह्यौ मयत्रेय सौँ समुझाइ। यह तुम बिदुरहिँ कहियौ जाइ।
बदरिकासरम दोउ मिलि आइ[१]। तीरथ करत[२] दोउ[३] अलगाइ
ऊधव-बिदुर तहाँ मिलि गए। दोऊ कृष्न-प्रेम-बस[४] भए
ऊधव कह्यौ, हरि कह्यौ जो ज्ञान। कहिहैँ तुम्हैँ मयत्रेय आन
यह कहि ऊधव आगैँ चले। बिदुर मयत्रेय बहुरौ मिले

पद केवल (ना)

() सोरठि।
सूरदास मैत्रेय-बिदुर-
रिकाश्रम में कराते हैं।

परंतु भागवत में वह हरिद्वार में गंगा-तट पर हुआ है। कवि ने इस पद में बिदुर से उद्धव की भेंट भी इसी स्थान पर कराई है किंतु भागवत के अनुसार वह

यमुना-तट पर हुई थी

(१) आए—१,
कृत कीन्हीँ अपकाइ
गए अकुलाए—१,
रस छए—२, ३। २२

जो कछु हरि सौं सुन्यौ[1] सुज्ञान । कह्यौ मयत्रेय ताहि बखान ।
सोइ मोहिं दियौ व्यास सुनाइ । कहौं सो सूर सुनौ चित लाइ ॥४॥
॥३८५॥

जन्म

* राग बिलावल

बिदुर[2] सु धर्मराइ अवतार । ज्यौं भयौ, कहौं, सुनौ चितधार ।
मांडव्य ऋषि जब सूलो दयौ । तब सो काठ हरौ ह्वै गयौ ।
मांडव धर्मराज पै आयौ । क्रोधवंत यह बचन सुनायौ ।
कौन पाप मैं ऐसौ कियौ । जातैं मोकौं सूली दियौ ।
धर्मराज कह्यौ, सुनु ऋषिराइ । छमा करौ तौ देउँ बताइ ।
बाल-अवस्था मैं तुम धाइ । उड़ति भँभीरी पकरी जाइ ।
ताहि सूल पर सूली दयौ । ताकौ बदलौ तुमसौं लयौ ।
ऋषि कह्यौ, बाल-दसा अज्ञान । भयौ पाप मोतैं बिनु जान ।
बालापन कौ लगत न पाप । तातैं देउँ तुम्हैं मैं साप ।
दासी-पुत्र होहु तुम जाइ । सूर बिदुर भयौ सो इहिं[3] भाइ ॥ ५ ॥
॥३८६॥

देक-अवतार

* राग बिलावल

ब्रह्मा ब्रह्मरूप उर धारि । मन सौं प्रगट किए सुत चारि ।
सनक, सनंदन, सनतकुमार । बहुरि सनातन नाम ये चार ।
ये चारौं जब ब्रह्मा किए । हरि कौ ध्यान धर्‌यौ तिन हिये ।
ब्रह्मा कह्यौ, सृष्टि विस्तारौ । उन यह बचन हृदय नहिँ धारौ ।

सुनियो ज्ञान—१,२,१६ । ② है—८ । ③ या—२, ८, १६ । * (ना) विभास ।
* (ना) विभास ।

कह्यौ, यहै हम तुमसौं कहैं । पाँच बरष के नितहीं रहैं ।
ब्रह्मा सौं तिन यह वर पाइ । हरि-चरननि चित राख्यौ लाइ ।
सुकदेव कह्यौ जाहि[1] परकार । सूर कह्यौ[2] ताही अनुसार ॥ ६ ।

॥३८७॥

रुद्र-उत्पत्ति

* राग बिलावर

सनकादिकनि कह्यौ नहिं मान्यौ । ब्रह्मा क्रोध बहुत मन आन्यौ ।
तब इक पुरुष भौंह तैं भयौ । होत समय तिन रोदन ठयौ ।
ताकौं नाम रुद्र बिधि राख्यौ । तासौं सृष्टि करन कौं भाख्यौ ।
तिन बहु सृष्टि तामसी करी । सो तामस करि मन अनुसरी ।
ब्रह्मा मन सो भली न भाई । सूर सृष्टि तब और उपाई ॥ ७ ॥

॥३८८॥

सप्तऋषि, दक्ष प्रजापति तथा स्वायंभुव मनु की उत्पत्ति

※ राग बिलावल

ब्रह्मा सुमिरन करि हरि-नाम । प्रगटे[3] रिषय सप्त अभिराम ।
भृगु, मरीचि, अंगिरा, बसिष्ठ । अत्रि[4], पुलह, पुलस्त्य अति सिष्ठ ।
॥ पुनि दच्छादि प्रजापति भए । ॥स्वायंभुव[5] सो आदि मनु जए ।
इनतैं प्रगटो सृष्टि अपार । सूर कहाँ लौं करै बिस्तार ॥ ८ ॥

॥३८९॥

---

(१) जैसे—१, २, १८, १९ । तेही—८ । (२) कहै—१, १९ ।

* (ना) भैरवी ।

※ (ना) भैरवी ।

(३) प्रगट किए रिषि—१, २, १८, १९ । (४) अत्रि पुलह पुनि भयौ पुलस्त्य—१, २, ३, ६, ८, १९ ।

॥ (का, ना) में ये दो चरण नहीं हैं । उनके स्थान पर ये चार चरण हैं ।
कश्यप गौतम विश्वामित्र ।
भरद्वाज वशिष्ठ पुनि अत्र ।
सप्तम रिषि जमदग्नि भए ।
स्य(शिव) शंभू औ चारि मुनि भ

(५) स्वयंभु आदि चा[र] मनु जए—१, ३, १९ । शंभु आ[र] चारि मुनि भए—२, १६ । स्यं (शिव) शंभू और चार मु[नि] भए—६, ८ ।

,र उत्पत्ति * राग बिलावल

ब्रह्मा रिषि मरीचि निमायौ[1] । रिषि मरीचि कस्यप उपजायौ ।
सुर अरु असुर कस्यप के पुत्र । भ्रात बिमात[2] आपु मैं सत्रु ।
सुर हरि-भक्त, असुर हरि-द्रोही । सुर अति छमी, असुर अति कोही ।
उनमैं नित उठि होइ लराई । करैं सुरनि की कृष्न सहाई ।
तिन हित जो-जो किये अवतार । कहौं सूर भागवतऽनुसार ॥ ६ ॥

॥३६०॥

अवतार ⊛ राग बिलावल

ब्रह्मा सौं स्वयंभु मनु भयौ । तासौं सृष्टि करन कौं कह्यौ ।
तिन ब्रह्मा सौं कह्यो सिर नाइ । सृष्टि करौं सो रहै किहिं भाइ ?
ब्रह्मा हरि-पद ध्यान लगायौ । तब[3] हरि बपु-बराह धरि आयौ ।
ह्वै बराह पृथ्वी ज्यौं ल्यायौ । सूरदास त्यौंही सुक[4] गायौ ॥१०॥

॥३६१॥

नय की कथा × राग धनाश्री

हरि-गुन-कथा अपार, पार नहिं पाइयै ।
हरि सुमिरत सुख होइ, सु हरि-गुन गाइयै ।
ब्रह्म-पुत्र सनकादि, गए बैकुंठ एक दिन ।
द्वारपाल जय-विजय हुते, बरज्यौ तिनकौं तिन ।

ना) भैरवी ।
बिरचायौ—११ । ②
६, ८ ।
ना) भैरवी ।

③ कीँ कत हरि बपु-बराह धरि आयौ—३, १८ । ह्वै बराह बिधि नाक तैं आयौ—१६ । ④ गुन—२ ।

× (ना) खंमाइच । (का) बिलावल ।

साप दियौ तब क्रोध ह्वै, असुर होहु संसार।
हरि-दरसन कौं जात क्यों रोक्यो बिना बिचार?
हरि तिनसौं कह्यौ आइ, भली सिच्छा तुम दीनी।
बरज्यौ आवत तुम्हैं, असुर-बुधि इन यह कीनी।
तिन्हैं कह्यौ, संसार मैं असुर होहु अब जाइ।
तीजे[1] जनम बिरोध करि, मोकौं मिलिहौ आइ।
कस्यप की दिति नारि, गर्भ ताकैं दोउ आए।
तिनकैं तेज-प्रताप, देवतनि बहु दुख पाए।
गर्भ माहिं सत वर्ष रहि, प्रगट भए पुनि आइ।
तिन दोउनि कौं देखि कै, सुर सब गए डराइ।
हिरन्याच्छ इक भयौ, हिरनकस्यप भयौ दूजौ।
तिन के बल कौं इंद्र, बरुन, कोऊ नहिं पूजौ।
हिरन्याच्छ तब पृथी कौं, लै राख्यौ पाताल।
ब्रह्मा बिनती करि कह्यौ, दीनबंधु गोपाल!
तुम बिनु द्वितिया और कौन, जो असुर सँहारै।
तुम बिनु करुनासिंधु, और को पृथी उधारै?
तब हरि धरि बाराह-बपु, ल्याए पृथी उठाइ।
हिरन्याच्छ लै कर गदा, तुरतहिं पहुँच्यौ जाइ।
असुर क्रोध ह्वै कह्यौ, बहुत तुम असुर सँहारे।
अब लैहौं वह दाउँ, छाँड़िहौं नहिं बिन मारे।

---

[1] जनम करिकै

यह कहिकै मारी गदा, हरि जू ताहि सम्हारि ।
गदा-जुद्ध तासौं कियौ, असुर न मानै हारि ।
तब ब्रह्मा करि बिनय कह्यौ, हरि, याहि[1] सँहारौ ।
तुम तौ लीला करत, सुरनि मन परयौ खँभारौ[2] ।
मारयौ ताहि प्रचारि[3] हरि, सुर-मन भयौ हुलास ।
सूरदास के प्रभु बहुरि, गए बैकुंठ-निवास ॥११॥

॥३९२॥

राग बिलावल

† स्वायंभुव मनु[4] सुत भए दोइ । तनया तीनि, सुनौ अब सोइ ।
दच्छ प्रजापति कौं इक दई । इक रुचि, इक कर्दम-तिय भई ।
कर्दम कैं भयौ कपिलऽवतार । सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥१२॥

॥३९३॥

पिलदेव-अवतार तथा कर्दम का शरीर-त्याग　　* राग बिलावल

हरि हरि हरि सुमिरन नित करौ । हरि कौ ध्यान सदा हिय धरौ ।
ज्यौं भयौ कपिलदेव-अवतार । कहौं सो कथा, सुनौ चित धार ।
कर्दम पुत्र-हेत तप कियौ । तासु नारिहूँ यह व्रत लियौ ।
हरि-सौ पुत्र हमारैं होइ । और जगत-सुख चहौं[5] न कोइ ।

---

(१) ताहि—१, २, ३, ६, १६ । (२) धकारौ—१ । ...हारौ—२ । दुखारौ—६, ८ । (३) बिचारि—१ । पछारि—६, ८, १६ ।

† यह पद (ल, शा, का, ना, कां, रा) में है । (स) में यह संख्या १३ के पद में सम्मिलित कर दिया गया है ।

(४) सांभू मनु के—६, ८ ।
* (ना) विभास ।
(५) सुखहू दुखि (होइ सोइ—१, २, ३, १८, १६ ।

नारायन तिनकौं बर दियौ। मोसौं और न कोऊ बियौ।
मैं लैहौं तुम गृह अवतार। तप तजि, करौ भोग संसार।
दुहुँ तब तीरथ माहिँ नहाए। सुंदर रूप दुहूँ जन पाए।
भोग-समग्री जुरो अपार। बिचरन लागे सुख-संसार।
तिनके कपिलदेव सुत भए। परम सुभाग्य मानि तिन लए।
कर्दम कह्यौ तिन्हैं सिर नाइ। आज्ञा होइ, करौं तप जाइ।
अभिद अछेद रूप मम जान। जो सब घट है एक समान।
मिथ्या तनु कौ मोह बिसार। जाहु रहौ भावै गृह-बार।
करत इंद्रियनि चेतन जोइ। मम स्वरूप जानौ तुम सोइ।
जब मम रूप देह तजि जाइ। तब सब इंद्री-सक्ति नसाइ।
ताकौं जानि मग्न ह्वै रहै। देहऽभिमान ताहि नहिं दहै।
तन-अभिमान जासु नसि जाइ। सो नर रहै सदा सुख पाइ।
और जो ऐसी जानै नाहिँ। रहै सो सदा काल-भय माहिँ।
यह सुनि कर्दम बनहिँ सिधाए। उहाँ जाइ हरि-पद चित लाए।
हरि-स्वरूप सब घट यौं जान्यौ। ऊख माहिँ ज्यौं रस है सान्यौ।
खोई[1] तन, रस आतम-सार। ऐसी बिधि जान्यौ निरधार।
यौं लखि, गहि हरि-पद-अनुराग। मिथ्या तनु कौ कीन्यौ त्याग।
तनहिँ त्यागि कै हरि-पद पायौ। नृप सुनि हरि-स्वरूप उर ध्यायौ।

देवहूति-कपिल-संवाद

इहाँ कपिल सौं माता कह्यौ। प्रभु मेरौ अज्ञान तुम दहौ।
आतमज्ञान देहु समुझाइ। जातैं जनम-मरन-दुख जाइ।

---

(१) जोयो—१,१६। छोई—२।
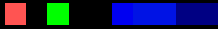
कह्यौ कपिल, कहौं तुमसौं ज्ञान । मुक्त होइ नर ताकौं जान
मुक्त[1] नरनि के लच्छन कहौं । तेरे सब संदेहै दहौं
मम सरूप जो सब घट जान । मगन रहै तजि[2] उद्यम आन
अरु सुख-दुख कछु मन नहिँ ल्यावै । माता, सो नर मुक्त कहावै
और जो मेरौ रूप न जानै । कुटुँब-हेत नित उद्यम ठानै
जाकौ इहिँ विधि जन्म सिराइ । सो नर मरिकै नरकहिँ जाइ
ज्ञानी-संगति उपजै ज्ञान । अज्ञानी-सँग होइ अज्ञान
तातैँ साधु-संग नित करना । जातैँ मिटै जन्म अरु मरना
थावर-जंगम मैँ मोहिँ जानै । दयासील, सब सौं हित मानै
सत-सँतोष दृढ़ करै समाधि । माता ताकौं कहियै साध
काम, क्रोध, लोभहिँ परिहरै । द्वंद-रहित, उद्यम नहिँ[3] करै
ऐसे लच्छन हैँ जिन माहिँ । माता, तिनसौं साधु कहाहिँ
जाकौं काम-क्रोध नित व्यापै । अरु पुनि लोभ सदा संतापै
ताहि असाधु कहत सब[3] लोइ । साधु-बेष धरि साधु न होइ
संत सदा हरि के गुन गावैँ । सुनि-सुनि लोग भक्ति कौं पावैँ
भक्ति पाइ पावैँ हरि-लोक । तिन्हैँ न व्यापै हर्ष ऽरु सोक

वैषयक प्रश्नोत्तर

देवहूति कह, भक्ति सो कहियै । जातैँ हरि-पुर बासा लहियै
अरु सो भक्ति कीजै किहिँ भाइ । सोऊ मो कहँ देहु बताइ

मुक्ति बिबिध—१। मुक्ति उद्दिम आनि (ठानि)—१८, १६। कवि—१, ६, ८।
, ६, ८, १८। ② निज ③ बहु—२ नित—१६। ④

माता, भक्ति चारि परकार । सत, रज, तम गुन, सुद्धा[1] सार ।
भक्ति एक, पुनि बहु बिधि होइ । ज्यौं जल रँग-मिलि रंग सु होइ ।
भक्ति सात्विकी, चाहत मुक्ति । रजोगुनी, धन-कुटुँब ऽनुरक्ति ।
तमोगुनी, चाहै या भाइ । मम बैरी क्यौं हूँ मरि जाइ ।
सुद्धा भक्ति मोहिँ कौं चाहै । मुक्तिहुँ कौं सो नहिँ अवगाहै ।
मन-क्रम-बच मम सेवा करै । मन तैँ सब आसा परिहरै ।
ऐसौ भक्त सदा मोहिँ प्यारौ । इक छिन तातैँ रहौं न न्यारौ ।
ताकौं जो हित, मम हित सोइ । ता सम मेरैँ और न कोइ ।
त्रिविध भक्त मेरे हैँ जोइ । जो माँगै तिहिँ देउँ मैं सोइ ।
भक्त अनन्य कछू नहिँ माँगै । तातैँ मोहिँ सकुच अति लागै
ऐसौ भक्त सु ज्ञानी होइ । ताकै सत्रु-मित्र नहिँ कोइ ।
हरि-माया सब जग संतापै । ताकौं माया-मोह न ब्यापै ।
कपिल, कहौ हरि कौ निज रूप । अरु पुनि माया कौन स्वरूप ?
देवहूति जब या बिधि कह्यौ । कपिलदेव सुनि अति सुख लह्यौ ।
कह्यौ, हरि कैँ भय रवि-ससि फिरै[2] । बायु बेग अतिसै[3] नहिँ करै ।
अगिनि दहै[4] जाकैँ भय नाहिँ[5] । सो हरि[6] माया जा बस माहिँ ।
माया कौं त्रिगुनात्मक जानौ । सत-रज-तम ताके गुन मानौ ।
तिन प्रथमहिँ महतत्त्व उपायौ । तातै अहंकार प्रगटायौ ।

सुधा रसार—२ । सुधा
६, ८ । तिनको सार—
) डरै—१ । (३) संसै—

६, ८ । (४) रहै—१, २, ३, ६,
८, १६ । (५) माहि —१, २, ३,

६, ८ । (६) माया ह
नाहिँ —६, ८ ।

अहंकार कियौ तीनि प्रकार । सत[1] तैं मन सुर सात ऽरु चार
रजगुन तैं इंद्रिय बिस्तारी । तमगुन तैं तन्मात्रा[2] सारी
तिनतैं पंचतत्व उपजायौ । इन सबकौ इक अंड बनायौ
अंड सो जड़ चेतन नहिँ होइ । तब हरि-पद-छाया मन पोइ
ऐसी बिधि बिनती अनुसारी । महाराज बिन सक्ति तुम्हारी
यह अंडा चेतन नहिँ होइ । करहु कृपा सो चेतन होइ
तामैं सक्ति आपनी धरी । चच्छुआदिक इंद्री बिस्तरी
चौदह लोक भए ता माहिँ । ज्ञानी ताहि बिराट कहाहिँ
आदि पुरुष चेतन कौं कहत । तीनौं[3] गुन जामैं नहिँ रहत
जड़ स्वरूप सब माया जानौ । ऐसौ ज्ञान हृदै मैं आनौ
जब लगि है जिय मैं अज्ञान । चेतन कौं सो सकै न जान
सुत-कलत्र कौं अपनौ जानै । अरु तिनसौं ममत्व बहु ठानै
ज्यौं कोउ दुख-सुख सपनैं जोइ । सत्य मानि लै ताकौं सोइ
जब जागै तब सत्य न मानै । ज्ञान भएँ त्यौंही जग जानै
चेतन घट-घट है या भाइ । ज्यौं घट-घट रवि-प्रभा लखाइ
घट उपजै, बहुरौ नसि जाइ । रवि नित रहै एकहीं भाइ
जड़ तन कौं है जनम ऽरु मरना । चेतन पुरुष अमर-अज बरना
ताकौं ऐसौ जानै जोइ । ताकौ तिनसौं मोह न होइ
जब लौं ऐसौ ज्ञान न होइ । बरन-धरम कौं तजै न सोइ

मन ते रिषि मन—१ । तैं सुर —२ । (२) पुनि मात्रा—६, ८ । (३) जो है तिहूँ गुनन तैं रहित—१, १६ ।

संतनि की संगति नित करै । पापकर्म मन तैं परिहरै ।
अरु भोजन सो इहिं बिधि करै। आधौ उदर अन्न सौं भरै ।
आधे मैं जल-बायु समावै । तब तिहिं आलस कबहुँ न आवै ।
अरु जो परालब्ध सौं आवै । ताही कौं सुख सौं बरतावै ।
बहुतै कौ उद्यम परिहरै । निर्भय ठौर बसेरौ करै ।
तीरथ हू मैं जौ भय होइ । ताहू ठाउँ परिहरै सोइ ।
बहुरौ धरै हृदय महँ ध्यान । रूप चतुरभुज स्याम सुजान ।
प्रथमैं चरन-कमल कौं ध्यावै। तासु महातम मन मैं ल्यावै ।
गंगा प्रगट[1] इनहिं तैं भई[2] । सिव सिवता इनहीं तैं लई[3] ।
लछमी इनकौं सदा पलोवै । बारंबार प्रीति करि जोवै ।
जंघनि कौं कदली सम जानै । अथवा कनकखंभ सम मानै ।
उर अरु ग्रीव बहुरि हिय धारै । तापर कौस्तुभ मनिहिं बिचारै ।
तहँ[4] भृगु-लता, लच्छमी जान । नाभि-कमल चित धारै ध्यान ।
मुख मृदु-हास देखि सुख पावै । तासौं प्रेम-सहित मन लावै ।
नैन कमल-दल से अनियारे । दरसत तिन्हैं कटैं दुख भारे ।
नासा-कीर, परम अति सुंदर । दरसत ताहि मिटै दुख-द्वंदर ।
स्रौन दोउ कूप समान जानै । मुख कौ ध्यान याहि बिधि ठानै ।
केसर-तिलक-रेख अति सोहै । ताकी पटतर कौं जग को है ?
मृगमद-बिंदा तामैं राजै । निरखत ताहि काम सत लाजै ।

परसि उनहिं कौं—१, ८। ③ लहै—२। लही—६, हिय भृगुलता औ ल
② बहै—२। बही—६, ८। ④ भृगुलच्छा लछमी तहँ—१। भृगु की लता श्री तहाँ

क्रम-क्रम करि सबकी गति होइ मेरौ भक्त नसै नहिँ कोइ

मुख की निंदा

हरि तैं बिमुख होइ नर जोइ । मरिकै नरक परत है सोइ
तहाँ जातना बहु बिधि पावै । बहुरौ चौरासी मैं आवै
चौरासी भ्रमि, नर-तन पावै । पुरुष-वीर्य सौं तिय उपजावै
मिलि रज-वीर्य बेर-सम होइ । द्वितिय मास सिर धारै सोइ
तीजे मास हस्त-पग होहिं । चौथ मास कर-अँगुरी सोहि
प्रान-वायु पुनि आइ समावै । ताकौं इत-उत पवन चलावै
पंचम मास हाड़ बल पावै । छठैं मास इंद्री प्रगटावै
सप्तम चेतनता लहै सोइ । अष्टम मास सँपूरन होइ
नीचैं सिर अरु ऊँचैं पाव । जठर अग्नि कौ व्यापै ताव
कष्ट बहुत सो पावै उहाँ । पूर्वजन्म-सुधि आवै तहाँ
नवम मास पुनि बिनती करै । महाराज, मम दुख यह टरै
ह्याँ तैं जौ मैं बाहर परौं । अहनिसि भक्ति तुम्हारी करौं
अब मोपै प्रभु, कृपा करीजै । भक्ति अनन्य आपुनी दीजै
अरु यह ज्ञान न चित तैं टरै । बार-बार यह बिनती करै
दसम मास पुनि बाहर आवै । तब यह ज्ञान सकल बिसरावै
बालापन दुख बहु बिधि पावै । जीभ बिना कहि कहा सुनावै
कबहूँ बिष्ठा मैं रहि जाइ । कबहूँ माखी लागैं आइ
कबहूँ जुवाँ देहिं दुख भारी । तिनकौं सो नहिँ सकै निवारी
पुनि जब षष्ठ बरष कौ होइ । इत उत खेल्यौ चाहै सोइ

माता-पिता निवारैं जबहीँ । मन मैं दुख पावै सो तबहीँ ।
माता-पिता पुत्र तिहिँ जानैं । बहुरू उनसौं नातौ मानै ।
वर्ष व्यतीत दसक जब होइ । बहुरि किसोर होइ पुनि सोइ ।
सुंदर नारी ताहि बिवाहै । असन-बसन बहुबिधि सो चाहै ।
बिना भाग सो कहाँ तैं आवै । तब वह मन मैं बहु दुख पावै ।

पुनि लछमी-हित उद्यम करै । अरु जब उद्यम खाली परै ।
तब वह रहै बहुत दुख पाइ । कहँ लौं कहौं, कह्यौ नहिँ जाइ ।
बहुरौ ताहि बुढ़ापौ आवै । इंद्री-सक्ति सकल मिटि जावै ।
कान न सुनै, आँखि नहिँ सूझै । बात कहैँ सो कछु नहिँ बूझै ।
खैबेहूँ कौं जब नहिँ पावै । तब बहु बिधि मन मैं पछितावै ।
पुनि दुख पाइ-पाइ सो मरै । बिनु हरि-भक्ति नरक मैं परै ।
नरक जाइ पुनि बहु दुख पावै । पुनि-पुनि यौंहीँ आवै-जावै ।
तऊ नहीँ हरि-सुमिरन करै । तातैं बार-बार दुख भरै ।

हेमा

भक्त सकामी हू जो होइ । क्रम-क्रम करिकै उधरै सोइ
सनै-सनै बिधि-लोकहिँ जाइ । ब्रह्मा-सँग हरि-पदहिँ समाइ ।
निष्कामी बैकुंठ सिधावै । जनम-मरन तिहिँ बहुरि न आवै
त्रिविध भक्ति कहौं सुनि अब सोइ । जातैं हरि-पद प्रापति होइ

एकै कर्म-जोग कौं करैं । बरन-आसरम धर्म बिस्तरैं
अरु अधर्म कबहूँ नहिँ करैं । ते नर याही बिधि निस्तरैं
एकै भक्ति-जोग कौं करैं । हरि-सुमिरन पूजा बिस्तरैं
हरि-पद-पंकज प्रीति लगावैं । ते हरि-पद कौं या बिधि पावैं

एकै ज्ञान-जोग बिस्तरैं। ब्रह्म जानि सब सौं हित करैं।
ते हरि-पद कौं या बिधि पावैं। क्रम-क्रम सब हरि-पदहिं समावैं।
कपिलदेव बहुरौ यौं कह्यौ। हमैं-तुम्हैं संवाद जु भयौ।
कलिजुग मैं यह सुनिहै जोइ। सो नर हरि-पद प्रापत होइ।
देवहूति सुज्ञान कौं पाइ। कपिलदेव सौं कह्यौ सिर नाइ।
आगैं मैं तुमकौं सुत मान्यौ। अब मैं तुमकौं ईश्वर जान्यौ।
तुम्हरी कृपा भयौ मोहिं ज्ञान। अब न ब्यापिहै मोहिं अज्ञान।
पुनि बन जाइ कियौ तन-त्याग। गहि कै हरि-पद सौं अनुराग।
कपिलदेव सांख्यहिं जो गायौ। सो राजा मैं तुम्हैं सुनायौ।
याहि समुझि जो रहै लव लाइ। सूर बसै सो हरिपुर जाइ ॥१३॥

॥३६४॥

चतुर्थ स्कंध

-अवतार

* राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि[1]-चरनारबिंद उर धरौ।
सुक हरि-चरननि कौं सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चितलाइ। सूर तरौ[2] हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥३९५॥

❀ राग बिभार

‡ रुचि कैं अत्रि नाम सुत भयौ। ब्याहि अनुसुया सौं सो दयौ।
ताकैं[3] भयौ दत्त अवतार। सूर कहत[4] भागवतऽनुसार ॥२॥

॥३९६॥

राग बिलावर

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
कहौं अब दत्तात्रेय-अवतार। राजा, सुनौ ताहि चित धार।
अत्रि पुत्र-हित बहु तप कियौ। तासु नारिहूँ यह ब्रत लियौ।
तीनौं देव तहाँ मिलि आए। तिनसौं रिषि ये बचन सुनाए।

(ना) भैरवी।
ह पद (वे, श्या) में दत्ता-
ार के पश्चात् मिलता है।
आध पलकहूँ जिनि

बिसरौ—२, ३, १८। ②
दास—३।
* (कां, रा) बिलावल।
‡ यह पद (वे, शा, ना, हृ,

श्या) में नहीं है।
③ ताकै दत्तात्रेह अवतार-
२। ④ भयौ—२।

मैं तौ एक[1] पुरुष कौं ध्यायौ। अरु[2] एकहिं सौं चित्त लगायौ।
अपने आवन कौ कहौ कारन। तुम हौ सकल जगत-उद्धारन।
कह्यौ तुम एक पुरुष जो ध्यायौ। ताकौ दरसन काहु न पायौ।
ताकी सक्ति पाइ हम करैं। प्रतिपालैं बहुरौ संहरैं।
हम तीनौं हैं जग-करतार। माँगि लेहु हमसौं बर सार।
कह्यौ, बिनय मेरी सुनि लीजै। पुत्र सुज्ञानवान मोहिं दीजै।
बिष्नु-अंस सौं दत्तऽवतरे। रुद्र-अंस दुर्वासा धरे।
ब्रह्मा-अंस चंद्रमा भयौ। अत्रिऽनुसूया कौं सुख दयौ।
यौं भयौ दत्तात्रेय अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥३॥

॥३६७॥

पुरुष-अवतार * राग बिलावल

† दच्छ[3] के उपजीं पुत्री सात। तिन मैं सती नाम बिख्यात।
महादेव कौं सो तिन दई। पुनि सो दच्छ-जज्ञ मैं मुई।
[4]तहँ कियौ जज्ञपुरुष अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥४॥

॥३६८॥

---

(१) इक कोता २, ६, ८। और न काहू सों चित लायौ २। और एक ही सौं मन लायौ ६, ८।

* (मा भैरवी।

† सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में दक्ष की कन्याओं की संख्या भिन्न भिन्न मिलती है। कुछ में संख्या सात है तथा कुछ में साठ। भागवत तथा गरुड़पुराण में दक्ष-पुत्रियों की संख्या सोलह मिलती है। भागवत में प्रचेता के पुत्र और बर्हि के पौत्र एक अन्य दक्ष भी आए हैं जिनके दश सहस्र पुत्र और साठ कन्याएँ हुई थीं, किंतु ये दक्ष वे दक्ष नहीं हैं जिनका यहाँ प्रसंग है। इसलिए इस पद का अंतिम चरण "सूर कह्यौ भागवतऽनुसार" सदोष जान पड़ता है। संभव है कवि को इन दो दक्षों के कारण भ्रम हो गया हो, अथवा संभव है सूरसागर की किसी प्रति में जो हमें प्राप्त नहीं है, वह संख्या सोलह हो।

(३) दक्ष प्रजापति पुत्री जाता —३। दक्ष के उपजी पुत्री साठ —६, १८, १९। कन्या साठि दच्छ उतपात—८। (४) तहाँ कियौ हरि जज्ञ अवतार—१, ६, १८ १९।

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ
कहौं अब जज्ञपुरुष-अवतार। राजा, सुनौ ताहि चित धार
सती दच्छ की पुत्री भई। दच्छ सो महादेव कौं दई
ब्रह्मा, महादेव, रिषि सारे। इक दिन बैठे सभा मँझारे
दच्छ प्रजापति हू तहँ आए। करि सनमान सबनि बैठाए
काहूँ समाचार कछु पूछे। काहू सौं उनहूँ तब पूछे
सिव की लागी हरि-पद तारी। तातैं नहिं उन आँखि उघारी
महादेव बैठे रहि गए। दच्छ देखि अतिसय दुख तए[1]
महादेव कौं भाषत साधु। मैं तौ देखौं बड़ौ असाधु
जज्ञ-भाग याकौं नहिं दीजै। मेरौ कह्यौ मानि करि लीजै
नंदी-हृदय भयौ सुनि ताप। दियौ ब्राह्मननि कौं तिन साप
स्रुति पढ़ि कै तुम नहिं उद्धरिहौ। बिद्या बेंचि जीविका करिहौ
भृगु तब कोप होइ यौं कह्यौ। सुनत[2] साप रिस तैं तनु दह्यौ
महादेव-हित जो तप करिहै। सोऊ भव-जल तैं नहिं तरिहै
दच्छ प्रजापति जज्ञ रचायौ। महादेव कौं नाहिं बुलायौ
सुर-गंधर्व जे नेवति बुलाए। ते सब बधुनि सहित तहँ आए
सती सबनि कौं आवत देखि। सिव सौं बोली बचन बिसेषि
चलियै दच्छ-गेह हम जाहिं। जद्यपि हमैं बुलायौ नाहिं
मोकौं तौ यह अचरज आयौ। उन हमकौं कैसैं बिसरायौ

---

(1) भए—२, ३, ८। (2) सराप सबहुन को दियो—१, ६, १६, १८। तुम सराप सबको क्यौं दियौ—२।

गुरु-पितु-गृह बिनु बोलेहु जैऐ। है यह नीति नाहिँ सकुचैऐ
सिव कह्यौ, तुम भली नीति सुनाई। पै वह मानत है सत्राई
उहाँ गए जो होइ अपमान। तौ यह भलो बात नहिँ जान
दुर्जन-बचन सुनत दुख जैसौ। बान लगैँ दुख होइ न तैसौ
मम सत्राई हिरदैँ आन। करिहै वह तेरौ अपमान
भएँ अपमान उहाँ तू मरिहै। जो मम बचन हृदय नहिँ धरिहै
सती कह्यौ, मम भगिनी सात। सबै बुलाई ह्वैहैँ तात
मोहूँ कौँ प्रभु, आज्ञा दीजै। महाराज, अब बिलँब न कीजै
बारंबार सती जब कह्यौ। तब सिव अंतरगत यौँ लह्यौ
सती सदा मम आज्ञाकारी। कहति जो या बिधि बारंबारी
दीखति है कछु होवनहारी। सो काहू पै जाइ न टारी
गननि समेत सती तहँ गई। तासौँ दच्छ बात नहिँ कही||
सती जानि अपनौ अपमान। सिव कौ वचन कियौ परमान
कह्यौ, उहाँ अब गयौ न जाइ। बैठि गई सिर नीचैँ नाइ
सिव-आहुति-बेरा जब आई। बिप्रनि दच्छहिँ पूछ्यौ जाई
सिव-निंदा करि तिनसौँ भाष्यौ। मैँ तौ पहिलैँ ही कहि राख्यौ
मेरौ वचन मानि करि लेहु। सिव-निमित्त आहुति जनि देहु
तब करि क्रोध सती तिहिँ कही। तैँ सिव की महिमा नहिँ लही
महादेव ईस्वर भगवान। सत्रु-मित्र उन एक समान
तैँ अज्ञान करो सत्राई। उनकी महिमा तैँ नहिँ पाई

|| इसके अनंतर ये चार चरण) में अधिक हैं—नीकी बिधि सौं माला लही। दच्छ बात तासों नहिँ कही। भगिनी हँसत मिली सब आइ। त्यौं मे अति बिलखाइ।

पिता जानि तोकौं नहिँ मारौं। अपनौ ही मैं प्रान सँहारौं
जोग धारना करि तनु त्याग्यौ। सिव-पद-कमल हृदय अनुराग्यौ
बहुरि हिमाचल कैँ अवतरी। समय[1] पाइ सिव बहुरौ बरी
इहाँ सिव-गननि उपद्रव कियौ। तब भृगु रिषि उपाइ यह ठयौ[2]
आहुति जज्ञकुंड मैं डारी। कह्यौ, पुरुष उपजैँ बल भारी
पुरुष कुंड तैँ प्रगट जो भए। भृगु कैँ निकट सबै चलि गए
भृगु कह्यौ, करत जज्ञ ये नास। इनकौं ह्याँतैँ देहु निकास
सिव के गन तिन बहुतै मारे। ते गन सिव पैँ जाइ पुकारे
सिव ह्वै क्रोध इक जटा उपारी। बीरभद्र उपज्यौ बलभारी
बीरभद्र कौं तहाँ पठायौ। तासौं इहिँ विधि कहि समुझायौ
दछ-सिर काटि कुंड मैं डारि। आवौ बेगि न लावौ बार
बीरभद्र तब दच्छहिँ मार्‌यौ। अरु भृगु रिषि कौ केस उपार्‌यौ
हाथ-पाइँ बहुतनि के काट। आइ नवायौ सिवहिँ ललाट
तब सुर रिषि ब्रह्मा पैँ आइ। दियौ सकल वृत्तांत सुनाइ
कह्यौ ब्रह्मा सिव-निंदा जहाँ। बुरौ कियौ तुम बैठे तहाँ
ब्रह्मा तिन लै सिव पहँ आए। सिव प्रनाम करि ढिग बैठाए
सिव कौं सबनि कियौ सनमान। भोलानाथ लियौ सो मान
ब्रह्मा सिव कौं बचन सुनायौ। दच्छ तुम्हारौ मरम न पायौ
जैसौ कियौ सो तैसौ पायौ। अब उहिँ चहियै फेरि जिवायौ
सिव कह्यौ, मेरैँ नहिँ सत्राई। सती मुएँ यह मन मैं आई

(१) समयांतर (समै अंतर) जनमंतर हर—१६। (२) लियौ—
(शिव)—१, ३, ६, ८। २। कियौ—३, ६, ८।

अब जो तुम्हरी आज्ञा होइ। छाँड़ि बिलंब करौं मैं सोइ
ब्रह्मा, बिष्नु, रुद्र तहँ आए। भृगु रिषि केस आपने पाए
घायल सबै नीक ह्वै गए। सुर-रिषि सबके भाए भए
दच्छ-सीस जो कुंड मैं जर्‍यौ। ताके बदलैं अज-सिर धर्‍यौ
महादेव तिहिं फेरि जिवायौ। दच्छ जानि यह सीस नवायौ
बिप्रनि जज्ञ बहुरि बिस्तार्‍यौ। बेद भली बिधि सौं उच्चार्‍यौ
जज्ञपुरुष प्रसन्न तब भए। निकसि कुंड तैं दरसन दए
सुंदर स्याम चतुर्भुज रूप। ग्रीवा कौस्तुभ-माल अनूप
उठि कै सबहिन माथ नवायौ। दच्छ बहुरि यौं बिनय सुनायौ
मैं अपमान रुद्र कौ कियौ। तब मम जज्ञ सांग[1] नहिं भयौ
अब मोहिं कृपा कीजियै सोइ। फिरि ऐसी दुरबुद्धि न होइ
बहुरौ भृगु रिषि अस्तुति कीनी। महाराज मम बुधि भई हीनी
दियौ क्रोध करि सिवहिं सराप। करौ कृपा जो मिटै यह दाप[2]
पुनि सिव ब्रह्मा अस्तुति करी। जज्ञ पुरुष बानी उच्चरी
दच्छ कियौ सिव कौ अपमान। तातैं भई जज्ञ की हान
बिष्नु, रुद्र, बिधि, एकहिं रूप। इन्हैं जानि मति भिन्न स्वरूप
जातैं ये परगट भए आइ। ताकौं तू मन मैं[3] निज ध्याइ
यौं कहि पुनि बैकुंठ सिधारे। बिधि[4], हरि, महादेव, सुर सारे
या बिधि जज्ञपुरुष[5] अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥ ५ ॥ ३६६

---

(१) सिद्ध १६। (२) पाप—(३) माहीं—२। (४) सुर गंधर्ब गए पुनि—१। (५) भयो जज्ञ अवतार—१, ३, १६।

यज्ञपुरुष-अवतार (संक्षिप्त) राग मारू

जज्ञ प्रभु[1] प्रगट दरसन दिखायौ ।
बिष्नु-बिधि-रुद्र मम रूप ये तीनिहूँ, दच्छ सौं बचन यह कहि सुनायौ ।
दच्छ रिस मानि जब जज्ञ आरंभ कियौ, सबनि कौं सहित पत्नी हँकारयौ ।
रुद्र-अपमान कियौ, सती तब जीव दियौ, रुद्र के गननि ताकौं सँहारयौ ।
बहुरि बिधि जाइ, छमवाइ[2] कै रुद्र कौं, बिष्नु, बिधि, रुद्र तहँ तुरत आए ।
जज्ञ आरंभ मिलि रिषिनि बहुरौ कियौ, सीस अज राखि कै दच्छ ज्याए ।
कुंड तैं प्रगटि जग-पुरुष दरसन दियौ, स्याम सुंदर चतुरभुज मुरारी ।
सूर प्रभु निरखि दंडवत सबहिनि कियौ, सुर-रिषिनि सबनि अस्तुति उचारी ॥६॥
॥४००॥

पार्वती-बिवाह * राग बिलावल

सती हियैं धरि सिव कौ ध्यान । दच्छ-जज्ञ मैं छाँड़े प्रान ।
बहुरि हिमांचल कैं सुभ घरी । पारवती ह्वै सो अवतरी ।
पारवती बय-प्रापत भई । तबहिं हिमाचल तासौं कही ।
तेरौ कासौं कीजे ब्याह ? तिन कह्यौ, मेरौ पति सिव आह ।
कह्यौ हिमाचल, सिव प्रभु, ईस । हमसौं-उनसौं कैसी रीस ?
पारवती सिव-हित तप करयौ । तब सिव आइ तहाँ, तिहिं बरयौ ।
पारवती-बिवाह ब्यवहार । सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥ ७ ॥
॥४०१॥

---

(१) पुरुष—२, ३, ११ । * (ना) भैरवी ।
(२) समझाइ—२ ।

-कथा   * राग बिला

† स्वायंभू मनु के सुत दोइ । तिनकी कथा कहौं, सुनि[1] सोइ ।
उत्तानपाद एक कौ नाम । द्वितिय प्रियव्रत अति अभिराम ।
ध्रुव[2] उत्तानपाद-सुत भयौ । हरि जू ताकौं दरसन दयौ ।
बहुरि दियौ ताकौं अस्थान । देहिं प्रदच्छिन जहँ ससि-भान ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित धारि । सूर कह्यौ भागवतऽनुसारि ॥८॥

॥४०

* राग बिल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ
अब कहौं ध्रुव बर देनऽवतार । राजा सुनौ ताहि चित धार
उतानपाद पृथ्वीपति भयौ । ताकौ जस तीनौ पुर छयौ
नाम सुनीति बड़ी तिहिं दार । सुरुचि दूसरी ताकी नार
भयौ सुरुचि तैं उत्तम कुमार । अरु सुनीति कैं ध्रुव-सुकुमार[3]
राजा हियैं सुरुचि सौं नेह । बसै सुनीति दूसरैं गेह
इक दिन नृपति सुरुचि-गृह आयौ । उत्तम कुँवर गोद बैठायौ
ध्रुव खेलत-खेलत तहँ आए । गोद बैठिबे कौं पुनि धाए
राजा तिय-डर गोद न लयौ । ध्रुव सुकुमार रोइ तब दयौ
तबहिं सुरुचि ध्रुव कौं समुझायौ । तैं गोबिंद-चरन नहिं ध्यायौ
जो हरि कौ सुमिरन तू करतौ । मेरैं गर्भ आनि अवतरतौ

---

* (ना) बिभास ।
† यह पद (स) में नहीं ।

(१) अब—२, ८ । (२) उत्तानपाद के ध्रुव—१, २, ६, ८, १८, १९ ।

* (ना) रामकली ।
(३) अवतार—२ ।

राजा तोकौं लेतौ गोद। तबहिँ गोद मैं करतौ मोद।
अजहूँ तू हरि-पद चित लाइ। होहिँ प्रसन्न तोहिँ जदुराइ।
सुरुचि के बचन बान सम लागे। ध्रुव आए माता पै भागे।
माता ताकौं रोवत देखि। दुख पायौ मन माहिँ बिसेषि।
कह्यौ पुत्र, तोकौं किन मारयौ? ध्रुव अति दुःखित बचन उचारयौ।
माता ताकौं कंठ लगायौ। तब ध्रुव सब वृत्तांत सुनायौ।
कह्यौ सुत, सुरुचि सत्य यह कह्यौ। बिनु हरि-भक्ति पुत्र मम भयौ।
अजहूँ जौ हरिपद चित लैहौ। सकल मनोरथ मन के पैहौ।
जिन-जिन हरि चरननि चित लायौ। तिन-तिन सकल मनोरथ पायौ।
प्रपिता तव ब्रह्मा तप कियौ। हरि प्रसन्न ह्वै तिहिँ वर दियौ।
तिन कीन्ह्यौ सब जग बिस्तार। जाकौ नाहीँ पारावार।
बहुरि स्वयंभू मनु तप कीन्हौ। ताहू कौं हरि जू वर दीन्हौ।
ताकैं भयौ बहुत परिवार। नर, पसु, कीट, गनत नहिँ पार।
तैं हूँ जो हरि-हित तप करिहै। सकल मनोरथ तेरौ पुरिहै।
ध्रुव यह सुनि बन कौं उठि चले। पंथ माहिँ तिन नारद मिले
देख्यौ पाँच बरष कौ बाल। सुरुचि बचन नहिँ सक्यौ सँभार।
अब मैं हूँ याकौ दृढ़ देखौं। लखि बिस्वास, बहुरि उपदेसौं।
ध्रुव सौं कह्यौ, क्रोध परिहरौ। मैं जो कहौं सो चित मैं धरौ
मेरैं सँग राजा पै आउ। द्याऊँ तोहिँ राज-धन-गाउँ
भक्ति-भाव की जो तोहिँ चाह। तोसौं नहिँ ह्वै है निर्बाह
बहुतक तपसी पचि-पचि मुए। पै तिन हरि-दरसन नहिँ हुए
मैं हरि-भक्त, नाम मम नारद। मोसौं कहि तू अपनौ हारद

राजा पास कहाँ जौ जाइ। लैहै मानि नृपति सत-भाइ
ध्रुव बिचार तब मन मैं कियौ। सुमिरत नारद दरसन दियौ
जब मैं भक्ति स्याम की कैहौं। जानत नहीं कहा मैं पैहौं
कह्यौ नारद सौं, करौ सहाइ। करौं भक्ति हरि की चित लाइ
तुम नारायन-भक्त कहावत। केहिँ[1] कारन हमकौं भरमावत[2]
तब नारद ध्रुव कौं दृढ़ देखि। कह्यौ, देउँ मैं ज्ञान बिसेषि
मथुरा जाइ सु सुमिरन करौ। हरि कौ ध्यान हृदय मैं धरौ
‖ द्वादस अच्छर मंत्र सुनायौ। ‖ और चतुर्भुज रूप बतायौ
मथुरा जाइ सोइ उन कियौ। तब नारायन दरसन दियौ
ध्रुव अस्तुति कीन्ही बहु भाइ। तब हरिजू बोले मुसुकाइ
ध्रुव, जो तेरी इच्छा होइ। माँगि लेहि अब मोपैं सोइ
प्रभु, मैं तुम्हरौ दरसन लह्यौ। माँगन कौं पाछैं कहा रह्यौ
हरि कह्यौ, राज-हेत तप कियौ। ध्रुव, प्रसन्न ह्वै मैं तोहिँ दियौ
अरु तेरैं हित कियौ अस्थान। देहिँ प्रदच्छिन जहँ ससि-भान
ग्रह-नछत्रहू सबही फिरैं। तू भयौ अटल, न कबहूँ टरै
अरु पुनि महा-प्रलय जब होइ। मुक्ति स्थान पाइहै सोइ
यह कहि हरि निज लोक सिधारे। ध्रुव निज पुर कौं पुनि पग धारे
जब ध्रुव पुर कैं बाहर आयौ। लोगनि नृप कौं जाइ सुनायौ
उनके कहैं न मन मैं आई। तब नारद कह्यौ नृप सौं जाई

---

(१) काहे कौं तुम मोहिँ फिरा- —१,१६। (२) बौरावत—२।

‖ ये चरण (३) में नहीं हैं।

ध्रुव आयौ हरि सौं. बर पाइ। राजा, जाइ ताहिँ मिलि धाइ।
नृप सुनि मन आनंद बढ़ायौ। अंतःपुर मैं जाइ सुनायौ।
पुनि नृप कुटुँब सहित तहँ आए। नगर-लोग सब सुनि उठि धाए।
ध्रुव राजा के चरननि पर्यौ। राजा कंठ लाइ हित कर्यौ।
पुनि सो सुरुचि कैँ चरननि पर्यौ। तासौं बचन मधुर उच्चर्यौ।
तव उपदेस मैं हरि कौं ध्यायौ। यह उपकार न जात मिटायौ।
पुनि माता के पायनि पर्यौ। माता ध्रुव कौं अंकम भर्यौ।
ध्रुव निज सिंहासन बैठाए। नृप तप-कारन बनहिँ सिधाए।
सातौ द्वीप राज ध्रुव कियौ। सीतल भयौ मातु कौ हियौ।
यौँ भयौ ध्रुव-बर-देनऽवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार॥ ९॥

॥ ४०३ ॥

संक्षिप्त ध्रुव-कथा * राग आसावरी

ध्रुव बिमाता-बचन सुनि रिसायौ।
दीन के दयाल गोपाल, करुनामयी मातु सौं सुनि, तुरत सरन आयौ।
बहुरि जब बन चल्यौ, पंथ नारद मिल्यौ, कृष्न-निज-धाम मथुरा बतायौ।
मुकुट सिर धरैं, बनमाल कौस्तुभ गरैं, चतुर्भुज स्याम सुंदरहिँ ध्यायौ।
भए अनुकूल हरि, दियौ तिहिँ तुरत बर, जगत करि राज पद अटल पायौ।
सूर[1] के प्रभु की सरन आयौ जो नर, करि जगत-भोग बैकुंठ सिधायौ॥१०॥

॥ ४०४ ॥

---

* (ना) मारू। (कां) रामकली।

(1) सूर प्रभु की सरन गही जिन आइ नर—६ म।

पृथु-अवतार

* राग विलाव

धारि पृथु-रूप हरि राज कीन्हौ ।

विष्नु की भक्ति परवर्त जग मैं करी, प्रजा कौं सुख सकल भाँति दीन्हौ
वेनु नृप भयौ बलवंत जब पृथी पर, रिषिनि सौं कह्यौ जप-तप निवारौ
||मोहिं बिधि, बिष्नु, सिव, इंद्र, रवि-ससि गनौ, नाम मम लेइ आहुतिनि डारौ
||जज्ञ मैं करत तब मेघ बरसत मही, बीज अंकुर तबै जमत सारौ
होइ तिन क्रोध तब साप ताकौं दयौ, मारिकै ताहि जग-दुःख टारौ
भयौ अराज जब, रिषिनि तब मंत्र करि, वेनु की जाँघ कौ मथन कीन्हौ
जाँघ के मथे तैं पुरुष परगट भयौ, स्याम तिहिं भील कौ राज दीन्हौ
बहुरि जब रिषिनि भुज दछिन कीन्ही मथन, लच्छमी सहित पृथु दरस दीन्हौ
पहिरि सब आभरन, राज्य लागे करन, आनि सब प्रजा दंडवत कीन्हौ
बहुरि बंदीजननि आइ अस्तुति करी, इंद्र अरु बरुन तुम तुल्य नाहीं
कह्यौ नृप, बिनु पराक्रम न अस्तुति करौ, बिना किये मूढ़ सो हर्षि जाहीं
करौ भगवान कौ जस गुनीजन सदा, जो जगत-सिंधु तैं पार तारै
कियैं नर की स्तुती कौन कारज सरै, करै सो आपनौ जन्म हारै
कह्यौ तिन, तिन्हैं हम मनुष जानत नहीं, जगतपति जगतहित देह धार्‌यौ
करौगे काज जो कियौ न काहू नृपति, कियैं जस जाइ हम दुःख सार्‌यौ
बहुरि सब प्रजा मिलि आइ नृप सौं कह्यौ, बिना आजीविका मरत सारी
नृप धनुष-बान धरि पृथी पर कोप कियौ, तिन गऊ रूप बिनती उचारी

---

* (ना, का, डा, का, रा) मारू ।

|| ये चरण केवल (शा) में हैं ।

बेनु के राज मैं औषधी गिलि गईं, होइहैं सकल किरपा तुम्हारी
पर्वतनि जहाँ तहँ रोकि मोकौं लियौ, देहु करि कृपा इक दिसा टारी
धनुष सौं टारि पर्वत किए एक दिसि, पृथी सम करि, प्रजा सब बसाई
सुर-रिषिनि नृपति पुनि पृथी दोहन करी, आपनी जीविका सबनि पाई
बहुरि नृप जज्ञ निन्यानबे करि, सतम जज्ञ कौं जबहिं आरंभ कीन्हौ
इंद्र भय मानि, हय-गहन सुत सौं कह्यौ, सो न लै सक्यौ, तब आप लीन्हौ
नृपति सुत सौं कह्यौ, जाइ हय ल्याइ अब, इंद्र तिहिं देखि हय छाँड़ि दीन्हौ
नृप कह्यौ सुरनि के हेतु मैं जज्ञ कियौ, इंद्र मम अस्त्र किहिं काज लीन्हौ
रिषिनि कह्यौ, तुव सतम जज्ञ आरंभ लखि, इंद्र कौ राज-हित कँप्यौ हीयौ
नृप कह्यौ, इंद्रपुर की न इच्छा हमैं, रिषिनि तब पूरनाहुती दीयौ
पुरुष कह्यौ, कुंड तैं निकसि पूरन भयौ, इंद्र जिमि बर कछू माँगि लीजै
पृथु कह्यौ, नाथ, मेरैं न कछु सत्रुता, अरु न कछु कामना, भक्ति दीजै
जग-पुरुष गए बैकुंठ धामहिं जबै, न्यौति नृप प्रजा कौं तब हँकारौ
तिन्हैं संतोषि कह्यौ, देहु माँगे हमैं, बिष्नु की भक्ति सब चित्त धारौ
सुनत यह बात सनकादि आए तहाँ, मान दै कह्यौ, मोहिं ज्ञान दीजै
कह्यौ, यह ज्ञान, यह ध्यान, सुमिरन यहै, निरखि हरि रूप मुख नाम लीजै
पुनि कह्यौ, देहु आसीस मम प्रजा कौं, सबै हरि-भक्ति निज चित्त धारैं
कृपा तुम करी, मैं भेंट कौं मन धरी, नहीं कछु बस्तु ऐसी हमारैं
बहुरि सनकादि गए आपुने धाम कौं, नृपति, सब लोग, हरि-भक्ति लाए
सूर प्रभु-चरित अगनित, न गनि जाहिं, कछु जथामति आपनी कहि सुनाए॥११

॥४०५

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ
कथा पुरंजन की अब कहौं । तेरे सब संदेहनि दहौं
प्राचीनबर्हि भूप इक भए । आयु अजंत जज्ञ तिन ठए
ताकै मन उपजी तब ग्लानि । मैं कीन्ही बहु जिय की हानि
यह मम दोष कौन विधि टरै । ऐसी भाँति सोच मन करै
इहिं अंतर नारद तहँ आए । नृप सौं यौं कहि बचन सुनाए
मैं अबहीं सुरपुर तैं आयौ । मग मैं अद्भुत चरित लखायौ
जज्ञ माहिं तुम पसु जे मारे । ते सब ठाढ़े सस्त्रनि धारे
जोहत हैं वे पंथ तिहारौ । अब तुम अपनौ आप सँभारौ
नृप कह्यौ, मैं ऐसोई कियौ । जज्ञ-काज मैं तिनि दुख दियौ
रसनाहू कौ कारज सार्‍यौ । मैं यौं अपनौ काज बिगार्‍यौ
अब मैं यहै बिनै उच्चरौं । जो कछु आज्ञा होइ सो करौं
कह्यौ, कहौं इक नृप की कथा । उन जो कियौ, करौ तुम तथा
ताहि सुनौ तुम भलैं प्रकार । पुनि मन मैं देखौ जु बिचार
ता नृप कौ परमातम मित्र । इक[1] छिन रहत न सो अन्यत्र
खान-पान सो सब पहुँचावै । पै नृप तासौं हित न लगावै
नृप चौरासी लछ फिरि आयौ । तब इहिं[2] पुर मानुष तन पायौ
पुर कौं देखि परम सुख लह्यौ । रानी सौं मिलाप तहँ भयौ
तिन पूछ्यौ, तू काकी धी है ? उन कह्यौ नहिं सुमिरन मम ही है

---

* (ना) भैरवी । अन्न—१, ११ । इक (यक) छिन ② यह पुनि—८ ।
① इक छिन रहै नहीं सो तासौं रहै न अंत्र—६, ८ ।

पुनि कह्यौ नाम कहा है तेरौ ? कह्यौ, न आव नाम मोहिँ मेरौ
तन पुर, जीव पुरंजन राव । कुमति तासु रानी कौ नाँव
आँखि, नाक, मुख, मूल दुवार । मूत्र, स्रौन, नव पुर कौ द्वार
लिंग-देह नृप कौ निज गेह । दस इंद्रिय दासी सौं नेह
कारन तन सो सैन-अस्थान । तहाँ अविद्या नारि प्रधान
कामादिक पाँचौ प्रतिहार । रहैँ सदा ठाढ़े दरबार
संतोषादि न आवन पावैँ । बिषय भोग हिरदै हरषावैँ
जा द्वारे पर इच्छा होइ । रानी सहित जाइ नृप सोइ
तहाँ-तहाँ कौ कौतुक देखि । मन मैँ पावै हर्ष विसेषि
इंद्री दासी सेवा करैँ । तृप्ति न होइ, बहुरि बिस्तरैँ
इन इंद्रिनि कौ यहै सुभाइ । तृप्ति न होइ कितौ हूँ खाइ
निद्रा बस जो कबहूँ सोवै । मिलि[1] सो अविद्या सुधि-बुधि खोवै
उनमत ज्यौँ सुख-दुख नहिँ जानै । जागैँ वहै रीति पुनि ठानै
संत दरस कबहूँ जौ होइ । जग-सुख मिथ्या जानै सोइ
पै कुबुद्धि ठहरान न देइ । राजा कौँ अंकम भरि लेइ
राजा पुनि तब क्रीड़ा करै । छिन भरहू अंतर नहिँ धरै
जब अखेट पर इच्छा होइ । तब रथ साजि चलै पुनि सोइ
जा[2] बन की नृप इच्छा करै । ताही द्वार होइ निस्सरै
चच्छुत्रादिक इंद्री दर जानौ । रूपादिक सब बन सम मानौ
मन मंत्री सो रथ हँकवैया । रथ तन, पुन्य-पाप दोउ पैया

---

(१) मिली अविद्या—२ । (२)
रे (नृप) पर—१, १६ ।

अस्त्र पाँच ज्ञानेंद्रिय पाँच । विरय अखेटक नृप-मन राँच ।
राजा मंत्री सौं हित मानै । ताकैं दुख[1]-दुख, सुख-सुख जानै ।
नरपति ब्रह्म-अंस, सुख रूप । मन मिलि पर्‍यौ दुःख कैं कूप ।
ज्ञानी संगति उपजै ज्ञान । अज्ञानी सँग होइ अज्ञान ।
मंत्री कहैं अखेट सो करै । विषय-भोग जीवन संहरै ।
निसि भएँ रानी पैं फिरि आवै । सोवति सो तिहिँ बात सुनावै ।
आजु कहा उद्यम करि आए । कहै बृथा भ्रमि-भ्रमि स्रम पाए ।
काल्हि जाइ अस उद्यम करौं । तेरे सब भंडारनि भरौं ।
सब निसि याही भाँति बिहाइ । दिन भए बहुरि अखेटक जाइ ।
तहाँ जीव नाना संहरै । विषय-भोग तिनके हित करै ।
विषय-भोग कबहूँ न अघाइ । यौंही नित-प्रति आवै जाइ ।
इक दिन नृप निज मंदिर आयौ । रानी सौं अह-निसि मन लायौ ।
ताके पुत्र-सुता बहु भए । विषय-बासना नाना रए ।
कान लागि केसनि[2] कह्यौ जाई । जरा काल-कन्या पुर आई ।
"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "राजा, देखि, कहा धौं होइ ।"
‖ नगर-द्वार तिन सबै गिराए । लोगनि नृप कौं आनि सुनाए ।
‖ "कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "राजा, देखि, कहा धौं होइ ।"
‖ कान न सुनै आँखि नहिँ सूझै । कहै और औरै कछु बूझै ।
‖ "कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति कहा धौं होइ ।"
‖ तृष्ना करि कियौ चाहै भोग । भोग न होइ, होइ तन रोग ।

---

(१) दुख सुख दुख सुख—८, १६ । (२) केसौ—१८ ।

‖ ये चरण (वे) में नहीं हैं ।

||"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, कहा धौं होइ।"
देह सिथिल भई, उठ्यौ न जाइ। मानौ दीन्यौ कोट[1] गिराइ।
"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, कहा धौं होइ।"
पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ। जरन लगे पुर-लोग-लुगाइ।
"कह्यौ, प्रिया अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, काह्न धौं होइ।"
मरन अवस्था कौं नृप जानै। तौ हू धरै न मन मैं ज्ञानै।
मम कुटुंब की कहा गति होइ। पुनि-पुनि मूरख सोचै सोइ।
काल तहीं तिहिं पकरि निकार्यौ। सखा प्रानपति तउ न सँभार्यौ।
रानी ही मैं मन रहि गयौ। मरि[2] विदर्भ[3] की कन्या भयौ।
बहुरौ तिन सत-संगति पाई। कहौं सो कथा, सुनौ चित लाई।
मेघध्वज सौं भयौ बिवाह। विष्नु-भक्ति कौ तिहिं उत्साह।
ता संगति नव सुत तिन जाए। स्रवनादिक मिलि हरि-गुन गाए।
इहिं बिधि तिन निज आयु बिताई। पूर्व-पाप सब गए बिलाई।
मरन-अवस्था जब नियराई। ईस सखा कैं मन यह आई।
बहुत जन्म इहिं बहु भ्रम कीन्ह्यौ। पै इन मोकौं कबहुँ न चीन्ह्यौ।
तब दयालु ह्वै दरसन दीन्ह्यौ। कह्यौ, मूढ़ तैं मोहिं न चीन्ह्यौ
विषय-भोग ही मैं पगि रह्यौ। जान्यौ मोहिं और कहुँ गयौ।
मैं तौ निकट सदाही रहौं। तेरे सकल दुखनि कौं दहौं।
यह सुनि कै तिहिं उपज्यौ ज्ञान। पायौ पुनि तिहिं पद-निर्बान।
यह कहि नारद नृप सौं कही। तेरी हू तैसी गति भई

|| यह चरण (ते) में नहीं है।
① कूप—६, ८। ② मनि तद्रूप सु—६, ८। ③ तिहिं नृप—२। पृथु नृप—२।

मैं जो कह्यौ सो देखि बिचार । बिन हरि-भजन नाहिं निस्तार ।
हरि की कृपा मनुष-तन पावै । मूरख विषय-हेतु सो गँवावै ।
तिन अंगनि कौ सुनौ बिवेक । खरचै लाख, मिलै नहिं एक ।
नैन दरस देखन कौं दिए । मूढ़ देखि परनारी जिए ।
स्रवन कथा सुनिबे कौं दीन्हे । मूरख पर-निंदा-हित कीन्हे ।
हाथ दए हरि-पूजा हेत । तिहिं कर मूरख पर-धन लेत ।
पग दिए तीरथ जैबैं काज । तिन सौं चलि नित करै अकाज ।
रसना हरि-सुमिरन कौं करी । तासौं पर-निंदा उच्चरी ।
यह सुनि नृप कीन्हौ अनुमान । मैं सोइ नृपति न दूसर आन ।
नारद जू तुम कियौ उपकार । बूड़त मोहिं उतार्‍यौ पार ।
नृपति पाइ यह आतम-ज्ञान । राज छाँड़ि कै गयौ उद्यान ।
यह लीला जो सुनै-सुनावै । सो हरि-कृपा ज्ञान कौं पावै ।
सुक ज्यौं राजा कौं समुझायौ । सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥१
॥४०

* राग बिल

अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ ।
सब्दहिं सब्द भयौ उजियारौ, सतगुरु भेद बतायौ ।
ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी, ढूँढ़त फिरत भुलायौ ।
फिरि चितयौ जब चेतन ह्वै करि, अपनै[1] ही तन छायौ ।

---

* (ना) धनाश्री । (का, ना, रा) नट ।

(१) अपुन ही मैं चिन्हायौ—२ ।

राज-कुमारि[1] कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयौ कहूँ गँवायौ।
दियौ बताइ और सखियनि[2] तब, तनु कौ ताप नसायौ।
सपने माहिँ नारि कौं भ्रम भयौ, बालक कहूँ हिरायौ।
जागि लख्यौ, ज्यौं कौ त्यौं ही है, ना कहुँ गयौ न आयौ।
सूरदास समुझे की यह गति, मनहीँ मन मुसुकायौ।
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौं गूँगैँ गुर खायौ ॥१३॥
॥४०७॥

आर—१। कुमार—१६। कुँवर—३। कुँवार—१४। (२) सतजन—१। संगिन—६, ८।

पंचम स्कंध

* राग बिलावल

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारविंद उर धरौ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
||कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ[1]। सूर[2] तरौ हरि के गुन गाइ ॥१॥
॥४०८॥

भदेव-अवतार

❀ राग बिलावल

ज्यौं भयौ रिषभदेव-अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
सुक बरन्यौ जैसैं परकार। सूर कहै ताही अनुसार।
ब्रह्मा स्वायंभुव मनु जायौ। तातैं जन्म प्रियव्रत पायौ।
प्रियव्रत कैं अग्नीध्र[3] सु भयौ। नाभि जन्म ताही तैं लयौ।
नाभि नृपति सुत-हित जग कियौ। जज्ञ-पुरुष तब दरसन दियौ।
बिप्रनि अस्तुति बिविध[4] सुनाई। पुनि कह्यौ सुनियै त्रिभुवनराई।

. (ना) विभास।
|| इसके उपरांत (वे, श्या) ये चार चरण और हैं—
: भयौ रिषभदेव अवतार। सुनो सो अब चित धार। बरन्यौ जैसे परकार। कह्यौ ताही अनुसार ॥"

परंतु अन्य प्रतियों में ये चारों चरण "ऋषभदेव-अवतार" शीर्षक (संख्या २ के) पद के आरंभ में आये हैं। इस संस्करण में उन्हीं के अनुसार पाठ रक्खा गया है।

① धार—१, ११। ② जाते तरौ उदधि (अब्धि) संसार—१, १६।

* (ना) भैरवी।

③ जु अगिनि धर—६, ८ ④ बेद—१, ६, ८, १६। बहुत—१६।

तुम सम पुत्र नाभि कैं होइ । कह्यौ, मो सम जग और न कोइ
मैं हरता - करता - संसार । मैं लैहौं नृप-गृह अवतार
रिषभदेव तब जनमे आइ । राजा कैं गृह[1] बजी बधाइ
बहुरौ रिषभ बड़े जब भए । नाभि राज दै बन कौं गए
रिषभ-राज परजा सुख पायौ । जस ताकौ सब जग मैं छायौ
इंद्र देखि, इरषा मन लायौ । करि कै क्रोध न जल बरसायौ
रिषभदेव तबहीं यह जानी । कह्यौ, इंद्र यह कहा मन आनी
निज बल जोग नीर बरसायौ । प्रजा लोग अतिहीं सुख पायौ
रिषभ राज सब मन उतसाह । कियौ जयंती सौं पुनि ब्याह
तासौं सुत निन्यानवै भए । भरतादिक सब हरि-रँग रए
तिनमैं नव नव-खँड-अधिकारी । नव जोगेस्वर ब्रह्म-बिचारी
असी-इक कर्म बिप्र कौ लियौ । रिषभ ज्ञान सबही कौं दियौ
दृस्यमान बिनास सब होइ । साच्छी ब्यापक, नसै न सोइ
ताही सौं तुम चित्त लगावहु । ताकौं सेइ परम गति पावहु
ज्ञानी-संगति उपजै ज्ञान । अज्ञानी - सँग बढ़ै अज्ञान
तातैं संत-संग नित करना । संत-संग सेवौ हरि - चरना
बहुरौ भरतहिं दै करि राज । रिषभ ममत्व देह कौ त्याज
उनमत की ज्यौं बिचरन लागे । असन-बसन की सुरतिहिं त्यागे
कोउ खवावै तौ कछु खाहिं । नातरु बैठेहो[2] रहि जाहिं
मूत्र - पुरीष अंग लपटावै । गंध बास दस जोजन छावै

---

(१) मन भई—१,३, ६, १६ । भई—२,८ । (२) भूखे—६ ।

अष्ट-सिद्धि बहुरौ तहँ आईं। रिषभदेव ते मुँह न लगाईं।
राजा रहत हुतौ तहँ एक। भयौ स्रावगी रिषभहिँ देखि।
वेद धर्म तजि कै न अन्हावै। प्रजा सकल कौं यहै सिखावै।
अजहूँ स्रावग ऐसेहि करैं। ताही कौ मारग अनुसरैं।
अंतर क्रिया रहति नहिँ जानैं। बाहर क्रिया देखि मन मानैं।
बरन्यौ रिषभदेव - अवतार। सूरदास भागवतऽनुसार ॥२॥
॥४०६॥

भरत-कथा

* राग बिला

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
रिषभदेव जब बन कौं गए। नव सुत नवौ-खंड-नृप भए।
भरत सो भरत-खंड कौ राव। करै सदाही धर्मऽरु न्याव।
पालै प्रजा सुतनि की[1] नाईं। पुरजन बसैं सदा सुख पाईं।
भरतहु दै पुत्रनि कौं राज। गए बन कौं तजि राज-समाज।
तहाँ करी नृप हरि की सेव। भए प्रसन्न देवनि के देव।
एक दिवस गंडकि-तट जाइ। करन लगे सुमिरन चित लाइ।
गर्भवती हिरनी तहँ आई। पानी[2] सो पीवन नहिँ पाई।
सुनि कै सिंह-भयान अवाज। मारि फलाँग चली सो भाज।
कूदत ताकौ तन छुटि गयौ। ताके छौना सुंदर भयौ।

---

* (ना) बिभास।
(१) के न्याइ—३। के नाइ—६, ८।
(२) पानी कौं पीवन सो धाई—२।

भरत दया ता ऊपर आई । ल्याए आस्रम ताहि लिवाई
पोषैं ताहि पुत्र की नाईं । खाहिँ आप तब, ताहि खवाई
सोवैं तब जब ताहि सुवावैं । तासौं क्रीड़त बहु सुख पावैं
सुमिरन भजन बिसरि सब गयौ । इक दिन मृगछौना कहुँ गयौ
भरत मोह-बस ताकैं भयौ । सब दिन बिरह-अगिनि अति तयौ
संध्या समय निकट नहिँ आयौ । ताके ढूँढ़न कौं उठि धायौ
पग कौ चिन्ह पृथी पर देख । कह्यौ, पृथी धनि जहँ पग-रेख
बहुरौ देख्यौ ससि की ओर । तामैं देखि स्यामता - कोर
कहन लग्यौ, मम सुत ससि-गोद । ता सेती[1] ससि करत बिनोद
ढूँढ़त-ढूँढ़त बहु स्रम पायौ । पै मृगछौना नहिँ दरसायौ
मृग कौ ध्यान हृदय रहि गयौ । भरत देह तजि कै मृग भयौ
पूरब जनम ताहि सुधि रही । आप-आप सौं तब यौं कही
मैं मृगछौना मैं चित दयौ । तातैं मैं मृगछौना भयौ
अब काहू सौं संग न करौं । हरि - चरनारबिंद उर धरौं
संग मृगनिहू कौ नहिँ करै । हरी घासहू सो नहिँ चरै
सूखे पात और तृन खाइ । या बिधि डारचौ जनम बिताइ
मृग-तन तजि, ब्राह्मन-तन पायौ । पूर्व-जन्म-सुमिरन तहँ आयौ
मन मैं यहै बात ठहराई । होइ असंग भजौं जदुराई
पिता पढ़ावै सो नहिँ पढ़ै । मन मैं राम-नाम नित रढ़ै
पिता सो तासु काल-बस भयौ । भ्रातनि हूँ स्रम बहु बिधि ठयौ
पै सो हरि-हरि सुमिरत रहै । और कछू बिद्या नहिँ गहै

---

(१) ही सौं—२, १४ ।

जड़-स्वरूप सौं जहँ-तहँ फिरै । असन-बसन की सुधि नहिँ धरै
जैसौ देहिँ सो तैसौ खाइ । नाहिँ तौ भूखौ ही रहि जाइ
कृषि-रच्छक भाइनि तब कीन्हौ । उन तहँ हरि-चरननि-चित दीन्हौ
तहँहीं अन्न देहिँ पहुँचाइ । जौ न देहिँ भूखौ रहि जाइ
भील-राव निज लोगनि कह्यौ । मैँ काली सौं यह प्रन गह्यौ
तुव प्रसाद मम गृह सुत होइ । नर बलि देहुँ, भयौ बर सोइ
तुम काहूँ धन दै लै आवहु । मेरे मन की आस पुजावहु
ते खोजत-खोजत तहँ आए । जहँ जड़भरत कृषी मैँ छाए
देख्यौ भरत तरुन अति सुंदर । थूल सरीर, रहित सब दुंदर
निज नृप पास बाँधि लै आए । नृप तिहिँ देखि बहुत सुख पाए
बिप्रनि कह्यौ याहि अन्हवावहु । याकैँ अंग सुगंध लगावहु
देवी-मंदिर तिहिँ लै गए । खड्ग राव के कर मैँ दए
जब राजा तिहिँ मारन लग्यौ । देवी काली-मन डगडग्यौ[१]
हरि-जन मारैँ हत्या होइ । ज्यौँ नहिँ मरै करौँ अब सोइ
देवी निकसि राव कौं मारयौ । भरत-साथ यह बचन उचारयौ
जानैँ बिना चूक यह भई । मैँ उनसौं ऐसी नहिँ कही
बिप्रनि बेद-धर्म नहिँ जान्यौ । तातैँ उन ऐसौ बलि ठान्यौ
यह सुनि ह्वाँ तैँ भरत सिधायौ । राजा[२] सौं सुक कहि समुझायौ
‖नहीं त्रिलोकी ऐसौ कोइ । ‖भक्तनि कौँ दुख दै सकै जोइ
ज्यौँ सुक नृप सौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौँ ही कहि गायौ ‖४

(१) धकधक्यौ—१, १४ । (२) हरि सुमिरत निज आसन (आसम) आयौ—६, ८ ।
‖ ये दो चरण (का, ना) में नहीं हैं ।

-रहूगण-संवाद * राग

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ
नृपति रहूगन कैं मन आई। सुनियै ज्ञान कपिल सौं जाई
चढ़ि सुख-आसन नृपति सिधायौ। तहाँ कहार एक दुख पायौ
भरत पंथ पर देख्यौ खरौ। वाकैं बदले ताकौं धरौ
तिहिँ सौं भरत कछू नहिँ कह्यौ। सुख-आसन काँधे पर गह्यौ
भरत चलै पथ जीव निहार। चलै नहीं ज्यौं चलैं कहार
नृपति कह्यौ मारग सम आह। चलत न क्यौं तुम सूधैं राह
कह्यौ कहारनि, हमैं न खोरि। नयौ कहार चलत पग[1] भोरि
कह्यौ नृपति, मोटौ तू आहि। बहुत पंथहू आयौ नाहिँ
तू जो टेढ़ौ-टेढ़ौ चलत। मरिबे कौं नहिँ हिय भय धरत
ऐसी भाँति नृपति बहु भाषी। सुनि जड़ भरत हृदय महँ राखी
मन मन लाग्यौ करन विचार। हर्ष-सोक तनु कौ ब्यवहार
जैसौ करै सो तैसौ लहै। सदा आतमा न्यारौ रहै
नृप कह्यौ, मैं उत्तर नहिँ पायौ। मेरौ कह्यौ न मन मैं ल्यायौ
नृप-दिसि देखि भरत मुसुकाइ। बहुरौ या बिधि कह्यौ समुझाइ
तुम कह्यौ, तैं है बहुत मोटायौ। अरु बहु मारग हू नहिँ आयौ
टेढ़ौ-टेढ़ौ तू क्यौं जात। सुनौ नृपति, मोसौं यह बात
जिय करि कर्म, जन्म बहु पावै। फिरत-फिरत बहुतै स्रम आवै
अरु अजहूँ न कर्म परिहरै। जातैं याकौ फिरिबौ टरै

ना) भैरवी। फोरि—३। मग छोरि—६, ८।
मग मोरि—२। मग टकटोरि—१६।

तन स्थूल अरु दूबर होइ । परमातम कौँ ये नहिँ दोइ ।
तनु मिथ्या, छन-भंगुर जानौ । चेतन जीव, सदा थिर मानौ ।
जिय कौं सुख-दुख तन सँग होइ । जो[1] बिचरै तन कै सँग सोइ ।
देहऽभिमानी जीवहिँ जानै । ज्ञानी तन[2] अलिप्त करि मानै ।
तुम कह्यौ मरिबे की तोहिँ चाह । सब काहू कौं है यह राह ।
कहा जानि तुम मोसौं कहचौ ? यह सुनि, रिषि-स्वरूप नृप लह्यौ ।
तजि सुखपाल रह्यौ गहि पाइ । मैं जान्यौ, तुम हौ रिषिराइ ।
भृगु, कै दुर्बासा तुम होहु । कपिल, कै दत्त, कहौ तुम मोहु ।
कबहूँ सुर, कबहूँ नर होइ । कबहूँ राव रंक जिय सोइ ।
जीव कर्म करि बहु तन पावै । अज्ञानी तिहिँ देखि भुलावै ।
‖ ज्ञानी सदा एक रस जानै । तन कैं भेद भेद नहिँ मानै ।
आतम[3], अजन्म सदा अविनासी । ताकौं देह-मोह बड़ फाँसी ।
रिषभ-सुपुत्र, भरत मम नाम । राज छाँड़ि, लियौ बन-बिस्राम ।
तहँ मृगछौना सौं हित भयौ । नर-तन तजि कै मृग-तन लयौ ।
अब मैं जन्म बिप्र कौ पायौ । सब तजि, हरि-चरननि चित लायौ ।
तातैं ज्ञानी मोह न करै । तन-कुटंब सौं हित परिहरै ।
जब लगि भजै न चरन मुरारि । तब लगि होइ न भव-जल पार ।
भव-जल मैं नर बहु दुख लहै । पै बैराग-नाव[4] नहिँ गहै ।
सुत-कलत्र दुर्बचन जो भाषै । तिन्हैं मोह-बस मन नहिँ राखै ।

जोर बिजोर तन के सँग
(…ोइ)—१, १८, १६ ।
…र…—३ । ② जीव
अल्प—१६ ।

‖ ये दो चरण (का, ना/२) मैं नहीं हैं ।

③ आतम जीव—
सदा जनम—६, ८,
तबहुँ—१ । तऊ—२,

जो वै वचन और कोउ कहै। तिनकौं सुनि कै सहि नहिँ रहै।
पुत्र अन्याइ करै बहुतेरै। पिता एक अवगुन नहिँ हेरै।
और जो एक करै अन्याइ। तिहिँ बहु अवगुन देइ लगाइ।
इक मन अरु ज्ञानेंद्री पाँच। नर कौं सदा नचावैं नाच।
ज्यौं मग चलत चोर धन हरैं। त्यौं ये सुकृत-धनहिँ परिहरैं।
तस्कर ज्यौं सुकृित-धन लेहिँ। अरु हरि-भजन करन नहिँ देहिँ।
ज्ञानी इनकौ संग न करै। तस्कर जानि दूरि परिहरै।
नृप यह सुनि, भरतहिँ सिर नाइ। बहुरि कह्यौ या भाँति सुनाइ।
नर सरीर सुर ऊपर आहि। लहै ज्ञान कहियै कहा ताहि?
तातैं तुमकौं करत दँडौत। अरु सब नरहूँ कौं परिनौत।
सुक कह्यौ, सुनि यह नृपति सुजान। लह्यौ ज्ञान तजि देहऽभिमान।
जो यह लीला सुनै-सुनावै। सोऊ ज्ञान भक्ति कौं पावै।
सुकदेव ज्यौं दियौ नृपहिँ सुनाइ। सूरदास[1] कह्यौ ताही भाइ ॥४११॥

[1] कह्यौ ताही बिधि गाइ—२।

षष्ठ स्कंध

राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। आधे[1] पलकहुँ जनि बिसरौ।
सुक हरि-चरननि कौं सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ। सूर तरौ हरि के गुन गाइ॥ १॥

॥ ४१२॥

परीक्षित-प्रश्न

राग बिलावल

‡ सुक सौं कह्यौ परीच्छित राइ[2]। भरत गयौ बन, राज[3] बिहाइ।
तहाँ जाइ मृग सौं चित लायौ। तातैं मरि फिरि मृग-तन पायौ।
जिनकौं पाप करत दिन जाइ। ते तौ परैं नरक मैं धाइ।
सो छूटै किहिं बिधि रिषिराइ। सूर कहौ मोसौं समुझाइ॥ २॥

॥ ४१३॥

शुक-उत्तर

राग बिलावल

§ सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो[4] राउ। पतित-उधारन है हरि[5]-नाउ।
अंतकाल हरि हरि जिन कह्यौ। ततकालहिं[6] तिन हरि-पद लह्यौ।

---

† यह पद (का, ना/इ) में है।

(१) हरि-चरनारबिंद उर —१८, १९।

‡ यह पद (स, ल, का, ना/इ, रा) में है।

(२) राज—६, ८। (३) राजहिं त्याज—६, ८।

§ यह पद (स, ल, का, ना/इ, रा) में है।

(४) तुम राइ—६, ८। (५) जदुराइ—६, ८। (६) ता काल—६, ८, १८।

तिन[1] मैं कहौं एक की कथा । नारायन कहि उधरयौ जथा
ताहि सुनै[2] जो कोउ चित लाइ । सूर तरै[3] सोऊ गुन गाइ ॥ ३।
॥४१४

लोद्धार * राग

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ
हरि हरि कहत अजामिल तरयौ । जाकौ जस सब जग बिस्तरयौ
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ । कहै-सुनै सो नर तरि जाइ
अजामिल बिप्र कनौज-निवासी । सो भयौ बृषली[4] कैं गृहबासी
जाति-पाँति तिन सब बिसराई । भच्छ-अभच्छ सबै सो खाई
ता भीलिनि कैं दस सुत भए । पहिले पुत्र भूलि तिहिं गए
लघुसुत-नाम नरायन धरयौ । तासौं हेत अधिक तिन करयौ
काल-अवधि जब पहुँची आइ । तब जम दीन्हे दूत पठाइ
नारायन सुत-नाम उचारयौ । जम-दूतनि हरि-गननि निवारयौ
दूतनि कह्यौ बड़ौ यह पापी । इन तौ पाप किए हैं धापी
बिप्र जन्म इन जूवैं हारयौ । काहे तैं तुम हमैं निवारयौ ?
गननि कह्यौ,इन नाम उचारयौ । नाम-महातम तुम न बिचारयौ
जान-अजान नाम जो लेइ । हरि बैकुंठ-वास तिहिं देइ
बिन जानैं कोउ औषध खाइ । ताकौ रोग सकल नसि जाइ

तातैं कहौं—६, ८ । (२) तरौ हरि के गुन गाइ—६, ८ । (४) भीलिन—२,
। चित लाइ—६,८ । (३) * (ना) बिभास ।

त्यौं जो हरि बिन जानैं कहै । सो सब अपने पापनि दहै
अगिनि बिना जानैं जो गहै । तातकाल सो ताकौं दहै
दोइ पुरुष कौ नाम इक होइ । एक पुरुष कौं बोलै कोइ
दोऊ ताकी ओर निहारैं । हरिहू ऐसैं भाव बिचारैं
हाँसी मैं कोउ नाम उचारै । हरि जू ताकौं सत्य बिचारैं
भयहूँ करि कोउ लेइ जो नाम । हरि जू देहि ताहि निज-धाम
जा बन केहरि-सब्द सुनाइ । ता बन तैं मृग जाहिं पराइ
नाम सुनत त्यौं पाप पराहिं । पापी हू बैकुंठ सिधाहिं
यह सुनि दूत चले खिसियाइ । कह्यौ तिन धर्मराज सौं जाइ
अब लौं हम तुमहीं कौं जानत । तुमहीं[1] कौं दँड-दाता मानत
आजु गह्यौ हम पापी एक । तिन भय मान्यौ हमकौ[2] देख
नारायन सुत-हेत उचार्‌यौ । पुरुष चतुरभुज हमैं निवार्‌यौ
उनसौं हमरौ कछु न बसायौ । तातैं तुमकौं आनि सुनायौ
औरौ दँड-दाता कोउ आहि । हमसौं क्यौं न बतावौ ताहि
धर्मराज करि हरि कौ ध्यान । निज दूतनि सौं कह्यौ बखान
नारायन सबके करतार । पालत अरु पुनि करत सँहार
ता सम दुतिया और न कोइ । जो[3] चाहै सो साजै सोइ
ताकौ उन जब नाम उचार्‌यौ । तब हरि-दूतनि तुम्हैं निवार्‌यौ
हरि के दूत जहाँ-तहाँ रहैं । हम तुम उनकी सोध न लहैं
जो-जो मुख हरि-नाम उचारैं । हरि-गन तिहिँ-तिहिँ तुरत उधारैं

_म बिनु और न धाता ८ । हमसौं नैंक—१६ । ③ तासु
. । ② हमैं अनेख— भजे सबकी गति होइ—२, ६,८ ।

नाम-महातम तुम नहिँ जानौ । नाम-महातम सुनौ, बखानौँ ।
ज्यौँ-त्यौँ कोउ हरि-नाम उच्चरै । निस्चय करि सो तरै पै तरै ।
जाके गृह मैँ हरि-जन जाइ । नाम-कीरतन करै सो गाइ ।
जद्यपि वह हरि-नाम न लेइ । तद्यपि हरि तिहिँ निज-पद देइ ।
कैसौहू पापी किन होइ । राम-नाम मुख उचरै सोइ ।
तुम्हरौ नहीँ तहाँ अधिकार । मैँ तुमसौँ यह कहौँ[1] पुकार ।
अजामील हरि-दूतनि देखि । मन मैँ कीन्हौ हर्ष बिसेषि ।
जम-दूतनि कौँ इनहिँ निवारयौ । वा भय तैँ मोहिँ इनहिँ उबारयौ ।
तब मन माहिँ आनि बैराग । पुत्र-कलत्र-मोह सब त्याग ।
हरि-पद सौँ उन ध्यान लगायौ । तातकाल बैकुंठ सिधायौ ।
अंतकाल जो नाम उचारै । सो सब अपने पापनि जारै ।
ज्ञान-बिराग तुरत तिहिँ होइ । सूर बिष्नु-पद पावै सोइ ॥ ४ ॥
॥ ४१५ ॥

गुरु-महिमा

* राग बिल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ
हरि-गुरु एक रूप नृप जानि । यामैँ कछु संदेह न आनि
गुरु प्रसन्न, हरि परसन होइ । गुरु कैँ दुखित दुखित हरि जोइ
कहौँ सो कथा, सुनौ चित धार । कहै-सुनै सो तरै भव पार

(१) कही—१, ६, ८, १६ ।
* (न) भैरवी ।

इंद्र एक दिन सभा मँझारि। बैठ्यौ हुतौ सिँहासन डारि।
सुर, रिषि, सब गँधर्ब तहँ आए। पुनि कुबेरहू तहाँ सिधाए।
सुर-गुरुहू तिहिँ औसर आयौ। इंद्र न तिहिँ उठि सीस नवायौ।
सुर-गुरु, जानि गर्व तिहिँ भयौ। तहँ तैँ फिरि निज आस्रम गयौ।
सुर-पति तब लाग्यौ पछितान। मैँ यह कहा कियौ अज्ञान।
पुनि निज गुरु-आस्रम चलि गयौ। पै सुर-गुरु दरसन नहिँ दयौ।
यह सुनि असुर इंद्र-पुर आइ। कियौ इंद्र सौँ जुद्ध बनाइ।
इंद्र-सहित तब सब सुर भागे। आस्रम अपने सबहिनि त्यागे।
पुनि सब सुर ब्रह्मा पै जाइ। कह्यौ बृत्तांत सकल, सिर नाइ।
ब्रह्मा कह्यौ, बुरौ तुम कियौ। निज गुरु कौँ आदर नहिँ दियौ।
अब तुम बिस्वरूप गुरु करौ। ता प्रसाद या दुख कौँ तरौ।
सुरपति बिस्वरूप पै जाइ। दोउ कर जोरि कह्यौ सिर नाइ।
कृपा करौ, मम प्रोहित होहु। कियौ बृहस्पति मो पर कोहु।
कह्यौ, पुरोहित होत न भलौ। बिनसि जात तेज[1]-तप सकलौ।
पै तुम बिनती बहु बिधि करी। तातैँ मैँ मन मैँ यह धरी।
यह कहि इंद्रहिँ जज्ञ करायौ। गयौ राज अपनौ तिन पायौ।
असुरनि बिस्वरूप सौँ कह्यौ। भली भई, तू सुरगुरु भयौ।
तुव ननसाल माहिँ हम आहिँ। आहुति हमैँ देत क्यौँ नाहिँ?
तिहिँ निमित्त तिन आहुति दई। सुरपति बात जानि यह लई।
करि कै क्रोध तुरत तिहिँ मार्‌यौ। हत्या हित यह मंत्र बिचार्‌यौ।
चारि अंस हत्या के किए। चारौँ अंस बाँटि पुनि दिए।
एक अंस पृथ्वी कौँ दयौ। ऊसर तामैँ तातैँ भयौ।

एक अंस बृच्छनि कौं दीन्हौं। गोंद[1] होइ प्रकास तिन कीन्हौं
एक अंस जल कौं पुनि दयौ। ह्वै कै काई जल कौं छयौ
एक अंस सब नारिनि पायौ। तिनकौं[2] रजस्वला दरसायौ
त्वष्टा बिस्वरूप कौ बाप। दुखित भयौ सुनि सुत-संताप
क्रुद्ध होइ इक जटा उपारी। बृत्रासुर उपज्यौ बल भारी
सो सुरपति कौं मारन धायौ। सुरपति हू ता सन्मुख आयौ
जेतक सस्त्र सो किए प्रहार। सो करि लिए असुर आहार
तब सुरपति मन मैं भय मान। गयौ तहाँ जहँ श्री भगवान
नमस्कार करि बिनय सुनाई। राखि राखि असरन-सरनाई
कह्यौ भगवान, उपाय न आन। रिषी दधीचि-हाड़ लै दान
ताकौ तू निज बज्र बनाउ। मरिहै असुर ताहि कैं घाउ
तब सुरपति रिषि कैं ढिग जाइ। करी बिनय बहु सीस नवाइ
बहुरि कही अपनी सब कथा। हरि जो कह्यौ, कह्यौ पुनि तथा
तिन कह्यौ देह-मोह अति भारी। सुर-पति, त यह देखि बिचारी
यह तन क्यौं हूँ दियौ न जावै। और देत कछु मन नहिं आवै
पै यह अंत न रहिहै भाई। परहित देहु तौ होइ भलाई
तन दैबे तैं नाहिं न भजौं। जोग धारना करि इहिं तजौं
गउ चटाइ, मम त्वचा उपारौ। हाड़नि कौ तुम बज्र सँवारौ
सुरपति रिषि की आज्ञा पाइ। लिए हाड़, कियौ बज्र बनाइ

---

(१) बांद्रा—८। (२) तिनकौं रजस्वला छायौ—१, १६।

रिषि सौँ नृप निज बिथा सुनाई। कहौ मोहिँ, सो करौँ उपाई
रिषि कह्यौ, पुत्र न तेरैँ होइ। होइ कहूँ, तौ दुख दै सोइ
नृप कह्यौ, एक बार सुत होइ। पाछैँ होनी होइ सो होइ
रिषि ता नृप सौँ जज्ञ करायौ। दै प्रसाद यह बचन सुनायौ
जा रानी कौँ तू यह दैहै। ता रानी[1] सैँती सुत ह्वैहै
[2]पटरानी कौँ सो नृप दियौ। तिन प्रनाम करि भोजन कियौ
रिषि-प्रसाद तैँ तिन सुत जायौ। सुत लहि दंपति अति सुख पायौ
बिप्र-जाचकनि दीन्हौ दान। कियौ उत्सव, कहा करौँ बखान
ता रानी सौँ नृप-हित भयौ। और तियनि कौ मन अति तयौ
तिन सबहिनि मिलि मंत्र उपायौ। नृपति-कुँवर कौँ जहर पियायौ
बहुत बार भई, कुँवर न जाग्यौ। दासी सौँ रानी तब माँग्यौ[3]
ल्याउ कुँवर कौँ बेगि जगाइ। दूध प्याइ कै बहुरि सुवाइ
दासी कुँवर जगावन आई। देख्यौ कुँवर मृतक की नाईँ
दासी बालक मृतक निहारि। परी धरनि पर खाइ पछारि
रानी तब तहँ आई धाइ। सुत मृत देखि परी मुरछाइ
पुनि रानी जब सुरति सँभारी। रुदन करन लागी अति भारी
रुदन सुनत राजा तहँ आयौ। देखि कुँवर कौँ अति दुख पायौ
कबहूँ मुरछित ह्वै नृप परै। कबहुँक सुत कौँ अंकम भरै
रिषि नारद, अँगिरा तहँ आए। राजा सौँ ये बचन सुनाए
को तू, को यह, देखि बिचार। स्वप्न-स्वरूप सकल संसार

---

(१) ही रानी सौं—१६। रानी—२। (३) भाख्यौ —१, २,
) तब रानी—१, १६। लघु २, १६।

सोयौ होइ सो इहिँ सत मानै। जो जागै सो मिथ्या जानै।
तातैं मिथ्या-मोह बिसारि। श्रीभगवान-चरन उर धारि।
हम तुम सौं पहिलैं ही कही। नृप सो बात आज भई सही।
नृप कौं सुनि उपज्यौ बैराग। बन कौं गयौ राज सब त्याग।
बन मैं जाइ तपस्या करी। मरि गंधर्व-देह तिन धरी।
इक दिन सो कैलास सिधायौ। सिव कौ दरसन तहँ तिहिँ पायौ।
उमा नगन देखी तिहिँ[१] राइ। उन दियौ साप ताहि या भाइ।
तू अब असुर-देह धरि जाइ। मेरौ कह्यौ न मिथ्या आइ।
उमा साप ताकौं जब दयौ। बृत्रासुर सो या बिधि भयौ।
हरि की भक्ति बृथा नहिँ जाइ। जन्म-जन्म सो प्रगटै आइ।
तातैं हरि-गुरु-सेवा कीजै। मेरौ बचन मानि यह लीजै।
ज्यौं सुक नृप सौं कहि समुझायौ। सूरदास त्यौंही कहि गायौ॥ ५
॥ ४१६

राग सारंग

गुरु बिनु ऐसी कौन करै ?
माला-तिलक मनोहर बाना, लै सिर छत्र धरै।
भवसागर तैं बूड़त राखै, दीपक हाथ धरै।
सूर स्याम गुरु ऐसौ समरथ, छिन मैं लै उधरै॥ ६ ॥
॥ ४१७ ॥

---

(१) तिन जाइ—१। बनराइ
, ६, ८

राग बिला[illegible]

[illegible]चार-शिक्षा (नहुष की कथा)

† सुरपति कौं सँताप जब भयौ। सो सुरपुर भय तैं नहिं गयौ।
नहुष नृपति पै रिषि सब आइ। कह्यौ सुर-राज करौ तुम राइ।
नहुष इंद्र-राजहिं जब पायौ। इंद्रानी कौं देखि लुभायौ।
कह्यौ इंद्रानी मो पै आवै। नृप सौं ताकौ कहा बसावै।
सुरगुरु सौं यह बात सुनाई। अवधि करन तिहिं कहि समुझाई।
सची नृपति सौं यह कहि भाषी। नृप सुनिकै हिरदै मैं राखी।
सची अग्नि कौं तुरत पठायौ। सुरपति दसा देखि सो आयौ।
इंद्रानी सुनि ब्याकुल भई। अवधि घरी ब्यतीत ह्वै गई।
तब तिन ऐसी बुद्धि उपाई। इहिं अंतर सो नहुष बुलाई।
कह्यौ तुम अस्वमेध नहिं किए। रिषि-आज्ञा तैं सुरपति भए।
बिप्रनि पै चढ़ि कै जौ आवहु। तौ तुम मेरौ दरसन पावहु।
नृपति रिषिनि पर ह्वै असवार। चल्यौ तुरंत सची कैं द्वार।
काम अंध कछु रहि न सँभारि। दुर्बासा रिषि कौं पग मारि।
सर्प-सर्प कह्यौ बारंबार। तब रिषि दीन्हौ ताकौं डार।
कह्यौ सर्प तैं भाष्यौ मोहिं। सर्प रूप तूही नृप होहि।
जबै साप रिषि सौं नृप पायौ। तब रिषि-चरननि माथौ नायौ।
इहिं सराप सौं मुक्ति ज्यौं होइ। रिषि कृपालु भाषौ अब सोइ।
कह्यौ जुधिष्ठिर देखै जोइ। तब उधार नृप तेरौ होइ।

† सूरसागर की प्राप्त प्रतियों [में] यह कथा नवम स्कंध की राम-[क]था के उपरांत आई है। भागवत में भी सूर्य, चंद्र आदि वंशों के वर्णन-प्रसंग में यह नवम स्कंध में ही रक्खी गई है। परंतु वास्तव में इसका उपयुक्त [स्थान] यहीं प्रतीत होता है।

। ऐसौ है परतिय-प्यार । मूरख करै सो बिना बिचा
ँ सुक नृप सौँ कहि समुझायौ । सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥
॥ ४१

हल्या-कथा राग ि

† सुरपति गौतम-नारि निहारि । आतुर ह्वै गयौ बिना बिचार ।
काग-रूप करि रिषि गृह आयौ । अर्धनिसा तिहिँ बोल सुनायौ ।
गौतम लख्यौ, प्रात ह्वै भयौ । न्हान काज सो सरिता गयौ ।
तब सुरपति मन माहिँ बिचारी । पतिव्रता है गौतम-नारी ।
गौतम-रूप बिना जौ जैयै । ताके साप अग्नि सौँ तैयै ।
गौतम-रूप धारि तहँ आयौ । मूर्च्छित भयौ अहिल्या पायौ ।
कह्यौ अहिल्या, तू को आहि ? बेगि इहाँ तैँ बाहिर जाहि ।
इहिँ अंतर गौतम गृह आयौ । इंद्र जानि यह बचन सुनायौ ।
मूरख तैँ पर-तिय मन लायौ । इंद्रानी तजिकै ह्याँ आयौ ।
इक भग की तोहिँ इच्छा भई । भग सहस्र मैँ तोकौँ दई ।
इंद्र सरीर सहस भग पाइ । छप्यौ सो कमल-नाल मैँ जाइ ।
काल बहुत ता ठौर बितायौ । सुरगुरु रिषिनि सहित तहँ आयौ।
जज्ञ कराइ प्रयाग न्हवायौ । तौहूँ पूरब तन नहिँ पाया ।

ह पद भी सूरसागर की यों में नहुष-कथा के । स्कंध में ही मिलता ' की कथा से इस कथा का संबंध यह प्रतीत होता है कि दोनों ही परस्त्री-प्रेम का प्रतिफल बुरा बतलाकर सदाचार की शिक्षा देते हैं। अतएव यह पद भी उपर्युक्त पद के साथ इस पर लाकर रक्खा गया है ।

तब सब रिषिनि दई आसीस । भग तैं नेत्र करौ जगदीस ।
भग अस्थान नेत्र तब भए । रिषि इंद्रहिं लै सुरपुर गए ।
परतिय-मोह इंद्र दुख पायौ । सो नृप मैं तोहिं कहि समुझायौ ।
परतिय-मोह करै जो कोइ । जीवत नरक परत है सोइ ।
सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौंहीं कहि गायौ ॥ ८ ॥
॥४१६॥

सप्तम स्कंध

नृसिंह-अवतार

राग बिल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ । राजा सौं बोल्यौ या भाइ ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ । सूर तरौ हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥ ४२० ॥

राग बिल

नरहरि, नरहरि, सुमिरन करौ । नरहरि-पद नित हिरदय धरौ ।
नरहरि-रूप धर्‌यौ जिहिँ भाइ । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ ।
हरि जब हिरन्याच्छ कौं मार्‌यौ । दसन-अग्र पृथ्वी कौं धार्‌यौ ।
हिरनकसिप सौं दिति कह्यौ आइ । भ्राता-बैर लेहु तुम जाइ ।
हिरनकसिप दुस्सह तप कियौ । ब्रह्मा आइ दरस तब दियौ ।
कह्यौ तोहिँ इच्छा जो होइ । माँगि लेहि हमसौं बर सोइ ।
राति-दिवस नभ-धरनि न मरौं । अस्त्र-सस्त्र-परहार न डरौं ।
तेरी सृष्टि जहाँ लगि होइ । मोकौं मारि सकै नहिँ कोइ ।
ब्रह्मा कह्यौ, ऐसियै होइ । पुनि हरि चाहै करिहै सोइ ।
यह कहि ब्रह्मा निज पुर आए । हिरनकसिप निज भवन सिधाए ।

यह पद (ना, ३ᵃ) में

।

भवन आइ त्रिभुवनपति भए। इंद्र, बरुन, सबही भजि गए
ताकौ पुत्र भयौ प्रह्लाद। भयौ असुर-मन अति अह्लाद
पाँच बरस की भई जब आइ। संडामर्कहिं लियौ बुलाइ
तिनकैं सँग चटसार पठायौ। राम-नाम सौं तिन चित लायौ
संडामर्क रहे पचि हारि। राजनीति कहि बारंबार
कह्यौ प्रह्लाद, पढ़त मैं सार। कहा पढ़ावत और जँजार
जब पाँड़े इत-उत कहुँ गए। बालक सब इकठौरे भए
कह्यौ, "यह ज्ञान कहाँ तुम पायौ?" "नारद माता-गर्भ सुनायौ।
सबनि कह्यौ, देउ हमैं सिखाइ। सबहिनि कैं मन ऐसी आइ
कह्यौ सबनि सौं तब समुझाइ। सब तजि, भजौ चरन रघुराइ
रामहिं राम पढ़ौ रे भाई। रामहिं जहँ-तहँ होत सहाई
इहाँ कोउ काहू कौ नाहिं। रिन-संबंध मिलन जग माहिं
काल-अवधि जब पहुँचै आइ। चलत बार कोउ संग न जाइ
सदा सँघाती श्री जदुराइ। भजियै ताहि सदा लव लाइ
हर्त्ता-कर्त्ता आपै सोइ। घट-घट व्यापि रह्यौ है जोइ
तातैं द्वितिया और न कोइ। ताके भजैं सदा सुख होइ
दुर्लभ जन्म सुलभ ही पाइ। हरि न भजै सो नरकहिं जाइ
यह जिय जानि विषय परिहरौ। रामहि-राम सदा उच्चरौ
सत संबत मानुष की आइ। आधी तौ सोवत ही जाइ
कछु बालापन ही मैं बीतै। कछु बिरधापन माहिं वितीतै
कछु नृप-सेवा करत बिहाइ। कछु इक विषय-भोग मैं जाइ
ऐसैं हीं जो जनम सिराइ। बिनु हरि-भजन नरक महँ जाइ

बालपनो गए ज्वानी आवै। वृद्ध भए मूरख पछितावै।
तीनौंपन ऐसैं हीं जाइ। तातैं अवहिं भजौ जदुराइ।
विषै-भोग सब तन मैं होइ। बिनु नर-जन्म भक्ति नहिं होइ।
जौ न करै तौ पसु सम होइ। तातैं भक्ति करौ सब कोइ।
जब लगि काल न पहुँचै आइ। हरि की भक्ति करौ चित लाइ।
हरि व्यापक है सब संसार। ताहि भजौ अब सोचि-बिचार।
सिसु, किसोर, बिरधौ तनु होइ। सदा एकरस आतम सोइ।
ऐसौ जानि मोह कौं त्यागौ। हरि-चरनारबिंद अनुरागौ।
माटी मैं ज्यौं कंचन परै। त्यौंहीं आतम तन संचरै।
कंचन लै ज्यौं माटी तजै। त्यौं तन-मोह छाँड़ि, हरि भजै।
नर-सेवा तैं जौ सुख होइ। छनभंगुर थिर रहै न सोइ।
हरि की भक्ति करौ चित लाइ। होइ परम सुख, कबहुँ न जाइ।
ऊँच-नीच हरि गिनत न दोइ। यह जिय जानि भजौ सब कोइ।
असुर होइ, भावै सुर होइ। जो हरि भजै पियारौ सोइ।
रामहिं राम कहौ दिन-रात। नातरु जन्म अकारथ जात।
सौ बातनि की एकै बात। सब तजि भजौ जानकी-नाथ।
सब चेटुअनि[1] मन ऐसी आई। रहे सबै हरि-पद चित लाई।
हरि-हरि नाम सदा उच्चारैं। बिद्या और न मन मैं धारैं।
तब संडामर्का संकाइ। कह्यौ असुर-पति सौं यौं जाइ।
तुव सुत कौं पढ़ाइ हम हारे। आपु पढ़ै नहिं, और बिगारै।
राम-नाम नित रटिबौ करै। राजनीति नहिं मन मैं धरै।

चटियन—१। चेते ऐसे आई—३। लरिकनि ऐसी मन
—२। जन ते ऐसी बनि आई—८।

तातैं कही तुम्हैं हम आइ। करिबे होइ सु करौ उपाइ
हरिनकसिप तब सुतहिं बुलाइ। कछुक प्रीति, कछु डर दिखराइ
बहुरौ गोद माहिं बैठार। कह्यौ, पढ़े कहा बिद्या-सार ?
"सार बेद चारौं कौ जोइ। छैऊ सास्त्र-सार पुनि सोइ
'सर्ब पुरान माहिं जो सार। राम नाम मैं पढ़्यौ बिचार।"
कह्यौ, याहि लै जाउ उठाइ। सुमिरत मो रिपु कौं चित लाइ
मेरी ओर न कछू निहारै। याकौं पावक भीतर डारौ
जो ऐसी करतहुँ नहिं मरै। डारि देहु गज मैमत-तरैं
पर्बत सौं इहिं देहु गिराइ। मरै जौन बिधि मारौ जाइ
नृप-आज्ञा लयौ कुँवर उठाइ। कुँवर रह्यौ हरि-पद चित लाइ
असुर चले तब कुँवर लिवाइ। हरि जू ताकी करी सहाइ
असुरनि गिरि तैं दियौ गिराइ। राखि लियौ तहँ त्रिभुवनराइ
पुनि गज मैमत आगैं डारयौ। राम-नाम तब कुँवर उचारयौ
गज दोउ दंत टूटि धर परे। देखि असुर यह अचरज डरे
बहुरौ[1] दीन्हे नाग ढुकाइ[2]। जिनकी ज्वाला गिरि जरि जाइ
हरि जू तहँ हूँ करी सहाइ। नाग रहे सिर नीचैं नाइ
पुनि पावक मैं दियौ गिराइ। हरि जू ताकी करी सहाइ
करैं उपाइ सो बिरथा जाइ। तब सब असुर रहे खिसिआइ
कह्यौ असुर-पति सौं उन जाइ। मरत नहीं बहु किए उपाइ

बहुरौ नाग दयौ लप-
। ② धुकाइ—६।
-८।

हम तौ बहुत भाँति पचिहारे । इन तौ रामहिँ नाम उचारे ।
नृप कह्यौ, "मंत्र-जंत्र कछु आहि । कै छल करत कछू तू आहि ?
'ताकौँ कौन बचावत आइ । सो तू मोकौँ देहि बताइ" ।
"मंत्र-जंत्र मेरैँ हरि-नाम । घट-घट मैँ जाकौ बिस्राम ।
'जहाँ-तहाँ सोइ करत सहाइ । तासौँ तेरौ कछु न बसाइ" ।
कह्यौ, "कहाँ सो मोहिँ बताइ । ना तरु तेरौ जिय अब जाइ" ।
"सो सब ठौर", "खंभहूँ होइ ?" कह्यौ प्रहलाद, "आहि, तू जोइ ।"
हिरनकसिप क्रोधहिँ मन धार्‌यौ । जाइ खंभ कौँ मुष्टिक मार्‌यौ ।
फटि तब खंभ भयौ द्वै फारि । निकसे हरि नरहरि-बपु धारि ।
देखि असुर चक्रित ह्वै गयौ । बहुरि गदा लै सन्मुख भयौ ।
हरि तासौँ कियौ जुद्ध बनाइ । तब सुर मुनि सब गए डराइ ।
संध्या समय भयौ जब आइ । हरि जू ताकौँ पकर्‌यौ धाइ ।
निज जंघनि पर ताहि पछार्‌यौ । नख-प्रहार तिहिँ उदर बिदार्‌यौ ।
जै-जैकार दसौँ दिसि भयौ । असुर देह तजि, हरि-पुर गयौ ।
ब्रह्मादिक सब रहे अरगाइ । क्रोध देखि कोउ निकट न जाइ ।
बहुरौ ब्रह्मा सुरनि समेत । नरहरि जू कैँ जाइ निकेत ।
करि दंडवत बिनय उच्चारी । "तुम अनंत-बिक्रम बनवारी ।
'तुमहीँ करत त्रिगुन बिस्तार । उतपति, थिति, पुनि करत सँहार
करौ छमा कियौ असुर-सँहार ।" गयौ न क्रोध, गयौ सो निहार
महादेव पुनि बिनय उचारी । "नमो-नमो भक्तनि-भयहारी
'भक्त-हेत तुम असुर सँहारौ । श्री नरहरि, अब क्रोध निवारौ"
क्रोध न गयौ, तब ऐसैँ कह्यौ । "छमौ प्रलय कौ समय न भयौ"

तबहूँ गयौ न क्रोध-बिकार। महादेव हू फिरे निहार
बहुरि इंद्र अस्तुति उचारी। "मुयौ असुर, सुर भए सुखारी
'ह्वैहैं जज्ञ अब देव मुरारी। छमियै क्रोध सुरनि सुखकारी"
पुनि लछमी यौं बिनय सुनाई। "डरौं देखि यह रूप नवाई
'महाराज, यह रूप दुरावहु। रूप चतुर्भुज मोहिं दिखावहु"
बरुन, कुबेरादिक पुनि आइ। करी बिनय तिनहूँ बहु भाइ
तौहूँ क्रोध छमा नहिं भयौ। तब सब मिलि प्रहलादहिं कह्यौ
तुम्हरैं हेत लियौ अवतार। अब तुम जाइ करौ मनुहार
तब प्रहलाद निकट-हरि आइ। करि दंडवत पर्‍यौ गहि पाइ
तब नरहरि जू ताहि उठाइ। ह्वै कृपाल बोले या भाइ
"कहु जो मनोरथ तेरौ होइ। छाँड़ि बिलंब करौं अब सोइ"
"दीनानाथ, दयाल, मुरारि। मम हित तुम लीन्हौ अवतार
'असुर असुचि है मेरी जाति। मोहिं सनाथ कियौ सब भाँति
'भक्त तुम्हारी इच्छा करैं। ऐसे असुर किते संहरैं
'भक्तनि हित तुम धारी देह। तरिहैं गाइ-गाइ गुन एह
'जग-प्रभुत्व प्रभु, देख्यौ जोइ। सपन[1]-तुल्य छनभंगुर सोइ
'इंद्रादिक जातैं भय कर्‍यौ। सो मम पिता मृतक ह्वै पर्‍यौ
'साधु-संग प्रभु, मोकौं दीजै। तिहि संगति निज भक्ति करीजै
'और न मेरी इच्छा कोइ। भक्ति अनन्य तुम्हारी होइ
'और जो मो पर किरपा करौ। तौ सब जीवनि कौं उद्धरौ

(१) सो बिन तुम—१, ११।

'जो कहौ, कर्मभोग जब करिहैँ । तब ये जीव सकल निस्तरिहैँ
'मम कृत इनके बदलैँ लेहु । इनके कर्म सकल मोहिँ देहु
'मोकौँ नरक माहिँ लै डारौ । पै प्रभु जू, इनकौं निस्तारौ ।"
पुनि कह्यौ, "जीव दुखित संसार । उपजत-बिनसत बारंबार
'बिना कृपा निस्तार न होइ । करौ कृपा, मैँ माँगत सोइ
'प्रभु, मैँ देखि तुम्हैँ सुख पावत । पै सुर देखि सकल डर पावत
'तातैँ महा भयानक रूप । अंतर्धान करौ सुर-भूप ।"
हरि कह्यौ, "मोहिँ बिरद की लाज । करौ मन्वंतर लौँ तुम राज
'राज-लच्छमी-मद नहिँ होइ । कुल इकीस लौँ उधरै सोइ
'जो मम भक्त के[1] मग मैं जाइ । होइ पवित्र ताहि परसाइ
'जा कुल माहिँ भक्त मम होइ । सप्त पुरुष लौँ उधरै सोइ ।"
पुनि प्रहलाद राज बैठाए । सब असुरनि मिलि सीस नवाए
नरहरि देखि हर्ष मन कीन्हौ । अभयदान प्रहलादहिँ दीन्हौ
तब ब्रह्मा बिनती अनुसारी । "महाराज, नरसिंह, मुरारी
'सकल सुरनि कौ कारज सरौ । अंतर्धान रूप यह करौ ।'
तब नरहरि भए अंतर्धान । राजा सौं सुक कह्यौ बखान
जो यह लीला सुनै-सुनावै । सूरदास हरि भक्ति सो पावै ॥२

॥ ४२१

---

(१) नरक मैं—१, १६ । भक्तन मे—६, ८ ।

* राग राम

† पढ़ौ भाइ[1], राम-मुकुंद-मुरारि ।
|| चरन-कमल मन[2]-सनमुख राखौ, कहूँ न आवै हारि ।
कहै प्रहलाद सुनौ रे बालक, लीजै जनम सुधारि ।
को है हिरनकसिप अभिमानी, तुम्हैं[3] सकै जो मारि ?
|| जनि डरपौ जड़मति काहू सौं, भक्ति करौ इकसारि ।
राखनहार अहै[4] कोउ औरै, स्याम धरे भुज चारि ।
सत्य[5] स्वरूप देव नारायन, देखौ हृदय बिचारि ।
सूरदास प्रभु[6] सबमैं ब्यापक, ज्यौं धरनी मैं बारि ॥३॥
॥४२२॥

राग का

जो मेरे भक्तनि दुखदाई ।
सो मेरे इहिं लोक बसौ जनि, त्रिभुवन छाँड़ि अनत कहुँ जाई
सिव-बिरंचि-नारद मुनि देखत, तिनहुँ न मोकौं सुरति दिवाई
बालक, अबल, अजान रह्यौ वह, दिन-दिन देत त्रास अधिकाई
खंभ फारि, गल गाजि मत्त बल, क्रोधमान छबि बरनि न आई

---

* (ना) स्यामकल्यान । (का,) देवगंधार । (काँ, रा) ंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(१) भैया कृष्न गोविंद—१, १६ ।

|| ये दोनौं चरण (वे, ना, श्या) में नहीं हैं ।

(२) मानसमुख—८ । (३) जोर सकै तुम मारि—१, २, १८ । (४) अहै कोउ औरै—१ । और है कोई—३, ६, ८ । (५) कर्म रूप सु (कर्म स्वरूप) देव न नहिं दीजै सु बिसारि—१

(६) जो हरि से मीता क आवै हारि—१६ ।

नैन अरुन, बिकराल दसन अति, नख सौँ हृदय बिदारयौ जाई।
कर जोरे प्रहलाद जो बिनवै, विनय सुनौ असरन-सरनाई।
अपनी रिस निवारि प्रभु, पितु मम अपराधी, सो परम गति पाई।
दीनदयाल, कृपानिधि, नरहरि, अपनौ जानि हियैं लियौ लाई।
सूरदास प्रभु पूरन ठाकुर, कह्यौ[1], सकल[2] मैं हूँ[3] नियराई ॥४॥
॥४२३॥

* राग धनाश्री

† तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं।
सुनि प्रहलाद प्रतिज्ञा मेरी, जब लगि तव सिर छत्र न दैहौं।
मन-बच-कर्म जानि जिय अपनै, जहाँ-जहाँ जन तहँ-तहँ ऐहौं।
निर्गुन-सगुन होइ सब देख्यौ, तोसौं भक्त कहूँ नहिं पैहौं।
मो देखत मो दास दुखित भयौ, यह कलंक हौं कहाँ गँवैहौं!
हृदय कठोर कुलिस तैं मेरौ, अब नहिँ दीनदयालु कहैहौं।
गहि तन हिरनकसिप कौ चीरौं, फारि उदर तिहिँ रुधिर नहैहौं।
यह[4] हित मनै कहत सूरज प्रभु, इहिँ[5] कृति कौ फल तुरत चखैहौं ॥५॥
॥४२४॥

राग मारू

ऐसी को सकै करि बिनु मुरारी।
कहत प्रहलाद के धारि नरसिंह बपु, निकसि आए तुरत खंभ फारी।

---

(१) गह्यौ—६, ८। (२) [...]ी मैं—१६। (३) हैं—२। * (ना) बिलावल। (काँ) कान्हरा। † यह पद (रा) में नहीं है। (४) इहिँ हित मतै—१६। (५) जाकौ फल करि तोहिँ दिखैहौं—२। या कृत कौ फल—१६।

हिरनकस्यप निरखि रूप चकित भयौ, बहुरि कर लै गदा असुर-धायौ ।
हरि गदा-जुद्ध तासौं कियौ भली विधि बहुरि संध्या समय होन आयौ ।
गहि असुर धाइ, पुनि नाइ निज जंघ पर, नखनि सौं उदर डारयौ बिदारी ।
देखि यह सुरनि बर्षा करी पुहुप की, सिद्ध-गंधर्ब जय-धुनि उचारी ।
बहुरि बहु भाइ प्रहलाद अस्तुति करी, ताहि दै राज बैकुँठ सिधाए ।
भक्त कैं हेत हरि धरयौ नरसिंह-बपु, सूर जन जानि यह सरन आए ॥६॥
॥४२५॥

:वान् का श्री शिव को साहाय्य-प्रदान *राग बिलाव

हरि हरि, हरि हरि सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि ज्यौं सिव की करी सहाइ । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ ।
एक समय सुर-असुर प्रचारि । लरे भई असुरनि की हारि ।
तिन ब्रह्मा कैं हित तप कीन्हौ । ब्रह्मा प्रगटि दरस तिन्ह दीन्हौ ।
तब ब्रह्मा सौं कह्यौ सिर नाइ । हमरी जय ह्वै है किहिं भाइ ?
ब्रह्मा तब यह बचन उचारौ । मय माया-मय कोट सँवारौ ।
तामैं बैठि सुरनि जय करौ । तुम उनके मारैं नहिं मरौ ।
असुरनि यह मय कौं समुझाई । तब मय दीन्हौ कोट बनाई ।
लोह तरैं, मधि रूपा लायौ । ताके ऊपर कनक लगायौ ।
जहँ लै जाइ तहाँ वह जाइ । त्रिपुर नाम सो कोट कहाइ ।
गढ़ कैं बल असुरनि जय पाइ । लियौ सुरनि सौं अमृत छिनाइ ।
सुर सब मिलि गए सिव-सरनाइ । सिव तब तिनकी करी सहाइ ।

* (ना) भैरवी ।

पै सिव जाकौँ मारैँ धाइ । अमृत प्याइ तिहिँ लेहिँ जिवाइ ।
तब सिव कीन्हौ हरि कौ ध्यान । प्रगट भए तहँ श्रीभगवान ।
सिव हरि सौँ सब कथा सुनाई । हरि कह्यौ, अब मैँ करौँ सहाई ।
सुंदर गऊ-रूप हरि कीन्हौ । बछरा करि ब्रह्मा सँग लीन्हौ ।
अमृत-कुंड मैँ पैठे जाइ । कह्यौ असुरनि, मारौ इहिँ गाइ ।
एकनि कह्यौ, याहि मत मारौ । याकौ सुंदर रूप निहारौ ।
केतिक अमृत पिए यह भाई । हरि मति तिनकी यौँ भरमाई ।
हरि अंमृत लै[1] गए अकास । असुर देखि यह भए उदास ।
कह्यौ, इनहीँ हिरनाच्छहिँ मारयौ । हिरनकसिप इनहीँ संहारयौ ।
यासौँ हमरौ कछु न बसाइ । यह कहि असुर रहे खिसियाइ ।
बान एक हरि सिव कौँ दियौ । तासौँ सब असुरनि छय कियौ ।
या विधि हरि जू करी सहाइ । मैँ सो तुमकौँ दई सुनाइ ।
सुक ज्यौँ नृप कौँ कहि समुझायौ । सूरदास जन त्यौँही गायौ ॥ ७ ।

॥४२६

ारद्-उत्पत्ति-कथा

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि - चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि भजि जैसैँ नारद भयौ । नारद ब्यासदेव सौँ कह्यौ ।
कहौँ सो कथा, सुनौ चित धार । नीच-ऊँच हरि कैँ इकसार ।
गंध्रब ब्रह्मा - सभा मँझारि । हँस्यौ अप्सरा-ओर निहारि ।
कह्यौ ब्रह्मा, दासी-सुत होहि । सकुच न करी देखि तैँ मोहिँ ।

(१) पिय (पिइ)—१, १६ ।
—२ ।

* (ना) बिभास ।

भयौ दासी - सुत ब्राह्मन - गेह । तुरत छाँड़िकै गंध्रब - देह ।
ब्राह्मन-गृह हरि के जन आए । दासी-दास सेव - हित लाए ।
हरि-जन हरि-चरचा जो करै । दासी-सुत सो हिरदैं धरै ।
सुनत-सुनत उपज्यौ बैराग । कह्यौ, जाउँ क्यौं माता त्याग ।
ताकी माता खाई कारैं । सो मरि गई साँप के मारैं ।
दासी - सुत बन - भीतर जाइ । करी भक्ति हरि-पद चित लाइ ।
ब्रह्म-पुत्र तन तजि सो भयौ । नारद यौं अपनैं मुख कह्यौ ।
हरि की भक्ति करै जो कोइ । सूर नीच सौं ऊँच सो होइ ॥ ८ ॥

॥४२७॥

अष्टम स्कंध

* राग बिला

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ। सूर तरौ[1] हरि के गुन गाइ॥ १

॥ ४१८

ज-मोचन-अवतार

* राग बिला

गज-मोचन ज्यौं भयौ अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
गंध्रब एक नदी मैं जाइ। देवल रिषि कौं पकर्‍यौ पाइ।
देवल कह्यौ, ग्राह तू होहि। कह्यौ गंधर्ब, दया करि मोहिं।
जब गजेंद्र कौ पग तू गैहै। हरि जू ताकौ आनि छुटैहै।
भएँ अस्पर्स देव-तन धरिहै। मेरौ कह्यौ नाहिं यह टरिहै।
राजा इंद्रद्युम्न कियौ ध्यान। आए अगस्त्य, नहीं तिन जान।
दियौ साप गजेंद्र तू होहि। कह्यौ नृप, दया करौ रिषि मोहिं।
कह्यौ, तोहिं ग्राह आनि जब गैहै। तू नारायन सुमिरन कैहै।
याही बिधि तेरी गति होइ। भयौ त्रिकूट पर्वत गज सोइ।
कालहिं पाइ ग्राह गज गह्यौ। गज बल करि-करिकै थकि रह्यौ।
सुत पत्नीहू बल करि रहे। छूट्यौ नहीं ग्राह के गहे।

---

* (ना) बिभास। ① दास—१, ११। * (ना) बिभास।

सब भूखे, दुःखित भए। गज कौ मोह छाँड़ि उठि
गज हरि की सरनहिं आयौ। सूरदास प्रभु ताहि छुड़ायौ

* राग

माधौ जू, गज ग्राह तैं छुड़ायौ।
निगमनि हूँ मन-वचन-अगोचर, प्रगट सो रूप दिखायौ
सिव-बिरंचि देखत सब ठाढ़े, बहुत दीन[1] दुख पायौ
बिन बदलैं उपकार करै को, काहूँ करत न आयौ
चिंतत ही चित मैं चिंतामनि, चक्र लिए कर धायौ
अति करुना-कातर करुनामय, गरुड़हु कौं छुटकायौ
सुनियत सुजस जो निज जन कारन कबहुँ न गहरु लगायौ
ना जानौं सूरहिं इहिं औसर, कौन दोष बिसरायौ
॥ ४२

* राग

हरबर[2] चक्र धरे हरि धावत।
गरुड़ समेत सकल सेनापति, पाछैं लागे आवत
चलि नहिं सकत गरुड़ मन डरपत, बुधि बल बलहिं बढ़ावत
मनहूँ[3] तैं अति बेग अधिक करि, हरिजू चरन चलावत

(ना) नटनारायनी।
, क) धनाश्री। (कां)

(१) दिनन—२।
* (ना) बडहंस।
(२) हरि कर चक्र धरे धर

धावत—१, ३, ६, ८
१९। (३) मनो पवन :
तन अपनो चरन—१,

को जानै प्रभु कहाँ चले हैं, काहूँ कछु न जनावत ।
अति व्याकुल गति देखि देव-गन, सोचि सकल दुख पावत ।
गज-हित धावन, जन-मुकरावन, बेद बिमल जस गावत ।
सूर समुझि, समुझाइ अनाथनि, इहिँ बिधि नाथ छुड़ावत ॥

॥ ४

* राग

झाईं[1] न मिटन[2] पाई, आए हरि आतुर ह्वै,
जान्यौ जब गज ग्राह लिए जात जल मैं ।
जादौपति[3], जदुनाथ, छाँड़ि खगपति-साथ,
जानि जन बिह्वल, छुड़ाइ लीन्हौ पल मैं ।
नीरहू तैं न्यारौ कीनौ, चक्र नक्र-सीस छीनौ,
देवकी के प्यारे लाल ऐंचि लाए थल मैं ।
कहै सूरदास, देखि नैननि की मिटी प्यास,
कृपा कीन्ही गोपीनाथ, आए भुव-तल मैं ॥ ५ ॥

॥ ४३२ ॥

* राग ि

‡ अब हौं सब दिसि हेरि रह्यौ ।
राखत[4] नाहिँ कोउ करुनानिधि, अति बल ग्राह गह्यौ ।

ना) कान्हरो ।
पद का पाठ बड़ा अस्त-
समस्त प्रतियों की सहा-
इसके सुधारने की चेष्टा
।
ापे न मिटन पाए—६,
८। (२) मुनिन—२। (३) "यादव-पति यदुनाथ खगपति साथ जन जान्यौ बिहबल तब छाँड़ि दियौ थल मैं—१।

* (का, ना) केदारा। (क) जैतश्री। (का) सारंग।

‡ यह पद (ना, रा) में नहीं है।

(४) तुम बिन को: कृपानिधि—८।

सुर, नर, सब स्वारथ के गाहक, कत स्रम आनि करैं ?
उड़गन उदित तिमिर नहिं नासत, बिन रवि रूप धरैं ।
इतनी बात सुनत करुनामय, चक्र गहे कर धाए ।
हति गज-सत्रु सूर के स्वामी, ततछन[1] सुख उपजाए ॥ ६ ॥
॥ ४३३ ॥

कूर्म-अवतार *राग बिलावर

जैसैं भयौ कूर्म-अवतार । कहौं, सुनौ सो अब चित धार ।
नरहरि हिरनकसिप जब मार्‍यौ । अरु प्रहलाद राज बैठार्‍यौ ।
ताकौ पुत्र बिरोचन रयौ । ताकैं बहुरि पुत्र बलि भयौ ।
बलि सुरपति कौं बहु दुख दयौ । तब सुरपति हरि-सरनैं गयौ ।
हरि जू अपनौ बिरद सँभार्‍यौ । सूरज-प्रभु कूरम-तनु धार्‍यौ ॥ ७ ॥
॥ ४३४ ॥

*राग मारू

सुरनि हित हरि कछप-रूप धार्‍यौ ।
मथन करि जलधि, अंमृत निकार्‍यौ ।
चतुर्मुख त्रिदसपति बिनय हरि सौं करी, बलि असुर सौं सुरनि दुःख पायौ
दीनबंधू, दयाकरन, असरन-सरन, मंत्र यह तिनहिं निज मुख सुनायौ
बासुकी नेति अरु मंदराचल रई, कमठ मैं आपनी पीठि धारौं
असुर सौं हेत करि, करौ सागर मथन, तहाँ तैं अमृत कौं पुनि निकारौ
रतन चौदह तहाँ तैं प्रगट होहिं तब, असुर कौं सुरा, तुम्हैं अमृत प्याऊँ
जीतिहौ तब असुर महा बलवंत कौं, मरैं नहिं देवता, यौं जिवाऊँ

(१) ता छिन—१,१६ । * (ना) भैरवी । * (ना) भैरव । (ट्टी) बिलावल

इंद्र मिलि सुरनि बलि-पास आए बहुरि, उन कह्यौ, कहौ किहिँ काज आए
त्रिदसपति समुद के मथन के बचन जो, सो सकल ताहि कहिकै सुनाए
बलि कह्यौ, बिलँब अब नैँकु नहिँ कीजियै, मंदराचल अचल चले धाई
दोउ इक मंत्र ह्वै जाइ पहुँचे तहाँ, कह्यौ, अब लीजियै इहिँ उचाई
मंदराचल उपारत भयौ स्रम बहुत, बहुरि लै चलन कौँ जब उठायौ
सुर-असुर बहुत ता ठौरहीँ[१] मरि गए, दुहुनि कौ गर्ब यौँ हरि नसायौ
तब दुहुँनि ध्यान भगवान कौ धरि कह्यौ, बिन तुम्हारी कृपा गिरि न जाई
बाम कर सौँ पकरि, गरुड़ पर राखि हरि, छीर कैँ जलधि तट धर्यौ ल्याई
कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै, जाइ तिन बासुकी सौँ सुनायौ
मानि भगवंत-आज्ञा सो आयौ तहाँ, नेति करि अचल कौँ सिंधु नायौ
मंदराचल समुद माहिँ बूड़न लग्यौ, तब सबनि बहुरि अस्तुति सुनाई
कूर्म कौ रूप धरि, धर्यौ गिरि पीठि पर, सुर-असुर सबनि कैँ मन बधाई
पूँछ[२] कौँ तजि असुर दौरिकै मुख गह्यौ, सुरनि तब पूँछ की ओर लीन्हौ
मथत भए छीन, तब बहुरि बिनती करी, श्रीमहाराज निज सक्ति दीन्हौ
भयौ हलाहल प्रगट प्रथमहीँ मथत जब, रुद्र कैँ कंठ दियौ ताहि धारी
चंद्रमा बहुरि जब मथत आयौ निकसि, सोउ करि कृपा दीन्हौ मुरारी
कामनाधेनु पुनि सप्तरिषि कौँ दई, लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे
अप्सरा, पारिजातक, धनुष, अस्व, गज स्वेत, ये पाँच सुरपतिहिँ दीन्हे
संख, कौस्तुभमनी, लई पुनि आप हरि, लच्छमी बहुरि तहँ दइ दिखाई
परम सुंदर, मनौ तड़ित है दूसरी[३], कमल की माल कर लियैँ आई

---

(१) भार ते—६, ८ । (२) पूजि गनपति—२, ३ । (३) दर्शनीय—१ । दर्शनी—१

देखि सुर-असुर सब दौरि लागे गहन, कह्यौ मैं वर बरौं आप-भायौ
जो चहै मोहिँ मैं ताहि नाहीं चहौं, असुर कौ राज थिर नाहिँ देखौं
तपसियनि देखि कह्यौ, क्रोध इनमें बहुत, ज्ञानियनि मैं न आचार पेखौं
सुरनि कौं देखि कह्यौ, ये पराधीन सब, देखि बिधि कौं कह्यौ, यह बुढ़ायौ
चिरंजीवीनि कौं देखि कह्यौ निडर ये, लोक तिहुँ माहिँ कोउ चित न आयौ
बहुरि भगवान कौं निरखि सुंदर परम, कह्यौ, इन माहिँ गुन हैं सुभाए
पै न इच्छा इन्हैं है कछू वस्तु की, अरु न ये देखि कै मोहिँ लुभाए
कबहुँ कियैं भक्ति हू के न ये रीझहीं, कबहुँ कियैं बैर के रीझि जाहीं
हरि कह्यौ, मम हृदय माहिँ तू रहि सदा, सुरनि मिलि देव-दुंदुभि बजाई
धन्य-धनि कह्यौ पुनि लच्छमी सौं सबनि, सिद्ध-गंधर्व जय-ध्वनि सुनाई
बहुरि धन्वंत्रि आयौ समुद सौं निकसि, सुरा अरु अमृत निज संग लायौ
भयौ आनंद सुर-असुर कौं देखि कै, असुर तब अमृत करि बल छिनायौ
सुरनि भगवान सौं आनि बिनती करी, असुर सब अमृत लै गए छिनाई
||कह्यौ भगवान्, चिंता न कछु मन धरौ, मैं करौं अब तुम्हारी सहाई
||परसपर असुर तब जुद्ध लागे करन, होइ बलवंत सोइ लै छिनाई
मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ, देखि सुर-असुर सब रहे लुभाई
आइ असुरनि कह्यौ, लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौं बाँटि, मेटौ लराई
हँसि कह्यौ, नहीं हम-तुम्हैं कछु मित्रता, बिना बिस्वास बाँट्यौ न जाई
कह्यौ, तुम[1]-बाँटि पर हमैं बिस्वास है, देहु तुम बाँटि जो धर्म होई

|| ये दो चरण (ना, क, ना/३, श्या) में नहीं हैं।

(१) पुनि पायँ परि—२, ३।

कह्यौ, सब सुर-असुर मथन कीन्हौ जलधि, सबनि देउँ बाँटि, है धर्म सोई ।
कह्यौ, जो करौ सो हमैं परमान है, असुर-सुर पाँति करि तब बिठाई ।
असुर-दिसि चितै मुसुक्याइ मोहे सकल, सुरनि कौं अमृत दीन्ह्यौ पियाई ।
राहु ससि-सूर के बीच मैं बैठि कै, मोहिनी सौं अमृत माँगि लीन्हौ ।
सूर-ससि कह्यौ, यह असुर, तब कृष्नजू लै सुदरसन सु द्वै टूक कीन्हौ ।
राहु सिर, केतु धर कौ भयौ तबहिं तैं, सूर-ससि कौं सदा दुःखदाई ।
करत भगवान रच्छा जो ससि-सूर की, होत है नित सुदरसन सहाई ।
करि अँतरधान हरि मोहिनी-रूप कौं, गरुड़ असवार ह्वै तहाँ आए ।
असुर चकित भए, गई वह नारि कहँ, सुर-असुर जुद्ध-हित दोउ धाए ।
सुरनि की जीति भई, असुर मारे बहुत, जहाँ-तहँ गए सबही पराई ।
सूर प्रभु जिहिं करैं कृपा, जीतै सोई, बिनु कृपा जाइ उद्यम बृथाई ॥ ८॥
॥ ४३५ ॥

* राग बिहागरौ

† ऐसौ को सकै करि तुम[1] बिनु मुरारी ।
सुरनि के कहत ही, धारि कूरम तनहिं, मंदराचल लियौ पीठि धारी ।
सिंधु मथि सुरासुर अमृत बाहर कियौ, बलि असुर लै चल्यौ सो छिनाई ।
मोहिनी-रूप तुम दरस तिनकौं दियौ, आनि तब सबनि बिनती सुनाई ।
अमृत यह बाँटि कै देहु तुम सबनि कौं, कृपा करि रारि डारौ मिटाई ।
सुर-असुर-पाँति करि, सुरा असुरनि दई, सुरनि कौं अमृत दीन्हौ पियाई ।
राहु-सिर, केतु धर, भयौ यह तबहिं तैं, सूर-ससि दियौ ताकौं बताई ।

---

* (का, काँ, रा) मारू ।
† यह पद (वे, ना, वृ, श्या) में नहीं है ।
(१) बिना तुम—२, ६, ८, १८ ।

चक्र सौं काटि सिर, कियौ द्वै टूक तब, असुरहूँ देवगति तुरत पाई।
भक्तबच्छल, कृपाकरन, असरन-सरन, पतित-उद्धरन कहै बेद गाई।
चारिहूँ जुग करी कृपा परकार[1] जेहि, सूरहू पर करौ तेहिं सुभाई॥ ६ ॥
॥ ४३६ ॥

मोहिनी-रूप, शिव-छलन राग मारू

हरि कृपा करै जिहिँ, जितै सोई। बादि अभिमान जनि करौ कोई।
पाइ सुधि मोहिनी की सदासिव चले, जाइ भगवान सौँ कहि सुनाई।
असुर अजितेंद्रि जिहिँ देखि मोहित भए, रूप सो मोहिँ दीजै दिखाई।
हरि कह्यौ, "ब्रह्म ब्यापक निराकार सौँ[2] मगन तुम, सगुन लै कहा करिहौ" ?
पुनि कह्यौ, "बिनय मम मानि लीजै प्रभो, उमा देख्यौ चहति, कृपा धरिहौ" ?
हँसि कह्यौ, "तुम्हैँ दिखराइहौं रूप वह, करौ बिस्राम इक ठौर जाई"।
बैठि एकांत जोहन लगे पंथ सिव, मोहिनी रूप कब दै दिखाई।
ह्वै अँतरधान हरि, मोहिनी रूप धरि, जाइ वन माहिँ दीन्हैँ दिखाई।
सूर-ससि किधौँ चपला परम सुंदरी, अंग-भूषननि छवि कहि न जाई।
हाव अरु भाव करि चलत, चितवत जबै, कौन ऐसौ जो मोहित न होई!
उमा कौँ छाँड़ि अरु डारि मृगचर्म कौँ, जाइकै निकट रहे[3] रुद्र जोई।
रुद्र कौँ देखि कै मोहिनी लाज करि, लियौ अँचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ।
उमाहूँ देखि पुनि ताहि मोहित भई, तासु सम रूप अपनौ न जोह्यौ।
रुद्र तजि धीर जब जाइ ताकौँ गह्यौ, सो चली आपु कौँ तब छुड़ाई।
रुद्र कौ बीर्य खसि कै पर्यौ धरनि पर, मोहिनी रूप हरि लियौ दुराई।

---

(१) सुर संत पर—६, ८। (२) सो निगुन—१, ६, ८, ११। (३) भयौ बिकल—२।

देखिकै उमा कौँ रुद्र लज्जित भए, कह्यौ मैँ कौन यह काम कीनौ।
इंद्रि-जित हौँ कहावत हुतौ, आपु कौँ समुझि मन माहिँ है रह्यौ खीनौ।
चतुरभुज रूप धरि आइ दरसन दियौ, कह्यौ, सिव सोच दीजै बिहाई।
सम तुम्हारे नहीँ दूसरौ जगत मैँ, कह्यौ तुम, रूप तब दियौ दिखाई।
नारि के रूप कौँ देखि मोहै न जो, सो नहीँ लोक तिहुँ माहिँ जायौ।
सूर स्वामी-सरन रहति माया सदा, को जगत जो न कपि ज्यौँ नचायौ॥१०॥
॥ ४३७ ॥

सुंद-उपसुंद-बध

* राग मारू

† असुर द्वै हुते बलवंत भारी। [1]सुंद-उपसुंद स्वेच्छा-बिहारी।
भगवती तिन्हैँ दीन्हीँ दिखाई। देखि सुंदरि रहे दोउ लुभाई।
भगवती कह्यौ तिनकौँ सुनाई। जुद्ध जीतै सो मोहिँ बरै आई।
तब दुहुँनि जुद्ध कीन्हौ बनाई। लरि मुए तुरत ही दोउ भाई।
देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनौ मूल या बिधि सो खोवै।
सुक नृपति पाहिँ जिहिँ बिधि सुनाई। सूर जनहूँ तिहीँ भाँति गाई॥११॥
॥ ४३८ ॥

बामन-अवतार

राग बिलावल

जैसैँ भयौ बावन अवतार। कहौँ, सुनौ सो अब चित धार।
हरि जब अंमृत सुरनि पियायौ। तब बलि असुर बहुत दुख पायौ।

---

* (वे) बिलावल।

† भागवत के इस स्कंध मेँ सुंद-उपसुंद अथवा शुंभ-निशुंभ का कोई प्रसंग नहीँ आया है। परंतु सूरसागर की सभी प्रतियोँ मेँ यह इसी स्थान पर आता है। अतः इस संस्करण मेँ भी यहीँ रक्खा गया है।

[1] सुंभ अनसुंभ सुर जीत हारी—३, ६, ८।

...ाहि पुनि जज्ञ करायौ । सुर[1]-जय, राज-त्रिलोकी...
...नबे जज्ञ जब किये । तब दुख भयौ अदिति ...
...त उन पुनि बहु तप करयौ । सूर स्याम बामन-बपु ...

द्वारैं ठाढ़े हैं द्विज[2] बावन ।
चारौ[3] बेद पढ़त मुख आगर, अति [4]सुकंठ-सुर-गावन
बानी सुनि बलि पूछन लागे, इहाँ बिप्र कत[5] आवन
चरचित चंदन नील कलेवर, बरषत[6] बूँदनि सावन
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, कह्यौ माँगु मन-भावन
तीनि पैंड़ बसुधा हौं चाहौं, परनकुटी कौं छावन
इतनौ कहा बिप्र तुम माँग्यौ, बहुत रतन देउँ गाँवन
सूरदास प्रभु बोलि[7] छले बलि, धरयौ पीठि पद पावन
॥

राजा, इक पंडित पौरि तुम्हारी ।
चारौ बेद पढ़त मुख-आगर, है बावन-बपु-धारी

...राज तिरलोकी—
...ा,ना/इ, रा) बिला-
...सारंग ।
...—२, ३ । ③ बेद पढ़त स्रवनन रुचि उपजत अति सुंदर सुर गावत—१६ । ④ सुगंध—१, ३, ६, ८ । सुढंग—१६ । ⑤ करो—१,२,६,८ १६ । ⑥ बिधु मुख तिमिर नसावन—१६ । ⑦ ...
३, ८ ।
* (ना) ... रा) सोरठ ।

अपद-दुपद-पसु-भाषा बूझत, अविगत अल्प-अहारी।
नगर सकल-नर-नारी मोहे, सूरज जोति बिसारी।
सुनि सानंद चले बलि राजा, आहुति जज्ञ बिसारी।
देखि सुरूप सकल कृष्नाकृति, कीनी चरन-जुहारी।
चलियै बिप्र जहाँ जग-बेदी, बहुत करी मनुहारी।
जो माँगौ सो देहुँ तुरतहीं, हीरा-रतन-भँडारी।
रहु-रहु राजा, यौं नहिं कहियै, दूषन लागै भारी।
तीन पैग बसुधा दै मोकौं, तहाँ रचौं ध्रमसारी।
सुक्र कह्यौ, सुनि हो बलि राजा, भूमि को दान निवारी।
ये तौ बिप्र होहिं नहिं राजा, आए छलन मुरारी।
कहि धौं सुक्र, कहा अब कीजै, आपुन भए भिखारी।
जब हीं उदक दियौ बलि राजा, बावन देह पसारी।
जै-जै-कार भयौ भुव मापत, तीनि पैंड़ भइ सारी।
आध पैंड़ बसुधा दै राजा, ना तरु चलि सत हारी।
अब सत क्यौं हारौं जग-स्वामी मापौ देह हमारी।
सूरदास बलि सरबस दीन्हौ, पायौ राज पतारी ॥

॥४५

† हरि तुम बलि कौं छलि कहा लीन्यौ ?
बाँधन गए, बँधाए आपुन, कौन सयानप कीन्यौ ?

केवल (ल) मे उचित समझकर इसे यहाँ स्थान
के अंत में रखना दिया गया है।

लए लकुटिया द्वारै ठाढ़े, मन अति रहत अधीन्यौ ।
तीनि पैँड़ बसुधा कैं कारन, सरबस अपनौ दीन्यौ ।
जो जस करै सो पावै तैसो, बेद पुरान कहीन्यौ ।
सूरदास स्वामी-पन तजि कै, सेवक-पन रस भीन्यौ ॥१५॥
॥४४२॥

मत्स्य-अवतार * राग मा

स्रुतिनि[1] हित हरि मच्छ रूप धार्यौ । सदा ही भक्त-संकट निवार्यौ
चतरमुख कह्यौ, सँख असुर स्रुति लै गयौ, सत्यब्रत कह्यौ परलै दिखायौ
भक्त-बत्सल, कृपाकरन, असरन-सरन, मत्स्य कौ रूप तब धारि आयौ
स्नान करि अंजली जल जबै नृप लियौ, मत्स्य कौं देखि कह्यौ डारि दीजे
मत्स्य कह्यौ, मैं गही आइ तुम्हरी सरन, करि कृपा मोहिं अब राखि लीजे
नृप सुनत बचन, चकित प्रथम ह्वै रह्यौ, कह्यौ, मछ बचन किहिं भाँति भाख्यौ
पुनि कमंडल धर्यौ, तहाँ सो बढ़ि गयौ, कुंभ धरि बहुरि पुनि माट राख्यौ
पुनि धर्यौ खाड़, तालाब मैं पुनि धर्यौ, नदी मै बहुरि पुनि डारि दीन्हौ
बहुरि जब बढ़ि गयौ, सिंधु तब लै गयौ, तहाँ हरि-रूप नृप चीन्हि लीन्हौ
कह्यौ करि बिनय तुम ब्रह्म जो अनंत हौ, मत्स्य कौ रूप किहिं काज कीन्हौ
बेद बिधि चहत, तुम प्रलय देखन कहत, तुम दुहुँनि हेत अवतार लीन्हौ
कबहुँ बाराह, नरसिंह कबहूँ भयौ, कबहुँ मैं कच्छ कौ रूप लीन्हौ
कबहुँ भयौ राम, बसुदेव-सुत कबहुँ भयौ, और बहु रूप हित-भक्त कीन्हौ
सातवैं दिवस दिखराइहौं प्रलय तोहिं, सप्त-रिषि नाव मैं बैठि आवैं

* (ना) भैरव । (१) सुरनि—१, २, १६, १८, १९ ।

तोहिँ बैठारिहौं नाव मैँ हाथ गहि, बहुरि हम ज्ञान तोहिँ कहि सुनावैँ।
सर्प इक आइहै बहुरि तुम्हरैँ निकट, ताहि सौँ नाव मम सृंग बाँधौ।
यहै कहि भए अँतरधान तब मत्स्य प्रभु, बहुरि नृप आपनौ कर्म साधौ।
सातवैँ दिवस आयौ निकट जलधि जब, नृप कह्यौ अब कहाँ नाव पावैँ।
आइ गइ नाव, तब रिषिनि तासौँ कह्यौ, आउ हम नृपति तुमकौँ बचावैँ।
पुनि कह्यौ, मत्स्य हरि अब कहाँ पाइयै, रिषिनि कह्यौ, ध्यान चित माहिँ धारौ
मत्स्य अरु सर्प तिहिँ ठौर परगट भए, बाँधि नृप नाव यौँ कहि उचारौ।
ज्यौँ महाराज या जलधि तैँ पार कियौ, भव-जलधि पार त्यौँ करौ स्वामी।
अहं-ममता हमैँ सदा लागी रहै, मोह-मद-क्रोध-जुत मंद कामी[1]।
कर्म सुख-हित करत, होत तहँ दुःख नित, तऊ नर मूढ़ नाहीँ सँभारत।
करन-कारन महाराज हैँ आप ही, ध्यान प्रभु कौ न मन माहिँ धारत।
बिन तुम्हारी कृपा गति नहीँ नरनि की, जानि मोहिँ आपनौ, कृपा[2] कीजै।
जनम अरु मरन मैँ सदा दुःखित रहत, देहु मोहिँ ज्ञान जिहिँ सदा जीजै।
मत्स्य भगवान कह्यौ ज्ञान पुनि नृपति सौँ, भयौ सो पुरान सब जगत जान्यौ।
लह्यौ नृप ज्ञान, कह्यौ आँखि अब मीचि तू, मत्स्य जो कह्यौ सो नृपति मान्यौ।
आँखि कौँ खोलि जब नृपति देख्यौ बहुरि, कह्यौ, हरि प्रलय-माया दिखाई।
कह्यौ जो ज्ञान भगवान, सो आनि उर, नृपति निज आयु इहिँ बिधि बिताई।
बहुरि संखासुरहिँ मारि, बेदाऽनि दिए, चतुरमुख बिबिध अस्तुति सुनाई।
सूर के प्रभू की नित्य लीला नई, सकै कहि कौन, यह कछुक गाई। ॥१६॥
॥४४३॥

(१) गामी—२, ३ ६, ८। (२) राखि लीजै—२।

* राग मारू

† ऐसौ को सकै करि बिन मुरारी ।

कहत ही ब्रह्म के बेद-उद्धरन हित, गए पाताल तन-मत्स्य धारी ।

संखासुर मारि कै, बेद उद्धारि कै, आपदा चतुरमुख की निवारी ।

सुरनि आकास तैं पुहुप-बरषा करी, सूर सुनि सुजस कीरति उचारी ॥१७॥

॥ ४४४ ॥

* (कां) सारंग

† यह पद (वे, ना, वृ, श्या) में नहीं है ।

नवम स्कंध

राग बिल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर नाइ। राजा सौँ बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ। सूर तरौ हरि के गुन गाइ॥ १

॥ ४४५

ा पुरूरवा का वैराग्य

* राग बिल

सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो राव। नारी-नागिनि एक सुभाव।
नागिनि के काटैँ बिष होइ। नारी चितवत नर रहै भोइ[1]।
नारी सौँ नर प्रीति लगावै। पै नारी तिहिँ मन नहिँ ल्यावै।
नारी संग प्रीति जो करै। नारी ताहि तुरत परिहरै।
नरपति एक पुरुरवा भयौ। नारी-संग हेत तिन ठयौ।
नृप सौँ उन कटु बचन सुनाए। पै ताकैँ मन कछू न आए।
बहुरौ तिहिँ उपज्यौ बैराग। कियौ उरबसी कौँ सो त्याग।
हरि की भक्ति करत गति पाई। कहौं सो कथा, सुनौ चित लाई।
एक बार महा-परलै भयौ। नारायन आपुहिँ रहि गयौ।
नारायन जल मैँ रहे सोइ। जागि कह्यौ, बहुरौ जग होइ।
नाभि-कमल तैँ ब्रह्मा भयौ। तिन मन तैँ मरीचि कौँ ठयौ।

---

† यह पद केवल (स, का, रा) मैँ है।

* (ना) भैरवी। (का, ना/२, रा) भैरव।

(१) सोइ—६।

पुनि मरीचि कस्यप उपजायौ। कस्यप की तिय सूरज जायौ।
सूरज[1] कैँ बैवस्वत भयौ। सुत-हित सो बसिष्ठ पै गयौ।
ताकी नारि सुता-हित भाष्यौ। मुनि बसिष्ठ अपनैँ मन राख्यौ।
रिषि नृप सौँ जग-विधि करवाई। इला सुता ताकैँ गृह जाई[2]।
नृप कह्यौ, पुत्र-हेत जग ठयौ। पुत्री भइ, यह अचरज भयौ।
रिषि कह्यौ, रानी पुत्री चही। मेरे मन मैँ सोई रही।
तातैँ पुत्री उपजी आइ। करिहैँ पुत्र ताहि हरिराइ।
हरि ता पुत्री कौँ सुत कर्‌यौ। नाम सुद्युम्न ताहि रिषि धर्‌यौ।
एक दिवस सो अखेटक गयौ। जाइ अंबिका-बन तिय भयौ।
बुध कैँ आस्रम सो पुनि आयौ। तासौँ गंध्रब-ब्याह करायौ।
बहुरौ एक पुत्र तिन जायौ। नाम पुरुरवा ताहि धरायौ।
पुनि सुद्युम्न बसिष्ठ सौँ कह्यौ। अंबा-बन मैँ तिय ह्वै गयौ।
रिषि सिव सौँ बहु बिनती करी। तब सिव यह बानी उच्चरी।
एक मास यह ह्वैहै नारि। दूजे मास पुरुष आकारि।
तब सुद्युम्न अपनैँ गृह आयौ। राज-समाज माहिँ सुख पायौ।
तीनि पुत्र तिन और उपाए। दच्छिन राज करन सो पठाए।
दस सुत मनु के उपजे और। भयौ इच्छ्वाकु सबनि सिरमौर।
सूरजबंसी सो कहवाए। रामचंद्र ताह्वौ कुल आए।
सोमबंस पुरुरवा सौँ भयौ। सकल देस नृप ताकौँ दयौ।
तासु बंस लियौ कृष्नऽवतार। असुर मारि, कियौ सुर-उद्धार।

---

[1] ता सुत स्राद्ध देव मनु भयौ—

[2] आई—१।

कहिहौं कथा सो करि विस्तार। पुरुरवा-कथा सुनौ चित धार।
पुरुरवा-गेह उरबसी आई। मित्रबरुन के सापहिँ पाई।
नृपति देखि तिहिँ मोहित भयौ। तिनि यह बचन नृपति सौं कह्यौ।
बिन रतिकाल नगन नहिँ होवहु। अरु मम मैंढ़नि कौं मति खोवहु।
तब लौं मैं तुम्हरैं सँग करौं। बचन-भंग भए तैं परिहरौं।
नृपति कह्यौ, तुम कह्यौ सो करिहौं। तुम्हरी आज्ञा मैं अनुसरिहौं।
तासौं मिलि नृप बहु सुख माने। अष्ट[1] पुत्र तासौं उतपाने।
सुरपुर तैं गंध्रब तब आए। उरबसि सौं यह बचन सुनाए।
अब तुम इंद्रलोक कौं चलौ। तुम बिन सुरपुर लगत न भलौ।
तिन्ह उरबसी कह्यौ या भाइ। बल करि सकौ नहीं लै जाइ।
मम चलिबे कौ यहै उपाव। छल करि मैंढ़नि निसि लै जाव।
गंध्रब मैंढ़नि निसि लै धाए। सोवत नृप उरबसी जगाए।
मम मैंढ़नि कौं लै गयौ कोइ। देखौ ता[2] पुरुषहिँ तुम जोइ।
अर्द्ध-निसा नृप नाँगौ धायौ। पै मैंढ़नि कौं कहूँ न पायौ।
इत-उत देखि नृपति जब आयौ। तब उरबसि यह बचन सुनायौ।
राजा, बचन तुम्हारौ टरयौ। तातैं मैं तुमकौं परिहरयौ।
यह कहिकै सो चली पराइ। जैसैं तड़ित अकासैं जाइ।
ताकै बिरह नृपति बहु तयौ। नगन पगन ता पाछैं गयौ।
भ्रमत-भ्रमत नृप बहु दुख पायौ। बहुरौ कुरुच्छेत्र मैं आयौ
तहाँ उरबसी सखिनि समेत। आई हुती स्नान कैं हेत।

षष्ठ—१, ६, ८, १६। तुम पुरुषारथ जोइ—२, ३।
पुरुषै तिहिँ जोइ—१, १६।

पै उनकौं कोउ देखै नाहिँ । उनकौं सकल लोक दरसाहिँ
उरबसि सौं तिलोत्तमा कह्यौ । कौन पुरुष तुम भुव मैँ लह्यौ
ताके देखन की मोहिँ चाह । कह्यौ, पुरुष वह ठाढ़ौ आह
नृप कौं देखि सो बिस्मित भई । कह्यौ, तव बिरह नृप-सुधि गई
बहुत दुखित है तेरैँ नेह । एक बेर इहिँ दरसन देह
तिन माया आकरषन करी । तब वह दृष्टि नृपति कैँ परी
राजा निरखि प्रफुल्लित भयौ । मानौ मृतक बहुरि जिय लह्यौ
उरवसि-निकट नृपति चलि आए। करि विनती तिहिँ वचन सुनाए
तुम मोकौं काहैँ बिसरायौ । मैँ तुम बिन बहुतै दुख पायौ
तुम बिन भूख नीँद नहिँ आवै । पल-पल जुग सम मोहिँ बिहावै
मेरैँ गेह कृपा करि चलौ । वाही बिधि मोसौं हिलिमिलौ
कह्यौ, नेह हमैँ कासौं आह ! बिना काम हमरैँ नहिँ चाह
हमसौं सहस बरष हित धरैँ। हम तिनकौं छिन मैँ परिहरैँ
बिनु अपराध पुरुष हम मारैँ । माया-मोह न मन मैँ धारैँ
हमैँ कहौ कैसौ किन कोइ । चाहैँ करन करैँ हम सोइ
नृप पुनि बिनती बहु बिधि करी। तव उरबसी बात उच्चरी
बरष सात बीतैँ हौं ऐहौं । एक रात्रि तोकौं सुख देहौं
बरष सात बीतैँ सो आई । नृप तासौं मिलि रैनि बिताई
प्रात होत चलिबे कौं चह्यौ । तब राजा तासौं यौं कह्यौ
तू मोकौं छाँड़े कत जाइ । मोकौं तुव बिन छिन न सुहाइ
जब या भाँति नृपति बहु कह्यौ । तब उरबसि उत्तर यौं दयौ
यह तौ होनहार है नाहीँ । सुरपुर छाँड़ि रहौं भुव माहीँ

जौ तुम मेरी इच्छा धरौ। गंधर्वनि कैँ हित तप करौ।
तप कीन्हैँ सो देहैँ आग। ता सेती तुम कीनौ जाग।
जज्ञ कियैँ गंध्रबपुर जैहौ। तहाँ आइ मोकौँ तुम पैहौ।
नृप जग करि तिहिँ लोक सिधायौ। मिलि उरबसी बहुत सुख पायौ।
जब या बिधि बहु काल गँवायौ। तब बैराग नृपति मन आयौ।
बहुतै काल भोग मैँ किए। पै संतोष न आयौ हिए।
श्रीनारायन कौँ बिसरायौ। बिषय-हेत सब जनम गँवायौ।
या बिधि जब बिरक्त नृप भयौ। छाँड़ि उरबसी, बन कौँ गयौ।
बन मैँ जाइ तपस्या करी। बिषय-बासना सब परिहरी।
हरि-पद सौँ नृप ध्यान लगायौ। मिथ्या तनु कौ मोह भुलायौ।
हरि ब्यापक सब जग मैँ जान। हरि-प्रसाद पायौ निरवान।
तातैँ बुध तिय-संगति तजैँ। श्रीनारायन कौँ नित भजैँ।
सुक जैसैँ नृप कौँ समुझायौ। सूरदास त्यौँ ही कहि गायौ॥२॥ ४४६

न ऋषि की कथा

*राग बिल

सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो राव। जैसौ है हरि-भक्ति-प्रभाव।
हरि कौ भजन करै जो कोइ। जग-सुख पाइ मुक्ति लहै सोइ।
च्यवन रिषीस्वर बहु तप कियौ। ता सम और जगत नहिँ बियौ।
बामी ताकौँ लियौ छिपाइ। तासौँ रिषि नहिँ देइ दिखाइ।
ता आस्रम सजात नृप गयौ। तहाँ जाइ कै डेरा दयौ।

---

* (ना) बिभास। (६, ८)

छाँड़ि तहाँ सब राज-समाज। राजा गयौ अखेटक-काज।
नृप-कन्या तहँ खेलन गई। रिषि-दृग चमकत देखत भई।
पै तिहिं रिषि-दृग जाने नाहिं। खेलत सूल दए तिन माहिं।
रुधिर-धार रिषि-आँखिनि ढरी। नृप-कन्या सो देखत डरी।
सूल-व्यथा सब लोगनि भई। राजा कह्यौ, कहा भइ दई!
तहँ के बासी नृपति बुलाइ। बूझ्यौ, तब तिन कही सुनाइ।
च्यवन रिषी-आस्रम इहिं ठाइ। बिनती उनसौं कीजै जाइ।
नृप खोजत रिषि-आस्रम आयौ। रिषि-दृग देखत बहुत डरायौ।
कह्यौ, कियौ किन ऐसौ काज? कन्या कह्यौ, सुनौ महराज
मोतैं बिन जानैं यह भयौ। रिषि के दृगनि सूल हौं दयौ।
नृप मनहीं मन बहु पछितायौ। रिषि सौं पुनि यह बचन सुनायौ।
महाराज, तुम तौ हौ साध। मम कन्या तैं भयौ अपराध।
या कन्या कौं प्रभु तुम बरौ। कंटक-सूल किरपा करि हरौ।
लोग सकल नीके जब भए। नृप कन्या दै, गृह कौं गए।
रिषि समाधि हरि-चरन लगाई। कन्या रिषि-चरननि लौ लाई।
सुरपति ताकैं रूप लुभायौ। बहुरि कुबेर तहाँ चलि आयौ।
पै तिन तिहिं दिसि देख्यौ नाहिं। गए खिस्याइ दोउ मन माहिं।
चौदह बरष भए या भाइ। तब रिषि देख्यौ सीस उठाइ।
हाड़-चाम तन पर रहि गए। कृपावंत रिषि तापर भए।
अस्त्रिनि-सुत इहिं अवसर आए। करि प्रनाम, यह बचन सुनाए।
जो कछु आज्ञा हमकौं होइ। छाँड़ि बिलंब, करैं अब सोइ।
कह्यौ, दृगनि कौ करौ उपाइ। तुरत नेत्र तिन दिए बनाइ

सुरपति-कर तब नीचैं आयौ । अस्विनि-सुत बलि सुर मैं पायौ
ऐसौ है हरि-भक्ति-प्रभाव । बरनि कह्यौ मैं तुमसौं राव
हरि की भक्ति करै जो कोइ । दुहूँ लोक कौ सुख तिहिं होइ
सुक ज्यौं नृप सौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥

॥४

र-विवाह

* रा

†रविबंसी[1] भयौ रैवत राजा । ता[2] सम जग दुतिया न बिराजा ।
ता गृह जन्म रेवती लयौ । ताकौं लै सो ब्रह्मपुर गयौ ।
बिधि तिहिं आदर दै बैठायौ । तब नृप मन मैं अति सुख पायौ ।
तहाँ देखि अप्सरा-अखारा । नृपति कछू नहिं बचन उचारा ।
जब अप्सरा नृत्य करि रही । तब राजा ब्रह्मा सौं कही ।
मम पुत्री बय-प्रापत आहि । आज्ञा होइ, देउँ तिहिं ब्याहि ।
ब्रह्मा कह्यौ, सुनौ नर-नाह । तुमसौं नृप जग मैं अब नाह ।
हलधर कौं तुम देहु बिवाहि । ब्याह-जोग अब सोई आहि ।
रैवत ब्याह कियौ भुवि आइ । आप कियौ तप बन मैं जाइ ।
हलधर-ब्याह भयौ या भाइ । सूरदास जन दियौ सुनाइ ॥४॥

॥ ४४८ ॥

(ना) विभास ।
यह पद (वृ, श्या) में है ।

① द्वारावति पति—१ । रूप तनै—६, ८ । ② ताकैं सौ बेटा सुख साजा—१६ ।

: अंबरीष की कथा । * राग बिल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारविंद उर धरौ ।
हरि-पद अंबरीष चित लायौ । रिषि-सराप तैं ताहि बचायौ ।
रिषि कौं तापै फेरि पठायौ । सुक नृप कौं यौं कहि समुझायौ ।
अंबरीष राजा हरि-भक्त । रहै सदा हरि-पद अनुरक्त ।
स्त्रवन-कीरतन-सुमिरन करै । पद-सेवन-अरचन उर धरै ।
वंदन दासपनौ सो करै । भक्तनि सख्य-भाव अनुसरै ।
काय-निवेदन सदा बिचारै । प्रेम-सहित नवधा विस्तारै ।
नौमी-नेम भली बिधि करै । दसमी कौं संजम बिस्तरै ।
एकादसी करै निरहार । द्वादसि घोपै लै आहार ।
पतिव्रता ता नृप की नारी । अह-निसि नृप की आज्ञाकारी ।
इंद्री सुख कौं दोऊ त्यागि । धरैं सदा हरि-पद अनुराग ।
ऐसी बिधि हरि पूजैं सदा । हरि-हित लावैं सब संपदा ।
राज-काज कछु मन नहिँ धरै । चक्र सुदरसन रच्छा करै ।
घटिका दोइ द्वादसी जानि । रिषि आयौ, नृप कियौ सन्मान ।
कह्यौ, भोजन कीजे रिषिराइ । रिषि कह्यौ, आवत हौं मैं न्हाइ ।
यह कहिकै रिषि गए अन्हान । काल बितायौ करत स्नान ।
राजा कह्यौ, कहा अब कीजै । द्विजनि कह्यौ, चरनोदक लीजै ।
राजा तब करि देख्यौ ज्ञान । या बिधि होइ न रिषि-अपमान ।
लै चरनोदक निज ब्रत साध्यौ । ऐसी बिधि हरि कौं आराध्यौ ।
इहिँ अंतर दुरबासा आए । अंबरीष सौं बचन सुनाए ।

* (ना) भैरवी ।

सुनि राजा, तेरौ ब्रत टरौ। क्यौं करि तेरैं भोजन करौं ?
कह्यौ नृपति, सुनियै रिषिराइ। मैं ब्रत-हित यह कियौ उपाइ।
चरनोदक लै ब्रत प्रतिपार्‍यौ। अब लौं अन्न न मुख मैं डार्‍यौ।
रिषि सक्रोध इक जटा उपारी। सो कृत्या भइ ज्वाला भारी।
जब नृप ओर दृष्टि तिहिं करी। चक्र सुदरसन सो संहरी।
पुनि रिषिहू कौं जारन लाग्यौ। तब रिषि आपन जिय लै भाग्यौ।
ब्रह्मा-रुद्र-लोकहूँ गयौ। उनहूँ ताहि अभय नहिं दयौ।
बहुरौ रिषि बैकुंठ सिधायौ। करि प्रनाम यह बचन सुनायौ।
मैं अपराध भक्त कौ कीनौ। चक्र सुदरसन अति दुख दीनौ।
और कहूँ मैं ठौर न पायौ। असरन-सरन जानि कै आयौ।
महाराज, अब रच्छा कीजै। मोकौं जरत राखि प्रभु लीजै।
हरि जू कह्यौ, सुनौ रिषिराइ। मो पै तू राख्यौ नहिं जाइ।
तैं अपराध भक्त कौ कीनौ। मैं निज भक्तनि कैं आधीनौ।
मम-हित भक्त सकल सुख तजैं। और सकल तजि मोकौं भजैं।
बिन मम चरन न उनकैं आस। परम दयालु सदा मम दास।
उनकैं मन नाहीं सत्राइ। तातैं कहौ उनहिं सौं जाइ।
तुमकौं लैहैं वेइ बचाइ। नाहीं या बिन और उपाइ।
इहाँ नृपति अतिहीं दुख छयौ। रिषि मम द्वारे तैं फिरि गयौ।
रिषि मग जोवत वर्ष बितायौ। पै भोजन तौहूँ न सिरायौ।
अंबरीष पै तब रिषि आयौ। हाथ जोरि पुनि सीस नवायौ।
रिषिहिं देखि नृप कह्यौ या भाइ लेहु सुदरसन याहि बचाइ

क्र सुदरसन सीतल भयौ। अभय-दान दुरबासा लयौ।
नि नृप तिहिँ भोजन करवायौ। रिषि नृप सौं यह बचन सुनायौ।
ँ नहिँ भक्त महातम जान्यौ। अब तैं भली भाँति पहिचान्यौ।
क राजा सौं ज्यौं समुझायौ। सूरदास त्यौंहीं करि गायौ।
ो यह लीला सुनै-सुनावै। सो हरि-भक्ति पाइ सुख पावै॥ ५॥

॥ ४४६ ॥

* राग गू

फिरत-फिरत बलहीन भयौ।

कहा करौं इहिँ त्रास कृपानिधि, जप-तप कौ अभिमान गयौ।
धायौ धर-सर-सैल, बिदिसि-दिसि, चक्र तहाँ हूँ जाइ लयौ।
जाँचे सिव-बिरंचि-सुरपति सब, नैं कु न काहूँ सरन दयौ।
भाज्यौ फिर्‍यौ लोक-लोकनि मैं, पत्र पुरातन पवन हयौ।
सूरदास द्विज[1] दीन जानि प्रभु, तब निज जन सनमुख पठयौ॥ ६

॥ ४५०

राग भो

† जन कौ हौं आधीन सदाई।

दुरबासा बैकुंठ गए जब, तब यह कथा सुनाई।
बिदित बिरद ब्रह्मन्य देव, तुम करुनामय सुखदाई।
जारत है मोहिँ चक्र सुदरसन, हा प्रभु लेहु बचाई।
जिन तन-धन मोहिँ प्रान समरपे, सील, सुभाव, बड़ाई।
ताकौ बिषम बिषाद अहो मुनि मोपै सह्यौ न जाई।

(ना) जैतश्री।
मुनि—१।

† यह पद केवल (ना) में है।

उलटि जाहु नृप-चरन-सरन मुनि वहै राखिहै भाई ।
सूरजदास दास की महिमा श्रीपति श्रीमुख गाई ॥ ७ ॥
॥ ४५१ ॥

भरि ऋषि की कथा

* राग

सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो राव । जैसौ है हरि-भक्ति प्रभाव ।
हरि कौ भजन करै जो कोइ । जग-सुख पाइ मुक्ति लहै सोइ ।
सौभरि रिषि जमुना-तट गयौ । तहाँ मच्छ इक देखत भयौ ।
सहित कुटुँब सो क्रीड़ा करै । अति उत्साह हृदय मैं धरै ।
ताहि देखि रिषिकैं मन आई । गृह-आस्रम है अति सुखदाई ।
तप तजि कै गृह-आस्रम करौं । कन्या एक नृपति की बरौं ।
कह्यौ मानधाता सौं जाइ । पुत्री एक देहु मोहिं राइ ।
नृप कह्यौ देखि बृद्ध रिषि-देह । हैं पचास पुत्री मम गेह ।
अंतःपुर भीतर तुम जाहु । बरै तुम्हैं तिहिं[1] करौं बिवाहु ।
तब रिषि मन मैं कियौ बिचार । बिरध पुरुष कौं बरै न नार ।
तप-बल कियौ रूप अति सुंदर । गयौ तहाँ जहँ नृप कौ मंदिर ।
सब कन्यनि सौभरि कौं बर्‌यौ । रिषि बिवाह सबहिनि सौं कर्‌यौ ।
रिषि तिनकैं हित गेह बनाए । तिनकैं भीतर बाग लगाए ।
भोग समग्री भरे भँडार । दासी-दास गनत नहिं पार ।
रिषि नारिनि मिलि बहु सुख पाए । सहस पचास पुत्र उपजाए ।
तिनकैं बहुत भई संतान । कहँ लगि तिनकौं करौं बखान ।
बहुत काल या भाँति बितायौ । पै रिषि मन संतोष न आयौ ।

---

* (ना) भैरवी । (ग्रु) भैरौ । ① सो देहुँ बिवाह—१, २, १६ ।

कह्यौ बिषय सौँ तृप्ति न होइ । केतौ भोग करौ किन कोइ ।
या बिधि जब उपज्यौ बैराग । तब तप करि कीन्हौ तन-त्याग ।
सब नारिनि सहगामिनि कियौ । हरि जू तिनकौँ निज पद दियौ ।
तातैँ बुध[1] हरि-सेवा करैँ । हरि-चरननि नितहीँ चित धरैँ ।
सुक नृप सौँ ज्यौँ कहि समुझायौ । सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥

॥ ४५२

ा-आगमन

* रा

सुकदेव कह्यौ, सुनौ नर-नाह । गंगा ज्यौँ आई जग माहँ ।
कहौँ सो कथा, सुनौ चित लाइ । सुनै सो भव तरि हरि-पुर जाइ ।
सौवौँ[2] जज्ञ सगर जब ठयौ । इंद्र अस्व कौँ हरि लै गयौ ।
कपिलास्रम लै ताकौँ राख्यौ । सगर-सुतनि तब नृप सौँ भाष्यौ ।
हम तिहुँ लोक माहिँ फिरि आए । अस्व-खोज कतहूँ नहिँ पाए ।
आज्ञा होइ जाहिँ पाताल । जाहु, तिन्हैँ भाष्यौ भूपाल ।
तिनके खोदैँ सागर भए । कपिलास्रम कौँ ते पुनि गए ।
अस्व देखि कह्यौ, धावहु-धावहु । भागि जाहि मति, बिलँब न लावहु ।
कपिल कुलाहल सुनि अकुलायौ । कोप-दृष्टि करि तिन्हैँ जरायौ ।
सगर नृपति जब यह सुधि पाई । अंसुमान कौँ दियौ पठाई ।
कपिल-स्तुति तिहिँ बहुबिधि कीन्ही । कपिल ताहि यह आज्ञा दीन्ही
जज्ञ के हेतु अस्व यह लेहु । पितर तुम्हारे भए जु खेहु ।
सुरसरि जब भुव ऊपर आवै । उनकौँ अपनौ जल परसावै ।

नर—६, ८ ।   ② शतमो—१ । सतम—
ना) भैरवी । (शा, का)   २, ३, १८, १६ । सप्तम—६, ८ ।
।

तबहीं उन सबकी गति होइ । ता बिन और उपाइ न कोइ ।
॥ अंसुमान राजा ढिग आइ । साठि सहस की कथा सुनाइ ।
॥ घोरा सगर राइ कौं दयौ । हर्ष-बिषाद हृदय अति भयौ ।
॥ सगर राज मष पूरन कियौ । राज सो अंसुमान कौं दियौ ।

अंसुमान पुनि राज बिहाइ । गंगा हेत कियौ तप जाइ ।
याही बिधि दिलीप तप कीन्हौ । पै गंगा जू बर[1] नहिं दीन्हौ ।
बहुरि भगीरथ तप बहु कियौ । तब गंगा जू दरसन दियौ ।
कह्यौ, मनोरथ तेरौ करौं । पै मैं जब अकास तैं परौं ।
मोकौं कौन धारना करै ? नृप कह्यौ, संकर तुमकौं धरै ।

तब नृप सिव की सेवा कीनी । सिव प्रसन्न ह्वै आज्ञा दीनी ।
गंगा सौं नृप जाइ सुनाई । तब गंगा भूतल पर आई ।
साठ सहस्र सगर के पुत्र । कीने सुरसरि तुरत पवित्र ।
गंग-प्रवाह माहिं जो न्हाइ । सो पवित्र ह्वै हरिपुर जाइ ।
गंगा इहिं बिधि भुव पर आई । नृप मैं तुमसौं भाषि सुनाई ।
सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥

॥४५

ा-विष्णु-पादोदक-स्तुति * राग बि

† पिउ[2] पद-कमल कौ मकरंद ।
मलिन-मति मन-मधुप, परिहरि, बिषय नीरस[3] मंद ।

चरण केवल (शा) ो आवश्यक समझकर रण में रक्खे गए हैं । रस न दीन्हौ—२ ।

हरि—६, ८ ।

* (ना) देवगंधार । (क) रामकली । (का) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

② हरि—१, ३, ६,

③ नीरस फंद—१, १ मति मंद—२ । रसमय फं

अमृत हूँ तैं अमल अति गुन, स्रवत[1] निधि-आनंद ।
परम सीतल जानि संकर, सिर धर्यौ ढिग[2] चंद ।
नाग[3]-नर-पसु सबनि चाह्यौ सुरसरी कौ बुंद ।
सूर तीनौं[4] लोक परस्यौ, सुरसरी[5] जस[6]-छंद ॥ १० ॥
॥४५४॥

* राग भैरौ

† जय जय, जय जय, माधव-बेनी ।
जग हित प्रगट करी करुनामय, अगतिनि कौं गति दैनी ।
जानि कठिन कलिकाल कुटिल नृप, संग सजी अघ-सैनी ।
जनु[7] ता लगि तरवारि त्रिबिक्रम, धरि[8] करि कोप उपैनी ।
मेरु मूठि, बर-बारि पाल-छिति, बहुत बित्त की लैनी ।
सोभित अंग तरंग त्रिसंगम, धरी धार अति पैनी ।
जा[9] परसैं जीतैं जम-सैनी, जमन, कपालिक, जैनी ।
एकै[10] नाम लेत सब भाजे, पीर सो भव[11]-भय-सैनी ।
जा जल-सुद्ध निरखि सन्मुख ह्वै, सुंदरि सरसिज[12]-नैनी ।
सूर परस्पर करत कुलाहल, गर-स्रग-पहरावैनी ॥ ११ ॥
॥४५५॥

---

(१) रूप—२, ३। (२) तजि—३, १४, १६। निज—२, ६, (३) नाक सरबस लैन चाह्यौ सरी कौ बिंद—१, १६। (४) न्द लोक त्रै जल—१४। (५) असुर—१, १६। (६) —८।

* (ना) ईमन।

† यह पद (स, ल, शा, का, ना/२, रा) में नहीं है। इस पद का अर्थ कुछ अस्पष्ट है।

(७) मनौ तमकि—२। (८) कीन्ही—२। (९) दरसन हू नासै (भाजै) जम सैनिक जिमि नेह (नुह) बालक सैनी—१, १६। (१०) एक नाम के लेत तरे सब सो नर भूमि सु चैनी—२। (११) सु भूमि रसैनी—१, १६, १६। (१२) सैना बैनी—१, १६।

राग
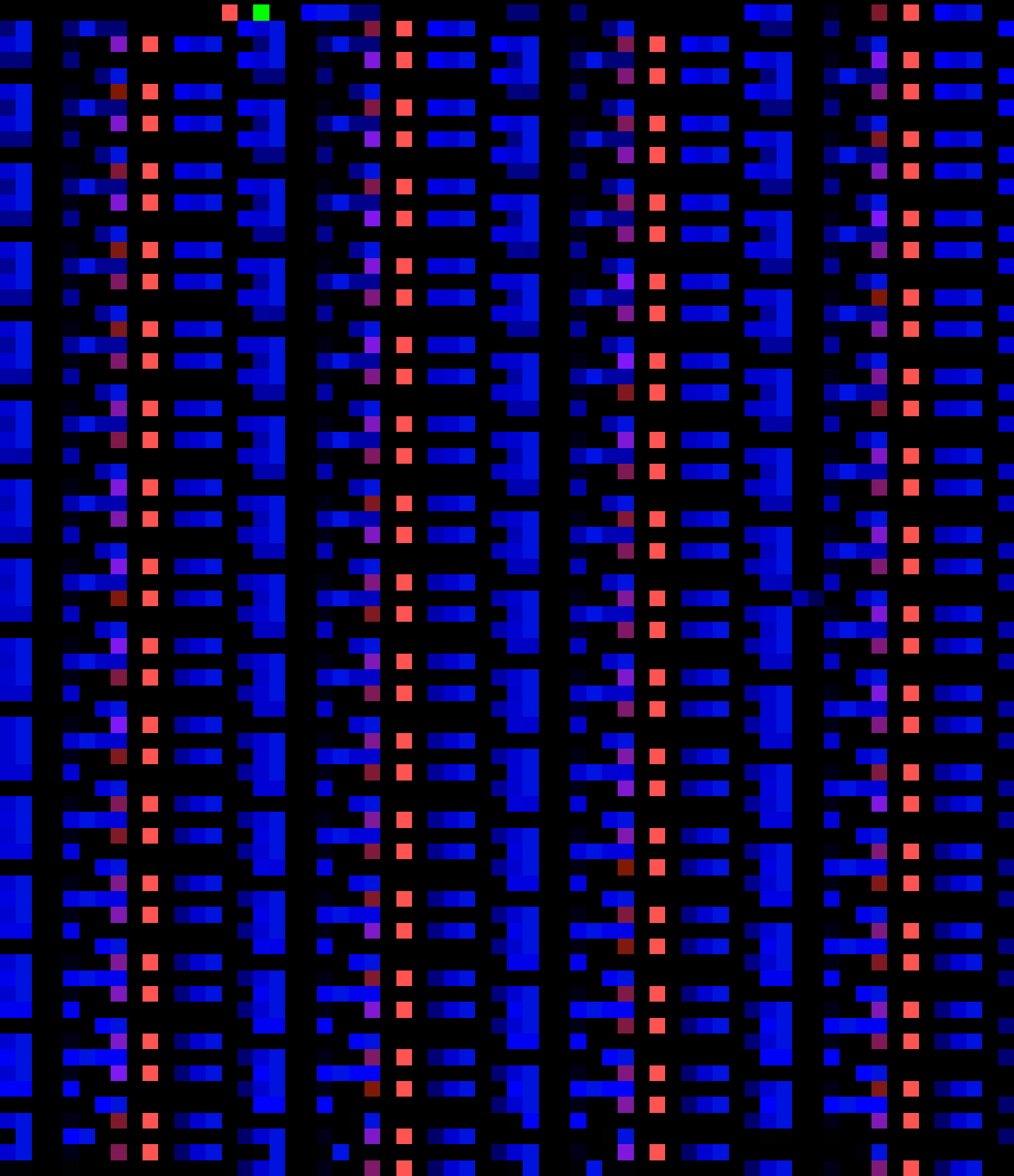
† गंग-तरंग बिलोकत नैन ।
अतिहिँ पुनीत बिष्नु-पादोदक, महिमा निगम पढ़त गुनि चैन[1] ।
परम पवित्र, मुक्ति की दाता, भागीरथहिँ[2] भव्य बर दैन ।
द्वादस बर्ष सेए निसिबासर, तब संकर माथी है लैन ।
त्रिभुवन-हार सिँगार भगवती, सलिल चराचर[3] जाके ऐन ।
सूरजदास बिधाता कैँ तप प्रगट भई संतनि सुख दैन ॥१२॥
॥४५६॥

[परसुर]ाम-अवतार

* राग

ज्यौँ भयौ परसुराम अवतार । कहौँ सो कथा, सुनौ चित धार ।
सहसबाहु रबिबंसी भयौ । सरिता-तट इक दिन सो गयौ ।
निज भुज-बल तिन सरिता गही । बढ़ि गयौ जल, तब रावन कही ।
नृप तुम हमसौँ करौ लराइ । कह्यौ, करौँ मध्यान बिताइ ।
बहुरौ क्रोधवंत जुध चह्यौ । सहसबाहु तब ताकौँ गह्यौ ।
बहुरौ नृप करिकै मध्यान । दीनौ ताकौँ छाँड़ि निदान ।
फिरि नृप जमदग्न्यास्रम आयौ । कामधेनु बल करिकै धायौ ।
परसुराम जब यह सुधि पाई । मार्‌यौ ताहि तुरतहीँ धाई ।
तासु सुतनि जमदग्निहिँ मार्‌यौ । परसुराम रेनुका हँकार्‌यौ ।
मारे छत्री इकइस बार । यौँ भयौ परसुराम अवतार ।

---

† यह पद [केवल] (वे, द्व, [स्या]) में [है] (का) में [इसका] पाठ अ[शुद्ध] [छपा] है। अतः इस संस्करण में अधिकांश (वे, स्या) का पाठ रक्खा गया है।
(1) बैन—१६ । (2) भागीरथी भई—१ । (3) जर बराबर—१६ ।

* (ना) भैरवी

सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥ १२ ॥ ४५७

* राग धनाश्री

परसुराम जमदग्नि-गेह लीनौ अवतारा ।
माता ताकी गई जमुन जल कौं इक बारा ।
लागी तहाँ अबार तिहिँ, रिषि करि क्रोध अपार ।
परसुराम सौं यौं कही, माँकौं वेगि सँहार ।
और सुतनि तब कही, पिता, नहिँ कीजै ऐसी ।
क्रोधवंत रिषि कह्यौ, करौ इनहूँ सौं वैसी ।
परसुराम तिन सबनि कौं, मार्‍यौ खड्ग-प्रहार ।
रिषि कह्यौ होइ प्रसन्न, बर माँगौ देउँ, कुमार ।
परसुराम तब कह्यौ, यहै बर देहु तात अब ।
जानैं नाहिँ न मुए, फेरिकै जीवैं ये सब ।
रिषि कह्यौ, यह बर दियौ मैं, इनकौं देहु उठाइ ।
परसुराम उनकौं दियौ, सोवत मनौ जगाइ ।
परसुराम बन गए, तहाँ दिन बहुत लगाए ।
सहसबाहु तिहिँ समय जमदगिनि-आस्रम आए ।
कामधेनु जमदग्नि की, लै गयौ नृपति छिनाइ ।
परसुराम कौं बोलि रिषि दियौ बृत्तांत सुनाइ ।
परसुराम सुनि पिता-बचन, ताकौं संहार्‍यौ ।
कामधेनु दइ आनि, बचन रिषिकौ प्रतिपार्‍यौ ।

सहसबाहु के सुतनि पुनि, राखी घात लगाइ।
परसुराम जब बन गयौ, मार्यौ रिषि कौं धाइ।
रिषि की यह गति देखि, रेनुका रोइ पुकारी।
परसुराम, तुम आइ लगत क्यौं नहीं गोहारी।
यह सुनि कै आयौ तुरत, मार्‌यौ तिन्हैं प्रचारि।
बहुरौ जिय धरि क्रोध हते, छत्री इकइस बार।
जग अराज ह्वै गयौ, रिषिनि तब अति दुख पायौ।
लै पृथ्वी कौ दान, ताहि फिरि बनहिं पठायौ।
बहुरि राज दियौ छत्रियनि, भयौ रिषिनि आनंद।
सूरदास पावत हरष, गावत गुन गोबिंद ॥१४॥
॥ ४५८ ॥

* राग-बिलावल

हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
अरु बिजय पारषद दोइ। बिप्र-सराप असुर भए सोइ।
बराह रूप धरि मार्‌यौ। इक नरसिंह-रूप संहार्‌यौ।
-कुंभकरन सोइ भए। राम जनम तिनकैं हित लए।
थ नृपति अजोध्या-राव। ताकैं गृह कियौ आविर्भाव[1]।
सौं ज्यौं सुकदेव सुनायौ। सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥१५॥
॥ ४५९ ॥

) भैरवी।   (1) आदर भाव—२, ३, १६। उर भाव—६, ८।

(वालकांड) ※

आजु दसरथ कैं आँगन भीर ।
ये भू-भार उतारन कारन प्रगटे स्याम-सरीर ।
फूले फिरत अजोध्या-वासी, गनत न त्यागत चीर ।
परिरंभन हँसि देत परसपर, आनँद-नैननि नीर ।
त्रिदस-नृपति, रिषि व्यौम-बिमाननि, देखत रह्यौ न धीर ।
त्रिभुवन-नाथ दयालु दरस दै, हरी सबनि की पीर ।
देत दान राख्यौ न भूप कछु, महा[1] बड़े नग हीर ।
भए निहाल सूर सब जाचक, जे जाँचे रघुबीर ॥

※

† अजोध्या बाजति आजु बधाई ।
गर्भ मुच्यौ[2] कौसिल्या माता, रामचंद्र निधि आई
गावैं सखी परसपर मंगल, रिषि अभिषेक कराई
भीर भई दसरथ कैं आँगन, सामबेद-धुनि छाई[3]
पूछत रिषिहिं अजोध्या कौ पति, कहियै जनम गुसाईं
भौम वार,[4] नौमी तिथि नीकी, चौदह भुवन बड़ाई
चारि पुत्र दसरथ कैं उपजे, तिहूँ लोक ठकुराई
सदा-सर्बदा राज राम कौ, सूर दादि तहँ पाई

) धनाश्री । (श्या) † यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीं है । ‖ ये दो च… नहीं हैं ।

…डे मैं—६, ८ । ② धर्यौ—१६ । ③ गाई—१, ६, ८, १६ । ④ उदौ—…

…ा, कॉ) सारंग ।

* राग का

रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर ।
देस-देस तैं टीकौ आयौ, रतन-कनक-मनि-हीर ।
घर-घर मंगल होत बधाई, अति पुरबासिनि भीर ।
आनँद-मगन भए सब डोलत, कछू न सोध सरीर ।
मागध[1]-बंदी-सूत लुटाए, गो-गयंद-हय-चीर ।
देत असीस सूर, चिरजीवौ रामचंद्र रनधीर ॥ १८ ॥

॥४६२॥

ड़ा

राग बिला

करतल-सोभित बान धनुहियाँ ।
खेलत फिरत कनकमय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ ।
दसरथ-कौसिल्या के आगैं, लसत[2] सुमन की छहियाँ ।
मानौ चारि हंस सरवर तैं बैठे आइ सदेहियाँ ।
रघुकुल-कुमुद-चंद चिंतामनि, प्रगटे भूतल महियाँ ।
आए[3] ओप देन रघुकुल कौं, आनँद-निधि सब कहियाँ[4] ।
यह सुख तीनि लोक मैं नाहीं, जो पाए[5] प्रभु पहियाँ ।
सूरदास हरि बोलि भक्त कौं, निरबाहत गहि बहियाँ ॥१६।

॥४६३।

ना) सारंग ।
हाटक बहु इच्छा सौं—
। मानिक बहु इच्छा

सौं—६, ८ । ② बसत—२ ।
③ यहै देन आए—१ । ④
गहियाँ—१ । बहुयाँ—२ ।

⑤ आए प्रभु तहियाँ—२ ।

* राग बिलावल

धनुहीँ-बान लए कर डोलत ।
चारौ बीर संग इक सोभित, बचन मनोहर बोलत ।
लछिमन भरत सत्रुहन सुंदर, राजिवलोचन राम ।
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ, मुक्ति[1]-धर्म-धन-धाम[2] ।
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे, काकपच्छ धरे सीस ।
सर-क्रीड़ा दिन देखन आवत, नारद, सुर तैँतीस ।
सिव-मन सकुच, इंद्र-मन आनँद, सुख-दुख बिधिहिँ समान ।
दिति दुर्बल अति, अदिति हृष्टचित, देखि सूर संधान ॥२०॥
॥४६४॥

विश्वामित्र-यज्ञ-रक्षा

राग सारंग

दसरथ सौँ रिषि आनि कह्यौ ।
असुरनि सौँ जग होन न पावत, राम-लषन तब संग दयौ ।
मारि ताड़ुका, यज्ञ करायौ, बिस्वामित्र अनंद भयौ ।
सीय-स्वयंबर जानि सूर-प्रभु कौँ लै रिषि ता ठौर गयौ ॥ २१ ॥
॥ ४६५ ॥

अहल्योद्धार

* राग सारंग

† गंगा-तट आए श्रीराम ।
तहाँ पषान रूप पग परसे, गौतम रिषि की बाम ।

---

* (ना) कल्यान ।

(१) अर्थ—२, ३ । (२) काम—१, २, ३ ।

* (ना) अहीरी ।

† सभी प्राप्त प्रतियों में यह पद श्री रामचंद्रजी की वन-यात्रा के प्रसंग में उनके गंगा-तट पर पहुँचने के अवसर पर रक्खा गया है । पर रामायण में (अहिल्योद्धार) श्री रामचंद्रजी की जनकपुर-यात्रा के प्रसंग में आया है । अतः इस संस्करण में यह जनकपुर-यात्रा के प्रसंग में ही रक्खा गया है ।

गई अकास देव तन धरिकै, अति सुंदर अभिराम ।
सूरदास प्रभु पतित-उधारन-विरद, कितौ यह काम ! ॥

।

चितै रघुनाथ-बदन की ओर ।
रघुपति सौं अब नेम हमारौ, बिधि सौं करति निहोर
यह अति दुसह पिनाक पिता-प्रन, राघव-बयस किसोर
इन पै दीरघ धनुष चढ़ै क्यौं, सखि, यह संसय मोर
सिय-अँदेस जानि सूरज-प्रभु, लियौ करज की कोर
टूटत धनु नृप लुके जहाँ-तहँ, ज्यौं तारागन भोर
॥

जनकपुर-आगमन

महाराज दसरथ तहँ आए ।
बैठे जाइ जनक-मंदिर महँ, मोतिनि चौक पुराए
बिप्र लगे धुनि बेद उचारन, जुवतिनि मंगल गाए
सुर-गँधर्ब-गन कोटिक आए, गगन बिमाननि छाए
राम-लषन अरु भरत-सत्रुहन ब्याह निरखि सुख पाए
सूर भयौ आनंद नृपति-मन, दिवि दुंदुभी बजाए
॥

) ईमन । (का, ड़ा) धनाश्री ।

ण-मोचन

* राग आसावरी

कर कँपै, कंकन नहिँ छूटै ।
राम सिया-कर-परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटैँ ।
गावत नारि गारि सब दै दै, तात-भ्रात की कौन चलावै ।
तब कर-डोरि छुटै रघुपति जू, जब कौसिल्या माता आवै ।
पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की ।
खेलत[1] जूप सकल जुवतिनि मैँ, हारे रघुपति, जिती जनक की ।
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद - अभिषेक करायौ ।
सूर अमित आनंद जनकपुर[2], सोइ सुकदेव पुराननि गायौ ॥२५

॥ ४६६ ॥

तुष-भंग; पाणिग्रहण

⊛ राग न

ललित गति राजत अति रघुबीर ।
नरपति-सभा-मध्य मनौ ठाढ़े, जुगल हंस मति धीर ।
अलख-अनंत-अपरिमित महिमा, कटि-तट कसे तुनीर ।
कर[3] धनु, काकपच्छ सिर सोभित, अंग[4]-अंग दोउ बीर ।
भूषन बिबिध बिसद अंबर जुत, सुंदर स्याम सरीर ।
देखत मुदित चरित्र[5] सबै सुर, ब्योम-बिमाननि भीर ।

---

* (ना) कल्यान ।
(१) खेलत सखिनि मधि अति भित दसरथ-सुत अरु सुता क की—३ । (२) कुशल पुर— कोसलपुर—२, ३, ८, १६, १८ ।

* (ना) आसावरी । (का, ना) धनाश्री ।
(३) लघु—१, २, ३, ६, ८, १६ । (४) इक इक द्वै द्वै तीर— १, २, ३, १६, १८, १९ । (
चरण परसैँ—१, १९ । सुम बरसैँ—८ ।

प्रमुदित जनक निरखि मुख-अंबुज, प्रगट नैन मधि नीर
तात-कठिन-प्रन जानि जानकी, आनति नहिँ उर धीर
करुनामय जब चाप लियौ कर, बाँधि सुदृढ़ कटि-चीर
भूभृत सीस नमित जो गर्वगत, पावक सौँ ज्यौ नीर
डोलत[1] महि अधीर भयौ फनिपति, कूरम अति अकुलान
दिग्गज चलित, खलित मुनि-आसन, इंद्रादिक भय मान
रवि मग तज्यौ, तरकि[2] ताके हय, उत्पथ लागे जान
सिव-बिरंचि व्याकुल भए धुनि सुनि, जब तोर्‌यौ भगवान
भंजन-सब्द प्रगट अति अद्‌भुत, अष्ट दिसा नभ-पूरि
स्त्रवन-हीन सुनि भए अष्टकुल नाग गरब भय चूरि
इष्ट[3]-सुरनि बोलत नर तिहिँ सुनि, दानव-सुर बड़ सूर
मोहित बिकल जानि जिय सबहीँ, महा प्रलय कौ मूर
पानि-ग्रहन रघुबर बर कीन्ह्यौ, जनकसुता सुख दीन
जय-जय-धुनि सुनि करत अमरगन, नर-नारी लवलीन
दुष्टनि दुख, सुख संतनि दीन्हौ, नृप-ब्रत पूरन कीन
रामचंद्र दसरथहिँ बिदा करि सूरदास रस[4]-भीन
॥

रा ※

दसरथ चले अवध आनंदत ।
जनकराइ बहु दाइज दै करि, बार-बार पद बंदत ।

त महीधर भौ (भव) —१, ११। (२) तरफ पथ गए किंवान— ११। (३) अष्ट स्रवण पूरित ब्रह्मा सुनि सदा (दान) सुभट बड़भूर (पूर)— १, ११। (४) आधीन—१, ६, ११। ※ (ना) वि † यह पद नहीँ है।

तनया जामातनि कौं समदत, नैन नीर भरि आए ।
सूरदास दसरथ आनंदित, चले निसान बजाए ॥ २७ ॥
॥ ४७१ ॥

[रा]म-मिलाप ※ राग सारंग

परसुराम तेहिँ औसर आए ।
कठिन पिनाक कहौ किन तोरचौ, क्रोधित बचन सुनाए ।
बिप्र जानि रघुबीर धीर दोउ, हाथ जोरि, सिर नायौ ।
बहुत दिननि कौ हुतौ पुरातन, हाथ छुअत उठि आयौ ।
तुम तौ द्विज, कुल-पूज्य हमारे, हम-तुम कौन लराई ?
क्रोधवंत कछु सुन्यौ नहीँ, लियौ सायक-धनुष चढ़ाई ।
तबहूँ रघुपति क्रोध न कीन्हौ, धनुष न बान सँभारचौ ।
सूरदास प्रभु-रूप समुझि, बन[1] परसुराम पग धारचौ ॥ २८ ॥
॥ ४७२ ॥

[पु]री-प्रवेश ※ राग सारंग

अवधपुर आए दसरथ राइ ।
राम, लषन अरु भरत, सत्रुहन, सोभित चारौ भाइ ।
घुरत निसान, मृदंग - संख - धुनि, भेरि-झाँझ-सहनाइ ।
उमँगे लोग नगर के निरखत, अति सुख सबहिनि पाइ ।
कौसिल्या आदिक महतारी, आरति करहिँ बनाइ ।
यह सुख निरखि मुदित सुर-नर-मुनि, सूरदास बलि जाइ ॥२९॥
॥ ४७३ ॥

[...]ना) भैरव ।   (१) पुनि—१, २, ६, ८, ११ ।   ※ (ना) श्री ।

(अयोध्या कांड)

गमन

* राग स

† महाराज दसरथ मन धारी ।
अवधपुरी कौ राज राम दै, लीजै ब्रत बनचारी ।
यह सुनि बोली नारि कैकई, अपनौ बचन सँभारौ ।
चौदह वर्ष रहैं बन राघव, छत्र भरत-सिर धारौ ।
यह सुनि नृपति भयौ अति व्याकुल, कहत कछू नहिं आई ।
सूर रहे समुझाइ बहुत, पै कैकई-हठ नहिं जाई ॥ २०

॥ ४७४

* राग कान

‡ महाराज दसरथ यौं सोचत ।
हा रघुनाथ, लछन, बैदेही, सुमिरि नीर दृग मोचत ।
त्रिया-चरित[१] मतिमंत न समुझत, उठि प्रछालि मुख धोवत ।
अति बिपरीत रीति कछु औरै, बार-बार मुख जोवत !
परम कुबुद्धि कह्यौ नहिं समुझति, राम-लछन हँकराए ।
कौसिल्या सुनि परम दीन ह्वै, नैन-नीर ढरकाए ।
बिह्वल तन-मन, चकृत भई सो, यह प्रतच्छ सुपनाए !
गदगद-कंठ सूर कोसलपुर सोर सुनत दुख पाए ॥ २१ ॥

॥ ४७५

(ना) पद मंजरी ।
यह पद (कां) में
।
ना) बिहागरौ ।

‡ भिन्न भिन्न प्रतियों में इस पद का बड़ा पाठांतर मिलता है। सबको मिला-जुलाकर पाठ शुद्ध तथा संगत करने की चेष्टा की गई है।

(१) चरित मैमंत—१, १६ । महा मैमंत—२ । नाह नहिं—३ ।

कैकेयी-वचन, श्रीराम के प्रति   * राग सारंग

सकुचनि कहत नहीं महराज ।
चौदह बर्ष तुम्हैं बन दीन्हौं, मम सुत कौं निज राज ।
पितु-आयसु सिर धरि रघुनायक, कौसिल्या ढिग आए ।
सीस नाइ बन-आज्ञा माँगी, सूर सुनत दुख पाए ॥ ३२ ॥
॥ ४७६ ॥

दसरथ-विलाप   ※ राग सारंग

† रघुनाथ पियारे, आजु रहौ (हो) ।
चारि जाम बिस्राम हमारैं, छिन-छिन मीठे बचन कहौ (हो) ।
बृथा होहु बर बचन हमारौ, कैकई जीव कलेस सहौ (हो) ।
आतुर ह्वै अब छाँड़ि अवधपुर, प्रान-जिवन कित चलन कहौ (हो) ।
बिछुरत प्रान पयान करैंगे, रहौ आजु पुनि पंथ गहौ (हो) ।
अब सूरज दिन दरसन दुरलभ, कलित कमल कर कंठ गहौ (हो) ॥ ३३ ॥
॥ ४७७ ॥

श्रीराम-वचन, जानकी के प्रति   × राग गूजरी

तुम जानकी, जनकपुर जाहु ।
कहा आनि हम संग भरमिहौ, गहबर बन दुख-सिंधु अथाहु ।
तजि वह जनक-राज-भोजन-सुख, कत तृन-तलप, बिपिन-फल, खाहु !
ग्रीषम कमल-बदन कुम्हिलैहै, तजि सर निकट दूरि कित न्हाहु ।

* (ना) देवगिरि (ना) ।

※ (ना) भैरवी ।

† भिन्न भिन्न प्रतियों में इस पद के पाठ में बड़ा अंतर है । कुछ प्रतियों में यह पद कौशल्या का बचन मानकर बहुत कुछ बदल डाला गया है । कुछ में यह 'दशरथ-विलाप' शीर्षक के अंतर्गत आया है । इस संस्करण में इसे (वे) के अनुसार दशरथ विलाप का पद ही माना गया है ।

× (ना) भैरवी । (का) सारंग ।

जनि कछु प्रिया, सोच मन करिहौ, मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु ।
तुम घर रहौ सीख मेरी सुनि, नातरु बन बसिकै पछिताहु ।
हौं पुनि मानि कर्म कृत रेखा, करिहौं तात-बचन-निरबाहु ।
सूर सत्य जो पतिब्रत राखौ, चलौ संग जनि, उतहीं जाहु ॥३४॥

॥ ४७८ ॥

नकी-वचन, श्रीराम के प्रति

* राग केदारौ

ऐसौ जिय न धरौ रघुराइ ।
तुम-सौ प्रभु तजि मो सी दासी, अनत न कहूँ समाइ ।
तुम्हरौ रूप अनूप भानु ज्यौं, जब नैननि भरि देखौं ।
ता छिन हृदय-कमल-प्रफुलित ह्वै, जनम सफल करि लेखौं ।
तुम्हरैं चरन-कमल सुख-सागर, यह ब्रत हौं प्रतिपलिहौं ।
सूर सकल सुख छाँड़ि आपनौ, बन-बिपदा-सँग चलिहौं ॥ ३५ ॥

॥ ४७९ ॥

म-वचन, लक्ष्मण के प्रति

❀ राग गूजरी

तुम लछिमन निज पुरहिं सिधारौ ।
बिछुरन-भेंट देहु लघु बंधू, जियत न जैहै सूल तुम्हारौ ।
यह भावी कछु और काज है, को जो याकौ मेटनहारौ ।
याकौ कहा परेखौ-निरखौ[1], मधु[2] छीलर[3], सरितापति खारौ ।
तुम मति करौ अवज्ञा नृप की, यह दुख तौ आगे कौं भारौ ।
सूर सुमित्रा अंक दीजियौ, कौसिल्याहिं प्रनाम हमारौ ॥३६॥

॥ ४८० ॥

(ना) हम्मीर कल्यान । गुजरी । (का) सारंग ।

* (ना) ईमन ।

① हरषौ—१, २, ३, ६, ८ । ② मधुर झील—१६ । ③ झीलर—२ ।

क्ष्मण का उत्तर ※ राग सारंग

लछिमन नैन नीर भरि आए।
उत्तर कहत कछू नहिँ आयौ, रहे चरन लपटाए।
अंतरजामी प्रीति जानि कै, लछिमन लीन्हे साथ।
सूरदास रघुनाथ चले बन, पिता-बचन धरि माथ ॥ ३७ ॥

॥४८१॥

हाराज दशरथ का पश्चात्ताप ※ राग कान्हरौ

फिरि-फिरि नृपति चलावत बात।
कहु री! सुमति कहा तोहिँ पलटी, प्रान-जिवन कैसैँ बन जात!
ह्वै बिरक्त, सिर जटा धरैँ, द्रुम-चर्म, भस्म सब गात।
हा हा राम, लछन अरु सीता, फल भोजन जु डसावैँ पात।
बिन रथ रूढ़, दुसह दुख मारग, बिन पद-त्रान चलैँ दोउ भ्रात।
इहिँ बिधि सोच करत अतिही नृप, जानकि-ओर निरखि बिलखात।
इतनी सुनत सिर्मिटि सब आए, प्रेम सहित धारे अँसुपात।
ता दिन सूर सहर सब चकित, सबर[1]-सनेह तज्यौ पितु-मात ॥ ३८ ॥

॥ ४८२ ॥

म-बन-गमन राग नट

† आजु रघुनाथ पयानौ देत।
बिह्वल भए स्त्रवन सुनि पुरजन, पुत्र-पिता कौ हेत।

※ (ना, ना/इ) गुजरी। (का) ...रा।

※ (ना) नट।
(१) सब रस—१।

† यह पद केवल (शा, का, ना/इ) में है।

ऊँचे चढ़ि दसरथ लोचन भरि सुत-मुख देखे लेत ।
रामचंद्र से पुत्र बिना मैं भूँजब[1] क्यौं यह खेत ।
देखत गमन नैन भरि आए, गात गह्यौ ज्यौं केत ।
तात-तात कहि बैन उचारत, ह्वै गए भूप अचेत ।
कटि तट तून, हाथ सायक-धनु, सीता बंधु समेत ।
सूर गमन गह्वर कौ कीन्हौं जानत पिता अचेत ॥ ३६

॥४८

:-संवाद

* राग

लै भैया केवट, उतराई ।
महाराज रघुपति इत ठाढ़े, तैं कत नाव दुराई ?
अबहिँ सिला तैं भई देव-गति, जब पग-रेनु छुवाई ।
हौं कुटुंब काहैँ प्रतिपारौं, वैसी मति ह्वै जाई ।
जाकी चरन-रेनु की महि[2] मैं, सुनियत अधिक बड़ाई ।
सूरदास प्रभु अगनित महिमा, बेद पुराननि गाई ॥ ४०

॥४८

❀ राग क

नौका हौं नाहीँ लै आऊँ ।
प्रगट प्रताप चरन कौ देखौं, ताहि कहाँ पुनि[3] पाऊँ ?
कृपासिंधु पै केवट आयौ, कंपत करत सो बात ।
चरन परसि पाषान उड़त है, कत[4] बेरी उड़ि जात ?

बयौ कुरुखेत— ८, ११ । १६, १६ । (४) मति मेरी
* (ना) रामकली । (का, यह मेरी—२, ३, ६, ८ ।
) पंचम । ना) मारू । (कौ) सारंग ।
ा— १, २, ३, ६, (३) लौं पाऊँ—१. ६, ८,

जो यह वधू होइ काहू की, दारु-स्वरूप धरै।
छूटै देह, जाइ सरिता तजि, पग सौं परस करै।
मेरी सकल जीविका यामैं, रघुपति मुक्त न कीजै।
सूरजदास चढ़ौ प्रभु पाछैं, रेनु पखारन दीजै॥

※ रा।

† मेरी नौका जनि चढ़ौ त्रिभुवनपति राई।
मो देखत पाहन तरे, मेरी काठ की नाई।
मैं खेई ही पार कौं, तुम उलटि मँगाई।
मेरौ जिय यौंही डरै, मति होहि सिलाई।
मैं निरबल बित-बल नहीं, जो और गढ़ाऊँ।
मो कुटुंब याही लग्यौ, ऐसी कहँ पाऊँ?
मैं निर्धन, कछु धन नहीं, परिवार घनेरौ।
सेमर-ढाकहिं काटि कै, बाँधौं तुम बेरौ।
बार-बार श्रीपति कहैं, धीवर नहिं मानै।
मन प्रतीति नहिं आवई, उड़िबौ ही जानै।
नेरैं ही 'जलथाह है, चलौ तुम्हैं बताऊँ।
सूरदास की बीनती, नीकैं पहुँचाऊँ॥

ना) बिथास।

† यह पद (ना, स, ल, कां, रा) में नहीं है।

*

† सखी री, कौन तिहारे जात ।
राजिवनैन धनुष कर लीन्हे, बदन मनोहर गात ?
लज्जित होहिँ पुरबधू पूछैँ, अंग-अंग मुसकात ।
अति मृदु चरन पंथ-बन-विहरत, सुनियत अद्भुत बात ।
सुंदर तन, सुकुमार दोउ जन, सूर-किरिन कुम्हिलात ।
देखि मनोहर तीनौँ मूरति, त्रिविध-ताप-तन जात ॥

‡ अरी अरी सुंदरि नारि सुहागिनि, लागौँ तेरैँ पाउँ ।
किहिँ घाँ के तुम बीर बटाऊ, कौन तुम्हारौ गाउँ ?
उत्तर दिसि हम-नगर अजोध्या, है सरजू कैँ तीर ।
बड़ कुल, बड़े भूप दसरथ सखि, बड़ौ नगर गंभीर ।
कौनैँ गुन बन चली बधू तुम, कहि मोसौँ सति भाउ ।
वह घर-द्वार छाँड़ि कै सुंदरि, चली पियादे पाँउ !
सासु की सौति सुहागिनि सो सखि, अतिहीँ पिय की प्यारी ।
अपने सुत कौँ राज दिवायौ, हमकौँ देस निकारी ।
यह बिपरीति सुनी जब सबहीँ, नैननि ढारयौ नीर ।
आजु सखी चलु भवन हमारैँ, सहित दोउ रघुबीर ।

ा, ना/२) धनाश्री ।
।

† यह पद (काँ) में नहीँ है।
‡ यह पद केवल (शा, का, ना/२) में है।

बरष चतुरदस भवन न बसिहैं, आज्ञा दीन्ही राइ।
उनके बचन सत्य करि सजनी, बहुरि मिलैंगे आइ।
बिनती बिहँसि सरस मुख सुंदरि, सिय सौं पूछी गाथ[1]।
कौन बरन तुम देवर सखि री, कौन तिहारौ नाथ ?
कटि तट पट पीतांबर काछे, धारे धनु-तूनीर।
गौर बरन मेरे देवर सखि, पिय मम स्याम सरीर।
तीनि जने सोभा त्रिलोक की, छाँड़ि सकल पुरधाम।
सूरदास-प्रभु-रूप चकित भए, पंथ चलत नर[2]-बाम ॥ ४४ ॥

॥४८८

* राग धन

कहि धौं सखी बटाऊ को हैं ?
अद्भुत बधू लिए सँग डोलत, देखत त्रिभुवन मोहैं।
परम सुसील सुलच्छन जोरी, बिधि की रची न होइ।
काकी तिनकौं उपमा दीजै, देह धरे धौं कोइ।
इनमैं को पति आहिं तिहारे, पुरजनि पूछैं धाइ।
राजिवनैन मैन की मूरति, सैननि दियौ[3] बताइ।
गईं सकल मिलि संग दूरि लौं, मन न फिरत पुर-बास।
सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेतिं उसास ॥ ४५

॥ ४८९

ात—६, ८ । ② * (ना) भोपाली । (का, सारंग ।
, ८ । ना) कान्हरा । (काँ, श्या) ③ माहिँ—१, २, ३

तनु-त्याग — राग

† तात बचन रघुनाथ माथ धरि, जब बन गौन कियौ।
मंत्री गयौ फिरावन रथ लै, रघुबर फेरि दियौ।
भुजा छुड़ाइ, तोरि तृन ज्यौं हित, कियौ प्रभु निठुर हियौ।
यह सुनि भूप तुरत तनु त्याग्यौ, बिछुरन-ताप-तयौ।
सुरति-साल-ज्वाला उर अंतर, ज्यौं पावकहिँ पियौ।
इहिँ बिधि बिकल सकल पुरबासी, नाहिँन चहत जियौ।
पसु-पंछी तृन-कन त्याग्यौ अरु बालक पियौ न पयौ।
सूरदास रघुपति के बिछुरैँ, मिथ्या जनम भयौ ॥ १

॥ ४

[कौसिल]ा-विलाप, भरत-आगमन — * राग

‡ रामहिँ राखौ कोऊ जाइ।
जब लगि भरत अजोध्या आवैँ, कहति कौसिला माइ।
पठवौ दूत भरत कौँ ल्यावन, बचन कह्यौ बिलखाइ[1]।
दसरथ-बचन[2] राम बन गवने, यह कहियौ अरथाइ।
आए भरत, दीन ह्वै बोले, कहा कियौ कैकइ माइ?
हम सेवक वै त्रिभुवनपति, कत स्वान सिंह-बलि खाइ।

[† भि]न्न भिन्न प्रतियों में इस [पद के पाठ] भिन्न भिन्न हैं। चरणों में भी न्यूनाधिक्य है। [प्रतिय]ों के पाठों पर विचार कर इस संस्करण का पाठ निर्धारित किया गया है। अतएव पाठांतर नहीं दिए गए।

* (ना) सोरठि।

‡ यह पद (काँ) मे[ं ...]

(१) शिर नाइ—१, ६, ८, १९। (२) मरन ६, ८।

आजु अजोध्या जल नहिँ अँचवौं, मुख नहिँ देखौं माइ ।
सूरदास राघव-बिछुरन[1] तैँ, मरन भलौ दव लाइ ॥४७॥
॥ ४६१ ॥

बन, माता के प्रति * राग केदार

तैँ कैकई कुमंत्र कियौ ।
अपने कर[2] करि काल हँकारयौ, हठ करि नृप-अपराध लियौ ।
श्रीपति चलत रह्यौ कहि कैसैँ, तेरौ पाहन-कठिन हियौ ।
मो अपराधी के हित कारन, तैँ रामहिँ बनबास दियौ ।
कौन काज यह राज हमारैँ, इहिँ पावक परि कौन जियौ ?
लोटत सूर धरनि दोउ बंधू, मनौ तपत-विष विषम पियौ ॥४८॥
॥ ४६२ ॥

* राग सोरठ

† राम जू कहाँ गए री माता ?
सूनौ भवन, सिँहासन सूनौ, नाहीँ दसरथ ताता ।
धृग तव जन्म, जियन धृग तेरौ, कही कपट-मुख बाता ।
सेवक राज, नाथ बन पठए, यह कब लिखी बिधाता ।
मुख अरबिंद देखि हम जीवत, ज्यौँ चकोर ससि राता ।
सूरदास श्रीरामचंद्र बिनु कहा अजोध्या नाता ॥ ४९ ॥
॥ ४६३ ॥

के बिछुरे मरौं भवन दौ ।
(ना, का, दृ) धनाश्री ।
(काँ) गौरी ।
② मुख—१, १६, ११ ।
* (का, दृ) केदार । (काँ,
श्या) सारंग ।
† यह पद (ना, स, ल, र
में नहीँ है ।

दशरथ की अंत्येष्टि — * राग कान्हरौ

गुरु बसिष्ठ भरतहिँ समुझायौ ।
राजा कौ परलोक सँवारौ, जुग-जुग यह चलि आयौ ।
चंदन अगर सुगंध और घृत, बिधि करि चिता बनायौ ।
चले बिमान संग गुरु-पुरजन, तापर नृप पौढ़ायौ ।
भस्म अंत तिल-अंजलि दीन्हीँ, देव बिमान चढ़ायौ ।
दिन दस लौँ जलकुंभ साजि सुचि, दीप-दान करवायौ ।
जानि एकादस बिप्र बुलाए, भोजन बहुत करायौ ।
दीन्हौ दान बहुत नाना बिधि, इहिँ बिधि कर्म पुजायौ ।
सब करतूति[1] कैकई कैँ सिर, जिन यह[2] दुख उपजायौ ।
इहिँ बिधि सूर अजोध्या-बासी, दिन-दिन काल गँवायौ ॥ ५० ॥
॥४६४॥

चित्रकूट-गमन — * राग सारंग

राम पै भरत चले अतुराइ ।
मनहीँ मन सोचत मारग मैँ, दई, फिरैँ क्यौँ राघवराइ !
देखि दरस चरननि लपटाने, गदगद कंठ न कछु कहि जाइ ।
लीनौ हृदय लगाइ सूर प्रभु, पूछत भद्र भए क्यौँ भाइ ? ॥ ५१ ॥
॥४६५॥

× राग केदारौ

भ्रात[3]-मुख निरखि राम बिलखाने[4] ।
मुंडित केस-सीस, बिहवल दोउ, उमँगि[5] कंठ लपटाने ।

(ना) धनाश्री । (का, [illegible]रा । [illegible] अपराध—१६ । ② [illegible] उपायौ—१, २, ३ । अभिलाष पुजायौ—६, ८, १६ ।

* (ना) रामकली ।

× (ना) धनाश्री । (का, ना, का) सारंग ।

③ भरत—१, २, ३, ६, ८, १६ । ④ पछिताने—२, ३, ६, ८ । ⑤ अंग स्नेह लपटाने—६, ८ ।

तात-मरन सुनि स्रवन कृपानिधि, धरनि परे मुरझाइ ।
मोह-मगन, लोचन जल-धारा, बिपति न हृदय समाइ ।
लोटति धरनि परी सुनि सीता, समुझति नहिँ समुझाई ।
दारुन दुख दवारि ज्यौँ तृन-बन, नाहिँ न बुझति बुझाई ।
दुरलभ भयौ दरस दसरथ कौ, सो अपराध हमारे ।
सूरदास स्वामी करुनामय, नैन न जात उघारे ॥ ५२ ॥
॥ ४९६ ॥

त-संवाद * राग केदार

तुमहिँ बिमुख रघुनाथ, कौन बिधि जीवन कहा बनै ।
चरन-सरोज बिना अवलोके, को सुख धरनि गनै ।
हठ करि रहे, चरन नहिँ छाँड़े, नाथ, तजौ निठुराई ।
परम दुखी कौसल्या जननी, चलौ सदन रघुराई ।
चौदह बरष तात की आज्ञा, मोपै मेटि न जाई ।
सूर स्वामि की पाँवरि सिर धरि, भरत चले बिलखाई ॥ ५३ ॥
॥ ४९७ ।

भरत-प्रति * राग मा

बंधू, करियौ राज सँभारे ।
राजनीति अरु गुरु की सेवा, गाइ-बिप्र प्रतिपारे ।
कौसल्या - कैकई - सुमित्रा - दरसन साँझ - सवारे ।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं, परजा-हेतु बिचारे ।

) बिलावल । (ना) * (ना) गूजरी । (का)
सारंग ।

भरत गात सीतल ह्वै आयौ, नैन उमँगि जल ढारे।
सूरदास प्रभु दई पाँवरी, अवधपुरी पग धारे ॥ ५४ ॥

॥

विदा *

† राम यौं भरत बहुत समुझायौ।
कौसिल्या, कैकई, सुमित्रहिं, पुनि-पुनि सीस नवायौ।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं, अतिहीं प्रेम बढ़ायौ।
बालक प्रतिपालक तुम दोऊ, दसरथ-लाड़ लड़ायौ।
भरत-सत्रुहन कियौ प्रनाम, रघुबर तिन्ह[1] कंठ लगायौ।
गदगद गिरा, सजल अति लोचन, हिय सनेह-जल छायौ।
कीजे यहै बिचार परसपर, राजनीति समुझायौ।
सेवा मातु, प्रजा-प्रतिपालन, यह जुग-जुग चलि आयौ।
चित्रकूट तैं चले खीन[2]-तन, मन बिस्राम न पायौ।
सूरदास बलि गयौ राम कैं, निगम नेति जिहिं गायौ ॥ ५

॥

(अरण्यकांड)

ा-नासिकोच्छेदन ※

दंडक बन आए रघुराई।
काम-बिबस व्याकुल-उर-अंतर, राच्छसि एक तहाँ चलि आई
हँसि कहि कछू राम सीता सौं, तिहिं लछिमन कैं निकट पठाई
भृकुटी कुटिल, अरुन अति लोचन, अगिनि-सिखा-मुख कह्यौ फिर

ना) जैतश्री। (का,ड़ा) ① हित—१, २, ३, ८। ※ (ना) धना
हित करि—६। ② तिहीं छुव—
ह पद (का) में नहीं है। ६, ८।

री बौरी, सठ भई मदन-बस, मेरैं ध्यान चरन रघुराई।
बिरह-बिथा तन गई लाज छुटि, बारंबार उठै अकुलाई।
रघुपति कह्यौ, निलज्ज निपट तू, नारि राच्छसी ह्याँ तैं जाई।
सूरदास प्रभु इक पतिनीब्रत, काटी नाक गई खिसिआई ॥ ५६ ॥

॥ ५०० ॥

र-दूषण-बध

* राग सारंग

खर-दूषण यह सुनि उठि धाए।
तिनकैं संग अनेक निसाचर, रघुपति-आस्रम आए।
श्रीरघुनाथ-लछन ते मारे, कोउ एक गए[1] पराए।
सूर्पनखा ये समाचार सब, लंका जाइ सुनाए।
दसकंधर-मारीच निसाचर, यह सुनि कै अकुलाए।
दंडक बन आए छल करि कै, सूर राम[2] लखि धाए ॥ ५७ ॥

॥ ५०१ ॥

* राग सारंग

राम धनुष अरु सायक साँधे।
सिय-हित मृग पाछैं उठि धाए, बलकल बसन, फेँट दृढ़ बाँधे।
नव-घन, नील-सरोज बरन बपु, बिपुल बाहु, केहरि[3]-कल-काँधे।
इंदु-बदन, राजीव-नैन बर, सीस जटा सिव-सम सिर बाँधे।
पालत, सृजत, सँहारत, सैँतत, अंड अनेक अवधि पल आधे।
सूर भजन-महिमा दिखरावत, इमि अति[4] सुगम चरन आराधे ॥ ५८ ॥

॥ ५०२ ॥

---

* (का) मारू।
(१) भागि—६, ८। (२) ...ो रघुराए—१। कह्यौ रघुराए—२।
* (का, ना/३) केदार। (का) रामकली।
(३) तजी सुन काँधे—१, १६। कैवर कौं साधैं—२। गहबर को साधे—३। (४) गति—२।

रा   * रा

सीता पुहुप-वाटिका लाई ।

बारंबार[1] सराहत तरुवर, प्रेम-सहित सींचे रघुराई
अंकुर-मूल भए सो पोषे[2], क्रम-क्रम[3] लगे फूल फल आई
नाना भाँति पाँति सुंदर मनौ कंचन की है लता बनाई
मृग-स्वरूप मारीच धर्‌यौ तब, फेरि चल्यौ बारक[4] जो दिखाई
श्रीरघुनाथ धनुष कर लीन्हौ, लागत बान देव-गति पाई
हा लछिमन, सुनि टेर जानकी, बिकल भई, आतुर उठि धाई
|| रेखा खैँचि, बारि बंधन मय, हा रघुबीर कहाँ हौ भाई
रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत आइ, भिच्छा दै माई
दीन जानि, सुधि आनि भजन की, प्रेम सहित भिच्छा लै आई
हरि सीता लै चल्यौ डरत जिय, मानौ रंक महानिधि पाई
सूर सीय पछितानि यहै कहि, करम-रेख[5] मेटी नहिँ जाई ॥

॥ ५

*

इहिँ बिधि बन बसे रघुराइ ।

डासि कै तृन भूमि सोवत, द्रुमनि के फल खाइ ।
जगत-जननी करी बारी, मृगा चरि चरि जाइ ।
कोपि कै प्रभु बान लीन्हौ, तबहिँ धनुष चढ़ाइ ।

(ना) जैतश्री । (का, ङ्गा)
(का) सारंग ।
बार बार सोकादिक के
, १६ । बार बार सुग
के तर—२, ६, ८ । ② नीके—२ । पेखे—६, ८, १६ ।
③ कर्म भोग फल लागे—१, ६,
८, १६ । ④ मारग —१, ३, ६,
८, १६, १६ ।
|| इस चरण का अर्थ स्पष्ट नहीं है ।
⑤ दसा—१,
* (ना) सोर

जनक-तनया धरी अगिनि मैं, छाया रूप बनाइ ।
यह न कोऊ भेद जानै, बिना श्री रघुराइ ।
कह्यौ अनुज सौं, रहौ ह्याँ तुम, छाँड़ि जनि कहुँ जाइ ।
कनक-मृग मारीच मारयौ, गिरयौ, लषन सुनाइ ।
गयौ सो दै रेख, सीता कह्यौ सो कहि नहिं जाइ ।
तबहिं निसिचर गयौ छल करि, लई सीय चुराइ ।
गीध ताकौं देखि धायौ, लरयौ सूर बनाइ ।
पंख काटैं गिरयौ, असुर तब गयौ लंका धाइ ॥६०॥

॥ ५०४

॥ का अशोक-वन-वास राग स।

बन असोक मैं जनक-सुता कौं रावन राख्यौ जाइ ।
भूख ऽरु प्यास, नींद नहिं आवै, गई बहुत मुरझाइ ।
रखवारी कौं बहुत निसाचरि, दीन्हीं तुरत पठाइ ।
सूरदास सीता तिन्ह निरखत, मनहीं मन पछिताइ[1] ॥ ६१

॥ ५०५

र-विलाप * राग के

रघुपति कहि प्रिय नाम पुकारत ।
हाथ धनुष लीन्हे[2], कटि भाथा, चकित भए दिसि-विदिसि निहारत
निरखत सून भवन जड़ ह्वै रहे, खिन लोटत धर, बपु न सँभारत
हा सीता, सीता, कहि सियपति, उमड़ि नयन जल भरि-भरि ढारत

(१) सकुचाइ—१, ३, १६ । * (ना) सारंग । (२) लिए सुरत मृगहिं किए—

त सेष-उर बिलखि जगत गुरु, अद्भुत गति नहिँ परति बिचार
नत चित्त सूर सीतापति[1], मोह-मेरु-दुख टरत न टारत ।
॥ ५८

* राग

सुनौ अनुज, इहिँ बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी ।
कछु इक अंगनि की सहिदानी, मेरी दृष्टि परी ।
कटि केहरि, कोकिल कल[2] बानी, ससि मुख-प्रभा धरी ।
मृग मूसी नैननि की सोभा, जाति न गुप्त करी ।
चंपक-बरन, चरन-कर कमलनि, दाड़िम दसन लरी ।
गति मराल अरु बिंब अधर-छबि, अहि अनूप कबरी ।
अति करुना रघुनाथ गुसाईँ, जुग ज्यौं जाति घरी ।
सूरदास प्रभु प्रिया-प्रेम-बस, निज महिमा बिसरी ॥
॥ ५८

* राग

फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम-बेली ।
अहो बंधु, काहूँ अवलोकी इहिँ मग बधू अकेली ?
अहो बिहंग, अहो पन्नग-नृप, या कंदर के राइ ।
अबकैँ मेरी बिपति मिटावौ[3], जानकि देहु बताइ ।
चंपक - पुहुप - बरन-तन - सुंदर, मनौ चित्र-अवरेखी ।
हो रघुनाथ, निसाचर कैँ सँग अबै जात हौँ देखी ।

सीता हित—१, २, ३ । नहीँ है ।
ना) सारंग ।
ह पद (का, ना/२) मेँ
② बानी अरु—१,२,३,१४ ।
* (ना) बिलावल । (काँ)
मारू ।
③ कटावौ—२,३
—६, ८ । बँटावौ—

यह सुनि धावत धरनि, चरन की प्रतिमा पथ मैं पाई
नैन-नीर रघुनाथ सानि सो, सिव ज्यौं गात चढ़ाई
कहुँ हिय-हार, कहूँ कर-कंकन, कहुँ नूपुर[1] कहुँ चीर
सूरदास बन-बन अवलोकत, बिलख बदन रघुबीर

ग़ ※

तुम लछिमन या कुंज-कुटी मैं देखौ जाइ निहारि
कोउ इक जीव नाम मम लै-लै उठत पुकारि-पुकारि
इतनी कहत कंध तैं कर गहि लीन्हौ धनुष सँभारि
कृपानिधान नाम हित धाए, अपनी बिपति बिसारि
अहो बिहंग, कहौ अपनौ दुख, पूछत ताहि[2] खरारि
किहिं मति मूढ़ हत्यौ तनु तेरौ, किधौं बिछोही नारि
श्रीरघुनाथ-रमनि, जग-जननी, जनक-नरेस-कुमारि
ताकौं हरन कियौ दसकंधर, हौं तिहिं लग्यौ गुहारि
इतनी सुनि कृपालु कोमल प्रभु, दियौ धनुष कर झारि[3]
मानौ सूर प्रान लै रावन गयौ देह कौं डारि

॥

द-मासि ※

रघुपति निरखि गीध सिर नायौ।
बात सकल सीता की, तन तजि चरन-कमल चित

र—१, २, ६, ८।   ② तब जु मुरारि—१, १६।   ※ (ना)
) बिलावल।   ③ डारि— १,२, ३, ६, ८,१६।

श्री रघुनाथ जानि जन अपनौ, अपनैं कर करि ताहि जरायौ।
सूरदास प्रभु दरस परस करि, ततछन हरि कैं लोक सिधायौ ॥ ६६ ॥
॥ ५१० ॥

री-उद्धार * राग केदारौ

सबरी-आस्रम रघुबर आए। अरधासन दै प्रभु बैठाए।
खाटे फल तजि मीठे ल्याई। जूँठे भए सो सहज सुहाई।
अंतरजामी अति हित मानि। भोजन कीने, स्वाद बखानि।
जाति न काहू की प्रभु जानत। भक्ति-भाव हरि जुग-जुग मानत।
करि दंडवत भई बलिहारी। पुनि तन तजि हरि-लोक सिधारी।
सूरज प्रभु अति करुना भई। निज कर करि तिल-अंजलि दई ॥६७।
॥५११॥

किष्किंधा कांड

ग्रीव-मिलन * राग सारंग

रिष्यमूक परबत बिख्याता।
इक दिन अनुज-सहित तहँ आए, सीतापति रघुनाथा।
कपि सुग्रीव बालि के भय तैं बसत हुतौ तहँ आइ।
त्रास मानि तिहिँ पवन-पुत्र कौं दीनौ तुरत पठाइ।
को ये बीर फिरैं बन बिचरत, किहिँ कारन ह्याँ आए।
सूरज-प्रभु कैं निकट आइ कपि, हाथ जोरि सिर नाए ॥६८॥
॥५१२॥

* (मा) रामकली। * (मा) नट।

होनहार सो होत है, नहिँ जात मिटायौ।
चतुरमास सूरज प्रभु, तिहिँ ठौर बितायौ ॥७१॥

॥५

।-शोध * राग

† श्री रघुपति सुग्रीव कौं, निज निकट बुलायौ।
लीजै सुधि अब सीय की, यह कहि समुझायौ।
जामवंत-अंगद-हनू, उठि माथौ नायौ।
हाथ मुद्रिका प्रभु दई, संदेस सुनायौ।
आए तीर समुद्र कै, कछु सोध न पायौ।
सूर सँपाती तहँ मिल्यौ, यह बचन सुनायौ ॥७२॥

॥५

ी-वानर-संवाद * राग

बिछुरी मनौ संग तैं हिरनी।
चितवत रहत चकित चारौं दिसि, उपजी बिरह तन जरनी।
तरुवर-मूल अकेली ठाढ़ी, दुखित राम की घरनी।
बसन कुचील, चिहुर लपिटाने, बिपति[1] जाति नहिँ बरनी।
लेति उसास नयन जल भरि-भरि, धुकि सो परै धरि धरनी।
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम की सरनी ॥७३

॥५

* (ना) विभास। (का, ना) ल। (का) मारू।
† यह पद (रा) में नहीं है।
* (ना) रामकली। (का, ना) बिलावल।
① देह पीतांबर—१, १६।
देखत पीर न—२।

सुंदरकांड

* राग

† तब अंगद यह बचन कह्यौ।

को तरि सिंधु सिया-सुधि ल्यावै, किहिँ बल इतौ लह्यौ ?
इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ, हँसि बोल्यौ जमुवंत।
या दल मध्य प्रगट केसरि-सुत, जाहि नाम हनुमंत।
वहै ल्याइहै सिय-सुधि छिन मैं, अरु आइहै तुरंत।
उन प्रताप त्रिभुवन को पायौ, वाके बलहिँ न अंत।
जो मन करै एक बासर मैँ, छिन आवै छिन जाइ।
स्वर्ग-पताल माहिँ गम ताकौ, कहियै कहा बनाइ !
केतिक लंक, उपारि बाम कर, लै आवै उचकाइ।
पवन-पुत्र बलवंत बज्र-तनु, कापै[1] हटक्यौ जाइ।
लियौ बुलाइ मुदित चित ह्वैकै, कह्यौ, तँबोलहिँ लेहु।
ल्यावहु जाइ जनक-तनया-सुधि, रघुपति कौँ सुख देहु।
पौरि-पौरि प्रति फिरौ बिलोकत, गिरि कंदर-बन-गेहु।
समय बिचारि मुद्रिका दीजौ, सुनौ मंत्र सुत एहु।
लियौ तँबोल माथ धरि हनुमत, कियौ चतुरगुन[2] गात।
चढ़ि गिरि-सिखर सब्द इक उच्चर्‌यौ, गगन उठ्यौ आघात।
कंपत कमठ-सेष-बसुधा-नभ, रवि-रथ भयौ उलपात।
मानौ पच्छ सुमेरहिँ लागे, उड़्यौ अकासहिँ जात।
चकित सकल परस्पर बानर बीच परी किलकार।
तहँ इक अदभुत देखि निसिचरी, सुरसा-मुख-बिस्तार।

---

* (ना) सारंग। (का, ना)
।

† (काँ) में इस पद के कुछ चरण कम हैँ।

(१) काके हिये सम १६। (२) बज्र को मा

पवन-पुत्र मुख पैठि पधारे[1], तहाँ लगी कछु बार।
सूरदास स्वामी-प्रताप-बल, उतर्‍यौ जलनिधि पार।
॥

* राग

† लखि[2] लोचन, सोचै हनुमान।
चहुँ दिसि लंक-दुर्ग दानवदल, कैसैँ पाऊँ जान।
सौ जोजन विस्तार कनकपुरि, चकरी[3] जोजन बीस।
मनौ बिस्वकर्मा कर अपुनैँ, रचि राखी गिरि-सीस।
गरजत रहत मत्त गज चहुँदिसि, छत्र-धुजा चहुँ दीस।
भरमित भयौ देखि मारुत-सुत, दियौ महाबल ईस।
उड़ि हनुमंत गयौ आकासहिँ, पहुँच्यौ नगर मँझारि।
वन-उपबन, गम-अगम-अगोचर-मंदिर, फिर्‍यौ निहारि।
भई पैज अब हीन हमारी, जिय मैँ कहै बिचारि।
पटकि पूँछ, माथौ धुनि लोटै, लखी न राघव-नारि।
नाना रूप निसाचर अद्भुत, सदा करत मद-पान।
ठौर ठौर अभ्यास[4] महाबल करत कुंत-असि-बान।
जिय सिय-सोच करत मारुत-सुत, जियति न मेरैँ जान।
कै वह भाजि सिंधु मैँ डूबी, कै उहिँ तज्यौ परान।
कैसैँ नाथहिँ मुख दिखराऊँ, जौ बिनु देखे जाउँ।

बिदारी—२, ३, ६, ८।
ना) नट। (ना/२) केदारा।
यह पद (काँ) में
।

② निरखि—२, ३, ६, ८, १८, १९। ③ ऊचौ जोजन तीस—६, ८। ④ अभ्यास महा मल नट पेषने पुरान—१, १९।

उपहास महाबल सूर पुरान—३।

बानर बीर हँसैंगे मोकौं, तैं बोर्‌यौ पितु-नाउँ
रिच्छप[1] तर्क बोलिहैं मोसौं, ताकौं बहुत डराउँ
भलैं राम कौं सीय मिलाई, जीति कनकपुर गाउँ
जब मोहिं अंगद कुसल पूछिहैं, कहा कहौंगो ताहि
या जीवन तैं मरन भलौ है, मैं देख्यौ अवगाहि
मारौं आजु लंक लंकापति, लै दिखराऊँ ताहि
चौदह सहस जुवति अंतःपुर, लैहैं राघव चाहि
॥ मंदिर की परछाया बैठ्यौ, कर मींजै पछिताइ
॥ पहिलैं हूँ न लखी मैं सीता, क्यौं पहिचानी जाइ
॥ दुर्बल दीन-छीन चिंतित अति जपत नाइ रघुराइ
॥ ऐसी बिधि देखिहौं जानकी, रहिहौं सीस नवाइ
बहुरि बीर जब गयौ अवासहिं, जहाँ बसै दसकंध
नगनि जटित मनि-खंभ बनाए, पूरन बास-सुगंध
स्वेत छत्र फहरात सीस पर, मनौ लच्छि कौ बंध
चौदह सहस नाग-कन्या-रति, पर्‌यौ सो रत मतिअंध
बीना-झाँझ-पखाउज-आउज, और राजसी भोग
पुहुप-प्रजंक परी नवजोबनि, सुख-परिमल-संजोग
¶ जिय[2] जिय गढ़ै, करै बिस्वासहिं, जानै लंका लोग
¶ इहिं सुख-हेत[3] हरी है सीता, राघव बिपति-बियोग

---

[1] सब—१, ११। । लछमन जबै—८। चार चरण केवल (का, है।

॥ ये दो चरण (का, स) में नहीं हैं।

② जय जय कहौं करै सिव ऐसी जानै लंका जोग (लोग)—६, ८। ③ सेज ३, ११। सेज हरी—

पुनि आयौ सीता जहँ बैठी, बन असोक के माहिँ ।
चारौँ ओर निसिचरी घेरे, नर जिहिँ देखि डराहिँ ।
‖ बैठ्यौ जाइ एक तरुवर पर, जाकी सीतल छाहिँ ।
‖ बहु निसाचरी मध्य जानकी, मलिन बसन तन माहिँ ।
बारंबार बिसूरि सूर दुख, जपत नाम रघुनाहु ।
ऐसी भाँति जानकी देखी, चंद गह्यौ ज्यौँ राहु ॥ ७५ ॥
॥५१९॥

राग मारू

गयौ कूदि हनुमंत जब सिंधु-पारा ।
सेष के सीस लागे कमठ पीठि सौँ, धँसे गिरिवर सबै तासु भारा ।
लंक गढ़ माहिँ आकास मारग गयौ, चहूँ दिसि बज्र लागे किवारा ।
पौरि सब देखि सो असोक बन मैँ गयौ, निरखि सीता छप्यौ बृच्छ-डारा ।
सोच लाग्यौ करन, यहै धौँ जानकी, कै कोऊ और, मोहिँ नहिँ चिन्हारा ।
सूर आकासबानी भई तबै तहँ, यहै[1] बैदेहि है, करु जुहारा ॥ ७६ ॥
॥ ५२० ॥

[न]िसिचरी-वचन, जानकी-प्रति

* राग मारू

† समुझि अब निरखि जानकी मोहिँ ।
बड़ौ[2] भाग गुनि, अगम दसानन, सिव बर दीनौ तोहिँ ।

‖ ये दो चरण (ना, स) में हैँ ।
① है यहै है यहै—१, ११ । यही है जानकी—२ ।
* (ना) नट ।
† यह पद (काँ) में नहीँ है ।
② बड़े भाग अब अगम दिसा तैँ—२, ३, ६, ८ ।

केतिक राम कृपन, ताकी पितु-मातु घटाई कानि।
तेरौ पिता जो जनक जानकी, कीरति कहौं बखानि।
बिधि संजोग टरत नहिँ टारैँ, बन दुख देख्यौ आनि।
अब रावन घर बिलसि सहज[1] सुख, कह्यौ हमारौ मानि।
इतनौ बचन सुनत सिर धुनिकै, बोली सिया रिसाइ।
अहो ढोठ, मति[2] मुग्ध निसिचरी, बैठी सनमुख आइ।
तब रावन कौ बदन देखिहौं, दससिर-स्रोनित न्हाइ।
कै तन देउँ मध्य पावक कै, कै बिलसैँ रघुराइ।
जौ पै पतिब्रता ब्रत तेरैँ, जीवति बिछुरी काइ?
तब किन मुई, कहौ तुम मोसौँ भुजा गही जब राइ?
अब झूठौ अभिमान करति हौ, झुकति जो उनकैँ नाउँ।
सुखहीँ रहसि मिलौ रावन कौँ, अपनैँ सहज सुभाउ।
जौ तू रामहिँ दोष लगावै, करौँ प्रान[3] कौ घात।
तुमरे[4] कुल कौँ बेर न लागै, होत भस्म संघात।
उनकैँ क्रोध जरै लंकापति, तेरैँ हृदय समाइ।
तौ पै सूर पतिब्रत साँचौ, जौ देखौँ रघुराइ ॥७

॥५२

ी-रावण-संवाद

* रा

† सुनौ किन कनकपुरी के राइ।
हौँ बुधि-बल-छल करि पचि हारी, लख्यौ न सीस उचाइ

सेज—२, ३। ② जड़
२, १८। ③ निछावर
। ④ मेरी निसा सखी

है मानौ कब देखौँ परभात—२,
३, १८। उनके क्रोध घने घर जैहैँ
तू अपने जिय जान —६, ८।

* (ना) केदार
मारू।
† यह पद (काँ

डोलै गगन सहित सुरपति अरु पुहुमि पलटि जग परई[1]।
नसै धर्म मन बचन काय करि, सिंधु[2] अचंभौ करई।
अचला चलै, चलत पुनि थाकै, चिरंजीवि सो मरई।
श्री रघुनाथ-प्रताप पतिव्रत, सीता-सत नहिँ टरई।
ऐसी तिया हरन क्यौं आई, ताकौ यह सतिभाउ।
मन-बच-कर्म और नहिँ दूजौ, बिन रघुनंदन राउ।
उनकैँ क्रोध भस्म ह्वै जैहौ, करौ न सीता चाउ।
तब तुम काकी सरन उबरिहौ, सो बलि मोहिँ बताउ?
"जौ सीता सत तैँ बिचलै तौ श्रीपति काहि सँभारै?
'मोसे मुग्ध महापापी कौँ कौन क्रोध करि तारै[3]?
'ये जननी, वै प्रभु[4] रघुनंदन, हौँ सेवक प्रतिहार।
'सीता-राम सूर संगम बिनु कौन उतारै पार?" ॥ ७८ ॥
॥५२२॥

[र]चन, सीता-प्रति * रा

जनकसुता, तू समुझि चित्त मैँ, हरषि मोहिँ तन हेरि।
चौदह सहस किन्नरी जेती, सब दासी हैँ तेरी।
कहै तौ जनक गेह दै पठवौँ, अरध लंक कौ राज।
तोहिँ देखि चतुरानन मोहै, तू सुंदरि-सिरताज।
छाँड़ि राम तपसी के मोहैँ, उठि आभूषन साजु।
चौदह सहस तिया मैँ तोकौँ, पटा बँधाऊँ आजु।
कठिन बचन सुनि स्रवन जानकी, सकी न बचन[5] सँभारि।

जाइ—१, १६। टरई ... १६। ③ मारै—२, ३। ④ ... * (ना)
शंभु अचंभु कराइ—१, ... पितु—६, ८। ... ⑤ नैकु—

तृन-अंतर दै दृष्टि तरौंधी, दियौ नयन जल ढारि।
पापी, जाउ जीभ गरि तेरी, अजुगुत बात विचारी।
सिंह कौ भच्छ सृगाल न पावै, हौं समरथ की नारी।
|| चौदह सहस सेन खरदूषन, हती राम इक बान।
|| लछिमन-राम-धनुष-सन्मुख परि, काके रहिहैं प्रान ?
मेरौ हरन मरन है तेरौ, ल्यौं कुटुंब-संतान।
जरिहै लंक कनकपुर[1] तेरौ, उदवत रघुकुल-भान।
|| तोकौं[2] अवध कहत सब कोऊ, तातैं सहियत बात।
|| विना प्रयास मारिहौं तोकौं, आजु रैनि कै प्रात।
यह राकस की जाति हमारी, मोह न उपजै गात।
परतिय रमैं, धर्म कहा जानैं, डोलत मानुष खात।
|| मन मैं डरी, कानि जिनि तोरै, मोहिं अबला जिय जानि।
|| नख-सिख-बसन सँभारि, सकुच तनु, कुच-कपोल गहि पानि।
रे दसकंध, अंधमति, तेरी आयु तुलानी आनि।
सूर राम की करत अवज्ञा, डारैं सब भुज भानि ॥ ७६ ॥
॥५२३॥

सीता-संवाद

* रा

त्रिजटी सीता पै चलि आई।
मन मैं सोच न करि तू माता, यह कहि कै समुझाई।

चरण (ना, स) में
।

① पत्र पुरइनि ज्यौं—६,८।
② तेरी अवधि—१, ११।

* (ना) विहागर सारंग।

नलकूबर कौ साप रावनहिँ, तो पर बल न बसाई
सूरदास मनु जरी सजीवनि श्री रघुनाथ पठाई ॥ ८० ।
॥ ५२४ ।

* राग

सो दिन त्रिजटी, कहु कब ऐहै ?
जा दिन चरनकमल रघुपति के हरषि जानकी हृदय लगैहै
कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा, माइ-माइ कहि मोहिँ सुनैहै
कबहुँक कृपावंत कौसिल्या, बधू-बधू कहि मोहिँ बुलैहै
जा दिन कंचनपुर प्रभु ऐहैँ बिमल ध्वजा रथ पर फहरैहै
ता दिन जनम सफल करि मानौँ, मेरी हृदय-कालिमा जैहै
जा दिन राम रावनहिँ मारैँ, ईसहिँ लै दससीस चढ़ैहैँ
ता दिन सूर राम पै सीता सरबस वारि बधाई दैहै ॥ ८१ ।
॥ ५२५ ।

* र

मैँ तौ राम-चरन चित दीन्हौँ ।
मनसा, बाचा और कर्मना, बहुरि मिलन कौँ आगम कीन्हौँ
डुलै सुमेरु, सेष-सिर कंपै, पच्छिम उदै करै बासर-पति
सुनि त्रिजटी, तौहूँ नहिँ छाड़ौँ मधुर मूर्त्ति रघुनाथ-गात-रति
सीता करति बिचार मनहिँ मन, आजु-काल्हि कोसलपति आवैँ
सूरदास स्वामी करुनामय, सो कृपालु मोहिँ क्यौँ बिसरावैँ !॥
॥ ५

ना) बिहागरौ । (का, मारू ।

* (ना) कान्हरा । (का, ना, की, स्या) मारू ।

। सुनि सीता, सपने की बात ।
रामचंद्र-लछिमन मैं देखे, ऐसी विधि परभात
कुसुम-बिमान बैठो बैदेही, देखी राघव पास
स्वेत छत्र रघुनाथ-सीस पर, दिनकर-किरन-प्रकास
भयौ पलायमान दानवकुल, ब्याकुल सायक-त्रास
पजरत धुजा, पताक, छत्र, रथ, मनिमय कनक-अवास
रावन-सीस पुहुमि पर लोटत, मंदोदरि बिलखाइ
कुंभकरन-तन पंक लगाई, लंक[1] बिभीषन पाइ
प्रगट्यौ आइ लंक दल कपि कौ, फिरी रघुबीर दुहाइ
या सपने कौ भाव सिया सुनि, कबहुँ विफल नहिँ जाइ
त्रिजटी बचन सुनत बैदेही अति दुख लेति उसास
॥ हा हा रामचंद्र, हा लछिमन, हा कौसिल्या सास
॥ त्रिभुवननाथ नाह जो पावै, सहै सो क्यौँ बनवास !
हा कैकई[2], सुमित्रा जननी, कठिन निसाचर-त्रास
कौन पाप मैं पापिनि कीन्हौ, प्रगट्यौ जो इहिँ बार
धिक धिक जीवन है अब यह तन, क्यौँ न होइ जरि छार

केदारौ। (का [ना/३])

(कां) मैं नहीं
का, [ना/३]) मैं यह
:भक्त किया गया
, रा, श्या) मैं

ये दोनों पद एकही में मिला दिए गए हैं, जो उपयुक्त प्रतीत होता है। वही क्रम इस संस्करण में भी ग्रहण किया गया है। भिन्न भिन्न प्रतियों में इसके चरणों की संख्या भी समान नहीं है तथा

पाठों में भी भे
रण में विशेषत
अनुसरण किया

(१) विभि
२, ३। (२)

द्वै अपराध मोहिँ ये लागे, मृग-हित दियौ हथियार ।
जान्यौ नहीँ निसाचर कौ छल, नाघ्यौ धनुष-प्रकार ।
पंछी एक सुहृद जानत हौँ, कर्‌यौ निसाचर भंग ।
तातैँ बिरमि रहे रघुनंदन, करि मनसा-गति पंग ।
इतनौ कहत नैन उर फरके, सगुन जनायौ अंग ।
आजु लहौँ रघुनाथ सँदेसौ, मिटै बिरह दुख संग ।
तिहिँ छिन पवन-पूत तहँ प्रगट्यौ, सिया अकेली जानि ।
"श्री दसरथकुमार दोउ बंधू, धरे धनुष-सर पानि ।
'प्रिया-बियोग फिरत मारे मन, परे सिंधु-तट आनि ।
'ता सुंदरि-हित मोहिँ पठायौ, सकौँ न हौँ पहिचानि ।"
बारंबार निरखि तरुवर तन, कर मीड़ति पछिताइ ।
दनुज, देव, पसु, पच्छी, को तू, नाम लेत रघुराइ ?
बोल्यौ नहीँ, रह्यौ दुरि बानर, द्रुम मैँ देहि छपाइ ।
कै अपराध ओढ़ि तू मेरौ, कै तू देहि दिखाइ ।
तरुवर त्यागि चपल साखामृग, सन्मुख बैठ्यौ आइ ।
माता, पुत्र जानि दै उत्तर, कहु किहिँ बिधि बिलखाइ ?
किन्नर-नाग देवि सुर-कन्या, कासौँ हुति उपजाइ ?
कै तू जनक-कुमारि जानकी, राम-बियोगिनि आइ ?
राम नाम सुनि उत्तर दीन्हौ, पिता बंधु मम होहि ।
मैँ सीता, रावन हरि ल्यायौ, त्रास दिखावत मोहिँ ।

...रनि उराइ—६, ८ ।

अब मैं मरौं, सिंधु मैं बूड़ौं, चित मैं आवै कोह ।
सुनौ बच्छ, धिक जीवन मेरौ, लछिमन-राम-बिछोह ।
कुसल जानकी, श्रीरघुनंदन, कुसल लच्छिमन भाइ ।
तुम-हित नाथ कठिन ब्रत कीन्हौ, नहिँ जल-भोजन खाइ ।
मुरै न अंग कोउ जो काटै, निसि-बासर सम जाइ ।
तुम घट प्रान देखियत सीता, बिना प्रान रघुराइ ।
बानर बीर चहूँ दिसि धाए, ढूँढैं गिरि-बन-झार[1] ।
सुभट अनेक सबल दल साजे, परे सिंधु के पार ।
उद्यम मेरौ सफल भयौ अब, तुम[2] देख्यौ जो निहारि ।
अब रघुनाथ मिलाऊँ तुमकौं, सुंदरि सोक निवारि[3] ।
यह सुनि सिय मन संका उपजी, रावन-दूत बिचारि ।
छल करि आयौ निसिचर कोऊ, बानर रूपहिँ धारि ।
स्रवन मूँदि, मुख आँचर ढाँप्यौ, अरे निसाचर, चोर !
काहे कौं छल करि-करि आवत, धर्म बिनासन मोर ?
पावक परौं, सिंधु महँ बूड़ौं, नहिँ मुख देखौं तोर ।
पापी क्यौं न पीठि दै मोकौं, पाहन सरिस कठोर ।
जिय अति डरचौ, मोहिँ मति सापै, ब्याकुल बचन कहंत ।
मोहिँ बर दियौ सकल देवनि मिलि, नाम धरचौ हनुमंत ।
अंजनि-कुँवर राम कौ पायक, ताकैं बल गर्जंत ।
जिहिँ अंगद-सुग्रीव उबारे, बध्यौ बालि बलवंत ।

, ८, १६ । (२) मैं देख्यौ तुम आइ—१, ६, ८, १६ । (३) सिराइ—१,

लेहु मातु, सहिदानि मुद्रिका, दई प्रीति करि नाथ।
सावधान ह्वै सोक निवारहु, ओड़हु दच्छिन हाथ।
॥खिन मुँदरी, खिनहीँ हनुमत सौं, कहति बिसूरि-बिसूरि।
॥ कहि मुद्रिके, कहाँ तैं छाँड़े मेरे जीवन-मूरि?
॥ कहियौ बच्छ, सँदेसौ इतनौ जब हम वै इक थान।
॥ सोवत काग छुयौ तन मेरौ, बरहहिँ कीनौ बान।
॥ फोर्‌यौ नयन, काग नहिँ छाँड़्यौ सुरपति के बिदमान!
॥ अब वह कोप कहाँ रघुनंदन, दससिर-बेर बिलान?
निकट बुलाइ बिठाइ निरखि मुख, अंचर लेत बलाइ।
चिरजीवौ सुकुमार पवन-सुत, गहति दीन ह्वै पाइ।
बहुत भुजनि बल होइ तुम्हारैं, ये अंमृत फल खाहु।
अब की बेर सूर प्रभु मिलवहु, बहुरि प्रान किन जाहु ॥ ८

॥ !

कृत सीता-समाधान

*

जननी, हौँ अनुचर रघुपति कौ।
मति माता करि कोप सरापै, नहिँ दानव ठग मति[1] कौ
आज्ञा होइ, देउँ कर-मुँदरी, कहौं सँदेसौ पति[2] कौ
मति हिय बिलख करौ सिय, रघुबर हतिहैँ कुल दैयत कौ
कहौ तौ लंक उखारि डारि देउँ, जहाँ पिता संपति कौ
कहौ तौ मारि-सँहारि निसाचर, रावन करौं अगति कौ

चरण (ना स) में

* (ना) ललित।
① ठगमति—१, २, ८, १६,

१६। ② इस—२,
—१६, १६।

र-तीर भीर बनचर की, देखि कटक रघुपति कं
मिलाऊँ तुम्हैं सूर प्रभु, राम-रोष डर अति को ॥८
॥ ५२८

अनुचर रघुनाथ कौ[2] तव दरस-काज आयौ।
पवन-पूत कपि-स्वरूप, भक्तनि मैं गायौ।
|| आयसु जौ होइ जननि, सकल असुर मारौं।
|| लंकेस्वर बाँधि राम-चरननि तर डारौं।
तपसी तप करैं जहाँ, सोई बन-भाँखौ।
जाकी तुम बैठी छाहँ, सोई द्रुम राखौं।
चढ़ि चलौ जौ पीठि मेरी, अबहिं लै मिलाऊँ।
सूर श्री रघुनाथ जू की, लीला नित[3] गाऊँ ॥८५॥
॥ ५२६ ॥

तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर।
इन नैननि कबहूँ नहिं देख्यौ, रामचंद्र[4] कैं तीर।
लंका बसत दैत्य अरु दानव, उनके अगम सरीर।
तोहिं देखि मेरौ जिय डरपत, नैननि आवत नीर।

ऊँ (मिलाउँ) हौं ... ८, १२, १६। ... रामकली।

(२) तेरे—१, ६, ८, १६।
|| ये दो चरण (ना स, का, ना, रा) में नहीं हैं।

(३) गुन—१
* (ना) म
(४) रामलषन

तब कर काढ़ि अँगूठी दीन्हीं, जिहिं[1] जिय उपज्यौ धीर ।
सूरदास प्रभु लंका-कारन, आए सागर-तीर ॥ ८६ ॥

॥ ५२० ॥

जननी, हौं रघुनाथ पठायौ ।
रामचंद्र आए की तुमकौं देन बधाई आयौ ॥
हौं हनुमंत, कपट जिनि समझौ, बात कहत सतभाई ।
मुँदरी दूत धरी लै आगैं, तब प्रतीति जिय आई ॥
अति सुख पाइ उठाइ लई तब, बार-बार उर भेंटै ।
ज्यौं मलयागिरि पाइ आपनी जरनि हृदै की मेटै ॥
लछिमन पालागन कहि पठयौ, हेत बहुत करि माता ।
दई असीस तरनि-सन्मुख ह्वै, चिरजीवौ दोउ भ्राता ॥
बिछुरन कौ संताप हमारौ, तुम दरसन दै काढ्यौ ।
ज्यौं रवि-तेज पाइ दसहूँ दिसि, दोष कुहर कौ फाढ्यौ ॥
ठाढ़ौ बिनती करत पवन-सुत, अब जो आज्ञा पाऊँ ।
अपनैं देखि चले कौ यह सुख, उनहूँ जाइ सुनाऊँ ॥
कल्प-समान एक छिन राघव, क्रम-क्रम करि हैं बितवत ।
तातैं हौं अकुलात, कृपानिधि ह्वैहैं पैंड़ो चितवत ॥
॥ रावन हति, लै चलौं साथही, लंका धरौं अपूठी ।
॥ यातैं जिय सकुचात, नाथ[2] की होइ प्रतिज्ञा झूठी ॥

·१,३,६, ८, १६ । सोरठि । (का, ना/ड़ा)

॥ ये दो चरण (ना, स, रा) में नहीं हैं ।

६, ८, १६, १

(२) कृपानिधि करौं...—१,

अब ह्याँ की सब दसा हमारी, सूर सो कहियौ जाइ ।
बेनती बहुत कहा कहौं, जिहिँ बिधि देखौं रघुपति-पाइ ॥

॥ ५

*

बनचर, कौन देस तैं आयौ ?
कहाँ वै राम, कहाँ वै लछिमन, क्यौं करि मुद्रा पायौ ?
हौं हनुमंत, राम कौ सेवक, तुम सुधि लैन पठायौ ।
रावन मारि, तुम्हैं लै जातौ, रामाज्ञा नहिँ पायौ ।
तुम जनि डरपौ मेरी माता, राम जोरि दल ल्यायौ ।
सूरदास रावन कुल-खोवन, सोवत सिंह जगायौ ॥

॥ ५

*

कहौ कपि, कैसैं उतरे पार ?
दुस्तर अति गंभीर बारि-निधि, सत जोजन बिस्तार ।
इत उत दैत्य क्रुद्ध मारन कौं, आयुध धरे अपार ।
हाटकपुरी कठिन पथ, बानर, आए कौन अधार ?
राम-प्रताप, सत्य सीता कौ, यहै नाव[1]-कनधार ।
तिहिँ अधार छिन मैं अवलंघ्यौ, आवत भई न बार ।
पृष्ठभाग चढ़ि जनक-नंदिनी, पौरुष देखि हमार ।
सूरदास लै जाउँ तहाँ, जहँ रघुपति कंत तुम्हार ॥

॥

रामकली । मारू ।
अहीरी । (का, ना) [1] नाव गुन धार—६, ८ ।

हनुमत, भली करो तुम आए ।
बारंबार कहति बैदेही, दुख-संताप मिटाए
श्री रघुनाथ और लछिमन के समाचार सब पाए
अब परतीति भई मन मेरैं, संग मुद्रिका लाए
क्यौं करि सिंधु-पार तुम उतरे, क्यौं करि लंका आए,
सूरदास रघुनाथ जानि जिय, तव बल इहाँ पठाए
॥

†सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोर्‍यौ निमिष महीं
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन-प्रान हरे सरहीं
कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गही
कै रघुनाथ दुखित कानन, कै नृप भए रघुकुलहीं
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं
छाँड़ी नारि बिचारि पवन-सुत, लंक बाग बसहीं
कै हौं कुटिल, कुचील, कुलच्छनि, तजी कंत तबहीं
सूरदास स्वामी सौं कहियौ, अब बिरमाहिं नहीं
।

। अहीरी ।
) धनाश्री ।

† यह पद (काँ) में नहीं है ।

देश, श्रीराम-प्रति   राग कान्हरौ

यह गति देखे जात, सँदेसौ कैसैं कै जु कहौं ?
सुनु कपि, अपने प्रान कौ पहरौ, कब लगि देति रहौं ?
ये अति चपल, चल्यौ चाहत हैं, करत न कछू बिचार ।
कहि धौं प्रान कहाँ लौं राखौं, रोकि देह मुख द्वार ?
इतनी[1] बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत ।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ, प्रभु करुनामय कंत ! ॥ ९२ ॥
॥ ५३६ ॥

* राग मारू

[1]कहियौ कपि, रघुनाथ राज सौं सादर यह इक बिनती मेरी ।
नाहीं सही परति मोपै अब, दारुन त्रास निसाचर केरी ।
यह तौ[2] अंध बीसहूँ लोचन, छल-बल करत आनि मुख हेरी[3] ।
आइ सृगाल सिंह बलि[4] चाहत, यह मरजाद जाति प्रभु तेरी ।
जिहिं भुज परसुराम बल करष्यौ, ते भुज क्यौं न सँभारत फेरी ?
सूर सनेह जानि करुनामय, लेहु छुड़ाइ जानकी चेरी ॥ ९३ ॥
॥५३७॥

* राग मारू

मैं परदेसिनि नारि अकेली ।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु-पिता न सहेली ।

अपनी—१, १७ ।   है ।   ९, ८, १६ ।
(ना) काफी ।   (२) जो—१, २, ९, ८, १६ ।   * (ना) कल्यान ।
ह पद (काँ) में नहीं   (३) मेरी—२, ३ ।   (४) भष—

रावन भेष धर्‌यौ तपसी कौ, कत मैं भिच्छा मेली ।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी, राम-रेख पग पेली ।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम बेली ।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ, प्रान जात[1] हैं[2] खेली ॥ ६४ ॥
॥ ५३८ ॥

सीता-परितोष — राग मारू

† तू जननी अब दुख जनि मानहि ।
रामचंद्र नहिँ दूरि कहूँ, पुनि भूलिहु चित चिंता नहिँ आनहि ।
अबहिँ लिवाइ जाउँ सब रिपु हति, डरपत हौं आज्ञा-अपमानहिँ ।
|| राख्यौ सुफल सँवारि, सान दै, कैसैं निफल करौं वा बानहिँ ?
|| हैं केतिक ये तिमिर-निसाचर, उदित एक रघुकुल के भानहिँ ।
|| काटन दै दस सीस बीस भुज, अपनौ कृत येऊ जो जानहिँ ।
|| देहिँ दरस सुभ नैननि कहँ प्रभु, रिपु कौं नासि सहित संतानहिँ ।
सूर सपथ मोहिँ, इनहिँ दिननि मैं, लै जु आइहौं कृपानिधानहिँ ॥६५॥
॥ ५३९ ॥

अशोक-वन-भंग — * राग मारू

हनुमत बल प्रगट भयौ, आज्ञा[3] जब पाई ।
जनक-सुता-चरन बंदि, फूल्यौ न समाई ।
अगनित तरु-फलसुगंध-मृदुल-मिष्ट-खाटे ।
मनसा करि प्रभुहिँ अर्पि, भोजन करि डाटे ।

---

(१) जायँगो—१६, १४ । (२) अब—३ । पुनि—६, ८ ।
† यह पद (कां) में नहीं है ।
|| ये चरण (रा) में नहीं हैं ।
* (ना/३) धनाश्री ।
(३) सीता—१, २, ३, ६, ८, १८, १६ ।

द्रुम गहि उतपाटि लिए, दै-दै किलकारी।
दानव बिन प्रान भए, देखि चरित भारी।
बिह्वल-मति कहन[1] गए, जोरे सब हाथा।
बानर बन बिघन कियौ, निसिचर[2]-कुल-नाथा !
||वह निसंक, अतिहिँ ढीठ, बिडरै नहिँ भाजै।
|| मानौ बन-कदलि-मध्य उनमत गज गाजै।
|| भानै मठ, कूप, बाइ, सरवर कौ पानी।
|| गौरि-कंत पूजत[3] जहँ नूतन जल आनी।
पहुँची तब असुर-सैन साखामृग जान्यौ।
मानौ जल-जीव सिमिटि जाल मैं समान्यौ।
तरुवर तब इक उपाटि हनुमत कर लीन्यौ।
किंकर[4] कर पकरि बान तीनि खंड कीन्यौ।
जोजन बिस्तार सिला पवन-सुत उपाटी।
किंकर करि बान लच्छ अंतरिच्छ काटी।
|| आगर इक लोह जटित, लीन्हौ बरिबंड।
|| दुहूँ करनि असुर हयौ, भयौ मांस-पिंड।
|| दुर्धर परहस्त-संग आइ सैन भारी।
|| पवन-पूत दानव-दल ताड़े दिसिचारी।
रोम-रोम हनूमंत लच्छ[5]-लच्छ बान।
जहाँ-तहाँ दीसत, कपि करत राम-आन।

१६। ② || ये आठ चरण (ना, स, मानी—६, ८।
—१, २, ३, श) में नहीं है। ६, ८। ⑤ ब
③ की दुहाइ नैं कहू न (बाना)—६,

मंत्री-सुत पाँच सहित अछयकुँवर सूर।
||सैन सहित सबै हते झपटि कै लँगूर।
चतुरानन-बल सँभारि मेघनाद आयौ।
मानौ घन पावस मैं नगपति[1] है छायौ।
देख्यौ जब, दिव्यवान[2] निसिचर[3] कर तान्यौ।
छाँड़यौ तब सूर हनू ब्रह्म-तेज मान्यौ ॥६६॥
॥ ५४० ॥

संवाद

सीतापति-सेवक तोहिँ देखन कौँ आयौ।
काकैँ बल बैर तैँ जु राम तैँ बढ़ायौ?
जे-जे तुव सूर सुभट, कीट सम न लेखौँ।
तोकौँ दसकंध अंध, प्रानिनि बिनु देखौँ।
नख-सिख ज्यौँ मीन-जाल, जड़्यौ अंग-अंगा।
अजहुँ नाहिँ संक धरत, वानर मति-भंगा!
जोइ सोइ मुखहिँ कहत, मरन निज न जानै।
जैसैँ नर सन्निपात भएँ बुध बखानैँ।
तब तू गयौ सून भवन, भस्म अंग पोते।
करते बिन प्रान तोहिँ, लछिमन जौ होते।

रांत ये दो चरण
) मैँ है —
असुर-
ा कैँ भीरा।

पावक भयौ पवन-पूत
दानव-दल कीरा।
(१) नागनि बपु—२, ३। (२)
दे —३। दृष्टि—६, ८, ११।

(३) नागफ
करि जान्यौ
* (न

पाछे तैं हरो सिया, न मरजाद राखी।
जौ पै दसकंध बली, रेख क्यौं न नाखी ?
अजहूँ[1] सिय सौंपि नतरु बीस भुजा भानै।
रघुपति यह पैज करी, भूतल धरि पानैं[2]।
ब्रह्मबान कानि करी, बल करि नहिँ बाँध्यौ।
कैसैं परताप घटै, रघुपति आराध्यौ!
देखत कपि बाहु-दंड तन प्रस्वेद छूटे।
जै-जै रघुनाथ कहत, बंधन सब टूटे।
देखत बल दूरि कर्‌यौ, मेघनाद गारौ।
आपुन भयौ सकुचि सूर बंधन तैं न्यारौ ॥९७॥

॥ ५४१ ॥

मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचार्‌यौ।
राजन कहौ, दूत काहू कौ, कौन नृपति है मार्‌यौ
इतनी सुनत बिभीषन बोले, बंधू पाइ परौं
यह अनरीति सुनी नहिँ स्रवननि, अब नई कहा करौ
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै धाए
सन अरु सूत, चीर-पाटंबर, लै लंगूर बँधाए
तेल-तूल-पावक-पुट धरिकै, देखन चहैं जरौ
कपि मन कह्यौ भली मति दीनी, रघुपति-काज करौ

---

[1] ...तुहिँ लै जाऊँ सिया मानै—३, ६, १८।
[2] ...मानै—६, ८। (२) *(ना) बिलावल।

बंधन तोरि, मोरि मुख असुरनि, ज्वाला प्रगट कर
रघुपति-चरन-प्रताप सूर तब, लंका सकल जरो ॥ ६
॥ ५

*

सोचि जिय पवन-पूत पछिताइ ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि, कहा कियौ मैं आइ
सेवक कौ सेवापन एतौ, आज्ञाकारी होइ
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे, अपजस करिहैं लोइ
वै रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ
या भयभीत देखि लंका मैं, सीय जरी मति होइ
इतनो कहत गगनबानी भई, हनू सोच कत करई
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई
फिरि अवलोकि सूर सुख लीजै, पुहुमी राम न परई
जाकैं हिय-अंतर रघुनंदन, सो क्यौं पावक जरई
॥

लंका हनूमान सब जारी ।
राम-काज सीता की सुधि लगि, अंगद-प्रीति बिचारी
जा रावन की सकति तिहूँ पुर, कोउ न आज्ञा टारी
ता रावन कैं अछत अछयसुत-सहित सैन संहारी

) नट । (का, ना) * (ना) सूही । मे नहीं हैं ।
( ) सारंग । ॥ ये दो चरण (ना, स, रा)

पूँछ बुझाइ गए सागर-तट, जहँ सीता की बारी ।
करि दंडवत प्रेम पुलकित ह्वै, कह्यौ, सुनि राघव-प्यारी ।
तुम्हरेहिँ तेज-प्रताप रही बचि, तुम्हरी यहै अटारी ।
सूरदास स्वामी के आगैं, जाइ कहौं सुख भारी ॥ १०० ॥
॥५४४॥

ता का चूड़ामणि-प्रदान

* राग सारंग

मेरी कैँती[1] बिनती करनी ।
पहिलैं करि प्रनाम, पाइनि परि, मनि रघुनाथ हाथ लै धरनी ।
मंदाकिनि-तट फटिक-सिला पर, मुख-मुख जोरि तिलक की करनी ।
कहा कहौं, कछु[2] कहत न आवै, सुमिरत प्रीति होइ उर अरनी ।
तुम हनुमंत, पवित्र पवन-सुत, कहियौ जाइ जोइ मैं बरनी ।
सूरदास प्रभु आनि मिलावहु, मूरति दुसह दुःख-भय-हरनी ॥ १०१ ॥
॥ ५४५ ॥

नुमान-प्रत्यागमन

* राग मारू

हनूमान अंगद के आगैं लंक-कथा सब भाषी ।
अंगद कही, भली तुम कीनी, हम सबकी पति राखी ।
हरषवंत ह्वै चले तहाँ तैं मग मैं बिलम न लाई ।
पहुँचे आइ निकट रघुबर कैं, सुग्रिव आयौ धाई ।
सबनि प्रनाम कियौ रघुपति कौं, अंगद बचन सुनायौ ।
सूरदास प्रभु-पद-प्रताप करि, हनू सीय सुधि ल्यायौ ॥ १०२ ॥
॥ ५४६ ॥

---

* (ना) बिलावल । (का,) कान्हरा ।

(१) कोतै—२, ६, ८, ११ । कोटै—३ । (२) कपि—१, ६, ८, ११ ।

* (ना) बिलावल ।

※ र

हनु, तैं सबकौ काज सँवारचौ ।
बार-बार अंगद यौं भाषै, मेरौ प्रान उबारचौ ।
तुरतहिं गमन कियौ सागर तैं, बीचहिं बाग उजारचौ ।
कीन्हौ मधुबन चौर चहूँदिसि, माली जाइ पुकारचौ ।
धनि हनुमत, सुग्रीव कहत हैं, रावन कौ दल मारचौ ।
सूर सुनत रघुनाथ भयौ सुख, काज आपनौ सारचौ ॥१०
॥५४

।-राम-संवाद ※ रा

कहौ कपि, जनक-सुता-कुसलात ।
आवागमन सुनावहु अपनौ, देहु हमैं सुख-गात ।
सुनौ पिता, जल-अंतर ह्वै कै रोक्यौ मग इक नारि ।
धर-अंबर लौं रूप निसाचरि, गरजी बदन पसारि ।
तब मैं डरपि कियौ छोटौ तनु, पैठ्यौ उदर-मँझारि ।
खरभर[1] परी, दियौ उन पैंड़ौ, जीती पहिली रारि ।
गिरि मैनाक उदधि मैं अद्भुत, आगैं रोक्यौ जात ।
पवन-पिता कौ मित्र न जान्यौ, धोखैं मारी लात ।
तबहूँ और रह्यौ सरितापति आगैं जोजन सात ।
तुव प्रताप परली दिसि पहुँच्यौं, कौन बढ़ावै बात ।
लंका पौरि-पौरि मैं ढूँढ़ी अरु बन-उपबन जाइ ।
तरु[2] असोक-तर देखि जानकी, तब हौं रह्यौ लुकाइ ।

ना) धनाश्री । ना) जयतश्री ।

(१) खरहर परी देव आनंदे —१, २, ३, १८, १९ । (२) तरुवर तर अवलोकि— ३, १८, १९ ।

रावन कह्यौ सो कह्यौ न जाई, रह्यौ क्रोध अति छाइ।
तब ही अवध जानि[1] कै राख्यौ मंदोदरि समुझाइ।
पुनि हौं गयौ सुफलबारी मैं, देखी दृष्टि पसारि।
असी सहस किंकर-दल तेहि के, दौरे मोहिं निहारि।
तुव प्रताप तिनकौं छिन भीतर जूझत लगी न बार।
उनकौं मारि तुरत मैं कीन्ही मेघनाद सौं रार।
ब्रह्म-फाँस उन लई हाथ करि, मैं चितयौ कर जोरि।
तज्यौ कोप मरजादा राखी, बँध्यौ आपही भोरि[2]।
रावन पै लै गए सकल मिलि, ज्यौं लुब्धक पसु जाल।
करुवौ बचन स्रवन सुनि मेरौ, अति रिस गही भुवाल।
आपुन[3] ही मुगदर लै धायौ, करि लोचन बिकराल।
चहुँदिसि सूर सोर करि धावैं, ज्यौं करि[4] हेरि स्रगाल॥१०
॥५४

* रा

कैसैं पुरी जरी कपिराइ।
बड़े दैत्य कैसैं कै मारे, अंतर[5] आप बचाइ?
प्रगट कपाट बिकट[6] दीन्हे हे, बहु जोधा रखवारे।
तैंतिस कोटि देव बस कीन्हे, ते तुमसौं क्यौं हारे?

ानकी—६, ८। (२) ३, १६। बोर—२। ८। (३) अपने कर १८। (४) केहरिहिं

सियाल—१, १६। गज हतै सयाल—३।

* (ना) जैतश्री। (स्या) सारंग।

(५) ईश्वर तुम्हें (सहाइ)—१, १६। छं बचाइ—२, ३। (६) २, ३, १६।

तीनि लोक डर जाकैं काँपै, तुम[1] हनुमान न[2] पेखे ?
तुम्हरैं क्रोध, स्राप सीता कैं, धूरि[3] जरत हम देखे[4] ।
हौ जगदीस, कहा कहौं तुमसौं, तुम बल-तेज मुरारी ।
सूरजदास सुनौ सब संतौ, अबिगत की गति न्यारी ॥ १०५ ॥

॥५४६॥

(लंका कांड)

सिंधु-तट-वास

राग मारू

सीय-सुधि सुनत रघुबीर धाए ।
चले तब लखन, सुग्रीव, अंगद, हनू, जामवँत, नील, नल सबै आए ।
भूमि अति डगमगी, जोगिनी सुनि जगी, सहस-फन सेस कौ सीस काँप्यौ ।
कटक अगिनित जुर्‍यौ, लंक खरभर पर्‍यौ, सूर कौ तेज धर-धूरि-ढाँप्यौ ।
जलधि-तट आइ रघुराइ ठाढ़े भए, रिच्छ-कपि गरजि कै धुनि सुनायौ ।
सूर रघुराइ चितए हनूमान-दिसि, आइ तिन तुरत ही सीस नायौ ॥१०६॥

॥५५०॥

हनुमंत-बचन

* राग केदारौ

राघौ जू, कितिक बात, तजि[5] चित ।
केतिक रावन-कुंभकरन-दल, सुनियै देव अनंत ।
कहौ तौ लंक लकुट ज्यौं फेरौं, फेरि कहूँ लै डारौं ।
कहौ तौ परबत चाँपि चरन तर, नीर-खार मैं गारौं ।

---

(१) मैं—६, ८ । (२) बिबेकी—२, ३, ६ । बिसेषी—८ । (३) धूरि—६, ८ । (४) देखी—२, ३, ६, ८ । (५) निज—२, ३, ६, ८ ।

* (ना) सारंग । (काँ) मारू ।

कहौ तौ असुर लँगूर लपेटौं, कहौ तौ नखनि बिदारौं।
कहौ तौ सैल उपारि पेड़ि तैं, दै सुमेरु सौं मारौं।
जेतिक सैल-सुमेरु धरनि मैं, भुज भरि आनि मिलाऊँ।
सप्त समुद्र देउँ छाती तर, एतिक देह बढ़ाऊँ।
चली जाउ सैना सब मोपर धरौ चरन रघुबीर।
मोहिं असीस जगत-जननी की, नवत[1] न बज्र-सरीर।
जितिक बोल बोल्यौ तुम आगैं, राम, प्रताप तुम्हारैं।
सूरदास प्रभु की सौं साँचे, जन करि पैज पुकारैं॥ १०७॥
॥ ५५१॥

*राग मारू

रावन से[2] गहि कोटिक मारौं।
जो तुम आज्ञा देहु कृपानिधि, तौ यह परिहस सारौं।
कहौ तौ जननि जानकी ल्याऊँ, कहौ तौ लंक बिदारौं[3]।
कहौ तौ अबहीं पैठि सुभट हति, अनल सकल पुर जारौं।
कहौ तौ सचिव[4]-सबंधु सकल अरि, एकहिं एक पछारौं।
कहौ तौ तुव प्रताप श्री रघुबर, उदधि पखाननि तारौं[5]।
कहौ तौ दसौ सीस, बीसौ भुज, काटि छिनक[6] मैं डारौं।
कहौ तौ ताकौं तृन गहाइ कै, जीवत पाइनि पारौं।

---

(१) तुव तन—१, १४। तो तन—२, ३।
* (ना) नट।
(२) संख कोटि इक—२, ३।
(३) उदारौं—१, ३, ६, ८, १४।
(४) संजुग बाँधि सकल उर—६, ८।
(५) पारौं—२। (६) धरनि पर—३।
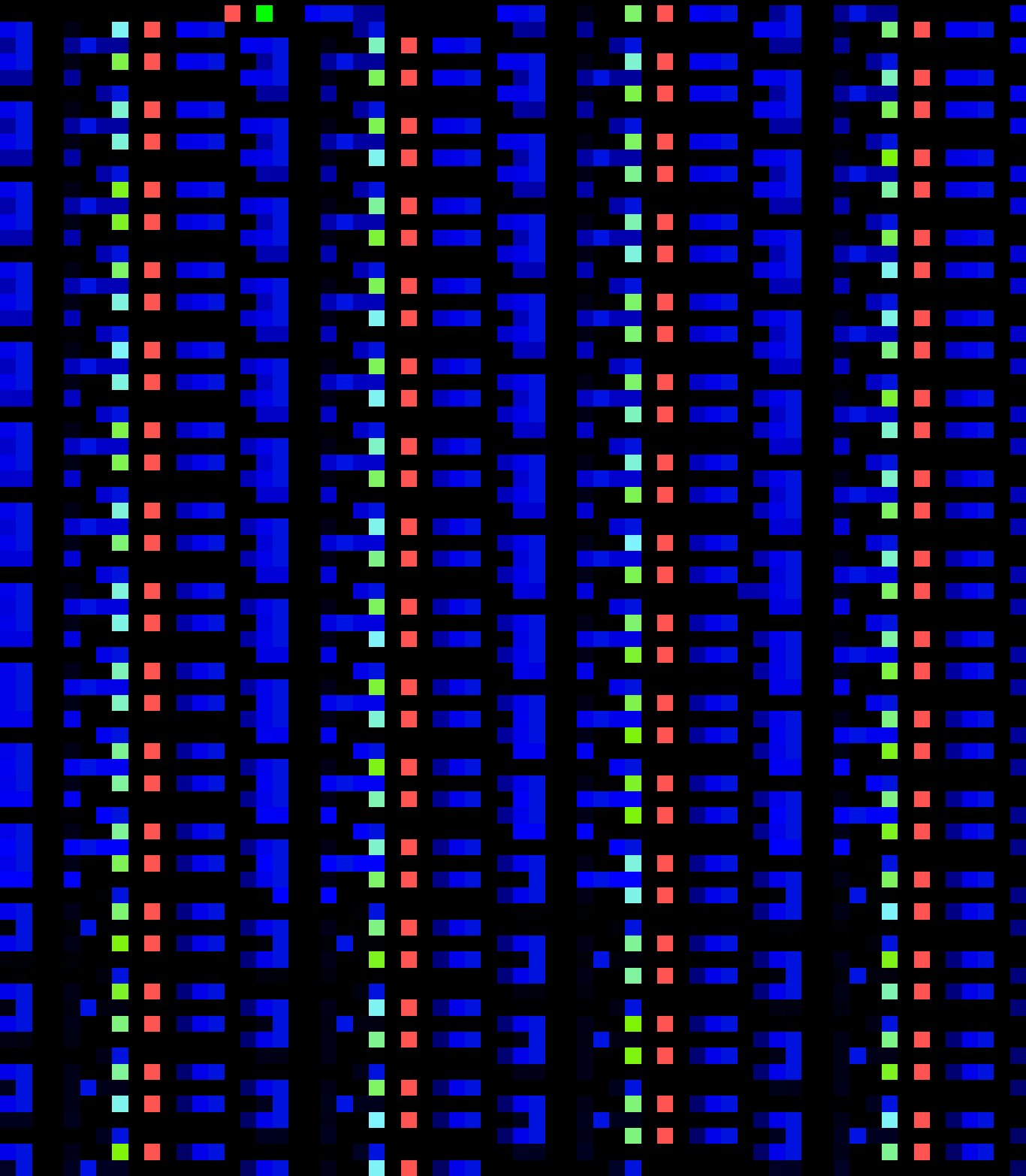
कहौ तौ सैना चारु रचौं कपि, धरनी-व्योम-पतारौ ।
सैल-सिला-द्रुम बरषि, व्योम चढ़ि, सत्रु-समूह सँहारौं ।
बार-बार पद परसि कहत हौं, हौं कबहूँ नहिं हारौं ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे बचन लगि, सिव-बचननि कौं टारौं ॥ १०८
॥ ५५२

राग ॰

† हौं प्रभु जू कौ आयसु पाऊँ ।
अबहीं जाइ, उपारि लंक गढ़, उदधि[1]-पार लै आऊँ ।
अबहीं जंबू द्वीप इहाँ तैं लै लंका पहुँचाऊँ ।
सोखि[2] समुद्र, उतारौं कपि-दल, छिनक बिलंब न लाऊँ ।
अब आवैं रघुबीर जीति दल, तौ हनुमंत कहाऊँ ।
सूरदास सुभ पुरी अजोध्या, राघव सुबस[3] बसाऊँ ॥ १०९
॥ ५५३

* राग सा

रघुपति, बेगि जतन अब कीजै ।
बाँधै सिंधु सकल सैना मिलि, आपुन[4] आयसु दीजै ।
तब लौं तुरत एक तौ बाँधौ, द्रुम-पाखाननि छाइ ।
द्वितिय सिंधु सिय-नैन-नीर ह्वै, जब लौं मिलै न आइ ।

दो चरण (ना, स) में नहीं है । * (ना) ललित । (
हैं । ① यहै—११ । ② सुखै— ना/२) धनाश्री ।
पद (ना, स, ल, रा) ६, ८ । ③ सुयश—१ । ④ जो प्रभु—२ ।

यह बिनती हौं करौं कृपानिधि, बार-बार अकुलाइ ।
सूरजदास अकाल प्रलय प्रभु, मेटौ दरस दिखाइ ॥ ११० ॥
॥ ५५४ ॥

[वि]भीषण-रावण-संवाद

※ राग मारू

लंकपति कौं अनुज सीस नायौ ।
परम गंभीर, रनधीर दसरथ-तनय, कोप करि सिंधु कैं तीर आयौ ।
सीय कौं लै मिलौ, यह मतौ है भलौ, कृपा करि मम बचन मानि लीजै ।
ईस कौ ईस, करतार संसार[1] कौ, तासु पद-कमल पर सीस दीजै ।
कह्यौ लंकेस दै ठेस[2] पग की तबै, जाहि मति-मूढ़, कायर, डरानौ ।
जानि असरन-सरन सूर के प्रभू कौं, तुरतहीं आइ द्वारैं तुलानौ ॥ १११ ॥
॥ ५५५ ॥

※ राग सारंग

आइ बिभीषन सीस नवायौ ।
देखत ही रघुबीर धीर, कहि[3] लंकापती, बुलायौ ।
कह्यौ सो बहुरि कह्यौ नहिं रघुबर, यहै बिरद चलि आयौ ।
भक्तबछल करुनामय प्रभु कौ, सूरदास जस गायौ ॥ ११२ ॥
॥ ५५६ ॥

[रा]म-प्रतिज्ञा

× राग मारू

तब हौं नगर अजोध्या जैहौं ।
एक बात सुनि निस्चय मेरी, राज्य बिभीषन दैहौं ।

---

* (ना) गौड़ मलार ।
① करुनामई—१, २, १६ ।
② शीश (सीस) पग तासु कैं—१, १६ ।
※ (ना) मालकौश । (का, ढ़ा) मारू ।
③ कहि लंकपती तिहि नाम—१, २, ६, ८, १६ ।
× (ना) गूजरी ।

कपि-दल जोरि और सब सैना, सागर सेतु बँधैहौं ।
काटि दसौ सिर, बीस भुजा, तब दसरथ-सुत जु कहैहौं ।
छिन इक माहिँ लंक गढ़ तोरौं, कंचन-कोट ढहैहौं ।
सूरदास प्रभु कहत बिभीषन, रिपु हति सीता लैहौं ॥ ११३
॥ ५५७

दोदरी-संवाद * राग

वै लखि आए राम रजा ।
जल कैं निकट आइ ठाढ़े भए, दीसति बिमल ध्वजा ।
सोवत कहा चेत रे रावन, अब क्यौं खात दगा ?
कहति मँदोदरि, सुनु पिय रावन, मेरी बात अगा ।
तृन दसननि लै मिलि दसकंधर, कंठनि मेलि पगा ।
सूरदास प्रभु रघुपति आए, दहपट होइ लँका ॥ ११
॥ ५५

⊛ राग

सरन परि मन-बच-कर्म बिचारि ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, जो अब लेइ उबारि ?
सुनु सिख कंत, दंत तृन धरि कै, स्यौं परिवार सिधारौ ।
परम पुनीत जानकी सँग लै, कुल-कलंक किन टारौ !
ये दससीस चरन पर[1] राखौ, मेटौ सब अपराध ।
हौं प्रभु कृपा करन रघुनंदन, रिस न गहैं पल आध ।

ना) मलार । (का, डा) * (ना) सारंग । (का, डा) धनाश्री । (1) तर—१, ६,

तोरि धनुष, मुख मोरि नृपनि[1] कौ, सीय स्वयंबर कीनौ।
छिन इक मैं भृगुपति-प्रताप-बल करषि[2], हृदय धरि[3] लीनौ।
लीला करत कनक-मृग मार्‍यौ, बध्यौ बालि अभिमानी।
सोइ दसरथ-कुलचंद अमित बल, आए सारँग पानी।
जाकैं दल सुग्रीव सुमंत्री, प्रबल जूथपति भारी।
महा सुभट रनजीत पवन-सुत, निडर बज्र-बपु-धारी
करिहै लंक पंक छिन भीतर, बज्र-सिला लै धावै।
कुल-कुटुंब-परिवार सहित तोहिँ बाँधत बिलम न लावै।
अजहूँ बल जनि करि संकर कौ, मानि बचन हित मेरौ।
जाइ मिलौ कोसल-नरेस कौं भ्रात[4] बिभीषन तेरौ।
कटक सोर अति घोर दसौं दिसि, दीसति बनचर-भीर।
सूर समुझि, रघुबंस-तिलक दोउ उतरे सागर-तीर ॥१

॥५

* रा

काहे कौं परतिय हरि आनी ?
यह सीता जो जनक की कन्या, रमा आपु रघुनंदन-रानी।
रावन मुग्ध, करम के हीने, जनक-सुता तैं तिय करि मानी!
जिनकैं[2] क्रोध पुहुमि-नभ पलटै, सूखै सकल सिंधु कर पानी!

। सबनि—२, १६। ② -२, ३, ६, ८। ③ २। हरि—३, ८। ④ है न—६, ८। अनुज—१६।

* (ना) टोड़ी। (का, ना/इ) मलार।

② जाकैं क्रोध पटकै कहा कहेगो सिंधु १, १६।

व[1] सुख निद्रा नहिँ आवै, लैहैँ लंक बीस भुज भा
न मिटै भाल की रेखा, अल्प मृत्यु तुव आइ तुलान

तोहिँ कवन मति रावन आई ?
जाकी नारि सदा नवजोबन, सो क्यौं हरै पराई
लंक सौ कोट देखि जनि गरबहि, अरु समुद्र सी खाई
आजु-काल्हि, दिन चारि-पाँच मैं, लंका होति पराई
जाकैं हित सैना सजि आए, राम लछन दोउ भाई
सूरदास प्रभु लंका तोरैं, फेरैं राम-दुहाई

आयौ रघुनाथ बली, सीख सुनौ मेरी।
सीता लै जाइ मिलौ बात[2] रहै तेरी।
तैं जु बुरौ कर्म कियौ, सीता हरि ल्यायौ।
घर बैठे बैर कियौ, कोपि राम आयौ।
चेतत क्यौं नाहिँ मूढ़[3], सुनि सुबात मेरी।
अजहूँ नहिँ सिंधु बँध्यौ, लंका है तेरी।
सागर कौ पाज बाँधि, पार उतरि आवैं।
सैना कौ अंत नाहिँ, इतनौ दल ल्यावैं।

सुखहिँ नी द--१, निद्रा—२,३। * (ना) सारंग। * (ना) चरचरी। (२) पति इ (३) एक—१,

देखि तिया कैसौ बल, करि तोहिँ दिखराऊँ।
रीछ कीस[1] बस्य करौं, रामहिँ गहि ल्याऊँ।
जानति हौं, बली बालि सौं न छूटि पाई।
तुम्है कहा दोष दीजै, काल-अवधि आई।
बलि जब बहु जज्ञ किए, इंद्र सुनि सकायौ।
छल करि लइ छीनि मही, बामन ह्वै धायौ।
हिरनकसिप अति प्रचंड, ब्रह्मा बर पायौ।
तब नृसिंह रूप धर्‌यौ, छिन न बिलँब लायौ।
पाहन सौं बाँधि सिंधु, लंका गढ़ घेरै[2]।
सूर[3] मिलि बिभीषनै दुहाइ राम फेरैं ॥ ११

॥ ५६

*

† रे पिय, लंका बनचर आयौ।
परपंच हरी तैं सीता, कंचन-कोट ढहायौ
तैं मूढ़ मरम नहिँ जान्यौ, जब मैं कहि समुझायौ
न मिलौ जानकी लै कै, रामचंद्र चढ़ि आयौ
धुजा देखि रथ ऊपर, लछिमन धनुष चढ़ायौ
पद सूरदास कहै भामिनि, राज बिभीषन पायौ।

(

रैं—२, ३,
ँ—१, २, ३,
सूरदास मिलि

बिभीषण राम देहि फेरैं—१।
सूरदास मिलन नीकैं राम ध्वाइ
फेरैं—२।

* (कां) म
† यह पद केव
कां) में है।

* राग

सुक-सारन द्वै दूत पठाए ।
बानर-बेष फिरत सैना मैं, जानि बिभीषन तुरत बँधाए ।
बीचहिं मार परी अति भारी, राम-लछन तब दरसन पाए ।
दीनदयालु बिहाल देखि कै, छोरी भुजा, कहाँ तैं आए ?
हम लंकेस-दूत प्रतिहारी, समुद-तीर कौं जात अन्हाए ।
सूर कृपाल भए करुनामय, अपनैं[1] हाथ दूत पहिराए ॥

॥ ५

गर-संवाद

* राग

रघुपति जबै सिंधु-तट आए ।
कुस-साथरी बैठि इक आसन, बासर तीनि बिताए ।
सागर गरब धर्‌यौ उर भीतर[2], रघुपति नर करि जान्यौ ।
तब रघुबीर धीर अपनैं कर, अगिनि-बान गहि तान्यौ ।
तब जलनिधि[3] खरभर्‌यौ त्रास गहि, जंतु उठे अकुलाइ ।
कह्यौ, न नाथ बान मोहिं जारौ, सरन पर्‌यौ हौं आइ ।
आज्ञा होइ, एक छिन भीतर, जल इक[4] दिसि करि डारौं ।
अंतर मारग होइ, सबनि कौं इहिं बिधि पार उतारौं ।
और मंत्र जो करौं देवमनि, बाँध्यौ सेतु बिचार ।
दीन जानि, धरि चाप, बिहँसि कै, दियौ कंठ तैं हार ।

(ना) विभास । (का, ... १६ । ... धर—१, २, ६, १६
...ारू । ... * (का) सारंग । ... दस—१ । दिसि—
(१) पत्र लखन दै दूत पठाए— ... (२) अंतर—१४ । (३) जल- ... १६ ।

यहै मंत्र सबहीँ परधान्यौ[1], सेतु बंध प्रभु कीजै।
सब दल उतरि होइ पारंगत, ज्यौँ न कोउ इक छीजै।
यह सुनि दूत गयौ लंका मैँ, सुनत नगर अकुलानौ।
रामचंद्र-परताप दसौँ दिसि, जल पर तरत पखानौ।
दस सिर बोलि निकट बैठायौ, कहि धावन सति भाउ।
उद्यम कहा होत लंका कौँ, कौनैँ कियौ उपाउ ?
जामवंत-अंगद बंधू मिलि, कैसैँ इहिँ पुर ऐहैँ।
मो देखत जानकी नयन भरि, कैसैँ देखन पैहैँ।
हौँ सति भाउ कहौँ[2] लंकापति, जौ जिय आयसु[3] पाऊँ।
सकल भेव[3] व्यवहार कटक कौ, परगट[4] भाषि सुनाऊँ।
बार-बार यौँ कहत सकात न, तोहिँ हति लैहैँ प्रान।
मेरैँ जान कनकपुरि फिरिहै रामचंद्र की आन।
कुंभकरन हूँ कह्यौ सभा मैँ, सुनौ आदि उतपात।
एक दिवस हम ब्रह्म-लोक मैँ चलत सुनी यह बात।
काम-अंध ह्वै सब कुटुंब-धन, जैहै एकै बार।
सो अब सत्य होत इहिँ औसर, को है मेटनहार।
और मंत्र अब उर नहिँ आनौँ, आजु विकट रन माँड़ौँ।
गहौँ बान रघुपति कैँ सन्मुख ह्वै करि यह तन छाँड़ौँ।
यह जस जीति परम पद पावौँ, उर संसै सब खोइ।
सूर सकुचि जौ सरन सँभारौँ, छत्री-धर्म न होइ।

मन आयौ—१, १६, उत्तम मानौं (जानौं)— १, १६, १६। (३) कहौं—१, २, २, १३। (४) कपि उमहे सो मानो (जानो)—१, १६ अतिहिँ सुनाऊँ—३

[* राग धन

रघुपति चित विचार कर्‌यौ ।

नातौ मानि सगर सागर सौँ, कुस-सायरी पर्‌यौ ।

तीनि जाम अरु बासर बीते, सिंधु गुमान भर्‌यौ ।

कीन्हौ कोप कुँवर कमलापति, तब कर धनुष धर्‌यौ ।

ब्रह्म-बेष आयौ अति ब्याकुल, देखत बान डर्‌यौ ।

द्रुम-पषान प्रभु बेगि मँगायौ, रचना सेतु कर्‌यौ ।

नल अरु नील बिस्वकर्मा-सुत, छुवत पषान तर्‌यौ ।

सूरदास स्वामी प्रताप तैँ, सब संताप हर्‌यौ ॥ १ २

॥ ५ ६

* राग

आपुन तरि तरि औरनि तारत ।

अस्म अचेत[1] प्रगट पानी मैँ, बनचर लै-लै डारत ।

इहिँ बिधि उपलै[2] तरत पात ज्यौँ, जदपि सैल[3] अति भारत ।

बुद्धि[4] न सकति सेतु रचना रचि, राम-प्रताप बिचारत ।

जिहिँ जल तृन, पसु, दारु[5] बूड़ि, अपनैँ सँग औरनि पारत[6] ।

तिहिँ जल गाजत महाबीर सब, तरत आँखि[7] नहिँ मारत ।

रघुपति-चरन-प्रताप प्रगट सुर, ब्योम बिमाननि गावत ।

सूरदास क्यौँ बूड़त कलऊ, नाम न बूड़न पावत ॥ १

॥ ५

(ना) नट । (ना/३) मारू ।
(ना) नट । (ना/३) सारंग ।
। अनेक—१६ । ② उपजी
) उतर पात—२, ३ ।

ऊँची बाट पादि कै सेना आप
निहारत—८ । ③ सैन—१,
१६ । ④ अति बुधि सकति—२ ।
अदभुत सक्ति—३ । ⑤ बार—

१, २ । वारि—३, १६
बोरत—१, २,३,६,१६ ।
नहिँ मोरत—१, २, ३

* राग मारू

मो[1] मति अजहुँ जानकी दीजै ।
लंकापति-तिय कहति पिया सौं, यामैं कछू न छीजै ।
पाहन तारे, सागर बाँध्यौ, तापर चरन न भीजै ।
बनचर एक लंक तिहिँ जारी, ताकी सरि क्यौं कीजै ?
चरन टेकि दोउ हाथ जोरि कै, बिनती क्यौं नहिँ कीजै ?
वै त्रिभुवन पति, करहिँ कृपा अति, कुटुँब-सहित सुख[2] जीजै ।
आवत देखि बान रघुपति के, तेरौ मन न पतीजै ।
सूरदास प्रभु लंक जारि कै, राज बिभीषन दीजै ॥१२६॥
॥५७०॥

रावण-वचन मंदोदरी-प्रति — राग मारू

कहा तू कहति तिय, बार बारी ?
कोटि तैँतीस सुर सेव अहनिसि करैँ, राम अरु लच्छमन हैँ कहा री ।
मृत्यु कौं बाँधि मैं राखियौ कूप मैं, देहि आवन, कहा डरति नारी !
कहति मंदोदरी, मेटि को सकै तिहिँ, जो रची सूर प्रभु होनहारी ॥१२७॥
॥५७१॥

अंगद-दूतत्व — राग मारू

† लंकपति पास अंगद पठायौ ।
सुनि अरे अंध दसकंध, लै सीय मिलि, सेतु करि बंध रघुबीर आयौ

---

* (ना) देवगिरि ।
① मेरे जान—१, २, ३, ११ । ② जुग—२ ।
† यह पद (ल) में नहीं है ।

यह सुनत परजर्‌यौ, बचन नहिँ मन धर्‌यो, कहा तैँ राम सौँ मोहिँ डरायौ?
सुर-असुर जीति मैँ सब किए आप बस, सूर मन सुजस तिहुँ लोक छायौ[1] ॥१२८॥
॥५७२॥

* राग मारू

† बालि-नंदन बली, बिकट बनचर महा, द्वार रघुबीर कौ बीर आयौ।
पौरि तैँ दौरि दरवान, दससीस सौँ जाइ सिर नाइ, यौँ कहि सुनायौ।
सुनि स्रवन, दस-बदन सदन-अभिमान, कै नैन की सैन अंगद बुलायौ।
देखि लंकेस कपि भेष हर हर हँस्यौ, सुनौ भट, कटक कौ पार पायौ!
बिबिध आयुध धरे, सुभट सेवत खरे, छत्र की छाहँ निरभय जनायौ।
देव-दानव-महाराज-रावन-सभा, कहन कौँ मंत्र इहँ कपि पठायौ!
रंक रावन, कहा[2]ऽलंक तेरौ इतौ, दोउ कर जोरि बिनती उचारौँ।
परम अभिराम रघुनाथ के नाम[3] पर, बीस भुज सीस दस वारि डारौँ।
झटकि हाटक मुकुट, पटकि भट भूमि सौँ, झारि तरवारि तव सिर सँहारौँ।
जानकीनाथ कैँ हाथ तेरौ मरन, कहा मति-मंद तोहिँ मध्य मारौँ।
पाक पावक करै, बारि सुरपति भरै, पौन पावन करै द्वार मेरे।
गान नारद करै, बार[4] सुरगुरु कहै, बेद ब्रह्मा पढ़ै पौरि टेरे[5]।

---

(१) गायौ—१, २, ११।

* (ना) सारंग।

† (बे, ना, स, ल, का, यू, ना, श्या) में यह पद रावण-वध तथा सीता-परीक्षा के पश्चात् मिलता है। पर (शा) में यह अंगद-संवाद में रक्खा है। अंतिम चार चरणों को छोड़कर यह पद पूर्णतया अंगद-रावण-संवाद से ही संबंधित है। अंत की चार पंक्तियाँ पीछे से जोड़ी जान पड़ती हैं। (बे) में ये चारों एक स्वतंत्र पद के रूप में अलग एकत्र कर दी गई हैं। उक्त प्रक्षिप्त पंक्तियों के अतिरिक्त शेष पद की अंतिम पंक्ति में कवि का नाम भी आ गया है जिससे उपर्युक्त अनुमान और भी दृढ़ होता है। इस संस्करण में यह पद यहीं रक्खा गया है और वे चार चरण पाद-टिप्पणी में दे दिए गए हैं।

(२) टेक—१, ३। लंक—२ (३) रोम—१, २, ३, १८, १६ (४) ज्ञान—१। तार सुरगुरु गहै—२। नाद—१२ (५) घेरे—६, ८

जच्छ, मृतु, वासुकी नाग, मुनि, गंधरब, सकल बसु, जीति मैं किए चेरे
सुनि अरे संठ, दसकंठ कौं कौन डर, राम तपसी दए आनि डेरे
तप बली, सत्य तापस बली, तप बिना, बारि पर कौन पाषान तारै
कौन ऐसौ बली सुभट जननी जन्यौ, एकहीं बान तकि बालि मारै
परम गंभीर, रनधीर दसरथ-तनय, सरन गएँ कोटि अवगुन बिसारैं
जाइ मिलि अंध दसकंध, गहि दंत तृन, तौ भलैं मृत्यु-मुख तैं उबारैं
कोपि करबार गहि कह्यौ लंकाधिपति, मूढ़, कहा राम कौं सीस नाऊँ
संभु की सपथ, सुनि कुकपि कायर कृपन, स्वास आकास बनचर उड़ाऊँ
होइ सनमुख भिरौं, संक नहिं मन धरौं, मारि सब कटक सागर बहाऊँ
कोटि तैंतीस मम सेव निसिदिन करत, कहा अब राम नर सौं डराऊँ
परैं भहराइ भभकंत रिपु घाइ सौं, करि कदन रुधिर भैरौं अघाऊँ
|| सूर साजौं सबै, देहुँ डौंड़ी अबै, एक तैं एक रन करि बताऊँ ॥ १२६
॥ ५७३

* राग मा

रावन तब लौं ही[1] रन गाजत ।
जब लौं सारँगधर[2]-कर नाहीं सारँग-बान बिराजत ।
जमहु कुबेर इंद्र है[3] जानत, रवि रवि कै रथ साजत ?
रघुपति-रवि-प्रकास सौं देखौं, उडुगन ज्यौं तोहिं भाजत ।

|| इसके पश्चात् ये चार चरण प्रायः सभी प्रतियों में प्राप्त होते हैं। परंतु ये प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं—
चढ्यो रावन सुन्यो, सेष तब सिर धुन्यो, उमड़ि रनरंग रघुबीर आए।
मुंड भकरुंड झुकि परत धर धरनि पर रुधिर सरिता नहीं पार पाए।
राम सर लागि मनु आगि गिरि पर जरी उछरि छिन-छिन सरनि भानु छाए।
मारि दसकंध थपि बंधु कौं सूर-प्रभु नैन राजीव घर सीय ल्याए।

* (ना) काफी। (नु) सारंग।

(1) है—१, ३, ६, १४। [illegible] कर सारँगपानी के नाही बान १, १४। (3) ही—२। है—

ज्यौं सहगमन सुंदरी कैं सँग बहु बाजन हैं बाजत ।
तैसें सूर असुर आदिक[1] सब, सँग तेरे हैं गाजत[2] ॥ १३० ॥
॥ ५७४ ॥

१-कथित श्रीराम संदेश * राग मारू

जानौं हौं बल तेरौ रावन !
पठवौं कुटुँब-सहित जम-आलय, नैंकु देहि धौं मोकौं आवन ।
अगिनि-पुंज सित[3] बान धनुष धरि, तोहिं असुर-कुल-सहित जरावन ।
दारुन[4] कीस सुभट बर सन्मुख, लैहौं संग त्रिदस-बल पावन ।
करिहौं नाम अचल पसुपति कौ, पूजा-विधि कौतुक दिखरावन ।
दस[6] मुख छेदि सुपक नव फल ज्यौं, संकर-उर दससीस चढ़ावन ।
दैहौं राज बिभीषन जन कौं, लंकापुर रघु[7]-आन चलावन ।
सूरदास निस्तरिहैं यह जस करि[8] करि दीन-दुखित जन गावन ॥ १३१ ॥
॥ ५७५ ॥

* राग मारू

मोकौं राम रजायसु नाहीं ।
नातरु सुनि दसकंध निसाचर, प्रलय करौं छिन माहीं ।

---

(१) अनेक—२, ३, ८, १६ । (२) लाजत—१, १६ । गाजत—३ ।
* (ना) भोपाली । (ना) (१) ...र ।

(३) रघुबीरहिं—६, ८ । (४) सत—२, ६, ८ । सह्ु—३ । (५) डारौं सीस तोरि प्रभु (हरि)—२, ३ । (६) छेदि असुर मुख पाक सो फल ज्यौं अरु संकर—३ । (७) प्रभु—३ । (८) कृपन दीन उ... नव यश गावन—१ ।
* (ना) भोपाली ।

पलटि धरौं नव खंड पुहुमि तल[1], जौ बल भुजा सम्हारौं ।
राखौं मेलि भँडार सूर-ससि, नभ कागद ज्यौं फारौं ।
जारौं लंक, छेदि दस मस्तक, सुर-संकोच निवारौं ।
श्रीरघुनाथ-प्रताप-चरन करि[2] उर तैं भुजा उपारौं ।
रे रे चपल, बिरूप, ढीठ, तू बोलत बचन अनेरौ ।
चितवै[3] कहा पानि-पल्लव-पुट, प्रान प्रहारौं तेरौ ।
केतिक[4] संख जुगै जुग बीते मानव असुर - अहेरौ ।
तीनि लोक बिख्यात[5] बिसद जस, प्रलय नाम है मेरौ ।
रे रे अंध बीसहू लोचन, पर - तिय - हरन बिकारी ।
सूनैं भवन गवन तैं कीन्हौ, सेष-रेख नहिं टारी ।
अजहूँ कह्यौ सुनै जौ मेरौ, आए निकट मुरारी ।
जनक-सुता तैं चलि, पाइनि परि, श्रीरघुनाथ-पियारी ।
"संकट परैं जो सरन पुकारौं, तौ छत्री न कहाऊँ ।
जन्महि तैं तामस आराध्यौ, कैसैं हित उपजाऊँ ?
अब तौ सूर यहै बनि आई, हर कौ[6] निज पद पाऊँ ।
ये दससीस ईस-निरमायल, कैसैं चरन छुवाऊँ" ? ॥

॥

रर—१, २, ३, ६, ८, ते—१, ११ । गहि— ③ जियत जाहु कहि मो —६, ८ । ④ गए

सशंक जुगल बंधू बन जान्यौ— १, ११ । कै सुर संग जुगल बंधू बिधु मानहु असुर अहेरी—८ । ⑤ मैं गावत हैं सब प्रबल

नामना मेरी—६, ८ । १, २, ३, ११ ।

* र

मूरख, रघुपति-सत्रु कहावत ?

जाके नाम, ध्यान, सुमिरन तैं, कोटि जज्ञ-फल पावत।
नारदादि सनकादि महामुनि, सुमिरत मन-वच ध्यावत।
असुर[1] तिलक प्रहलाद, भक्त बलि, निगम नेति जस गावत।
जाकी घरनि हरी छल-बल करि, लायौ[2] बिलँब न आवत।
दस अरु आठ पदुम बनचर लै, लीला सिंधु बँधावत।
जाइ मिलौ कौसल-नरेस कौं, मन अभिलाष बढ़ावत।
दै सीता अवधेस[3] पाइँ परि, रहु[4] लंकेस कहावत।
तू भूल्यौ दससीस बीस भुज, मोहिँ गुमान दिखावत।
कंध उपारि डारिहौं भूतल, सूर सकल सुख[5] पावत॥ १२२
॥ ५७७

❀

रे कपि, क्यौं पितु-बैर बिसारयौ ?

तो[6] समतुल कन्या किन उपजी, जो कुल-सत्रु न मारयौ !
ऐसौ सुभट नहीँ महिमंडल देख्यौ बालि-समान।
तासौं कियौ[7] बैर मैं हारयौ, कीन्हीँ पैज प्रमान।
ताकौ बध कीन्हौ इहिँ रघुपति, तुव देखत बिदमान।
ताकी सरन रह्यौ क्यौं भावै, सब्द न[8] सुनियै कान !

(ना) देवगिरि।
अबरीष—१, ६, ८,
(२) ताते बिलम न लावत
ताते पलक न लावत—
६, ८। (३) लंकेश—१, २, ६,
८, १८, १६। (४) तब—१, २,
६, ८, १६। (५) दुख—१, २,
६. ८, १६।
* (ना) देवस
(६) तासु तुल्य-
कैंड बेर—२। (८) स
१, ६. ८।

"रे दसकंध, अंध-मति, मूरख, क्यौं भूल्यौ इहिँ रूप ?
सूझत नहीँ बीसहू लोचन, पर्‍यौ तिमिर कैँ कूप !
धन्य पिता, जापर परफुल्लित राघव-भुजा अनूप ।
वा प्रतापि की मधुर बिलोकनि पर[1] वारौं सब भूप" ।
"जौ तोहिँ नाहिँ बाहु-बल-पौरुष, अर्ध राज देउँ लंक ।
मो समेत ये सकल निसाचर, लरत न मानैँ संक ।
जब रथ साजि चढ़ौँ रन-सन्मुख, जीय न आनौँ तंक ।
राघव सैन समेत सँहारौँ, करौँ रुधिरमय पंक" ।
"श्रीरघुनाथ-चरन-व्रत उर धरि, क्यौँ नहिँ लागत पाइ ?
सबके ईस, परम करुनामय, सबही कौँ सुखदाइ ।
हौँ जु कहत, लै चलौ जानकी, छाँड़ौ[2] सबै ढिठान[3] ।
सनमुख होइ सूर के स्वामी, भक्तनि कृपा-निधान" ॥१
॥५

लंकपति इंद्रजित कौँ बुलायौ ।
कह्यौ तिहिँ, जाइ रनभूमि दल साजि कै, कहा भयौ राम कपि जोरि
कोपि अंगद कह्यौ, धरौँ धर चरन मैँ, ताहि जो सकै कोऊ
तौ बिना जुद्ध कियैँ जाहिँ रघुबीर फिरि, सुनत यह उठे जोधा
रहे पचिहारि, नहिँ टारि कोऊ सक्यौ, उठ्यौ तब आपु रावन
कह्यौ अंगद, कहा मम चरन कौँ गहत, चरन रघुबीर गहि क्यौँ न

(१) पहि १, २, ३, १४ । (२) छाँड़ि सबै दंभान—१ । (३) ढकाम ६, ८

सुनत यह सकुचि कियौ गवन निज भवन कौं, बालि-सुतहू तहाँ तैं सिधायौ ।
सूर के प्रभू कौं नाइ सिर यौं कह्यौ, अंध दसकंध कौ काल आयौ ॥१२५॥
॥ ५७९ ॥

राग मारू

बालि-नंदन आइ सीस नायौ ।
अंध दसकंध कौं काल सूझत न प्रभु, ताहि मैं बहुत बिधि कहि जनायौ[1] ।
इंद्रजित चढ़्यौ निज सैन सब साजि कै, रावरी सैनहूँ साज कीजै ।
सूर प्रभु मारि दसकंध, थपि बंधु तिहिं, जानकी छोरि जस जगत लीजै॥१२६॥
॥ ५८० ॥

लक्ष्मण-वचन

* राग मारू

रघुपति, जौ न इंद्रजित मारौं ।
तौ न होउँ चरननि कौ चेरौ, जौ न प्रतिज्ञा पारौं ।
॥ यह दृढ़ बात जानियै प्रभु[2] जू, एकहिं बान निवारौं ।
॥ सपथ राम परताप तिहारैं, खंड-खंड करि डारौं ।
कुंभकरन, दससीस बीसभुज, दानव-दलहिं बिदारौं ।
तबै सूर संधान सफल हौं[3], रिपु कौ सीस उतारौं ॥ १२७ ॥
॥ ५८१ ॥

लक्ष्मण-युद्धगमन

राग मारू

लखन दल संग लै लंक घेरी ।
पृथी[4] भइ षष्ट अरु अष्ट आकास भए, दिसि-बिदिस कोउ नहिं जात हेरी ।

---

(१) सुनायौ—२, १६ ।
* (ना) गौड़ ।
॥ ये दो चरण केवल (वे, कौ, स्या) में हैं ।
(२) श्रीपति तुच्छ निसाचर मारौं—१६ । (३) है—१ । सम—२ । (४) पृथी खरभरत अ असित आकास भइ—२ ।

र[1] किलकारि लागे[2] करन, आन रघुनाथ की जाइ फे
टूटि, परी टूटि सब नगर मैं, सूर दरवान कह्यौ जाइ टेरी ॥१
॥ ५८

१ रावण के प्रति

* राग

रावन, उठि निरखि देखि, आजु लंक घेरी ।
कोटि जतन करि रही, सिख मानी नहिँ मेरी ।
गहगहात[3] किलकिलात, अंधकार आयौ ।
रवि कौ रथ सूझत नहिँ, धरनि[4]-गगन छायौ ।
पौरि[5]-पाट टूटि परे, भागे दरवाना ।
लंका मैं सोर[6] पर्यौ, अजहुँ तैं न जाना !
फोरि फारि, तोरि तारि, गगन होत[7] गाजैं ।
सूरदास लंका पर चक्र संख बाजैं ॥ १२६
॥ ५८२

* रा

† लंका फिरि गइ राम-दुहाई ।
कहति मँदोदरि सुनि पिय रावन, तैं कहा कुमति कमाई ?
दस मस्तक मेरे बीस भुजा हैं, सौ जोजन की खाई ।
मेघनाद से पुत्र महाबल, कुंभकरन से भाई ।

---

[1] ...वंग—१, १६ । कपि ... ② पुर घेरि कै— ... ा) बिभास ।
③ कुहक रीछु किलकत कपि अंधकार आयौ—६, ८ । ④ धूरि—६, ८ । ⑤ तोरि पाट लूटि परी—१, १६ । ⑥ रोर— ... ६, ८ । ⑦ जोति—२, ...
* (ना) सोरठ ।
† यह पद (ना. रा) में नहीं है ।

रहि रहि अबला बोल न बोलै, उनकी करति बड़ाई।
तीनि लोक तैं पकरि मँगाऊँ, वै तपसी दोउ भाई।
तुम्हैं मारि महिरावन मारैं, देहिं बिभीषन राई।
पवन को पूत महाबल जोधा, पल मैं लंक जराई।
जनकसुता-पति हैं रघुबर से, सँग लछिमन से भाई।
सूरदास प्रभु कौ[1] जस प्रगट्यौ, देवनि बंदि छुड़ाई ॥१४०॥
॥५८४॥

* राग मारू

मेघनाद ब्रह्मा-बर पायौ।
आहुति अगिनि जिँवाइ सँतोषी, निकस्यौ रथ बहु रतन बनायौ।
आयुध धरैं समस्त[2] कवच सजि, गरजि चढ्यौ, रन-भूमिहिं आयौ।
मनौ मेघनायक रितु पावस, बान-बृष्टि करि सैन[3] कँपायौ।
कीन्हौ कोप कुँवर कौसलपति, पंथ अकास सायकनि छायौ।
हँसि-हँसि नाग-फाँस सर साँधत, बंधन बंधु-समेत बँधायौ।
नारद स्वामी कह्यौ निकट ह्वै, गरुड़ासन काहैं बिसरायौ?
भयौ तोष दसरथ के सुत कौं, सुनि नारद कौ ज्ञान लखायौ।
सुमिरन ध्यान जानि कै[4] अपनौ, नाग-फाँस तैं सैन छुड़ायौ।
सूर बिमान चढ़े सुरपुर सौं[5], आनँद अभय-निसान बजायौ ॥१४१
॥५८५

(१) तुम्हैं मारि कै देहैं बंदि ई—६, ८।
* (ना) कल्यान।
(२) समेत—१, २, १८, १६।
(३) सैन खपायो—१, १६। सबनि जतायौ—६। (४) ऐसौ प्रभु—२। आयौ प्रभु—६, ८। अपनौ प्र १६, १८। (५) लौं—१, यौ—२। कौ—६। सो—१६

* राग मारू

लंकपति अनुज सोवत जगायौ।
आइ रघुराइ डेरा दियौ, तिया जाकी लिया मैं लै आयौ।
हुत कीन्ही, कह्या तोहिं कहौं, छाँड़ि जस, जगत[1] अपजस बढ़ायौ।
र न करि, जुद्ध कौ साज करि, होइहै सोइ जो दई-भायौ॥१४२॥
॥५८६॥

⊛ राग मारू

लछन कह्यौ, करवार[2] सम्हारौं।
कुंभकरन अरु इंद्रजीत कौं टूक-टूक करि डारौं।
महाबली रावन जिहिं बोलत, पल मैं सीस सँहारौं।
सब राच्छस रघुबीर-कृपा तैं, एकहिं बान निवारौं।
हँसि-हँसि कहत बिभीषन सौं प्रभु, महाबली रन भारौ।
सूर सुनत रावन उठि धायौ, क्रोध अनल उर[3] धारौ॥ १४३ ॥
॥५८७॥

× राग मारू

रावन चल्यौ गुमान भरयौ।
श्रीरघुनाथ अनाथबंधु सौं, सनमुख खेत[4] खरयौ।
कोप करयौ रघुबीर धीर तब, लछिमन पाइ परयौ।
तुम्हरैं तेज-प्रताप नाथ जू, मैं कर-धनुष धरयौ।

) कल्यान। ② करबान—३। ③ तन —१। जल—२,३,६,१८,१६। ④ कहत—१,२, ३, ६, ८
जग मैं—६, ८। १६।
) गूजरी। ×(ना) नट।

सारथि सहित अस्व[1] बहु मारे, रावन क्रोध जर्‌यौ।
इंद्रजीत लीन्हौ तब सक्ती[2], देवनि हहा कर्‌यौ।
छूटी बिज्जु[3]-रासि वह मानौ, भूतल बंधु पर्‌यौ।
॥ करुना करत सूर कोसलपति, नैननि नीर झर्‌यौ॥ १४४ ॥
॥५८८॥

* राग मारू

निरखि मुख राघव धरत न धीर।
भए[4] अति अरुन, बिसाल कमल-दल-लोचन मोचत नीर।
बारह बरष नींद है साधी, तातैं बिकल सरीर।
बोलत नहीं मौन कहा साध्यौ, बिपति-बँटावन बीर!
दसरथ-मरन, हरन सीता कौ, रन बैरिनि की भीर।
दूजौ सूर सुमित्रा-सुत बिनु, कौन धरावै धीर?॥ १४५ ॥
॥ ५८९ ॥

* राग मारू

अब हौं कौन कौ मुख हेरौं?
रिपु-सैना-समूह-जल उमड़्‌यौ, काहि संग लै फेरौं[5]?

असुर—१, २, १४। (सैंथी)—१, २, ६, सांगी—१६। ③ तेजराज—३। पद (स, रा) में पर, इसी प्रकार, समाप्त है; किंतु (वे, ना, का, इस चरण में 'सूर' के स्थान पर 'कुँवर' करके दो चरण और बढ़ा दिए गए हैं। वे इस प्रकार हैं—
सूरदास हनुमान दीन ह्वै अंजलि जोरि खर्‌यौ।
आज्ञा देहु(होइ)सजीवनि लाऊँ गिरि(दौ)उचाइ सिगर्‌यौ।
ये दोनों चरण असंगत प्रतीत होने के कारण इस संस्करण में नहीं रक्खे गए।

* (ना) ईमनि।
④ भए अरुन बिकराल—
* (ना) परज।
⑤ घेरौं—२, ३, ६,

दुख-समुद्र जिहिं वार-पार नहिं, तामैं नाव चलाई ।
केवट[1] थक्यौ, रही[2] अधबीचहिं, कौन आपदा आई ?
नाहीं भरत-सत्रुघन सुंदर, जिनसौं[3] चित्त लगायौ[4] ।
बीचहिं भई और की औरै, भयौ सत्रु कौ भायौ[5] ।
मैं निज प्रान तजौंगौ सुनि कपि, तजिहि जानकी सुनिकै ।
ह्वैहै कहा बिभोषन की गति, यहै[6] सोच जिय गुनि कै ।
बार बार सिर लै लछिमन कौ, निरखि गोद पर राखै ।
सूरदास प्रभु दीन[7] बचन यौं, हनूमान सौं भाखैं ॥१४६॥

॥५६०॥

* राग मारू

† कहाँ गयौ मारुत-पुत्र कुमार ।
ह्वै अनाथ रघुनाथ पुकारे, संकट-मित्र हमार ।
|| इतनी बिपति भरत सुनि पावैं, आवैं साजि[8] बरूथ ।
|| कर गहि धनुष जगत कौं जीतैं, कितिक निसाचर जूथ ।
|| नाहिं न और बियौ कोउ समरथ, जाहि पठावौं दूत ।
|| को[9] अब ह्वै पौरुष दिखरावै, बिना पौन के पूत ?

---

(१) षेवट—६, १४ । (२) रह्यौ—१, २, ३, १६ । (३) जासौं—१, १६ । तिनसौं—२, ६, ८ । (४) लगाऊँ—२, ६, १८ । (५) भाऊँ—२, ६ । ठाऊँ—१८ । (६) भयो—६, ८ । (७) बार बार यौं—२, ३, ६, ८, १८ ।

* (ना) जैतश्री ।

† (ना, स) में यह पद राम-राज्याभिषेक के प्रसंग में रक्खा गया है और उसमें केवल ४ ही चरण ग्रहण किए गए हैं । (का) में इस पद के केवल || चिह्नित चरण मिलते हैं । (वे, ना, कां, श्या) में दोनों को मिलाकर एक पद के रूप में इसी प्रसंग में रक्खा गया है । इस संस्करण में भी इसे यहीं प्रासंगिक मानकर स्थान दिया गया है ।

|| ये चरण (ना, स) में नहीं हैं ।

(८) दलहिं सजूथ—१, १४ बेगि सजूथ—६, ८ । (९) वह अबही पौरुष दिखरावै रोद्र पवन को—१, १६ ।

॥ इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ, फूल्यौ अंग न मात ।
॥ लै-लै चरन-रेनु निज प्रभु की, रिपु कैँ स्रोनित न्हात ।
॥ अहो पुनीत मीत केसरि-सुत, तुम हित बंधु हमारे ।
॥ जिह्वा रोम-रोम-प्रति नाहीँ, पौरुष गनौँ तुम्हारे !
जहाँ-जहाँ जिहिँ काल सँभारे, तहँ-तहँ त्रास निवारे ।
सूर सहाइ कियौ बन बसि कै, बन[1]-बिपदा-दुख टारे ॥ १४७
॥ ५६१

बचन श्रीराम-प्रति * राग

रघुपति, मन संदेह न कीजै ।
मो देखत लछिमन क्यौँ मरिहैँ, मोकौँ आज्ञा दीजै ।
कहौ तौ सूरज उगन देउँ नहिँ, दिसि-दिसि बाढ़ै ताम ।
कहौ तौ गन समेत ग्रसि खाऊँ, जमपुर जाइ न, राम !
कहौ तौ कालहिँ खंड-खंड करि, टूक-टूक करि काटौँ ।
कहौ तौ मृत्युहिँ मारि डारि कै, खोदि[2] पतालहिँ पाटौँ ।
कहौ तौ चंद्रहिँ लै अकास तैँ, लछिमन मुखहिँ निचोरौँ ।
कहौ तौ पैठि सुधा कैँ सागर, जल समस्त[3] मैँ घोरौँ[4] ।
श्रीरघुबर, मोसौँ जन जाकैँ, ताहि कहा सँकराई ?
सूरदास मिथ्या नहिँ भाषत, मोहिँ रघुनाथ-दुहाई ॥१
॥ ५६

पुनि—६, ८ ।
चरण(ना, स) मे नहीँ हैँ ।
* (ना) कान्हरौ ।
② खोज—२, ३, ६, ८, १८, १६ । ③ समेत—१६ । ④ बोरौँ—६, ८

* राग मारू

कह्यौ तब हनुमत सौं रघुराई ।
दौनागिरि पर आहि सँजीवनि, बैद[1] सुषेन बताई ।
तुरत जाइ लै आउ उहाँ तैं, बिलँब न करि मो भाई ।
सूरदास प्रभु-बचन सुनतहीं, हनुमत चल्यौ अतुराई ॥१४९॥

॥ ५६३ ॥

* राग मारू

दौनागिरि हनुमान सिधायौ ।
संजीवनि कौ भेद न पायौ, तब सब सैल उठायौ ।
चितै रह्यौ तब भरत देखि कै, अवधपुरी जब आयौ ।
|| मन मैं जानि उपद्रव भारी, बान अकास चलायौ ।
|| राम-राम यह कहत पवन-सुत, भरत निकट तब आयौ ।
पूछ्यौ सूर कौन है कहि तू, हनुमत नाम सुनायौ ॥१५०॥

॥ ५६४ ॥

× राग मारू

कहौ कपि रघुपति कौ संदेस ।
कुसल बंधु लछिमन, बैदेही, श्रीपति सकल-नरेस ।
जनि पूछौ तुम कुसल नाथ की, सुनौ भरत बलबीर ।
बिलख-बदन, दुख भरे[2] सिया के, हैं जलनिधि कैं तीर ।

ना) बिहागरौ ।
सुषेन चेति—२, १८,
तक जियत सो पाई—

६, ८ ।
* (ना) बिहागरौ ।
|| ये दो चरण (का) में

नहीं हैं ।
× (ना) भैरौ ।
(२) धरे सिया को—१ ।

बन मैं बसत, निसाचर छल करि, हरी सिया मम मात।
ता कारन लछिमन सर लाग्यौ, भए राम बिनु भ्रात।
यह[1] सुनि कौसिल्या सिर ढोरयौ, सबनि पुहुमि तन जोयौ।
त्राहि-त्राहि कहि, पुत्र-पुत्र कहि, मातु[2] सुमित्रा रोयौ।
धन्य सुपुत्र पिता-पन राख्यौ, धनि[3] सुबधू कुल-लाज।
सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु कैं काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ, धनि लछिमन, राम काज जो आवै।
सूर जियै तौ जग जस पावै, मरि सुरलोक सिधावै ॥ १५१ ॥

॥ ५६५ ॥

* राग

धनि जननी जो सुभटहिं जावै।
भीर परैं रिपु कौ दल दलि-मलि, कौतुक करि दिखरावै।
कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा, जनि[4] स्वामिनि दुख पावै।
लछिमन जनि हौं भई सपूती, राम-काज जो आवै।
जीवै तौ सुख बिलसै जग मैं, कीरति लोकनि गावै।
मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै।
लोह[1] गहैं लालच करि जिय कौ, औरौ सुभट लजावै।
सूरदास प्रभु जीति सत्रु कौं, कुसल-छेम घर आवै ॥ १५२ ॥

॥ ५६६ ॥

---

(1) इतनौ बचन स्रवन सुनि
[...]—१,६,८,१६,१९। (2)
—१। तबहिं—२,३,१८।
[...]न्य सुकुल जिहिं—१,१९।
[...]कुल तिय राज—६, ८।

॥ इसके उपरांत (वे, का,
[...], स्या) में ये दो चरण और
मिलते हैं—
तब रघुनाथ मुरि कैं कारन
मोकौं लैन पठावै।

[...]थक्यौ सो मध्य, अर्द्धं[...]
को लछिमनहिं [...]
* (ना) धनाश्री
(4) तू जिनि मन-
मोह—६, ८।

* राग

† सुनौ कपि, कौसिल्या की बात ।
इहिँ पुर जनि आवहिँ[1] मम बत्सल, बिनु लछिमन लघु भ्रात ।
छाँड़्यौ[2] राज-काज, माता-हित, तुव[3] चरननि चित लाइ ।
ताहि[4] बिमुख जीवन धिक रघुपति, कहियौ कपि समुझाइ ।
लछिमन सहित कुसल[5] बैदेही, आनि राज पुर कीजे ।
नातरु सूर सुमित्रा-सुत पर वारि अपुनपौ दीजे ॥ १५३ ॥
॥ ५६७ ॥

रा

‡ बिनती कहियौ जाइ पवनसुत, तुम रघुपति के आगे ।
या पुर जनि आवहु बिनु लछिमन, जननी-लाजनि-लागे ।
मारुतसुतहिँ सँदेस सुमित्रा ऐसैँ कहि समुझावै ।
सेवक जूझि परै रन भीतर, ठाकुर तउ घर आवै ।
जब तैँ तुम गवने कानन कौँ, भरत भोग सब छाँड़े ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, दुख-समूह उर गाड़े ॥ १५४ ॥
॥ ५६८ ॥

* र

§ पवन-पुत्र बोल्यौ सतिभाइ ।
जानि सिराति राति बातनि मैँ, सुनौ भरत, चित लाइ ।

(ना) नट ।
यह पद (स, ल, रा) मेँ
ै ।
) आवहु बिन लछमन सुनो
ुनाथ (तात)—१, १६ ।

② जिन तज्यौ—१, ६, ८, १६ ।
③ तुम चरननि चित मानै—१, ६, ८, १६ । ④ कहा कहौँ कछु कहत न आवै सज्जन होइ सु जानै —१, ६, ८, १६ । ⑤ सकल

सेनापति—१, ६, ८, १
‡ यह पद (ना, स
मेँ नहीँ है ।
* (ना) केदारा
§ यह पद अन्य

श्रीरघुनाथ सँजीवनि कारन, मोकौं इहाँ पठायौ।
भयौ अकाज अर्द्धनिसि बीती, लछिमन-काज नसायौ।
स्यौं परबत सर बैठि पवनसुत, हौं प्रभु पै पहुँचाऊँ।
सूरदास प्रभु-पाँवरि मम सिर इहिँ बल भरत कहाऊँ॥ १५५ ॥
॥ ५६६ ॥

* राग सारंग

हनूमान संजीवनि ल्यायौ।
महाराज रघुबीर धीर कौं हाथ जोरि सिर नायौ।
परबत आनि धर्‌यौ सागर-तट, भरत सँदेस सुनायौ।
सूर सँजीवनि दै लछिमन कौं मूर्छित फेरि जगायौ॥ १५६ ॥
॥ ६०० ॥

* राग टोड़ी

दूसरैं कर बान न लैहौं।
सुनि सुग्रीव, प्रतिज्ञा मेरी, एकहिँ बान असुर सब हैहौं।
सिव-पूजा जिहिँ भाँति करी है, सोइ[1] पद्धति परतच्छ दिखैहौं।
दैत्य प्रहारि पाप-फल[2]-प्रेरित, सिर-माला सिव-सीस चढ़ैहौं।
मनौ तूल-गन परत अगिनि-मुख, जारि जड़नि जम-पंथ पठैहौं।
करिहौं नाहिँ बिलंब कछू[3] अब, उठि रावन सन्मुख ह्वै धैहौं।

नि जननी जो सुभटहिँ जावै' पश्चात् मिलता है परंतु इस करण में वह अन्य दो पदों के अंत, यथास्थान, रक्खा गया है।

* (ना) रामकली।

* (ना) गूजरी।

(१) सोई सक्ति—२, ३। बधत ताहि—६, ८। (२) फल बर्जित सिर माला कुल सहित चढ़ैहौं—१। कलि बरजित तीनि जनम जम पंथ पठैहौं—२। (३) कछू इक जौ रावन सनमुख करि पैहौं—२, ३। आपु उठि रावन मुख हौं सबै ढहैहौं—८।

दमि दुष्ट देव-द्विज मोचन, लंक बिभीषन, तुमकौं दै
न, सिया समेत सूर कपि, सब सुख सहित अजोध्या जैहौं ॥

॥

*

आजु अति कोपे हैं रन राम ।
ब्रह्मादिक आरूढ़ बिमाननि, देखत हैं संग्राम ।
घन तन दिव्य कवच सजि करि अरु कर धार्‌यौ सारंग ।
सुचि करि सकल बान सूधे करि, कटि-तट कस्यौ निषंग ।
सुरपुर तैं आयौ रथ सजि कै, रघुपति भए सवार ।
काँपी भूमि कहा अब ह्वैहै, सुमिरत नाम मुरारि ।
छोभित सिंधु, सेष-सिर कंपित, पवन भयौ गति पंग ।
इंद्र हँस्यौ, हर[1] हिय बिलखान्यौ, जानि बचन कौ भंग ।
धर-अंबर, दिसि-बिदिसि, बढ़े अति सायक किरन-समान ।
मानौ महा-प्रलय के कारन, उदित उभय षट भान ।
टूटत धुजा-पताक-छत्र - रथ, चाप - चक्र - सिरत्रान[2] ।
जूझत[3] सुभट जरत ज्यौं दव द्रुम बिनु साखा बिनु पान ।
स्रोनित छिछ[4] उछरि आकासहिं, गज-बाजिनि-सिर लागि ।
मानौ[5] निकरि तरनि रंध्रनि तैं, उपजी है अति आगि ।

॥) धनाश्री ।
र हँसि—१, १८, १६ ।
८ । ② असि त्रान-
त्रान—६, ८, १६ ।

③ सोभित—२ । ④ छिछ (छित) उछरति अकास लौं—२, १८ । छींट—१६ । ⑤ मनौ नगर रन तरनि धरनि तैं—१ ।

मानौ निकरति रन र
मानौ निकरत रन अ

||परि[1] कबंध भहराइ रथनि तैं, उठत मनौ झर जागि ।
||फिरत सृगाल सज्यौ[2] सब काटत, चलत सो सिर लै भागि ।
रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता-स्वास समीर ।
रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर ।
भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट चीर ।
सूरदास प्रभु आपु बाहुबल कियौ निमिष मैं कीर ॥१५८॥

॥ ६०२ ॥

※ राग मारू

† रघुपति अपनौ प्रन प्रतिपार्‍यौ ।
तोर्‍यौ कोपि प्रबल गढ़, रावन टूक-टूक करि डार्‍यौ ।
कहुँ भुज, कहुँ धर, कहुँ सिर लोटत, मानौ मद-मतवारौ ।
¶भभकत, तरफत स्रोनित मैं तन, नाहीं परत निहारौ ।
छोरे और सकल सुख-सागर, बाँधि उदधि जल खारौ ।
सुर-नर-मुनि सब सुजस बखानत, दुष्ट दसानन मारौ ।
डरपत बरुन-कुबेर-इंद्र-जम, महा सुभट पन धारौ ।
रह्यौ मांस कौ पिंड, प्रान लै गयौ बान अनियारौ ।
नव ग्रह परे रहैं पाटी-तर, कूपहिं काल उसारौ ।
सो रावन रघुनाथ छिनक मैं कियौ गीध कौ चारौ ।

उठि कबंध भहरात भीत है
है जर जागि—१, १६ ।
तन काटत चलत सब्द
ा—१६ ।
दो चरण (स, रा) में
।

※ (ना) आसावरी ।

† इस पद की चरण-संख्या तथा उसके क्रम में भिन्न भिन्न प्रतियों में भेद है और पाठांतर भी हैं । इस संस्करण में (का, ना) के चरणों का क्रम अधिक संगत समझकर स्वीकार किया गया

¶ यह चरण (वे, श्या) नहीं है । इसके बदले उन यह चरण पद के अंत में मिल है—"बंधु सहित जानकी सं अवधपुरी पग धारौ ।"

सिर सँभारि लै गयौ उमापति, रह्यौ रुधिर कौ गारौ।
दियौ बिभोषन राज सूर प्रभु, कियौ सुरनि निस्तारौ ॥ १५
॥ ६८

* राग

करुना करति मँदोदरि रानी।
चौदह सहस सुंदरी उमहीँ[1], उठै न कंत महा अभिमानी।
बार-बार बरज्यौ, नहिँ मान्यौ, जनक-सुता तैँ कत घर आनी।
ये जगदीस ईस कमलापति, सीता तिय करि तैँ कत जानी ?
लीन्हे गोद बिभीषन रोवत, कुल कलंक ऐसी मति ठानी।
चोरी करी, राजहूँ खोयौ, अल्प मृत्यु तव आइ तुलानी।
कुंभकरन समुझाइ रहे पचि, दै सीता, मिलि सारँगपानी।
सूर सबनि का कह्यौ न मान्यौ, त्यौँ[2] खोई अपनी रजधानी ॥१
॥६

* राग

लछिमन सीता देखी जाइ।
अति कृस, दीन, छीन-तन प्रभु बिनु, नैननि नीर बहाइ[3]।
जामवंत - सुग्रीव - बिभीषन करी दंडवत आइ।
आभूषन बहुमोल पटंवर, पहिरौ मातु बनाइ।
बिनु रघुनाथ मोहिँ सब फीके, आज्ञा मेटि न जाइ।
पुहुप बिमान बैठी बैदेही, त्रिजटी सब पहिराइ।

ना) गूजरी।
उमही—१, ६, १६।

ठाढ़ी—२। (२) तौ—२, ३, ६,
८, १६।

* (ना) सारंग।
(३) भराइ—६ ८।

देखत दरस राम मुख मोरयौ, सिया परी मुरझाइ ।
सूरदास स्वामी तिहुँ पुर के, जग-उपहास डराइ ॥१६१॥
॥६०५॥

* राग सोरठ

लछिमन, रचौ हुतासन भाई !
यह सुनि हनूमान दुख पायौ, मोपै लख्यौ न जाई ।
आसन एक हुतासन बैठी, ज्यौं कुंदन-अरुनाई ।
जैसैं रवि इक पल घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई ।
लै[1] उछंग उपसंग हुतासन, "निहकलंक रघुराई !"
लई बिमान चढ़ाइ जानकी, कोटि मदन छबि छाई ।
दसरथ कह्यौ देवहू भाष्यौ, व्योम[2] बिमान टिकाई ।
सिया राम लै चले अवध कौं, सूरदास बलि जाई ॥१६२॥
॥६०६॥

राग मारू

सुरपतिहिं बोलि रघुबीर बोले ।
की बृष्टि रन-खेत ऊपर करौ, सुनत तिन अमिय-भंडार खोले ।
कपि-भालु ततकाल जै-जै करत, असुर भए मुक्त, रघुबर निहारे ।
भु अगम-महिमा न कछु कहि परति, सिद्ध गंधर्व जै-जै उचारे ॥१६३॥
॥६०७॥

ना) नट । (ना/३) मारू । लई उछंग अब लाग—३।

लै उछंग बोल्यौ हुतासन—१६ ।

(२) व्योम विमान निकाई—१,१६, १६ । व्योम बिमान थकाई—२, ३ भूमि बिमान लगाई—६, ८ ।

राग सारंग

† बैठी जननि करति सगुनौती ।
लछिमन-राम मिलैं अब मोकौं, दोउ अमोलक मोती ।
इतनी कहत, सुकाग उहाँ तैं हरी डार उड़ि बैठ्यौ ।
अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ, सुख जु आनि उर पैठ्यौ ।
जब लौं हौं जीवौं जीवन भर, सदा नाम तव जपिहौं ।
दधि-ओदन दोना भरि दैहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं ।
अब कैं जौ परचौ करि पावौं अरु देखौं भरि आँखि[1] ।
सूरदास सोने कैं पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि[2] ॥१६४॥

॥६०८॥

* राग मारू

हमारो जन्मभूमि यह गाउँ ।
सुनहु सखा सुग्रीव-बिभीषन, अवनि अजोध्या नाउँ ।
देखत बन-उपवन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउँ ।
अपनी प्रकृति लिए बोलत हौं, सुरपुर मैं न रहाउँ[3] ।
ह्याँ के बासी अवलोकत हौं, आनँद उर न समाउँ[4] ।
सूरदास जो बिधि न सँकोचै, तौ बैकुंठ न जाउँ ॥ १६५ ॥

॥ ६०९ ॥

⊛ राग बसंत

र आवत हैं अवध आज । रिपु जीते, साधे देव-काज ।
कुसल बंधु-सीता समेत । जस सकल देस आनंद देत ।

पद (ना, स, ल, रा)
है ।
आँखी—१, १६, १९ । ② पाँखी—१, १६, १९ ।
* (ना) धनाश्री ।
③ समाउँ—२, ३ । ④ छवाउँ—२, ३ ।
⊛ (ना) भैरो । (ना/३) मारू

कपि सोभित सुभट अनेक संग । ज्यौं पूरन ससि सागर-तरंग ।
सुग्रीव - विभीषन - जामवंत । अंगद - सुषेन - केदार संत ।
नल-नील- द्विविद-केसरि[1]-गवच्छ । कपि कहे कछुक, हैं बहुत लच्छ ।
जब कही पवन-सुत बंधु-बात । तब उठी सभा सब हरष-गात ।
ज्यौं पावस रितु घन-प्रथम-घोर । जल जीवक, दादर रटत मोर ।
जब सुन्यौ भरत पुर-निकट भूप । तब रची नगर-रचना अनूप ।
प्रति-प्रति-गृह तोरन-ध्वजा - धूप । सजे सजल कलस अरु कदलि-यूप ।
दधि - दूब - हरद, फल-फूल-पान । कर कनक-थार तिय करतिं गान ।
सुनि भेरि-बेद-धुनि संख-नाद । सब निरखत पुलकित अति प्रसाद ।
देखत प्रभु की महिमा अपार । सब बिसरि गए मन-बुधि-बिकार ।
जै-जै दसरथ-कुल -कमल- भान । जै कुमुद-जननि-ससि, प्रजा-प्रान ।
जो दिवि[2] भूतल सोभा समान । जै-जै-जै सूर, न सब्द आन ॥१६६॥
॥६१०॥

* राग मा

† वे देखौ रघुपति हैं आवत ।
दूरिहिं तैं दुतिया के ससि ज्यौं, ब्योम बिमान महा छबि छावत ।
सीय सहित वर बीर बिराजत, अवलोकत आनंद बढ़ावत ।
चारु चाप कर परस सरस सिर मुकुट धरे सोभा अति पावत ।
निकट नगर जिय जानि धँसे धर, जन्मभूमि की कथा चलावत ।
ये मम अनुज परे दोउ पाइनि, ऐसी बिधि कहि कहि समुझावत ।

---

(१) कंतर—३। (२) दोउ—म।

* (ना) गूजरी।

† यह पद (वे, शा, वृ, कां श्या) में नहीं है।

बसिष्ठ कुल-इष्ट हमारे, पालागन कहि सखनि सिखावत ।
स्वामी, सुग्रीव-बिभीषन, भरतहुँ तैं हमकौं जिय भावत ।
पु-जय, देव-काज, सुख-संपति सकल सूर इनही तैं पावत ।
अंगद हनुमान कृपानिधि पुर पैठत जिनकौ जस गावत ॥१६७॥

॥ ६११ ॥

राग मारू

देखौ कपिराज, भरत वै आए ।
मम पाँवरी सीस पर जाकैं, कर-अँगुरी रघुनाथ बताए ।
छीन सरीर बीर के बिछुरैं, राज-भोग चित तैं बिसराए ।
तप[1] अरु लघु-दीरघता, सेवा, स्वामि-धर्म सब जगहिं सिखाए ।
पुहुप बिमान दूरिहीं छाँड़े, चपल चरन आवत प्रभु धाए ।
आनँद-मगन पगनि[2] केकइ-सुत कनक-दंड ज्यौं[3] गिरत उठाए ।
भेंटत आँसू परे पीठि पर, बिरह-अगिनि मनु जरत बुझाए ।
ऐसेहिं मिले सुमित्रा-सुत कौं, गदगद गिरा नैन जल छाए ।
जथाजोग भेंटे पुरबासी, गए सूल, सुख-सिंधु न्हाए ।
सिया-राम-लछिमन मुख निरखत, सूरदास के नैन सिराए ॥१६८॥

॥६१२॥

* राग मारू

अति सुख कौसिल्या उठि धाई ।
दित बदन मन[4] मुदित सदन तैं, आरति साजि सुमित्रा ल्याई ।

---

(१) लघु दीरघ तपसा अरु —१, १६ । (२) सदन सुत —१, १६ । दुहुनि के ऐसे —२, ३ । दुहुनि को ऐसो—८ । (३) मनो करहिं उठाए—२ । (४) अरु—१, २, ६, ८, १६ १८, १६ ।

* (ना) बिलावल ।

जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस पसुपति[1] की बहराई ।
चली साँझ समुहाइ स्रवत थन, उमँगि मिलन जननी दोउ आई ।
दधि-फल-दूब कनक-कोपर भरि, साजत सौंज बिचित्र बनाई ।
अमी-बचन सुनि होत कुलाहल, देवनि दिवि दुंदुभी बजाई ।
बरन[2]-बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकल सुगंध सिँचाई ।
पुलकित-रोम, हरष-गदगद-स्वर, जुवतिनि मंगल-गाथा गाई ।
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै, द्विज-गन मुदित असीस सुनाई ।
सिया-सहित सुख बसौ इहाँ तुम, सूरदास नित उठि बलि जाई ॥१६९॥
॥६१३॥

म-दर्शन

* राग बिलावल

† देखन कौं मंदिर आनि चढ़ी ।
रघुपति-पूरनचंद बिलोकत, मनु[3] पुर-जलधि-तरंग बढ़ी ।
प्रिय-दरसन-प्यासी अति आतुर, निसि-बासर गुन-ग्राम रढ़ी ।
रही न लोक-लाज मुख निरखत, सीस नाइ आसीस पढ़ी ।
भई देह जो खेह करम-बस, जनु तट गंगा अनल दढ़ी ।
सूरदास प्रभु दृष्टि सुधानिधि, मानौ फेरि बनाइ गढ़ी ॥१७०॥
॥६१४॥

---

(1) पसुपति के फिरि जाई—६ । पसुपति खित—१८ । (2) रंग—६ । स्वरब—८ ।

* (ना) सूहौ । (ना/३) ारू । (क) पूर्वी ।

† यह पद (ल, श, का, ना/२, कीं) में दो स्थानों पर है । एक तो यहाँ और एक उस स्थान पर जहाँ राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ जनकपुर गए हैं । परंतु यह इसी स्थान के उपयुक्त समझ रक्खा गया है ।

(3) मानौ उदधि—१, २, १६ ।

मनिमय आसन आनि धरे।
दधि-मधु-नीर कनक के कोपर आपुन[1] भरत भरे
प्रथम भरत बैठाइ बंधु कौं, यह कहि पाइ परे
हौं[2] पावौं प्रभु-पाइ पखारन, रुचि करि सो पकरे
निज कर चरन पखारि प्रेम-रस आनँद-आँसु ढरे
जनु[3] सीतल सौं तप्त सलिल दै, सुखित समोइ करे
परसत पानि-चरन-पावन, दुख अँग-अँग सकल हरे
सूर सहित आमोद[4] चरन-जल लै करि सीस धरे

❀

बिनती किहिँ बिधि प्रभुहिँ सुनाऊँ ?
महाराज रघुबीर धीर कौं, समय न कबहूँ पाऊँ
जाम रहत जामिनि के बीतैँ, तिहिँ औसर उठि धाऊँ
सकुच होत सुकुमार नीँद मैँ, कैसैँ प्रभुहिँ जगाऊँ
दिनकर-किरनि-उदित, ब्रह्मादिक-रुद्रादिक इक ठाऊँ
अगनित भीर अमर-मुनि[5] गन की, तिहिँ तैँ ठौर न पाऊँ
उठत सभा दिन मधि[6], सैनापति-भीर देखि, फिरि आऊँ
न्हात-खात सुख करत साहिबी, कैसैँ करि अनखाऊँ

) सूहो बिलावल। —२, ६, ८। ② चरन पखारौं—१,) ज्यौं सीतल संताप सलिल दै सुद्धि (सुखद) समूह करे—१, १६। ④ पुर लोग—१६।

* (ना) अहीरी। (ना)

मारू। ⑤ मँगत मध्य लिया पति

रजनी-मुख आवत गुन-गावत, नारद तुंबुर नाऊँ।
तुमहीँ कहौ कृपानिधि[1] रघुपति, किहिँ[2] गिनती मैँ आऊँ ?
एक उपाउ करौ कमलापति[3], कहौ तौ कहि समुझाऊँ।
पतित-उधारन नाम सूर प्रभु, यह रुक्का[4] पहुँचाऊँ ॥१७२॥
॥९१९॥

१-देवयानी-कथा राग भैरै

अविगत-गति कछु समुझि न परै। जो कछु प्रभु चाहै सो करै।
जिव कौ कियौ कछू नहिँ होइ। कोटि उपाव करौ किन कोइ।
एक बार सुरपति मन आई। सुक्र असुर[1] कौँ लेत जिवाई।
मम गुरुहू विद्या पढ़ि आवै। मृतक सुरनि कौँ फेरि जिवावै।
निज गुरु सौँ भाष्यौ तिन जाइ। सुक्र असुर कौँ लेत जिवाइ।
तुमहूँ यह विद्या पढ़ि आवौ। मृतक सुरनि कौँ तुमहुँ जिवावौ।
तब तिन कच कौँ दियौ पठाइ। कह्यौ सुक्र कौँ तिन सिर नाइ।
मैँ आयौ तुम पै रिषिराइ। तुम मोहिँ विद्या देहु पढ़ाइ।
सुक्र कह्यौ तासौँ या भाइ। दैहौँ विद्या तोहिँ पढ़ाइ।
विद्या पढ़ै करै गुरु-सेव। सब विधि सोधै ताकी टेव।
सुक्र-सुता देवयानी नाम। सब गुन-पूर्न रूप-अभिराम।
सुरगुरु-सुत कौँ देखि लुभाई। देखै ताहि पुरुष की नाईँ।
काल वितीत कितिक जब भयौ। गाइ चरावन कौँ सो गयौ।
असुरनि मिलि यह कियौ बिचार। सुरगुरु-सुत कौँ डारैँ मार।

---

(१) कृपन हौं—१, २, ३, १८, १९। (२) किहि बिधि दुख समुझाऊँ—१। (३) कमला सौं श्रीमुख भेद सुनाऊँ—३। (४) कागद—१। कागर—१९।

असुरनि—२, ३, ६, ८, १६

जौ यह संजीवनि पढ़ि जाइ। तौ हम-सत्रुनि लेइ जिवाइ।
यह बिचार करि कच कौं मार्‌यौ। सुक्र-सुता दिन पंथ निहार्‌यौ।
साँझ भएँहूँ जब नहिँ आयौ। सुक्र पास तिनि जाइ सुनायौ।
सुक्र हृदय मैं कियौ बिचार। कह्यौ असुरनि उहिँ डार्‌यौ मार।
सुता कह्यौ तिहिँ फेरि जिवावौ। मेरे जिय कौ सोच मिटावौ।
सुक्र ताहि पढ़ि मंत्र जिवायौ। भयौ तासु तनया कौ भायौ।
पुनि हति मदिरा माहिँ मिलाइ। दियौ दानवनि रिषिहिँ पियाइ।
तब तैं हत्या मद कौं लागी। यहै जानि सब सुर[1]-मुनि त्यागी।
साप दियौ ताकौं इहिँ भाइ। जो तोहिँ पियै सो नरकहिँ जाइ।
कच बिनु सुक्र-सुता दुख पायौ। तब रिषि तासौं कहि समुझायौ।
मार्‌यौ कच कौं असुरनि धाइ। मदिरा मैं मोहिँ दियौ पियाइ।
ताहि जिवाऊँ तौ मैं मरौं। जो तुम कहौ सो अब मैं करौं।
कह्यौ बिनय करि सुनु रिषिराइ। दोउ जीवैं सो करौ उपाइ।
संजीवनि तब कचहिँ पढ़ाई। तासौं पुनि यौं कह्यौ बुझाई।
जब तुम निकसि उदर तैं आवहु। या बिद्या करि मोहिँ जिवावहु।
उदर फारि तिहिँ बाहर कियौ। मिरतक कच ऐसी बिधि जियौ।
सो जब उदर तैं बाहर आयौ। संजीवनि पढ़ि सुक्र जिवायौ।
बहुतक काल बीति जब गयौ। कच रिषि रिषि-तनया सौं कह्यौ।
अब मैं तुम्हरी आज्ञा पाइ। तात-मातु कौं देखौं जाइ।

---

(१) देवनि—१,१६। रिषिन [त्]यागी—२, ३।

तब तिन साप दियौ या भाइ क्यिा पढ़ी सो बिरथा जाइ ।

कचहूँ ताहि कही या भाइ । बिप्र[1] पुरुष तोहिँ मिलै[2] न आइ ।

यह कहि कच अपनैँ गृह आयौ । पिता-पास वृत्तांत सुनायौ ।

सुक नृप सौँ ज्यौँ कहि समुझायौ । सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥१७३॥

॥ ६१७ ॥

देवयानी-ययाति-विवाह

राग भैं

दानव वृषपर्वा बल भारी । नाम स्रमिष्ठा तासु कुमारी ।

तासु देवयानी सौँ प्यार । रहै न तासौँ पल भर न्यार ।

एक बार ताकैँ मन आई । न्हावन-काज तड़ाग[3] सिधाई ।

ता सँग दासी गईँ अपार । न्हान लगीं सब बसन[4] उतार ।

अँधियारी आई तहँ भारी । दनुज-सुता तिहिँ तैँ न निहारी ।

बसन सुक्र-तनया के लीन्हे । करत उतावलि परे न चीन्हे ।

सुक्र-सुता जब आई बाहर । बसन न पाए तिन ता ठाहर ।

असुर-सुता कौँ पहिरे देखि । मन मैँ कीन्हौ क्रोध बिसेषि ।

कह्यौ मम बसन नहीँ तुव जोग । तुम दानव, हम तपसी लोग ।

मम पितु दियौ राज नृप करत । तू मम बसन हरत नहिँ डरत ।

तिन कह्यौ, तुव पितु भिच्छा खात । बहुरि कहति हमसौँ यौँ बात !

या बिधि कहि, करि क्रोध अपार । दीन्यौ ताहि कूप मैँ डार ।

---

(१) राजा पुरुष मिलै तोहिँ — नृपति पुरुष तोहिँ मिलिहै — ८ । (२) बरै — ३ । (३) प्रयाग — १, ३, ६, ८, १६ । (४) कपरे डारि — १, १६ ।

नृपति जजाति अचानक आयौ। सुक्र-सुता कौ दरसन पायौ।
दियौ तब बसन आपनौ डारि। हाथ पकरि कै लियौ निकारि।
बहुरि नृपति निज गेह सिधायौ। सुता सुक्र सौं जाइ सुनायौ।
सुक्र क्रोध करि नगरहिं त्याग्यौ। असुर नृपति सुनि रिषि-सँग लाग्यौ।
जब बहु भाँति विनय नृप करी। तब रिषि यह बानी उच्चरी।
मम कन्या प्रसन्न ज्यौं होइ। करौ असुर-पति अब तुम सोइ।
सुक्र-सुता सौं कह्यौ तिन आइ। आज्ञा होइ सो करौं उपाइ।
जो तुम कहौ करौं अब सोइ। तव पुत्री मम दासी होइ।
नृप पुत्री दासी करि ठई। दासी सहस ताहि सँग दई।
सो सब ताकी सेवा करैं। दासी भाव हृदय मैं धरैं।
इक दिन सुक्र-सुता मन आई। देखौं जाइ फूल फुलवाई।
लै दासिनि फुलवारी गई। पुहुप-सेज रचि सोवत भई।
असुर-सुता तिहिं ब्यजन डुलावै। सोवत सेज सो अति सुख पावै।
तिहिं अवसर जजाति नृप आयौ। सुक्र-सुता तिहिं बचन सुनायौ।
नृप मम पानि-ग्रहन तुम करौ। सुक्र-सँकोच हृदय मति धरौ।
कच कौं प्रथम दियौ मैं साप। उनहूँ मोहिं दियौ करि दाप।
ताकौं[1] कोउ न सकै मिटाइ। तातैं ब्याह करौ तुम राइ।
नृप कह्यौ, कहौ सुक्र सौं जाइ। करिहौं जो कहिहैं रिषिराइ।
तब तिनि कह्यौ सुक्र सौं जाइ। कियौ ब्याह रिषि नृपति बुलाइ।
असुर-सुता ताकैं सँग दई। दासी सहस ताहि सँग भईं।

(१) ब्राह्मन वर मोहिं मिलै न

दंपति भोग करत सुख पाए। सुक्र-सुता पुनि द्वै सुत जाए।
कह्यौ सरमिष्ठा अवसर पाइ। रति कौ दान देहु मोहिं राइ।
नृप ताहू सौं कीन्यौ भोग। तीनि पुत्र भए बिधि-संजोग।
सुक्र-सुता तिन पुत्रनि देखि। मन मैं कीन्यौ क्रोध बिसेषि।
कह्यौ, सरमिष्ठा सुत कहँ पाए? उनि कह्यौ, रिषि-किरपा तैं जाए।
बहुरि कह्यौ, रिषि कौ कहि नाम? कह्यौ, स्वप्न देख्यौ अभिराम[1]।
पुनि पुत्रनि उन पूछ्यौ जाइ। पिता-नाम मोहिं कहौ बुझाइ।
बड़ैं पुत्र भाष्यौ यौं ताहि। नृपति जजाति पिता मम आहि।
सुनि नृप सौं कियौ जुद्ध बनाइ। बहुरि सुक्र सैं ती कह्यौ जाइ।
पाछे तैं जजातिहूँ आयौ। रिषि तासौं यह बचन सुनायौ।
तैं जोबन मद तैं यह कीन्यौ। तातैं साप तोहिं मैं दीन्यौ।
जरा अबहिं तोहिं ब्यापै आइ। बिरध भयौ तब कह्यौ सिर नाइ।
रिषि, तुम तो सराप मोहिं दयौ। पूरनकाम नाहिं मैं भयौ।
तातैं जो मोहिं आज्ञा होइ। आयसु मानि करौं अब सोइ।
कह्यौ, जरा तेरी सुत लेइ। अपनौ तरुनापौ तोहिं देइ।
भोगि मनोरथ तब तू पावै। मेरौ बचन बृथा नहिं जावै।
बड़े पुत्र जदु सौं कह्यौ आइ। उन कह्यौ, बृद्ध भयौ नहिं जाइ।
नृप कह्यौ, तोहिं राज नहिं होइ। बृद्धपनौ लै राजा सोइ।
औरनिहूँ सौं नृप जब भाष्यौ। नृपति बचन काहूँ नहिं राख्यौ।

---

(१) निसि बाम—२, ८। ६। बसुनाम—११।
बेसिताम—३। निसिवास—

लघु सुत नृपति-बुढ़ापौ लयौ। अपनौ तरुनापौ तिहिँ दयौ।
बरष सहस्र भोग नृप किये। पै संतोष न आयौ हिये।
कह्यौ, बिषय तैँ तृप्ति न होइ। भोग करौ कितनौ किन कोइ।
तब तरुनापौ सुत कौँ दीन्हौ। बृद्धपनौ अपनौ फिरि लीन्हौ।
बन मैँ करी तपस्या जाइ। रह्यौ हरि-चरननि सौँ चित लाइ।
या बिधि नृपति कृतारथ भयौ। सो राजा मैँ तुमसौँ कह्यौ।
सुक ज्यौँ नृप कौँ कहि समुझायौ। सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥१७४॥
॥ ६१८ ॥

दशम स्कंध

* राग सारंग

† ब्यास कह्यौ सुकदेव सौं, श्रीभागवत बखानि।
द्वादस[1] स्कंध परम सुभ[2], प्रेम-भक्ति की खानि।
नव स्कंध नृप सौं कहे[3], श्रीसुकदेव सुजान।
सूर कहत अब दसम कौं, उर धरि[4] हरि कौ ध्यान॥ १॥

॥ ६१९ ॥

* राग बिलावल

‡ हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
जय अरु बिजय पारषद दोइ। बिप्र-सराप असुर भए सोइ।
दोउ जन्म ज्यौं हरि उद्धारे[5]। सो तौ मैं तुमसौं उचारे[6]।
दंतबक्र-सिसुपाल जो भए। बासुदेव ह्वै सो पुनि हए।
औरौ लीला बहु बिस्तार। कीन्हौ जीवनि[7] कौ निस्तार।
सो अब तुमसौं सकल बखानौं। प्रेम सहित सुनि हिरदै आनौ।
जो यह कथा सुनै चित लाइ। सो भव तरि बैकुंठहिं जाइ।
जैसैं सुक नृप कौं समुझायौ। सूरदास त्यौंही कहि गायौ॥ २॥

॥ ६२० ॥

---

* (ना) बिलावल।

† यह पद (के) में नहीं है।

(१) दशम—१६। (२) सुभग—१, २, ६, ११, १५। (३) कही—१, ११। (४) में धरि हरि—१, ११, १५। धरि कै हरि—१६।

* (कां, रा, श्या) सारंग।

‡ यह पद (के) में नहीं है।

(५) उद्धारी—१, ११, १५। (६) उचारी—१, ११, १५। (७) जीवन ज्यौं—१। ज्यौं कौ त्यौं—३। ज्यौं गोपनु—६।
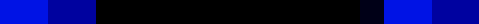
* राग गौड़ मला

† आदि सनातन, हरि अविनासी। सदा निरंतर घट-घट-वासी।
पूरन ब्रह्म, पुरान बखानैं। चतुरानन, सिव[1], अंत न जानैं।
गुन[2]-गन अगम, निगम नहिँ पावै। ताहि जसोदा गोद खिलावै।
एक निरंतर ध्यावै ज्ञानी[3]। पुरुष पुरातन सो निर्वानी।
जप-तप-संजम-ध्यान न आवै। सोइ नंद कैँ आँगन धावै।
लोचन-स्रवन न रसना-नासा। बिनु[4] पद-पानि करै परगासा।
बिस्वंभर निज नाम कहावै। घर-घर गोरस सोइ चुरावै।
सुक-सारद से करत बिचारा। नारद से पावहिँ नहिँ पारा।
अबरन[5], बरन सुरति नहिँ धारै। गोपिनि के सो बदन निहारै।
जरा-मरन तैँ रहित, अमाया। मातु, पिता, सुत, बंधु न जाया।
ज्ञान-रूप हिरदै मैँ बोलै। सो बछरनि के पाछैँ डोलै।
जल, धर, अनिल, अनल, नभ, छाया। पंचतत्त्व तैँ[6] जग उपजाया।
माया प्रगटि सकल जग मोहै। कारन-करन करै सो सोहै।
सिव[7]-समाधि जिहि अंत न पावै। सोइ[8] गोप की गाइ चरावै।
अच्युत[9] रहै सदा जल-साई। परमानंद परम सुखदाई।
लोक रचै राखै अरु मारै। सो ग्वालनि सँग लीला धारै।

---

* (ना) बिभास। (कां) ारग। (रा, श्या) आसावरी।

† भिन्न-भिन्न प्रतियों में इस द के चरणों की संख्या तथा क्रम ँ बड़ा भेद है। यहाँ अधिकांश वे, गो) के अनुसार क्रम तथा ख्या रक्खी गई है। कुछ प्रतियों ों यह पद ब्रह्मा-स्तुति के अंतर्गत ाया जाता है। परंतु (ना, स, का, कां, रा, श्या) में यह दशम स्कंध के आरंभ में स्तुति रूप से रक्खा है। इसका दशम स्कंध के आरंभ में ही होना विशेष संगत समझकर हमने भी इसको यहीं रक्खा है।

(१) हूँ—१४। (२) महिमा अगम निगम जिहिँ गावै—२, ३, ६, १४। (३) ध्यानी—१। (४) ना पद पानि न गुन परकासा—। (५) अरुन असित (हरित)। बरन न धारै—२, ३, ६, १ (६) मिलि जगत उपायौ—१। (७) ब्रह्मादिक—१, १७। (८) गोकुल मैं गाइ—१, १७। (९) आदि न अंत रहै सेष साई—१।

काल डरै जाकैं डर भारी। सो ऊखल बाँध्यौ महतारी।
गुन अतीत, अविगत, न जनावै। जस अपार, स्तुति पार न पावै।
जाकी महिमा कहत न आवै। सो गोपिनि सँग रास रमावै।
जाकी माया लखै न कोई। निर्गुन-सगुन धरै वपु सोई।
चौदह भुवन पलक मैं टारै। सो बन-बीथिनि कुटी सँवारै।
चरन-कमल नित रमा पलोवै। चाहति नैंकु नैन भरि जोवै।
अगम, अगोचर, लीला-धारी। सो राधा-बस कुंज-बिहारी।
बड़भागी वै सब ब्रजवासी। जिनकैं सँग खेलैं अबिनासी।
|| जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावैं। सो रस गोकुल-गलिनि बहावैं।
|| सूर सुजस कहि कहा बखानै। गोबिंद की गति गोबिंद जानै ॥२॥

॥ ६२१ ॥

* राग सारंग

† बाल-बिनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी।
सावधान ह्वै सुनौ परीच्छित, सकल देव-मुनि साखी।
कालिंदी कैं कूल बसत[1] इक मधुपुरि नगर रसाला।
कालनेमि अरु उग्रसेन-कुल, उपज्यौ कंस भुवाला।
आदि-ब्रह्म-जननी, सुर-देवी, नाम देवकी बाला।
दई बिवाहि कंस बसुदेवहिं, दुख[2]-भंजन, सुख-माला।

|| ये चरण (के, क) में हीं हैं।

* (ना) आसावरी। (रा) बेलावल।

† कुछ प्रतियों में इस पद के कई चरण अधिक मिलते हैं, जो प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं। जान पड़ता है, कथा-प्रसंग को देखकर किसी ने बढ़ा दिए हैं। किंतु उनकी शब्द-योजना में बहुत भिन्नता है और कुछ की तो अर्थ-संगति भी नहीं बैठती। इसलिये वे निकाल दिए गए हैं।

(१) प्रगट—२, १६। निकट-३, ६। (२) अघभंजन उरमाल (उरमाला)—१, १४।

हय - गय - रतन - हेम - पाटंबर, आनँद - मंगलचारा
समदत भई अनाहत बानी, कंस - कान भनकारा
याकी कोखि औतरै जो सुत, करै प्रान - परिहारा
रथ तैं उतरि, केस गहि राजा, कियौ खड्ग पटतारा
तब बसुदेव दीन ह्वै भाष्यौ, पुरुष न तिय-बध करई
मोकौं भई अनाहत बानी, तातैं सोच न टरई
आगैं बृच्छ फरै जो बिष-फल, बृच्छ बिना किन सरई[1]
याहि मारि, तोहिं और बिवाहौं, अग्र[2]-सोच क्यौं मरई
यह[3] सुनि सकल देव-मुनि भाष्यौ, राय, न ऐसी कीजै
तुम्हरे मान्य बसुदेव-देवकी, जीव-दान इहिं दीजै
कीन्यौ जज्ञ होत है निष्फल, कह्यौ[4] हमारौ कीजै
याकै[5] गर्भ अवतरैं जे सुत, सावधान ह्वै लीजै
पहिलौ पुत्र देवकी जायौ, लै बसुदेव दिखायौ
बालक देखि कंस हँसि दीन्यौ, सब अपराध छमायौ
कंस कहा लरिकाई कीनी, कहि नारद समुझायौ
जाकौ[6] भरम करत हौ राजा, मति पहिलैं सो आयौ
यह सुनि कंस पुत्र फिरि माँग्यौ[7], इहिं बिधि सबनि सँहारौ
तब देवकी भई अति ब्याकुल, कैसैं प्रान प्रहारौं
कंस बंस कौ नास करत है, कहँ लौं जीव[8] उबारौं
यह बिपदा कब मेटहिं श्रीपति, अरु हौं काहिं पुकारौं

...यै—२, ३। ② ...जेथ जरियै—२, ३। ...सोच दुख जरई—६, ...बालक काज धर्म जिनि छाँड़ौ—१, ११, १४। ④ वेद भंग नहिं कीजै—१, ६, ११, १६। ⑤ याकी कोष औतरै जो सुत—२, ३, ६, १६। ⑥ जाके डर तुम करत २, ३, १६, १८ मार्‍यौ—१, १८ धारौं—२।

माथैं मुकुट, सुभग पीतांबर, उर सोभित भृगु-रेखा।
संख-चक्र-गदा-पद्म बिराजत, अति प्रताप सिसु-भेषा।
जननी निरखि भई तन ब्याकुल, यह न चरित कहुँ देखा।
बैठो सकुचि, निकट पति बोल्यौ, दुहुँनि पुत्र-मुख पेखा।
सुनि देवकि, इक आन जन्म की, तोकौं कथा सुनाऊँ।
तैं माँग्यौ, हौं दियौ कृपा करि, तुम सौ बालक पाऊँ।
सिव-सनकादि आदि ब्रह्मादिक ज्ञान ध्यान नहिं आऊँ।
भक्तबछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ।
यह कहि मया मोह अरुझाए, सिसु ह्वै रोवन लागे।
अहो बसुदेव, जाहु लै गोकुल, तुम हौ परम सभागे।
घन-दामिनि धरती लौं[1] कौंधै, जमुना-जल सौं पागे।
आगैं जाउँ जमुन-जल गहिरौ[2], पाछैं सिंह जु लागे।
लै बसुदेव धँसे दह सूधे, सकल[3] देव अनुरागे।
जानु, जंघ, कटि, ग्रीव, नासिका, तब[4] लियौ स्याम उछाँगे।
चरन पसारि परसी कालिंदी, तरवा नीर तियागे।
सेष सहस फन ऊपर छायौ, लै गोकुल कौं भागे।
पहुँचे जाइ महर-मंदिर मैं, मनहिं न संका कीनी।
देखी परी जोगमाया, बसुदेव गोद करि लीनी।
लै बसुदेव मधुपुरी पहुँचे प्रगट सकल पुर कीनी।

मिलि गरजै महा कठिन
१, ६, १४। (२) बूड़ौं

पाछे सिंह दहारे—१ ६, १४।
(३) तिहूँ लोक उजियारे—१,

११, १४। (४) व
बिचारे—२, ११, १

देवकी-गर्भ भई है कन्या, राइ न बात पत्तीनी।
पटकत सिला गई आकासहिँ, दोउ भुज चरन लगाई।
गगन गई, बोली सुरदेवी, कंस, मृत्यु नियराई।
जैसैँ मीन जाल मैँ क्रीड़त, गनै न आपु लखाई।
तैसैँहि, कंस, काल उपज्यौ है, ब्रज मैँ जादवराई।
यह सुनि कंस देवकी आगैँ रह्यौ चरन सिर नाई।
मैँ अपराध कियौ, सिसु मारे, लिख्यौ न मेट्यौ जाई।
काकैँ[1] सत्रु जन्म लीन्यौ है, बूझै मतौ बुलाई।
चारि पहर सुख-सेज परे निसि, नैँकु नीँद नहिँ आई।
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, आनँद-तूर बजायौ।
कंचन-कलस, होम, द्विज-पूजा, चंदन भवन लिपायौ।
बरन-बरन[2] रँग[3] ग्वाल बने, मिलि गोपिनि मंगल गायौ।
बहु[4] बिधि ब्योम कुसुम सुर बरषत, फूलनि गोकुल छायौ।
आनँद भरे करत कौतूहल, प्रेम[5]-मगन नर-नारी।
निर्भय अभय-निसान बजावत, देत महरि कौँ गारी।
नाचत महर मुदित मन कीन्हे, ग्वाल बजावत तारी।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मथुरा-गर्व-प्रहारी॥

॥

आछैँ गर्भ औत- बूझे (पूछे) मुनी , १८। ② बारन बंदनवार बँधाए जुवतिनि—१९। ③ बनवार बनाए जुवतिनि— २। ④ दिसि दिसि तैँ बरषे सुमननि सुर पुसपा ⑤ उदित मुदित— १७, १८, १९।

* राग

† हरि-मुख देखि हो वसुदेव !
कोटि-काम-स्वरूप सुंदर[1], कोउ न जानत भेव ।
चारि भुज जिहिँ चारि आयुध, निरखि कै[2] न पत्याउ !
अजहुँ मन परतीति नाहीँ नंद-घर लै जाउ[3] ।
स्वान[4] सूते, पहरुवा सब, नीँद उपजी[5] गेह ।
निसि अँधेरी, बीजु चमकै, सघन बरषै मेह ।
बंदि बेरी सबै छूटी, खुले बज्र - कपाट ।
सीस धरि श्रीकृष्न लीने, चले गोकुल-बाट ।
सिंह-आगैँ, सेष पाछैँ, नदी भइ भरिपूरि ।
नासिका लौँ नीर बाढ़्यौ, पार पैलो दूरि ।
सीस तैँ हुंकार कीनी, जमुन जान्यौ भेव ।
चरन परसत थाह दीन्ही, पार गए वसुदेव ।
महरि-ढिग उन जाइ राखे, अमर अति आनंद ।
‖ सूरदास बिलास ब्रज-हित, प्रगटे आनँद-कंद ॥

॥६

, का, कां, रा)
) सोरठ ।
द (के, पू) में

क—३, ६, १४,
२) लै कर ताउ—

१, ११, १२ । लै नृप ताहि—३ ।
(३) जाहि—३ । (४) स्वान तारे परे
पहरू—३, ६, १४, १६ । (५)
आई—१४ ।
‖ (ना, स, का, क, श्या)
में इस पद की समाप्ति यहीँ होती

है; पर (वे, गो
चार चरण और
प्रतीत होते हैं
संस्करण में नहीं

* राग बिलावल

† आनंदे आनंद बढ़्यौ अति ।
देवनि दिवि दुंदुभी बजाई, सुनि मथुरा प्रगटे जादवपति ।
बिद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति ।
गावत[1] गुन गंधर्व पुलकि तन, नाचतिं सब सुर-नारि रसिक अति ।
बरषत सुमन सुदेस सूर सुर[2], जय-जयकार करत, मानत रति ।
सिव-बिरंचि-इंद्रादि अमर मुनि, फूले सुख न समात मुदित-मति ॥ ६ ॥
॥ ६२४ ॥

* राग बिलावल

‡ कमल-नैन ससि-बदन मनोहर, देखौ हो पति अति बिचित्र गति ।
स्याम सुभग तन, पीत-बसन-दुति, सोहै बनमाला अदभुत अति ।
नव[3]-मनि-मुकुट-प्रभा अति उद्दित, चित्त-चकित अनुमान[4] न पावति ।
अति प्रकास निसि बिमल, तिमिर छर[5], कर मलि-मलि निज पतिहिं जगावति ।
दरसन-सुखी, दुखी अति सोचति, षट सुत-सोक-सुरति उर आवति ।
सूरदास प्रभु होहु पराकृत[6], अस कहि भुज के चिह्न दुरावति ॥ ७ ॥
॥ ६२५ ॥

---

* (ना) सूहो। (पू) ाली।

† यह पद (के) में नहीं

(१) गावत गगन धानि धुनि ?यत गरजत घन तेहि काल न जति—१, ११, १४, १५ ।

(२) घन गरजत थेई थेई ताल जतन जति—१६ ।

* (का) बिहागरौ ।

‡ यह पद (वे, स, का, गो, जै, रा) में है परंतु इन सब प्रतियों में पाठ-भिन्नता के कारण एक छंद नहीं मिलता। इस संस्करण में छंद की एकता कर दी गई है।

(३) नख—१, १५ । सुख—१८ । (४) उपमान—१८ । (५) छुटि—१ । छुटि— ६, १५ । (६) शुद्ध शब्द 'प्राकृत' है किंतु छंद की सुविधा के लिये 'पराकृत' किया गया।

* राग बि

† देवकी मन-मन चकित भई ।
देखहु आइ पुत्र-मुख काहे न, ऐसी कहुँ देखी न दई ।
सिर पर मुकुट, पीत उपरैना, भृगु-पद उर, भुज चारि धरे ।
पूरब कथा सुनाइ कही हरि, तुम माँग्यौ इहिँ भेष करे ।
छोरे निगड़, सोआए पहरू, द्वारे कौ कपाट उघर्यौ ।
तुरत मोहिँ गोकुल पहुँचावहु, यह कहि कै सिसु बेष धर्यौ ।
तब बसुदेव उठे यह सुनतहिँ, हरषवंत नँद-भवन गए ।
बालक धरि, लै सुरदेवी कौँ, आइ सूर मधुपुरी ठए ॥ ८ ॥
॥ ६२६

* राग

अहो पति सो उपाइ कछु कीजै ।
जिहिँ उपाइ[1] अपनौ यह बालक, राखि कंस सौँ लीजै ।
मनसा, बाचा, कहत कर्मना, नृप कबहूँ न पतीजै ।
बुधि[2], बल, छल, कल, कैसेँहु करिकै, काढ़ि अनतहीँ दीजै ।
नाहिँन इतनौ भाग जो यह रस, नित लोचन-पुट पीजै ।
सूरदास[3] ऐसे सुत कौ जस, स्त्रवननि सुनि-सुनि जीजै ॥ ९ ॥
॥६२

(ना) गुनकली । (का,
ारे ।
ह पद (के, पू) में
।

* (ना) मालकौस ।
(१) तिहिँ बिधि दुराइ—१, ११, १२। (२) छल बल करि उपाय कैसैहूँ—२, ३, १३।

(३) सुनहु सूर ऐसे सुत निरखि निरखि जग जीजै ११, १४, १५।

* राग केदारौ

सुनि देवकी को हितू हमारे !

असुर कंस अपबंस विनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे ।
ऐसौ को समरथ त्रिभुवन मैं, जो यह बालक नैंकु उबारे ।
खड़ग धरे आवै, तुव देखत, अपनैं कर छिन माहँ पछारै ।
यह सुनतहिँ अकुलाइ गिरी धर, नैन नीर भरि-भरि दोउ ढारै ।
दुखित देखि बसुदेव-देवकी, प्रगट भए धरि कै भुज चारै ।
बोलि उठे परतिज्ञा करि प्रभु, मोतैं उबरै तब मोहिँ मारै ।
अति दुख मैं सुख दै पितु-मातहिँ, सूरज-प्रभु नँद-भवन सिधारे ॥१०॥
॥६२८॥

* राग केदारौ

भादौं की अध-राति अँध्यारी ।

द्वार-कपाट-कोट भट रोके, दस[1] दिसि कंत कंस-भय भारी ।
गरजत मेघ, महा डर लागत, बीच बही जमुना जल-कारी ।
तातैं यहै सोच जिय मोरैं, क्यौं दुरिहै ससि[2]-बदन-उज्यारी ।
तब[3] कत कंस रोकि राख्यौ पिय, वरु वाही दिन काहैँ न मारो ।
कहि, जाकौ ऐसौ सुत बिछुरै, सो कैसैं जीवै महतारी ?
सुनि[4]-सुनि दीन बचन जननी के, दीनबंधु भक्तनि-भयहारी ।
छोरे निगड़, कपाट उघारे, सूर सु[5] मघवा बृष्टि निवारी ॥११॥
॥६२६॥

(ना) मालकौस। (का, पू) बिहागरौ। (रा) भैरव। (ना) सूहो। (कां) धनाश्री।
(1) दुहुँ—२, १४। (2) सिसु—३। (3) कत पिय बोल वचन करि राखी—१, ६, ११, १५। (4) करि न विलाप देवकी सों कहि दीनदयाल भक्त भयहारी—१, ६, ११, १२। (5) सुर दै बिपति निवारी—१, ६, १२।

* राग ध

अँधियारी भादौं की रात ।
बालक-हित बसुदेव-देवकी, बैठि बहुत पछितात ।
बीच नदी, घन गरजत बरषत, दामिनि कौंधति जात ।
बैठत-उठत सेज-सोवत मैं कंस-डरनि अकुलात ।
गोकुल बाजत सुनी बधाई, लोगनि हियैं सुहात ।
सूरदास आनंद नंद कैं, देत कनक नग दात ॥ १२
॥ ६३०

* राग बि

† गोकुल प्रगट भए हरि आइ ।
अमर[१]-उधारन, असुर-सँहारन, अंतरजामी त्रिभुवनराइ ।
माथैं धरि बसुदेव जु ल्याए, नंद-महर-घर गए पहुँचाइ ।
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, पुलकि अंग उर मैं न समाइ ।
गदगद कंठ, बोल नहिं आवै, हरषवंत ह्वै नंद बुलाइ ।
आवहु कंत, देव परसन भए, पुत्र भयौ, मुख देखौ धाइ ।
दौरि नंद गए, सुत-मुख देख्यौ, सो सुख मोपै बरनि न जाइ ।
सूरदास पहिलैं ही माँग्यौ, दूध-पियावन जसुमति माइ ॥ १
॥ ६

ना) गुनकली । (का)
(के, पू) मलार । (को)
)

* (ना) रामकली । (क)
आसावरी ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

(१) अधम—६ ।

* राग

† उठीं सखी सब मंगल गाइ ।
जागु जसोदा, तेरैं बालक उपज्यौ, कुँवर[1] कन्हाइ ।
जो तू रच्यौ-सच्यौ या दिन कौं, सो सब देहि मँगाइ ।
देहि दान बंदी जन गुनि-गन, ब्रज-बासिनि पहिराइ ।
तब हँसि कहति जसोदा ऐसैं, महरहिं लेहु बुलाइ ।
प्रगट भयौ पूरब तप कौ फल, सुत-मुख देखौ आइ ।
आए नंद हँसत तिहिं औसर, आनँद उर न समाइ ।
सूरदास ब्रज बासी हरषे, गनत न राजा-राइ ॥ १

॥ ६

* राग

‡ जसुदा, नार न छेदन दैहौं ।
मनिमय जटित हार ग्रीवा कौ, वहै आजु हौं लैहौं ।
औरनि के हैं गोप-खरिक बहु, मोहिं गृह एक तुम्हारौ ।
मिटि जु गयौ संताप जनम कौ, देख्यौ नंद-दुलारौ ।
बहुत दिननि की आसा लागी, झगरिनि झगरौ कीनौ ।
मन मैं बिहँसि तबै नँदरानी, हार हियै कौ दीनौ ।
जाकैं नार आदि ब्रह्मादिक, सकल - बिस्व-आधार ।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मेटन कौं भू - भार ॥

॥ ६

रा) गौरी ।
पद केवल (स, शा,
में है ।

(१) त्रिभुवन राइ — ११, १८ ।

* (का) देवगंधार ।

‡ यह पद केवल
में है ।

* राग देवगंधार

† झगरिनि तैं हौं बहुत खिझाई ।
कंचन-हार दिऐं नहिं मानति, तुहीं अनोखी दाई ।
बेगिहिं नार छेदि बालक कौ, जाति बयारि भराई ।
सत संजम, तीरथ-ब्रत कीन्हैं, तब यह संपति पाई ।
मेरौ चीत्यौ भयौ नँदरानी, नंद-सुवन सुखदाई ।
दीजै बिदा, जाउँ घर अपनैं, काल्हि साँझ की आई ।
इतनी सुनत मगन ह्वै रानी बोलि लए नँदराई ।
सूरदास कंचन के अभरन लै झगरिनि पहिराई ॥ १६ ॥
॥ ६३४ ॥

⊛ राग धनाश्री

‡ जसुमति लटकति पाइ परै ।
तेरौ भलौ मनैहौं झगरिनि, तू मति मनहिं डरै ।
दीन्हौ हार गरैं, कर कंकन, मोतिनि थार भरै ।
सूरदास स्वामी प्रगटे हैं, औसर पै[1] झगरै ॥ १७ ॥
॥ ६३५ ॥

राग बिहाग

§ हरि कौ नार न छीनौं माई ।
पूत भयौ जसुमति रानी कैं, अर्द्धराति हौं आई ।

कां) कान्हरा । *(कां) देवगंधार । (१) पाइ—१, ११, १६
पद केवल (गो, कां) ‡ यह पद केवल (वे, गो, जौ, कां) में है । § यह पद केवल (... में है ।

अपने मन कौ भायौ लैहौं, मोतिनि थार भराई ।
यह औसर कब ह्वै है फिरि कै, पायौ देव मनाई ।
उठी रोहिनी परम अनंदित, हार-रतन लै आई ।
नार छीनि तब सूर स्याम कौ, हँसि-हँसि देति बधाई ॥ १८ ॥
॥६३६॥

* राग बिलावल

नंदराइ कैं नवनिधि आई ।
माथैं मुकुट, स्रवन मनि-कुंडल, पीत बसन, भुज चारि सुहाई ।
बाजत ताल-मृदंग जंत्र-गति, चरचि अरगजा अंग चढ़ाई ।
अच्छत दूब लिये रिषि[1] ठाढ़े, बारनि बंदनवार बँधाई ।
छिरकत हरद दही, हिय हरषत, गिरत[2] अंक भरि लेत उठाई ।
सूरदास सब मिलत परस्पर, दान देत नहिं नंद अघाई ॥१६॥
॥६३७॥

* राग बिलावल

आजु बन कोऊ वै जनि जाइ ।
सब गाइनि बछरनि समेत, लै आनहु चित्र बनाइ ।
ढोटा[3] है रे भयौ महर कैं, कहत सुनाइ-सुनाइ ।
सबहि घोष मैं भयौ कुलाहल, आनँद उर न समाइ ।

---

* (ना) जैतश्री (कं, पू) रा (गो, क) आसावरी ।, रा) कान्हरा ।

① द्विज—६ । ② अरत परत पुनि देत—२, ३ । उलटि (पलटि) परत अरु—६, १७ ।

* (नां, के, कीं, पू, रा) आसावरी (का) देवगंधार (क) गूजरी ।

③ बेटा—६ । बालक १६, १८, १६ ।

कत हौ गहर करत बिन[1] काजैं, बेगि चलौ उठि धाइ।
अपने-अपने मन कौ चीत्यौ, नैननि देख्यौ आइ।
एक फिरत दधि दूब धरत[2] सिर, एक रहत गहि पाइ।
एक परस्पर देत बधाई, एक उठत हँसि गाइ।
बालक-बृद्ध-तरुन-नरनारिनि, बढ़्यौ चौगुनौ चाइ।
सूरदास सब प्रेम-मगन भए, गनत न राजा-राइ ॥ २० ॥
॥ ६३८ ॥

* राग रामक

† हौं[3] इक नई बात सुनि आई।
महरि जसोदा ढोटा जायौ, घर[4]-घर होति बधाई।
द्वारैं भीर गोप-गोपिनि की, महिमा बरनि न जाई।
अति आनंद होत गोकुल मैं, रतन भूमि सब छाई।
नाचत बृद्ध, तरुन अरु बालक, गोरस-कीच मचाई।
सूरदास स्वामी[5] सुख-सागर, सुंदर स्याम कन्हाई ॥ २१
॥ ६३९

* राग रामक

‡ हौं सखि, नई चाह इक[6] पाई।
ऐसे दिननि नंद कैं सुनियत, उपज्यौ पूत कन्हाई।

भैया—१, ११। (२)
१, ११। लिए कर—१।
ना) मलार (क)
कां) सारंग (रा)

पद (के, पू) में
नहीं है।

(३) आजु इक भली बात—२, ३, १६, १८, १९। (४) आँगन बजति—२, ३, १६, १८, १९। (५) प्रभु अंतरजामी नंद-सुवन सुखदाई—२, ३, १६, १८
१९।

* (ना) मलार।

‡ यह पद (के, पू) नहीं है।

(६) सुनि आई—२, ३
१९।

बाजत पनव-निसान पंचविध, रुंज-मुरज-सहनाई ।
महर-महरि ब्रज[1]-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई ।
चलौ सखी, हमहूँ मिलि जैऐ, नैंकु करौ अतुराई ।
कोउ भूषन पहिरयौ, कोउ पहिरति, कोउ वैसैंहि उठि धाई ।
कंचन-थार दूब-दधि-रोचन, गावति चारु बधाई ।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुवति जन, उपमा बरनि न जाई ।
अमर बिमान चढ़े सुख देखत, जै-धुनि-सब्द सुनाई ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-हित, दुष्टनि के दुखदाई ॥ २२ ॥
॥ ६४० ॥

* राग गूजरी

सखि री, काहैं गहरु लगावति ?
सब कोऊ ऐसौ सुख सुनि कै, क्यौं नाहिंन उठि धावति ।
आजु सो बात बिधाता कीन्ही, मन जो हुती अति भावति ।
सुत कौ जन्म जसोदा कैं गृह, ता लगि तुम्हैं बुलावति ।
कनक-थार भरि, दधि-रोचन लै, वेगि चलौ मिलि गावति ।
साँचैंहि सुत भयौ नँद-नायक कैं, हौं[2] नाहीं बौरावति ।
आनँद[3] उर अंचल न सम्हारति, सीस सुमन बरषावति ।
सूरदास सुनि[4] जहाँ-तहाँ तैं आवत सोभा पावति ॥२३॥
॥६४१॥

...हाट—२, ३, १८ । ...—१६ । (ना) ललित (के, कौं) । (रा) धनाश्री ।

(२) काहे कौं—२, ३, १८, १६ । (३) अँचरा उड़त सिथिल चोटी सिर सुमन सुधा बरषावति—३ । अंचल उड़त सिथिल कवरी सीसु सुमन सघन बरषावति—१६ । (४) सोभा (सेमित) तिहिं औसर जहाँ ता तैं आवति—१, ११, १५ ।

ब्रज भयौ महर कैं पूत, जब यह बात सुनी
सुनि आनंदे सब लोग, गोकुल-गनक-गुर्न
अति पूरन पूरे पुन्य, रोपी सुथिर[1] थुर्न
ग्रह-लगन-नषत-पल[2] सोधि, कीन्ही बेद-धुर्न
सुनि धाईं सब ब्रजनारि, सहज सिँगार कि
तन पहिरे नूतन चीर, काजर नैन दि
कसि कंचुकि, तिलक लिलार, सोभित हार हि
कर-कंकन, कंचन-थार, मंगल-साज लि
सुभ स्रवननि तरल तरौन, बेनी सिथिल गुह
सिर बरषत सुमन सुदेस, मानौ मेघ फुह
मुख मंडित रोरी रंग, सेँदुर माँग छुह
उर अंचल उड़त न जानि, सारी सुरँग सुह
ते अपनैं-अपनैं मेल, निकसीं भाँति भल
मनु लाल-मुनैयनि पाँति, पिँजरा[3] तोरि चल
गुन गावत मंगल-गीत, मिलि दस पाँच अल
मनु भोर भएँ रवि देखि, फूलीं कमल-कल
पिय[4]-पहिलैं पहुँचीं जाइ अति आनंद भर
लइँ भीतर भवन बुलाइ, सब सिसु-पाइ पर
इक बदन उघारि निहारि, देहिँ असीस ख
चिरजीवौ जसुदा-नंद, पूरन-काम क

-१, ११, १२ । बल—१, ११, १६ । सब—६ । १२ । [illegible]
फल—६ । (२) (३) पिँजर चूरि—१, ६, ११, (४) इक-

धनि दिन है, धनि यह राति, धनि-धनि पहर घरी।
धनि-धन्य महरि की कोख, भाग-सुहाग भरी।
जिनि जायौ ऐसौ पूत, सब सुख-फरनि फरी।
थिर थाप्यौ सब परिवार, मन की सूल हरी।
सुनि ग्वालनि गाइ बहोरि, बालक बोलि लए।
गुहि गुंजा घसि बनधातु, अंगनि चित्र ठए।
सिर दधि-माखन के माट, गावत गीत नए।
डफ-झाँझ-मृदंग बजाइ, सब नँद-भवन गए।
मिलि नाचत करत कलोल, छिरकत हरद-दह्यौ।
मनु बरषत भादौं मास, नदी घृत-दूध बह्यौ।
जब जहाँ-जहाँ चित जाइ, कौतुक तहीं-तहीं।
सब आनँद-मगन गुवाल, काहूँ बदत[1] नहीं।
इक धाइ नंद पै जाइ, पुनि-पुनि पाइ परैं।
इक आपु आपुहीं माहिं, हँसि-हँसि मोद भरैं।
इक अभरन लेहिं उतारि, देत न संक करैं।
इक दधि-गोरोचन-दूब, सबकैं सीस धरैं।
तब न्हाइ नंद भए ठाढ़, अरु कुस हाथ धरे।
नांदीमुख पितर पुजाइ, अंतर सोच हरे।
घसि चंदन चारु मँगाइ, बिप्रनि तिलक करे।
द्विज-गुरु-जन कौं पहिराइ, सब कैं पाइ परे।

---

[1] बदत—गिनते।

तहँ गैयाँ गनी न जाहिँ, तरुनी बच्छ बढ़ीँ ।
जे चरहिँ जमुन कैँ तीर, दूनैँ दूध चढ़ीँ ।
खुर ताँबैँ, रूपैँ पीठि, सोनैँ सीँग मढ़ीँ ।
ते दीन्हीँ द्विजनि अनेक, हरषि असीस पढ़ीँ ।
सब इष्ट मित्र अरु बंधु, हँसि-हँसि बोलि लिये ।
मथि मृगमद-मलय-कपूर, माथैँ तिलक किये ।
उर मनि-माला पहिराइ, बसन बिचित्र दिये ।
दै दान-मान-परिधान, पूरन-काम किये ।
बंदीजन - मागध - सूत, आँगन - भौन भरे ।
ते बोलैँ लै-लै नाउँ, नहिँ हित कोउ बिसरे ।
मनु बरषत मास अषाढ़, दादुर-मोर ररे ।
जिन जो जाँच्यौ सोइ दीन, अस नँदराइ ढरे ।
तब अंबर और मँगाइ, सारी सुरँग चुनी ।
ते दीनी बधुनि बुलाइ, जैसी जाहि बनी
ते निकसीँ देति असीस, रुचि अपनी-अपनी
बहुरीँ सब अति आनंद, निज गृह गोप-धनी
पुर घर-घर भेरि-मृदंग, पटह-निसान बजे
बर बारनि बंदनवार, कंचन कलस सजे ।
ता दिन तैँ वे ब्रज लोग, सुख-संपति न तजे ।
सुनि सबकी गति यह सूर, जे हरि-चरन भजे ॥

॥ ६

* राग धन

† आजु नंद के द्वारैं भीर।
इक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर।
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर।
एकनि कौं भूषन पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग हीर।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर।
एकनि माथैं दूब-रोचना, एकनि कौं बोधति दै धीर।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर ॥ २५ ॥
॥ ६४३ ॥

राग :

‡ बहुत नारि सुहाग-सुंदरि और घोष कुमारि।
सजन-प्रीतम-नाम लै-लै, दै परसपर गारि।

(ना, रा) बिलावल।
पारंग।
ह पद (ल. का, के, पू)
है।
[स पद के आरंभ में तीन
[र प्रायः सभी प्रतियों में
ं। वे ये हैं—
"गोपी गावहिं मंगलचार
बधायो ब्रजराज के।
अब भयौ अमर सब काज
बधायौ ब्रजराज के।
रानी जायौ है मोहन पूत
बधायो ब्रजराज के।"
परंतु इन तीनों चरणों का छंद
शेष पद के छंद से भिन्न है
प्रतीत होता है कि ये तीनों
किसी अन्य ही पद के होंगे,
शेष कुछ चरण लुप्त हो गए
इस संस्करण में ये तीनों
चरण इस पद के साथ
रक्खे गए।

अनंद अतिसै भयौ घर-घर, नृत्य ठावँहिँ-ठावँ।
नंद-द्वारैँ भेँट लै-लै उमह्यौ गोकुल गावँ।
चौक चंदन लीपि कै, धरि आरती संजोइ।
कहति घोष-कुमारि, ऐसौ अनँद जौ नित होइ!
द्वार सथिया देति स्यामा, सात सीँक बनाइ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै गहति जसुदा-पाइ।
करि[1] अलिंगन[2] गोपिका, पहिरैँ अभूषन-चीर।
गाइ-बच्छ सँवारि ल्याए, भई ग्वारनि भीर।
मुदित मंगल सहित लीला करैँ गोपी-ग्वाल।
हरद, अच्छत, दूब, दधि लै, तिलक करैँ ब्रजबाल।
एक एक न गनत काहूँ, इक खिलावत गाइ।
एक हेरी देहिँ, गावहिँ, एक भेँटहिँ धाइ।
एक बिरध-किसोर-बालक, एक जोबन जोग।
कृष्न-जन्म सु प्रेम-सागर, क्रीड़ैँ[3] सब ब्रज-लोग।
प्रभु मुकुंद कैँ हेत नूतन होहिँ घोष-बिलास।
देखि ब्रज की संपदा कौं, फूलै सूरजदास ॥२६॥

---

१ तैँ आईँ गोपिका   अलंकृत—१, ६, ११, १५। ③   —२। परत—१६।
चीर—१८। ②   क्रीड़त—१, ३, ११, १५। तरत

* राग

† आजु बधायौ नंदराइ कैं, गावहु मंगलचार।
आईं मंगल-कलस साजि कै, दधि फल नूतन-डार।
उर मेले नंदराइ कैं, गोप-सखनि मिलि हार।
मागध-बंदी-सूत अति करत कुतूहल बार।
आए पूरन आस कै, सब मिलि देत असीस।
नंदराइ कौ लाड़िलौ, जीवै कोटि बरीस।
तब ब्रज-लोगनि नंद जू, दीने बसन बनाइ।
ऐसी सोभा देखि कै, सूरदास बलि जाइ॥ २७॥

॥ ६

रा

‡ धनि-धनि नंद-जसोमति, धनि जग पावन रे।
धनि हरि लियौ अवतार, सु धनि दिन आवन रे।
दसएँ मास भयौ पूत, पुनीत सुहावन रे।
संख-चक्र-गदा[1] -पद्म, चतुरभुज भावन रे।

देवगिरी। (कां)

के पाठ में बड़ी
ती है। (वे, का,
इसका क्रम एक
र (ना, स, कां,

रा, श्या) में दूसरी कोटि का।
किंतु पूर्व प्रतियों का क्रम सर्वत्र
शुद्ध नहीं है। छंद सदोष है।
चरणों की संख्या भी समान नहीं
है। (ना, स, कां, रा, श्या) का
पाठ शुद्ध तथा चरण-संख्या एक

पाई जाती है अतः उन्हीं
का पाठ इस संस्करण
किया गया है।

‡ यह पद (ना, र
रा, श्या) में नहीं है

(१) सारंग चतुरभुज—।

बनि ब्रज-सुंदरि चलीं, सु गाइ बधावन रे।
कनक-थार रोचन-दधि, तिलक बनावन रे।
नंद-घरहिँ चलि गईँ, महरि जहँ पावन रे।
पाइनि परि सब बधू, महरि बैठावन रे।
जसुमति धनि यह कोखि, जहाँ रहे बावन रे।
भलैं सु दिन भयौ पूत, अमर अजरावन रे।
जुग-जुग जीवहु कान्ह, सबनि मन भावन रे।
गोकुल-हाट-बजार करत जु लुटावन रे।
घर-घर बजै निसान, सु नगर सुहावन रे।
अमर-नगर उतसाह, अप्सरा-गावन[1] रे।
ब्रह्म लियौ अवतार, दुष्ट के दावन रे।
दान सबै जन देत, बरषि जनु सावन रे।
मागध, सूत, भाँट, धन लेत जुरावन रे।
चोवा-चंदन-अबिर, गलिनि छिरकावन रे।
ब्रह्मादिक, सनकादिक, गगन भरावन रे।
कस्यप रिषि सुर-तात, सु लगन गनावन रे।
तीनि-भुवन-आनंद, कंस-डरपावन रे।
सूरदास प्रभु जनमे, भक्त-हुलसावन रे॥ २८।

॥६४६॥

१—६, ६, ११, १४।

राग कल्यान

† सोभा-सिंधु न अंत रही री ।

नंद-भवन भरि पूरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिनि फिरति बही री ।

देखी जाइ आजु गोकुल मैं, घर-घर बेंचति फिरति दही[1] री ।

कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत बिधि, कहत न मुख सहसहुँ निबही री ।

जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तैं, उपजी ऐसी सबनि कही री ।

सूरस्याम[2] प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री ॥ २६ ॥

॥६४७॥

* राग काफी

‡ आजु हो निसान बाजै, नंद जू महर के ।

आनँद-मगन नर गोकुल सहर के ।

आनंद भरी जसोदा उमँगि अंग न माति[3], आनंदित भईं गोपी गावतिं चहर के

दूब-दधि-रोचन कनक-थार लै लै चली, मानौ इंद्र-बधू जुरीं पाँतिनि बहर के

आनंदित ग्वाल-बाल, करत बिनोद ख्याल, भुज भरि-भरि धरि अंकम महर[4] के

आनंद-मगन धेनु स्रवैं थनु पय-फेनु, उमँग्यौ जमुन-जल उछलि लहर के

अंकुरित तरु-पात, उकठि रहे जे गात, बन-बेली प्रफुलित कलिनि कहर के

आनंदित बिप्र, सूत, मागध, जाचक-गन, उमँगि असीस देत सब[5] हित हरि के

---

† यह पद (ना, स, वृ, क, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

(१) मही—६, १७ । (२) सूरदास प्रभु जनमे गोकुल आनंद घर घर सबनि लही री—१७ ।

* (पू) जैजैवंती ।

‡ यह पद (ना, स, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

(३) समाति—१, ११, १२ (४) देव करके—११ । दै दरके—१४, १७ । (५) तरह तरह हरि—१ । तरह तरह के—६,११,

आनँद-मगन सब अमर गगन छाए पुहुप बिमान चढ़े पहर पहर के।
सूरदास प्रभु आइ गोकुल प्रगट भए, संतनि हरष, दुष्ट-जन-मन धरके ॥३०॥
॥ ६४८ ॥

राग काफी

† (माई) आजु हो बधायौ बाजै नंद गोप-राइ कै।
जदुकुल-जादौराइ जनमे हैं आइ कै।
आनंदित गोपी-ग्वाल, नाचैं कर दै-दै ताल, अति अहलाद भयौ जसुमति माइ कै।
सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभा-मधि, द्विजनि कौं गाइ दीनी बहुत मँगाइ कै।
कनक कौ माट लाइ, हरद-दही मिलाइ, छिरकैं परसपर छल-बल धाइ कै।
आठैं कृष्न पच्छ भादौं, महर कैं दधि कादौं, मोतिनि बँधायौ बार महल मैं जाइ कै।
ढाढ़ी औ ढाढ़िनि गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं, हरषि असीस देत मस्तक नवाइ कै।
जोइ-जोइ माँग्यौ जिनि, सोइ-सोइ पायौ तिनि, दीजै सूरदास[1] दर्स भक्तनि बुलाइकै ३१
॥६४९॥

* राग जैतश्री

‡ आजु बधाई नंद कैं माई। ब्रज की नारि सकल जुरि आई॥।
सुंदर नंद महर कैं मंदिर। प्रगट्यौ पूत सकल सुख-कंदर।

---

† यह पद (वे, ल, का, गो, जै।) में है।

(१) दान—३, १२।

* (ना) कामोद।

‡ यह पद (का, के, घू) में नहीं है।

|| यह चरण केवल (स) में है।

जसुमति-ढोटा ब्रज की सोभा। देखि सखी, कछु औरै गोभा[1]
लछिमी-सी जहँ मालिनि बोलै। बंदन-माला बाँधत डोलै
द्वार बुहारति फिरतिँ अष्ट सिधि। कौरनि सथिया चीततिँ नव निधि
गृह-गृह तैँ गोपी गवनीँ जब। रंग-गलिनि बिच भीर भई तब
सुबरन-थार रहे हाथनि लसि। कमलनि चढ़ि आए मानौ ससि
उमँगी प्रेम-नदी-छबि पावैँ। नंद-सदन-सागर कौँ धावैँ
कंचन-कलस जगमगैँ नग के। भागे सकल अमंगल जग के
डोलत ग्वाल मनौ रन जीते। भए सबनि के मन के चीते
अति आनंद नंद रस भीने। परबत सात रतन के दीने
कामधेनु तैँ नैँकु[2] न[3] हीनी। द्वै लख धेनु द्विजनि कौँ दीनी[4]
नंद-पौरि जे जाँचन आए। बहुरौ फिरि जाचक न कहाए
घर के ठाकुर कैँ सुत जायौ। सूरदास तब सब सुख पायौ ॥२२
॥ ६५०

* राग बिल

† आजु गृह नंद महर कैँ बधाइ।
प्रात समय मोहन-मुख निरखत, कोटि चंद-छबि पाइ।
मिलि ब्रज-नागरि मंगल गावतिँ, नंद-भवन मैँ आइ।
देतिँ असीस, जियौ जसुदा-सुत कोटिनि बरष कन्हाइ।

---

(१) लोभा—१, १८। श्रोभा—३। वोभा—११। (२) एक—३। (३) नवीने—१, ११। (४) दीने—१, ११।

* (ना) ललित।
† यह पद (का. के, पू) मैँ न:

अति आनंद बढ़्यौ गोकुल मैं, उपमा कही न
सूरदास धनि नँद की घरनी, देखत नैन सिराइ ।

। (माई) आजु तौ बधाइ बाजै मँदिर महर के ।
फूले फिरैं गोपी-ग्वाल ठहर ठहर के ।
फूली फिरैं धेनु धाम, फूली गोपी अँग अँग,
फूले फरे तरवर आनँद लहर के
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदवारे,
फूले जहाँ जोइ सोइ गोकुल सहर के
फूले फिरैं जादौकुल आनँद समूल मूल,
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर के
उमँगे जमुन-जल, प्रफुलित कुंज-पुंज,
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के
नृत्यत मदन फूले, फूली रति अँग अँग,
मन के मनोज फूले हलधर[1] वर के
फूले द्विज-संत-वेद, मिटि गयौ कंस-खेद,
गावत बधाइ सूर भीतर-बहर के
फूली है जसोदा रानी, सुत जायौ सार्ङ्गपानी,
भूपति उदार फूले भाग[2] फरे घर के ॥ ३४

॥ ६ ५

ह पद केवल (वे, शा, गो, जै) में है । (१) हरि हलधर के—११ (२)

* राग जै

(नंद जू) मेरैं मन आनंद भयौ, मैं गोवर्धन तैं आयौ।
तुम्हरैं पुत्र भयौ, हौं सुनि कै, अति आतुर उठि धायौ।
बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि[1]-दूरि तैं आए।
इक पहिलैं ही आसा लागे, बहुत दिननि तैं छाए।
ते पहिरे कंचन-मनि-भूषन, नाना बसन अनूप।
मोहिं मिले मारग मैं, मानौ जात कहूँ के भूप।
तुम तौ परम उदार नंद जू, जो माँग्यौ[2] सो दीन्हौ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, तुम[3] सरि साकौ कीन्हौ!
कोटि देहु तौ रुचि[4] नहिँ मानौं, बिनु देखे नहिं जैहौं।
नंदराइ, सुनि बिनती मेरी, तबहिं बिदा भल ह्वैहौं।
दीजे मोहिं कृपा करि सोई, जो हौं आयौ माँगन।
जसुमति-सुत अपनैं पाइनि चलि, खेलत आवै आँगन।
जब हँसि कै मोहन कछु बोलै, तिहिं सुनि कै घर जाऊँ।
हौं तौ तेरे घर कौ ढाढ़ी, सूरदास मोहिं नाऊँ ॥ ३५ ॥

॥ ६५३

* राग

मैं तेरे घर कौ हौं ढाढ़ो, मो सरि कोउ न आन।
सोइ लैहौं जो मो मन भावै, नंद महर की आन।

(ना, कौं, रा) आसा-

) देस देस—२, १६, १८, जहाँ तहाँ—१७। ② माँगौ सो दीजै—२, ३। ③ जासौं टेरि कहीजै—२। जासौं पटतर कीजै—३। ④ परयौ रहौंगौ—२, ३, १४।

* (ना) आसावरी धनाश्री।

धन्य नंद, धनि धन्य जसोदा, जिन जायौ अस पूत।
धन्य भूमि, ब्रजबासी धनि-धनि, आनँद करत अकूत।
घर-घर होत अनंद बधाए, जहँ-तहँ मागध-सूत।
मनि-मानिक, पाटंबर-अंबर, लेत न बनत बिभूत[1]।
हय-गय खोलि भँडार दिए सब, फेरि भरे ता भाँति।
जबहिँ देत तबहीँ फिरि देखत, संपति घर न समाति।
ते मोहिँ मिले जात घर अपनैँ, मैँ बूझी तब जाति।
हँसि-हँसि दौरि मिले अंकम भरि, हम तुम एकै ज्ञाति।
संपति देहु, लेहुँ नहिं एकौ, अन्न-बस्त्र किहिँ काज?
जो मैँ तुम सौँ माँगन आयौ, सो लैहौँ नँदराज।
अपने सुत कौ बदन दिखावहु, बड़े महर सिरताज।
तुम साहब, मैँ ढाढ़ो तुम्हरौ, प्रभु मेरे ब्रजराज।
चंद्र-बदन-दरसन-संपति दै, सो मैँ लै घर जाउँ।
जो संपति सनकादिक दुरलभ, सो है तुम्हरैँ ठाउँ।
जाकौँ नेति नेति स्रुति गावत, तेइ कमल-पद ध्याउँ।
हौँ तेरौ जनम-जनम कौ ढाढ़ो, सूरज दास कहाउँ॥ २६॥

॥ ६५

* राग

†(नंद जू) दुःख गयौ, सुख आयौ सबनि कौँ, देव[2]-पितर भल मान्यौ।
तुम्हरौ पुत्र प्रान सबहिनि कौ, भुवन चतुर्दस जान्यौ।

---

(१) बहुत—१, २, ६, ११, १५। † यह पद (ल, का, के, पू) में नहीँ है। (२) दियौ पुत्र फ— १, ११, १५

* (ना) देवसाख।

हौं तौ तुम्हरे घर कौ ढाढ़ी, नाउँ सुनैं सचु पाऊँ।
गिरि गोवर्धन बास हमारौ, घर तजि अनत न जाऊँ।
ढाढ़िनि मेरी नाचै-गावै, हौंहूँ ढाढ़ बजाऊँ।
हमरौ चीत्यौ भयौ तुम्हारैं, जो माँगौं सो पाऊँ।
अब तुम मोकौं करौ अजाची, जो कहुँ[1] कर न पसारौं।
द्वारैं रहौं, देहु इक मंदिर, स्याम-सुरूप निहारौं।
हँसि ढाढ़िनि ढाढ़ी सौं बोली, अब तू बरनि बधाई।
ऐसौ दियौ न देहि सूर कोउ, जसुमति हौं पहिराई॥ २७॥

॥ ६५५ ॥

* राग

† ढाढ़ी दान-मान के भाई !
नंद उदार भए पहिरावत, बहुत भली बनि आई।
जब-जब नाम धरौं ढाढ़ो कौ, जनम-करम-गुन गाऊँ।
अर्थ-धर्म-कामना-मुक्ति-फल, चारि पदारथ पाऊँ।
लै ढाढ़िनि कंचन-मनि-मुक्ता, नाना बसन अनूप।
हीरा-रतन-पटंबर हमकौं दीन्हे ब्रज के भूप।
अब तौ भली भई, नारायन-दरस निरखि, निधि पाई।
जहँ-तहँ बंदनवार बिराजित, घर-घर बजति बधाई।

---

(१) गृह गोह बिसारौं—१। गोह बिसारौं—३, ११, १२।

* (ना) देसकार।

† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है।

जो जाँच्यौ सोई तिन पायौ, तुम्हरी[1] भई बड़ाई।
भक्ति देहु, पालनैं झुलाऊँ, सूरदास बलि जाई ॥ २८ ॥
॥६५६॥

राग केदारौ

† नंद-उदौ सुनि आयौ हो, वृषभानु कौ जगा।
बड़ौ महर, देत न लावै गहर, लाल की बधाई पाऊँ लाल कौ झगा।
ह्वै कै आनि, दीनी है जसोदा रानी, झीनीयै झगुलि तामैं कंचन-तगा।
यौ अँगनाइ, सूर बकसीस पाइ, माथे कै चढ़ाइ लीनौ लाल कौ बगा॥२६।
॥६५७॥

* राग सारंग

‡ गौरि[2] गनेस्वर बीनऊँ (हो), देवी सारद तोहिं।
गावौं हरि कौ सोहिलौ (हो), मन-आखर दै मोहिं।
हरषि[3] बधावा मन भयौ (हो), रानी जायौ पूत।
घर-बाहर माँगैं सबै (हो), ठाढ़े मागध-सूत।
आठ मास चंदन पियौ (हो), नवएँ पियौ कपूर।
दसएँ मास मोहन भए (हो), आँगन बाजै तूर।
हरषीं पास-परोसिनैं (हो), हरष नगर के लोग।
हरषीं सखी-सहेलरी (हो), आनँद भयौ सुभ[4]-जोग।

...नरिउ भई बिदाई—१, ११।
...पद केवल (वे, गो,
...।
...ना) आसावरी।

‡ यह पद (के, पू) में नहीं है।

② गुरु—२, ३, १३। ③ बधावौ हरि कौ मन रहिबौ रानी जायौ है मोहन पूत—१, १...
१४। बधावा हरि कौ मन भ...
रानी जायौ पूत—२, ३। (...
सुख—१, २, ३, ११, १५।

बाजन बाजैं गहगहे (हो), बाजैं मंदिर भेरि ।
मालिनि बाँधै तोरना (रे), आँगन रोपैं केरि ।
अनगढ़ सोना ढोलना (गढ़ि), ल्याए चतुर सुनार ।
बीच-बीच हीरा लगे (नँद)लाल-गरे कौ हार ।
जसुमति भाग-सुहागिनी (जिनि), जायौ हरि सौ पूत ।
करहु ललन की आरती (री), अरु दधि काँदौ सूत ।
नाइनि बोलहु नव रँगी (हो), ल्याउ महावर वेग ।
लाख टका अरु झूमका (देहु), सारी दाइ कौं नेग ।
अगरु चँदन कौ पालनौ (रँगि), ईंगुर ढार-सुढार ।
लै आयौ गढ़ि डोलना (हो), बिसकर्मा सुतहार ।
धनि सो दिन, धनि सो घरी (हो), धनि-धनि जोतिष-जाग ।
धन्य-धन्य मथुरापुरी (हो), धन्य महर कौ भाग ।
धनि-धनि माता देवकी (हो), धनि बसुदेव सुजान ।
धनि-धनि भादौं अष्टमी (हो), जनम लियौ जब कान्ह ।
काढ़ौ कोरे कापरा (अरु), काढ़ौ घी के मौन ।
जाति-पाँति पहिराइ कै (सब), समदि छतीसौ पौन ।
काजर-रोरी आनहू (मिलि), करौ छठी कौ चार ।
ऐपन की[1]सी पूतरी (सब), सखियनि कियौ सिँगार[2] ।
कीट मुकुट सोभा बनी (सुभ), अंग बनी बनमाल ।
सूरदास गोकुल प्रगट (भए) मोहन मदन गोपाल ॥

लि कैं—१६,१५ । ② ब्यौहार—१६, १६ ।

† पालनौ अति सुंदर गढ़ि ल्याउ रे बढ़ैया ।
सीतल चंदन कटाउ, धरि खराद रंग लाउ,
बिबिध चौकरी बनाउ, धाउ रे बनैया ।
पँच रँग रेसम लगाउ, हीरा मोतिनि मढ़ाउ,
बहु बिधि जरि करि जराउ, ल्याउ रे जरैया ।
बिसकर्मा सूतहार, रच्यौ काम है सुनार,
मनिगन लागे अपार, काज महर-छैया ।
आनि धर्यौ नंद-द्वार, अतिहीं सुंदर सुढार,
ब्रज-बधु कहैं बार-बार धन्य रे गढ़ैया ।
पालनौ आन्यौ बनाइ, अति मन मान्यौ सुहाइ,
नीकौ सुभ दिन सुधाइ, झूलौ हो झुलैया ।
सखियनि मंगल गवाइ, बहु बिधि बाजे बजाइ,
पौढ़ायौ महल जाइ, बारौ रे कन्हैया ।
सूरदास प्रभु की माइ जसुमति, पितु नंदराइ,
जोइ जोइ माँगत सोइ देत हैं बधैया ॥ ४१

॥ ६५६

राभरन । (पू)
प्रपि सब प्रतियों
पाठों में बड़ी

भिन्नता है । किसी का भी पाठ
पूर्णतया सार्थक एवं सुछंद नहीं
है । अतः इसके संशोधन में
बड़ी कठिनाई उठानी पड़ी । कोई

भाग किसी
किसी प्रति
शुद्ध तथा
की गई है

* राग जैतश्री

† कनक-रतन-मनि पालनौ, गढ़्यौ काम सुतहार।
बिबिध खिलौना भाँति के (बहु) गज-मुक्ता चहुँधार।
जननी उबटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सौं लीन्हे गोद।
पौढ़ाए पट पालनैं (हँसि) निरखि जननि-मन-मोद।
अति कोमल दिन सात के (हो) अधर चरन कर लाल।
सूर स्याम छबि अरुनता (हो) निरखि हरष ब्रज-बाल ॥४२॥

॥ ६६०

* राग धनाश्री

जसोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ-सोइ कछु गावै।
मेरे लाल कौं आउ निँदरिया, काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं[1] बेगिहिं आवै, तोकौं कान्ह बुलावै।
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन बतावै।
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ, सो नँद-भामिनि पावै ॥ ४३ ॥

॥ ६६१

अड़ाना। (का, के,
) आसावरी।
, सब प्रतियों में
२ की लिखी प्रति
श्री तुलसीदासजी
में भी पालने का
एक पद ऐसा ही है। उसके कुछ
चरण इसके कुछ चरणों से मिलते
जुलते हैं। (१, ६, ११, १२)
में इस पद के आरंभ में ये टेक
के चरण मिलते हैं—व्रज को
जीवन नंदलाल। असुर-निकंदन
भक्तपाल। परंतु वे इस संस्क
में नहीं रक्खे गए।

* (ना) रामकली।

(1) न बेगि सी—१, ११, १
१६, १६।

* राग कान्हरौ

† पलना स्याम झुलावति जननी

अति अनुराग परस्पर गावति, प्रफुलित मगन होति नँद-घरनी ।
उमँगि-उमँगि प्रभु भुजा पसारत, हरषि जसोमति अंकम भरनी ।
सूरदास प्रभु मुदित जसोदा, पूरन भई पुरातन करनी ॥ ४४ ॥
॥ ६६२ ॥

❀ राग बिलावल

‡ पालनैं गोपाल झुलावैं

सुर-मुनि-देव कोटि तैंतीसौ, कौतुक अंबर छावैं ।
जाकौ अंत न ब्रह्मा जानै, सिव-सनकादि न पावैं ।
सो अब देखौ नंद-जसोदा, हरषि-हरषि हलरावैं ।
हुलसत, हँसत, करत किलकारी, मन अभिलाष बढ़ावैं ।
सूर स्याम भक्तनि हित कारन, नाना भेष बनावैं ॥ ४५ ॥
॥ ६६३ ॥

× राग गौ

हालरौ हलरावै माता । बलि-बलि जाउँ घोष-सुख-दाता ।
जसुमति अपनौ पुन्य बिचारै । बार-बार सिसु-बदन निहारै ।

---

* (के) केदारा ।
† यह पद (ना, स, वृ, कां, श्या) में नहीं है ।

❀ (ना) देवगिरि ।
‡ यह पद (स, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

× (ना) ललित । (का, पू) गौड़ । (कां) मलार । ([illegible] गौड़मलार ।

अँग फरकाइ अलप मुसुकाने । या छवि की' उपमा को जाने' ।
हलरावति गावति कहि प्यारे । बाल-दसा के कौतुक भारे ।
महरि निरखि मुख हिय हुलसानी । सूरदास प्रभु सारँगपानी ॥४६॥

॥ ६६४ ॥

राग धनाश्री

† कन्हैया हालरु रे ।
गढ़ि-गुढ़ि ल्यायौ बाढ़ई, धरनी पर डोलाइ, बलि हालरु रे ।
॥ इक लख माँगे बाढ़ई, दुइ लख नंद जु देहिँ, बलि हालरु रे ।
रतन जटित बर पालनौ, रेसम लागी डोर, बलि हालरु रे ।
कबहुँक झूलै पालना, कबहुँ नंद की गोद, बलि हालरु रे ।
झूलैँ सखी झुलावहीँ, सूरदास बलि जाइ, बलि हालरु रे ॥ ४७ ॥

॥ ६६५ ॥

* राग बिहागरौ

‡ कंसराइ जिय सोच परी ।
कहा करौँ, काकौँ ब्रज पठवौँ, बिधना कहा करी ।
बारंबार बिचारत मन मैँ, नीँद भूख बिसरी ।
सूर बुलाइ पूतना सौँ कह्यौ, करु न बिलंब घरी ॥ ४८ ॥

॥ ६६६ ॥

र—१, २, ३, ६, १६ ।
—१६ ।
पद केवल (वे, ल, गो,
है ।
प चरण के पश्चात् सब
यह एक और पंक्ति
मिलती है :—"काहे कौ तेरौ पालनौ बलि हालरु रे, काहैँ लागी डोर।" परंतु यह अनावश्यक प्रतीत होती है और इसके रहने से पद की पंक्तियों की संख्या विषम हो जाती है ।

* (ना) बिलावल । (रा) आसावरी ।

‡ यह पद (का, के, पू) मेँ नहीँ है ।

* राग धन

आजु हौं राज-काज करि आऊँ।
बेगि सँहारौं सकल घोष-सिसु, जौ मुख आयसु पाऊँ।
मोहन-मुर्छन-बसीकरन पढ़ि, अगमति[1] देह बढ़ाऊँ।
अंग सुभग सजि, ह्वै मधु[2]-मूरति, नैननि माहँ समाऊँ।
घसि कै[3] गरल चढ़ाइ उरोजनि, लै रुचि सौं पय प्याऊँ।
सूरज[4] सोच हरौं मन अबहीं, तौ पूतना कहाऊँ॥ ४९ ॥

॥ ६

* राग ई

† रूप मोहिनी धरि ब्रज आई।
अद्भुत साजि सिंगार मनोहर, असुर कंस दै पान पठाई।
कुच विष बाँटि लगाइ कपट करि, बाल-घातिनी परम सुहाई।
बैठी हुती जसोदा मंदिर, दुलरावति सुत कुँवर[5] कन्हाई।
प्रगट भई तहँ आइ पूतना, प्रेरित काल अवधि नियराई।
आवत पीढ़ा बैठन दीनौ, कुसल बूझि अति निकट बुलाई।
पौढ़ाए हरि सुभग पालनैं, नंद-घरनि कछु काज सिधाई।
बालक लियौ उछंग दुष्टमति, हरषित अस्तन-पान कराई।

(ना) सूहो। (के, पू)
(क) विहागरौ। (रा)

) गहि मति हेरिनि (हेरन)
२, ३, १८। गति मति

हेर न छाऊँ—।६। ② बिधु—
२, ३, १६। ③ कंकोल—६।
④ सूरदास प्रभु जीवत ल्याऊँ—
१, ११, १५, १६।
* (ना) सूहो। (के, पू)

जैतश्री। (क) विहाग
† यह पद (तू,
में नहीं है।
⑤ स्याम—१, ३
१५।

बदन निहारि प्रान हरि लीनौ, परी राच्छसी जोजन ताईं ।
सूरज है जननी-गति ताकौं, कृपा करी निज धाम पठाई ॥ ५

॥ ६६

* राग

प्रथम कंस पूतना पठाई ।
नंद-घरनि जहँ सुत लिये बैठी, चली-चली तिहिँ धामहिँ आई
अति मोहिनी रूप धरि लीनौ, देखत सबहिनि कैँ मन भाई
जसुमति रही देखि वाकौ मुख, काकी बधू, कौन धौँ आई
नंद-सुवन तबहीँ पहिचानी, असुर-घरनि, असुरनि की जाई
आपुन बज्र-समान भए हरि, माता दुखित भई, भरमाई
अहो महरि पालागन मेरौ, मैँ तुमरौ सुत देखन आई
यह कहि गोद लियौ अपनी[1] तब, त्रिभुवन-पति मन-मन मुसुकाई
मुख चूम्यौ, गहि कंठ लगायौ, बिष लपट्यौ अस्तन मुख नाई
पय सँग प्रान ऐँचि[2] हरि लीनौ, जोजन एक परी मुरझाई
त्राहि-त्राहि कहि ब्रज-जन धाए, अब[3] बालक क्यौँ बचै कन्हाई
अति आनंद सहित सुत पायौ, हिरदै माँझ रहे लपटाई
करवर बड़ी टरी मेरे की, घर-घर आनँद करत बधाई
सूर स्याम पूतना पछारी, यह सुनि जिय डरप्यौ नृपराई ॥ ५१

॥ ६

---

* (ना, के, पू) जैतश्री । ① अपने—१, ६, ११, ३, ६, १४, १६ । ③
, क, काँ, रा) आसावरी । १५, १७, १६ । ② आँचै—२, १, ६, ११, १५, १६ ।

* राग स

[1]कपट करि ब्रजहिं पूतना आई ।
अति सुरूप, विष अस्तन लाए, राजा कंस पठाई ।
मुख चूमति अरु नैन निहारति, राखति कंठ लगाई ।
भाग बड़े तुम्हरे नँदरानी, जिहिं के कुँवर कन्हाई ।
कर गहि छीर पियावति अपनौ, जानत केसवराई ।
बाहर ह्वै कै असुर पुकारी, अब बलि लेहु छुड़ाई ।
गइ मुरछाइ, परी धरनी पर, मनौ भुवंगम खाई ।
सूरदास प्रभु तुम्हरी लीला, भक्तनि गाइ सुनाई ॥ ५२ ॥
॥ ६७

* राग ६

देखौ यह बिपरीत भई ।
अदभुत रूप नारि इक आई, कपट हेत क्यौं[1] सहै दई ?
कान्हैं[2] लै जसुमति कोरा तैं, रुचि करि कंठ लगाए ।
तब वह देह धरी जोजन लौं, स्याम रहे लपटाए !
बड़े भाग्य हैं नंद महर के, बड़भागिनि नँदरानी ।
सूर स्याम उर ऊपर[3] उबरे, यह सब घर-घर जानी ॥ ५
॥६

(ना) गूजरी । [1]यह पद (ल, का, के, ...) नहीं है ।

* (ना) अहीर । (का) बिलावल । (के, कां, रा) सोरठी । (क) बिहागरौ ।

(१) कौने पठई—काहे तैं जसुमति बौरानी (३) याके—११ ।

राग क

† जसुमति बिकल भई, छिन कल ना ।

लेहु उठाइ पूतना-उर तैं, मेरौ सुभग साँवरौ ललना ।
गोपी लै उठाइ जसुमति कौं, दीन्यौ अखिल असुर के दलना ।
सूरदास प्रभु कौ मुख चूमति, हृदय लाइ पौढ़ाए पलना ॥ ५४
॥ ६७२

* राग बि

‡ नैंकु गोपालहिं मोकौं दै री ।

देखौं बदन कमल नीकें[1] करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री ।
अति कोमल कर-चरन-सरोरुह, अधर-दसन-नासा सोहै री ।
लटकन सीस, कंठ मनि भ्राजत, मनमथ कोटि वारनैं गै[2] री ।
बासर-निसा बिचारति हौं सखि, यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री ।
निगमनि-धन, सनकादिक-सरबस, बड़े भाग्य पायौ है तैं री ।
जाकौ रूप जगत के[3] लोचन, कोटि चंद्र-रवि लाजत भै री ।
सूरदास बलि जाइ जसोदा, गोपिनि-प्रान, पूतना-बैरी ॥ ५५ ॥
॥ ६९

यह पद केवल (गो)
।
(ना) रामकली । (रा)

बिलावल ।
‡ यह पद (इ, कां, इया)
में नहीं है ।

(१) नैनन भरि—
है—२, ६, १४, १७ । (
२, ३ ।

* राग ·

† कन्हैया[1] हालरौ हलरोइ ।
हौं वारी तव इंदु-बदन पर, अति छबि अलस[2] भरोइ ।
कमल-नयन कौं कपट किए माई, इहिं ब्रज आवै जोइ ।
पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं, तू तिहिं तुरत बिगोइ ।
सुनि देवता बड़े, जग-पावन, तू पति या[3] कुल कोइ ।
पद पूजिहौं, बेगि यह बालक करि दै मोहिं बड़ोइ ।
दुतिया के ससि लौं बाढ़ै सिसु, देखै[4] जननि जसोइ ।
यह सुख सूरदास कैं नैननि, दिन-दिन दूनौ होइ[5] ॥ ५६ ॥

॥ ६७

-अंगभंग

* राग बि·

‡ श्रीधर[6] बाँभन करम कसाई । कह्यौ कंस सौं बचन सुनाई ।
प्रभु, मैं तुम्हरौ आज्ञाकारी । नंद-सुवन कौं आवौं मारी ।
कंस कह्यौ, तुमतैं यह होइ । तुरत जाहु, करौ बिलँब न कोइ ।
श्रीधर नंद-भवन चलि आयौ । जसुदा उठि कै माथ नवायौ ।
करौ रसोई मैं बलि जाऊँ । तुम्हरे हेत जमुन-जल ल्याऊँ ।
यह कहि जसुदा जमुना गई । श्रीधर कही भली यह भई ।

(ना) गूजरी । (श)
।
यह पद (ल) में नहीं है ।
) कन्हैया हालरो हो—२, १६ । कन्हैया हालरो हौं -१४ । (२) अलसनि रोई— १, ११ । अंस लरो—२ । आसुन रो—३ । अलसनि रो—६, १७ । अलसनि मारी—१४ । लाल न रो—१६ । लालन रोई—१६ । (३) गोकुल—२, ३, १६, १८ । (४) देखै जो जित जो—२ । देखै जननी हो—३ । जननी दे· १६ । (५) हो—२, ३ ।

* (ना) जैतश्री ।

‡ यह पद (ल, का· में नहीं है ।

(६) सिद्धर—१ । स·

-वध राग

काग-रूप इक दनुज धर्‌यौ।

नृप-आयसु लै धरि माथे पर, हरषवंत उर गरब भर्‌यौ।

कितिक बात प्रभु तुम आयसु तैं, वह जानौ मो जात मर्‌यौ[1]।

इतनो कहि गोकुल उड़ि आयौ, आइ नंद-घर-छाज रह्यौ[2]।

पलना पर पौढ़े हरि देखे, तुरत आइ नैननिहिं अर्‌यौ।

कंठ चाँपि बहु बार फिरायौ, गहि फटक्यौ[3], नृप पास पर्‌यौ।

तुरत कंस पूछन तिहिं लाग्यौ, क्यौं आयौ, नहिं काज कर्‌यौ[4]?

बीतैं जाम बोलि तब आयौ, सुनहु कंस, तव आइ सर्‌यौ[5]।

धरि अवतार महाबल कोऊ, एकहिं कर मेरौ गर्ब हर्‌यौ।

सूरदास प्रभु कंस-निकंदन, भक्त-हेत अवतार धर्‌यौ ॥ ५९ ॥

॥ ६९

* राग ।

मथुरापति जिय अतिहिं डरान्यौ।

सभा माँझ असुरनि के आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ।

ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात।

दिनहीं दिन वह बढ़त जात है, मोकौं करिहै घात।

दनुज-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं माँझ सँहारी।

घीँच मरोरि, दियौ कागासुर मेरैं ढिग फटकारी।

) कर्‌यौ—२, ३, १३। रह्यौ—२, १३। ③ पटक्यौ—१, ६, ६, १४, १६। फेँक्यौ—३। ④ सर्‌यौ—२, ३, १६। ⑤ गर्‌यौ— * (ना) सारंग

अबहीं तैं यह हाल करत है, दिन-दिन होत प्रकास ।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास ।
ऐसौ कौन, मारिहै ताकौं, मोहिं कहै सो आइ !
वाकौं मारि अपुनपौ राखै, सूर ब्रजहिं सो जाइ ॥ ६० ॥
॥ ६७८ ॥

सकटासुर-वध

* राग गौड़ मलार

नृपति बचन यह सबनि सुनायौ ।
मुहाँचुही सैनापति कीन्ही, सकटैं[1] गर्ब बढ़ायौ ।
दोउ कर जोरि भयौ उठि ठाढ़ौ, प्रभु-आयसु मैं पाऊँ ।
ह्याँ तैं जाइ तुरतहीं मारौं, कहौ तौ जीवत ल्याऊँ ।
यह सुनि नृपति हरष मन कीन्हौ, तुरतहिं बीरा दीन्हौ ।
बारंबार सूर कहि ताकौं, आपु प्रसंसा कीन्हौ ॥ ६१ ॥
॥ ६७९ ॥

* राग गौड़ मलार

पान लै चल्यौ नृप आन कीन्हौ ।
गयौ सिर नाइ मन गरबहिं बढ़ाइ कै, सकट कौ रूप धरि असुर लीन्हौ ।
सुनत घहरानि ब्रजलोग चकित भए, कहा आघात धुनि[2] करत आवै ।
देखि आकास, चहुँपास, दसहूँ दिसा, डरे नर-नारि तन-सुधि भुलावै ।
आपु गयौ तहाँ जहँ प्रभु परे पालनैं, कर गहे चरन अँगुठा चचोरैं

---

* (ना) नट। (के,क,कां) सूहौ। (रा) बिलावल।

(1) सकटासुर मन गर्ब बढ़ायौ—१, ११। सकटासुर सुनि गर्ब बढ़ायौ—२, ३, ६, १४, १६।

* (ना) मारू।

(2) धौं होत—२, १६।

कि किलकत हँसत, बाल-सोभा लसत, जानि यह[1] कपट, रिपु आयौ भोरैं ।

; फटक्यौ लात, सबद भयौ आघात, गिर्‌यौ भहरात सकटा सँहार्‌यौ ।

प्रभु नँद-लाल, मार्‌यौ दनुज ब्याल, मेटि जंजाल ब्रज-जन उबार्‌यौ ॥६२॥

॥ ६८० ॥

* राग बिलावल

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।

प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले, हरषि[2]-हरषि अपनैं रँग खेलत ।

सिव सोचत, बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत ।

बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत ।

मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेष सकुचि सहसौ फन पेलत ।

उन[3] ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥६३॥

॥ ६८१ ॥

* राग बिलावल

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।

नंद-घरनि गावति, हलरावति, पलना[4] पर हरि खेलत ।

जे चरनारबिंद श्री-भूषन, उर तैं नैंकु न टारति ।

देखौं धौं का रस चरननि मैं, मुख मेलत करि आरति ।

जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद ।

सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद ।

(१) रिपु गर्ब आयौ बहोरै—२ ।
* (ना) धनाश्री ।
(२) हँसि-हँसि अपनी रुचि खेलत—२ । (३) सो सुख सूर ै सब गोकुल कान्ह सकल संकट पग ठेलत—३ । सो सुख सूर भयौ सब गोकुल किलकत कान्ह सकट पग ठेलत—१४ । सब बिधि सुख पावत ब्रजवासी सूर सकल संकट पग पेलत—१६ ।
* (ना) धनाश्री ।
(४) पलना पर किलकत है खेलत—१, २, ३, ६, ११, १

उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ।
सेष सहसफन डोलन लागे, हरि पीवत जब पाइ।
बढ़्यौ बृच्छ बट, सुर अकुलाने, गगन भयौ उतपात।
महाप्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात।
करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास[1] प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस॥ ६४॥

॥ ६८२॥

* राग बिहागरौ

जसुदा मदन गुपाल सोवावै[2]।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै[3]।
असित-अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि[4] आवै।
‖ जनु[5] रवि गत[6] संकुचित कमल जुग, निसि अलि उड़न न पावै।
स्वास उदर उससित यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पदमासन उतरि नाल पछितावै।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै॥ ६५॥

॥ ६८३॥

---

(१) हूँहाँ गूँगाँ रटत सूर प्रभु मुनि करत प्रसंस—२, ३, ६, ५, १७।

* (ना, कां) बिलावल।

(२) झुलावत—११। (३) वत—१७। (४) मिलि—७।

‖ इस चरण के आगे (वे, का, गो, कां, पू) में दो चरण और हैं जो भिन्न भिन्न प्रकार के हैं। प्रति (वे) का पाठ नीचे दिया जाता है—चौंकि चौंकि सिसु दसा प्रगट करि छबि मन में नहिं आवै। जानौ निसिपति घरि करि अंमृत स्रुति भंडार भरावै॥

(५) जनु बिगसत बारिज सकुचति निसि—१, १७। (६) ससि गति होत महानिसि दुग्ध सिंधु—३।

† अजिर प्रभातहिँ स्याम कौँ, पलिका पौढ़ाए ।
आप चली गृह-काज कौँ, तहँ नंद बुलाए ।
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी ।
आतुर नँद आए तहाँ, जहँ ब्रह्म मुरारी ।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई ।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई ।
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई ।
निरखि चरित गोपाल के, सूरज बलि जाई ॥ ६

॥ ६८

‡ हरषे नंद टेरत महरि ।
आइ सुत-मुख देखि आतुर, डारि दै दधि-डहरि[1] ।
मथति दधि जसुमति मथानी, धुनि रही घर-घहरि ।
स्रवन सुनति न महर-बातैँ, जहाँ-तहँ गइ चहरि ।
यह सुनत तब मातु धाई, गिरे जाने झहरि ।
हँसत नँद-मुख देखि धीरज तब करयौ ज्यौ ठहरि ।
स्याम उलटे परे देखे, बढ़ी सोभा लहरि ।
सूर प्रभु कर सेज टेकत, कबहुँ टेकत ढहरि ॥

(वे, ल, शा,
है ।

‡ यह पद (वे, ल, शा,
का, गो, जौ) में है ।

(१) डहरि

※ राग रामकली

† महरि मुदित उलटाइ कै, मुख चूमन लागी।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी।
एक पाख त्रय-मास कौ, मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ पर्‌यौ, मैं करौं बधाई।
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी।
यह सुख सुनि आईं सबै, सूरज बलिहारी ॥६८॥

॥ ६८६ ॥

राग रामकली

‡ जो सुख ब्रज मैं एक घरी।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं, धनि यह घोष-पुरी।
अष्टसिद्धि-नवनिधि कर जोरे, द्वारैं रहति खरी।
सिव-सनकादि-सुकादि-अगोचर, ते अवतरे हरी।
धन्य-धन्य बड़भागिनि जसुमति, निगमनि सही परी।
ऐसैं सूरदास के प्रभु कौं, लीन्हौ अंक भरी ॥६९॥

॥ ६८७ ॥

※ राग रामकली

सुख सुनि हरषीं ब्रजनारी। देखन कौं धाईं बनवारी।
[illegible]ती आई, कोउ आवति। कोउ उठि चलति, सुनत सुख पावति।
होति अनंद-बधाई। सूरदास प्रभु की बलि जाई ॥७०॥

॥ ६८८ ॥

[illegible] गो, जै) बिलावल।
[illegible]ह (वे, ल, शा, [illegible]) में है।

‡ यह पद केवल (ल, शा, का) में है।

※ (का, गो, जै) बिलावल।
§ यह पद (वे, ल, शा का, गो, जै) में है।

राग रामक

† जननी देखि छबि, बलि जाति ।
जैसैं निधनी धनहिं पाएँ, हरष दिन अरु राति ।
बाल-लीला निरखि हरषति, धन्य धनि ब्रजनारि ।
निरखि जननी-बदन किलकत, त्रिदस-पति दै तारि ।
धन्य नँद, धनि धन्य गोपी, धन्य ब्रज कौ बास ।
धन्य धरनी-करन-पावन-जन्म सूरजदास ॥ ७१
॥ ६८६

राग बिला

‡ जसुमति भाग-सुहागिनी, हरि कौं सुत जानै !
मुख-मुख जोरि बत्यावई, सिसुताई ठानै ।
मो निधनी कौ धन रहै, किलकत मन मोहन ।
बलिहारी छबि पर भई, ऐसी बिधि जोहन ।
लटकति बेसरि जननि की, इकटक चख लावै ।
फरकत बदन उठाइ कै, मनहीं मन भावै ।
महरि मुदित हित उर भरै, यह कहि, मैं वारी ।
नंद-सुवन के चरित पर, सूरज बलिहारी ॥ ७२ ॥
॥ ६९० ॥

राग आस

§ गोद लिए हरि कौं नँदरानी, अस्तन पान करावति है ।
बार-बार रोहिनि कौं कहि-कहि, पलिका अजिर मँगावति है ।

पद (बे, ल, शा, का,
में है ।

‡ यह पद (बे, ल, शा, का,
गो, जै) में है ।

§ यह पद (बे, ल,
गो, जै) में है ।

प्रात समय रवि-किरनि कोँवरी, सो कहि, सुतहिँ बतावति है।
आउ घाम मेरे लाल कैँ आँगन, बाल-केलि कौं गावति है।
रुचिर सेज लै गइ मोहन कौं, भुजा उछंग सोवावति है।
सूरदास प्रभु सोए कन्हैया, हलरावति-मल्हरावति है ॥७३

॥ ६६१

राग बिला

† नंद-घरनि आनँद भरी, सुत स्याम खिलावै।
कबहिँ घुटुरुवनि चलहिँगे, कहि, बिधिहिँ मनावै।
कबहिँ दँतुलि द्वै दूध की, देखौं इन नैननि!
कबहिँ कमल-मुख बोलिहैँ, सुनिहौँ उन बैननि।
चूमति कर-पग-अधर-भ्रू[1], लटकति लट चूमति।
कहा बरनि सूरज कहै, कहँ पावै सो मति ॥७४॥

॥ ६६२ ॥

※ राग बिल

नान्हरिया गोपाल लाल, तू बेगि बड़ौ किन होहि।
इहिँ मुख मधुर बचन हँसिकै धौं, जननि कहै कब मोहिँ।
यह लालसा अधिक मेरैँ[2] जिय जो जगदीस कराहिँ।
मो देखत कान्हर[3] इहिँ आँगन, पग द्वै धरनि धराहिँ।
खेलहिँ[4] हलधर-संग रंग-रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ।

ह पद (वे, ल, शा, का,) मेँ है।
पान—१, ६, ११, १२।
(ना) टोड़ो। (के, क, रा) सोरठ। (काँ) धनाश्री।
② दिन दिन प्रति कबहूँ ईस करै—१, ११। ③ माधौ—१, ११। कबधौं मेरो मोहन—१४, ११। ④ हलधर फिरै जब आँगन चरन सब पाऊँ—१, ११।

छिन-छिन छुधित[1] जानि पय कारन, हँसि-हँसि[2] निकट बुलाऊँ।
जाकौ[3] सिव-बिरंचि-सनकादिक मुनिजन ध्यान न पावै।
सूरदास जसुमति[4] ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ावै ॥७५॥

॥ ६६३ ॥

[-वध

* राग बिलावल

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरौ लाल घुटुरुवनि रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैं मुख बचन झरै।
कब नंदहिं बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै।
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन, जोइ-सोइ कहि मोसौं झगरै।
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौं मुखहिं भरै।
कब हँसि बात कहैगौ मोसौं, जा छबि तैं दुख दूरि हरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े, आपु गई कछु काज घरै।
इहिं अंतर अँधवाह उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित घहरै।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहिं[1] डरै ॥७६॥

॥ ६६४ ॥

* राग सूहौ

अति बिपरीत तृनावर्त आयौ।
बात-चक्र-मिस ब्रज ऊपर परि, नंद-पौरि कैं भीतर धायौ।

आरि करै मनमोहन से कंठ लगाऊँ—१४। ाठि—१। (३) आगम नेति कहि गायौ सिव

अनमान न पायौ—१, ११। (४) बालक रस लीला मन अभिलाष बढ़ायौ—१, ११।

* (ना) केदारौ। (के, क)। सोरठ (कां, रा) नट।

(५) हहरै—६, १७।

* (ना) नट।

पौढ़े स्याम अकेले[1] आँगन, लेत उड़्यौ, आकास चढ़ायौ ।
अंधाधुंध भयौ सब गोकुल, जो जहँ रह्यौ सो तहीँ छपायौ ।
जसुमति धाइ आइ जो देखै, स्याम-स्याम कहि[2] टेर लगायौ ।
धावहु नंद गोहारि लगौ किन, तेरौ सुत अँधवाह उड़ायौ ।
इहिँ अंतर अकास तैँ आवत, परबत सम कहि सबनि बतायौ ।
मार्‌यौ असुर सिला सौँ पटक्यौ, आपु चढ़्यौ ता ऊपर भायौ ।
दौरे नंद, जसोदा दौरी, तुरतहिँ लै हित कंठ लगायौ ।
सूरदास यह कहति जसोदा, ना जानौँ विधनहिँ[3] का भायौ ॥

॥ ६६

राग [illegible]

† सोभित सुभग नंद जू की रानी ।
अति आनँद आँगन मैँ ठाढ़ी, गोद लिए सुत सारँगपानी ।
तृनावर्त की सुरति आनि जिय, पठयौ असुर कंस अभिमानी ।
गरू भए, महि मैँ बैठाए, सहि न सकी जननी अकुलानी ।
आपुन गई भवन मैँ दौरी, कछु इक काज रही लपटानी ।
बौंडर महा भयावन आयौ, गोकुल सबै प्रलय करि मानी ।
महा दुष्ट लै उड़्यौ गुपालहिँ, चल्यौ अकास कृष्न यह जानी ।
चापि ग्रीव हरि प्रान हरे, दृग-रकत-प्रवाह चल्यौ अधिकानी ।
पाहन सिला निरखि हरि डार्‌यौ, ऊपर खेलत स्याम बिनानी ।
ब्रज-जुवतिनि उपवन मैँ पाए, लयौ उठाइ कंठ लपटानी ।

नंद के—२, ३, १६ । १५ । (३) विधना का ठायौ—१६ । पू) मेँ है ।
पौर उठायौ—१, ६, ११, † यह पद (वे, का, गो, जै,

लै आईं गृह चूमति-चाटति, घर-घर सबनि बधाई मानी ।
देतिं अभूषन वारि-वारि सब, पीवतिं सूर वारि सब पानी ॥७८॥

॥ ६६६ ॥

* राग धनाश्री

उबरचौ स्याम, महरि बड़भागी ।
बहुत दूरि तैं आइ परचौ धर, धौं कहुँ चोट न लागी ।
रोग लेउँ बलि जाउँ कन्हैया, यह कहि कंठ लगाइ[1] ।
तुमही हौ ब्रज के जीवन-धन देखत नैन सिराइ[2] ।
भली नहीं यह प्रकृति जसोदा, छाँड़ि अकेलै जाति ।
गृह कौ काज इनहुँ तैं प्यारौ, नैकहुँ नाहिं डराति ।
भली भई अबकैं हरि बाँचे, अब तौ सुरति सम्हारि ।
सूरदास खिझि कहति ग्वालिनी, मन मैं महरि बिचारि ॥७९॥

॥ ६६७ ॥

राग बिलावल

† अब हौं बलि[3] बलि जाउँ हरी ।
निसिदिन रहति बिलोकति हरि-मुख, छाँड़ि सकति नहिं एक घरी ।
हौं अपने गोपाल लड़ैहौं, भौन-चाड़ सब रहौ धरी ।
पाऊँ कहाँ खिलावन कौ सुख, मैं दुखिया, दुख कोखि[4] जरी ।
जा सुख कौं सिव-गौरि मनाई, तिय-ब्रत-नेम अनेक करी ।
सूर स्याम पाए पैंड़े मैं, ज्यौं पावै निधि रंक परी ॥८०॥

॥ ६६८ ॥

(ना, पु) कान्हरौ । (के, रा) बिलावल ।
) लगाए—२ । लगायौ—३ । ② सिराए—२ ; सिरायौ—३ ।
† यह पद (वे, ल, शा, का, यो, औ) में है ।
③ स्याम—१, ११, १४
④ कोटि भरी—१, ११, १४ ।

* राग धनाश्री

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ ।
निरखि-निरखि मुख कहति लाल सौं, मो निधनी के धनियाँ ।
अति कोमल तन चितै स्याम कौ, बार-बार पछितात ।
कैसैं बच्यौ, जाउँ बलि तेरी, तृनावर्त कैं घात ।
ना जानौं धौं कौन पुन्य तैं, को करि लेत सहाइ ।
वैसौ काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ ।
माता दुखित जानि हरि बिहँसे, नान्हो दँतुलि दिखाइ ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डारयौ बिसराइ ॥ ८१ ॥
॥ ६६६ ॥

* राग धनाश्री

सुत-मुख देखि जसोदा फूली ।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेम-मगन तन की सुधि भूली ।
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई ।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलिया, देखौ, नैन सफल करौ आई ।
आनँद सहित महर तब आए, मुख चितवत दोउ नैन अघाई ।
सूर स्याम किलकत द्विज[1] देख्यौ, मनौ कमल पर बिज्जु जमाई ॥ ८२ ॥
॥ ७०० ॥

× राग देवगंधार

† हरि किलकत जसुमति की कनियाँ ।
मुख मैं तीनि लोक दिखराए, चकित भई नँद-रनियाँ ।

ना) टोड़ी ।
ना) देवगंधार ।

(१) द्युति—२ । मुख—१२ ।
× (कीं, रा) धनाश्री ।

† यह पद (वे, का, गो, जै) में नहीं है ।

घर-घर हाथ दिखावति डोलति, बाँधति गरैं बघनियाँ।
सूर स्याम की अदभुत लीला नहिँ जानत मुनिजनियाँ ॥८३॥
॥ ७०१ ॥

रागिनी श्रीहठी

† जननी बलि जाइ हालरु हालरौ गोपाल।
दधिहिँ बिलोइ सदमाखन राख्यौ, मिश्री सानि चटावै नँदलाल।
कंचन खंभ, मयारि, मरुवा-डाँड़ी, खचि हीरा बिच लाल-प्रवाल।
रेसम बनाइ नव रतन पालनौ, लटकन बहुत पिरोजा-लाल।
मोतिनि झालरि नाना भाँति खिलौना, रचे बिस्वकर्मा सुतहार।
देखि-देखि किलकत दँतियाँ द्वै राजत क्रीड़त बिबिध बिहार।
कठुला कंठ बज्र केहरि-नख, मसि-बिंदुका सु मृग-मद भाल।
देखत देत असीस नारि-नर, चिरजीवौ जसुदा तेरौ लाल।
सुर नर मुनि कौतूहल फूले, झूलत देखत नंद कुमार।
हरषत सूर सुमन बरषत नभ, धुनि छाई है जै-जैकार ॥८४॥
॥ ७०२ ॥

-करण

* राग बिलावल

महर-भवन रिषिराज गए।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, अरघासन करि हेत दए।
धन्य आज बड़भाग हमारे, रिषि आए, अति कृपा करी।
हम कहा धनि, धनि नंद-जसोदा, धनि यह ब्रज जहँ प्रगट हरी।

---

† यह पद केवल (वे, गो, मे) है।

* (ना) देवगंधार।

आदि अनादि रूप-रेखा नहिँ, इनतैँ नहिँ प्रभु और बियौ।
देवकि उर अवतार लेन कह्यौ, दूध पिवन तुम माँगि लियौ।
बालक करि इनकौं जनि जानौ, कंस[1] बधन येई करिहैँ।
सूर देह धरि सुरनि[2] उधारन, भूमि-भार येई हरिहैँ ॥८१॥
॥ ७०३ ॥

राग धनाश्री

† (नंद जू) आदि जोतिषी तुम्हरे घर कौ, पुत्र-जन्म सुनि आयौ।
लगन सोधि सब जोतिष गनिकै, चाहत तुमहिँ सुनायौ।
संबत सरस बिभावन, भादौं, आठैँ तिथि, बुधवार।
कृष्न पच्छ, रोहिनी, अर्द्ध निसि, हर्षन जोग उदार।
बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहिँ बहुत सुख पैहैँ।
चौथैँ सिंह रासि के दिनकर, जीति सकल महि लैहैँ।
पचएँ बुध कन्या कौ जौ है, पुत्रनि बहुत बढ़ैहैँ।
छठएँ सुक्र तुला के सनि जुत, सत्रु रहन नहिँ पैहैँ।
ऊँच नीच जुवती बहु करिहैँ, सतएँ राहु परे हैँ।
भाग्य-भवन मैँ मकर मही-सुत, बहु ऐस्वर्य बढ़ैहैँ।
लाभ-भवन मैँ मीन बृहस्पति, नवनिधि घर मैँ ऐहैँ।
कर्म-भवन के ईस सनीचर, स्याम बरन तन ह्वैहैँ।
आदि सनातन परब्रह्म प्रभु, घट-घट अंतरजामी।
सो तुम्हरैँ अवतरे आनि कै, सूरदास के स्वामी ॥८२॥
॥ ७०४ ॥

---

१ कंस कौ बध ये—१, ६, १। कंसै बध—३।

२ असुर सँहारन—१६।

† यह पद केवल (शा) में है।

* राग बिलावल

धन्य जसोदा भाग तिहारौ, जिनि ऐसौ सुत जायौ ।
जाकैं दरस-परस सुख तन-मन, कुल[1] कौ तिमिर नसायौ ।
बिप्र-सुजन-चारन-बंदीजन, सकल नंद-गृह आए ।
नूतन[2] सुभग दूब-हरदी-दधि, हरषित[3] सीस बँधाए ।
गर्ग निरूपि कह्यौ सब लच्छन, अबिगत हैं अबिनासी ।
सूरदास प्रभु[4] के गुन सुनि-सुनि, आनंदे ब्रजबासी ॥ ८७ ॥
॥ ७०५ ॥

न ⊛ राग बिलावल

कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट मास गए ।
नंद महर यह सुनि पुलकित जिय, हरि अनप्रासन जोग भए ।
बिप्र बुलाइ नाम लै बूझ्यौ, रासि सोधि इक सुदिन धर्‌यौ ।
आछौ दिन सुनि महरि जसोदा, सखिनि बोलि सुभ गान कर्‌यौ ।
जुवति महरि कौं गारी गावतिं, और महर कौ नाम लिए ।
ब्रज-घर-घर आनंद बढ़्यौ अति, प्रेम पुलक न समात हिए ।
जाकौं नेति-नेति स्रुति गावत, ध्यावत सुर-मुनि ध्यान धरे ।
सूरदास तिहिं कौं ब्रज-बनिता, झकझोरतिं उर अंक भरे ॥ ८८ ।
॥ ७०६ ।

× राग सारं

आजु कान्ह करिहैं अनप्रासन ।
मनि-कंचन के थार भराए, भाँति-भाँति के बासन ।

(ना) बिहाग । (के, पू) (का, कां, रा) आसावरी । गोकुल—२, ३, १८, १६ । ② करि तन सुभग दूब हरदी दधि हरषि असीस बँधायौ—६ । ③ हरषि असीस बधाए—६, १७ । ④ सुनतै जस हरिके—

※ (ना) गूजरी ।
× (ना) जैतश्री ।

नंद-घरनि ब्रज-बधू बुलाईं, जे सब अपनी पाँति ।
कोउ ज्यौनार करति, कोउ घृत-पक, षटरस के बहु भाँति ।
बहुत प्रकार किए सब व्यंजन, अमित बरन मिष्टान ।
अति उज्ज्वल-कोमल-सुठि-सुंदर, देखि महरि मन मान ।
जसुमति नंदहिं बोलि कह्यौ तब, महर, बुलावहु जाति ।
आपु गए नँद सकल[1] -महर-घर, लै आए सब ज्ञाति ।
आदर करि बैठाइ सबनि कौं, भीतर गए नँदराइ ।
जसुमति उबटि न्हवाइ कान्ह कौं, पट-भूषन पहिराइ ।
तन झँगुली, सिर लाल चौतनी, चूरा दुहुँ कर-पाइ ।
बार-बार मुख निरखि जसोदा, पुनि[2]-पुनि लेति बलाइ ।
घरी जानि सुत-मुख-जुठरावन नँद बैठे लै गोद ।
महर बोलि बैठारि मंडली, आनँद करत बिनोद ।
कनक-थार भरि खीर धरी लै, तापर घृत-मधु नाइ ।
नँद लै-लै हरि मुख जुठरावत, नारि उठीं सब गाइ ।
षटरस के परकार जहाँ लगि, लै-लै अधर छुवावत ।
बिस्वंभर जगदीस जगत-गुरु, परसत मुख करुवावत ।
तनक-तनक जल अधर पोंछि कै, जसुमति पै पहुँचाए ।
हरषवंत जुवती सब लै-लै, मुख चूमतिं उर लाए ।
महर गोप सबही मिलि बैठे, पनवारे परसाए ।
भोजन करत अधिक रुचि उपजी, जो जाकैं मन भाए ।

महर सबनि कैं—२, ② हँसि-हँसि—१६, १८ ।
। सबके घर घर—१७ ।

विधि सुख बिलसत ब्रजबासी, धनि गोकुल नर-नारी।
सुवन की या छबि ऊपर, सूरदास बलिहारी ॥ ८९ ॥
॥ ७०७ ॥

※ राग सारंग

† हरि कौ मुख माइ, मोहिँ अनुदिन अति भावै।
चितवत[1] चित नैननि की मति-गति बिसरावै।
ललना[2] लै-लै उछंग अधिक लोभ लागैँ।
निरखतिँ निंदति निमेष करत ओट आगैँ।
सोभित सु-कपोल-अधर, अलप-अलप दसना।
किलकि[3]-किलकि बैन कहत, मोहन मृदु रसना।
नासा, लोचन बिसाल, संतत सुखकारी।
सूरदास धन्य भाग, देखतिँ ब्रजनारी ॥ ९० ॥
॥ ७०८ ॥

※ राग सारंग

ललन हौँ या छबि ऊपर वारी।
गोपाल लगौ इन नैननि, रोग-बलाइ तुम्हारी।
लटकनि, मोहन मसि-बिँदुका-तिलक भाल सुखकारी।
कमल-दल[4] सावक पेखत, उड़त मधुप छबि न्यारी।

मकली।
(चू, काँ, रा,
है।
ब्रज जुवतिनि
वै—२, ३, ६,
बार लै उछंग

रहत लोभ लागे—३, १४। ③ किलकत बिहँसत सुदेश मोहन मृदु रसना—३, १४।

※ (ना) ईमन। (का, के, गो, जै, काँ, पू, रा) धनाश्री।

④ कुटिल अलक मोहन

मुख बिहँसन भृकुटी बिक[illegible]
नियारी—३। ⑤ अलि साव[illegible]
पंगति—१, ६, ९, ११, १५
१७। दल सावक पंगति—
१६, १८।

लोचन ललित, कपोलनि काजर, छबि उपजति अधिकारी।
सुख मैं सुख औरै रुचि बाढ़ति, हँसत देत किलकारी।
अलप दसन,[1] कलबल करि बोलनि, बुधि नहिं परत बिचारी।
बिकसति ज्योति अधर-बिच, मानौ बिधु मैं बिज्जु उज्यारी।
सुंदरता कौ पार न पावति, रूप देखि महतारी।
सूर सिंधु की बूँद भई मिलि मति-गति-दृष्टि हमारी ॥ ६१ ॥

॥ ७०६ ॥

* राग जैतश्री

† लालन, वारी या मुख ऊपर।
माई मेरिहि दीठि न लागै, तातैं मसि-बिंदा दियौ भ्रू पर।
सरबस[2] मैं पहिलैं ही वारयौ, नान्हीं-नान्हीं दँतुली दू पर।
अब कहा करौं[3] निछावरि, सूरज सोचति अपनैं लालन जू पर ॥ ६२ ॥

॥ ७१० ॥

राग जैतश्री

‡ लाल हौं वारी तेरे मुख पर।
कुटिल अलक, मोहनि-मन बिहँसनि, भृकुटी बिकट ललित नैननि पर।
दमकति दूध-दँतुलिया बिहँसत, मनु सीपज घर कियौ बारिज पर।
लघु-लघु लट सिर घूँघरवारी, लटकन लटकि रह्यौ माथैं पर।
यह उपमा कापै कहि आवै, कछुक कहौं सकुचति हौं जिय पर।

---

(१) वचन—३।
* (ना) ललित। (के) [र]वल। (कां) धनाश्री।
† यह पद (स) में नहीं है।

(२) तो मैं नितही वारौं—१८, १६। (३) नोछावरि करि दीजै सूर अपने ललन ललू पर—१६।

‡ यह पद (ना, व्र, कां, प्र[?], रा, श्या) में नहीं है।

तन-चंद्र-रेख-मधि राजत, सुरगुरु-सुक्र-उदोत परसपर ।
तन[1] लोल कपोल ललित अति, नासा कौ मुकता रदछद पर ।
कहा न्यौछावर करियै अपने लाल ललित लरखर पर ॥ ६३ ॥

॥ ७११ ॥

* राग बिलावल

आजु भोर तमचुर के रोल ।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल-धुनि महराने[2] टोल ।
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरषि मँगावत फूल-तमोल ।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल ।
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पोंछति पट झोल ।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला, अंग अभूषन अँगुरिनि गोल ।
सिर चौतनी, डिठौना दीन्हौ, आँखि आँजि पहिराइ निचोल ।
स्याम[3] करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल ।
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति, बरष-दिवस कहि करति कलोल ।
सूर स्याम ब्रज-जन-मन-मोहन-बरष-गाँठि कौ डोरा खोल ॥ ६४ ॥

॥ ७१२ ॥

* राग धनाश्री

† अरी, मेरे लालन की आजु बरष-गाँठि, सबै
सखिनि कौं बुलाइ मँगल-गान करावौ ।

मैं या छबि पर तन
तनक घुटुरुवनु (होत
पर—१, १४ ।
(ना) रामकली ।
(के) में इस पद की
नहीं है । दूसरे चरण
न में यह पंक्ति है—
आजु भोरही तमचुर के सुर मंगल
धुनि महराने टोल ।

② घहराने ढोल—१४ ।

③ करत आरि मैया सौं झगरत
बोलत कछुक तोतरे बोल—१७ ।

* (क) बिलावल ।

† यह पद (ना, शा, बृ, कां,
रा, स्या) में नहीं है । इसक
पाठ सभी प्राप्त प्रतियों मे
बड़ा अस्तव्यस्त है । केवल (के
और (पू) का पाठ कुछ ठीक
ज्ञात होता है । अतः इन्हीं
का पाठ किंचित् संशोधन कर
इस संस्करण में दिया गया है

चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौकैं पुराइ,
उमँगि अँगनि आनँद सौं, तूर बजावौ ।
मेरे कहैं बिप्रनि बुलाइ, एक सुभ घरी धराइ,
बागे चीरे बनाइ, भूषन पहिरावौ ।
अछत-दूब दल बँधाइ, लालन की गँठि जुराइ,
इहै मोहिँ लाहौ नैननि दिखरावौ ।
पँचरँग सारी मँगाइ, बधू जननि पैहराइ,
नाचौं सब उमँगि अंग, आनँद बढ़ावौ ।
नँदरानी ग्वारिनि बुलाइ, इहै रीति कहि सुनाइ,
बेगि करौ किन, बिलंब काहैं लगावौ ।
जसुमति तब नँद बुलावति, लाल लिए कनियाँ दिखरावति,
लगन घरी आवति, या तैं, न्हवाइ बनावौ ।
सूर स्याम छबि निहारति, तन-मन जुवति जन वारति,
अतिहीं सुख धारति, बरष-गाँठि जुरावौ ॥ ६५ ॥
॥ ७१३ ॥

* राग आसावरी

ब्रजनारि सुभग, कान्ह बरष-गाँठि उमँग, चहतिँ बरष बरषनि
मंगल सुगान, नीके सुर नाकी तान, आनँद अति हरषनि

) संकराभरण । में नहीं है । शेष प्रतियों में से त्रुटिपूर्ण है । बहुमत से निर्धा
(वृ, कौ, स्या) इसका पाठ अर्थ और छंद की दृष्टि करके ऊपर का पाठ रक्खा गया

मनि-जटित-थार, रोचन, दधि, फूल-डार, मिलिबे की तरसनि
ग्रथ-गाँठि जोरति, वा छबि पर तृन तोरति, सूर अरस परसनि ॥६६
॥ ७१४

चलना

* राग धन

खेलत नँद[1]-आँगन गोविंद।
निरखि-निरखि जसुमति सुख पावति, बदन मनोहर इंदु[2]।
कटि किंकिनी चंद्रिका[3] मानिक, लटकन लटकत भाल।
परम सुदेस कंठ केहरि-नख, बिच-बिच बज्र प्रवाल।
कर पहुँची, पाइनि मैं नूपुर, तन राजत[4] पट पीत।
घुटुरुनि चलत, अजिर[5] महँ बिहरत, मुख मंडित नवनीत।
सूर बिचित्र चरित्र स्याम के रसना कहत न आवैं।
बाल दसा अवलोकि सकल मुनि, जोग बिरति बिसरावैं ॥ ६७
॥ ७१५

* राग आसा

घुटुरुनि चलत स्याम मनि-आँगन, मातु-पिता दोउ देखत री।
कबहुँक किलकि तात-मुख हेरत, कबहुँ मातु[6]-मुख पेखत री।
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर-बिंदु भ्रुव-ऊपर री।
यह सोभा नैननि भरि देखैं, नहिं उपमा तिहुँ भू पर री।
कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत[7], गिरत, उठत पुनि धावै री।

(ना) अहीरी। (का. के, ...ावल। (कां, रा, श्या) ।

...भज—२, १६। गृह— (२) चंद—१, ३, ११, (३) कंठ मनि की दुति लट मुक्ता भरि भाल—१। चंद्रमनि मानिक अरु मुकतनि की माल—२। चंद्रमणि की लट मुक्तावली भलि भाल—१४। (४) रंजित रज पीत—१, ६, ११, १५। (५) वच्छ सँग बिहरत—२, १६, १८, १९।

* (रा) बिलावल। (६) जननि—१, ६, ११, १४, १९। (७) लट... १, ३, ६, ११, १४, १५... रैं गत—२, १६, १८, १९

तैं नंद बुलाइ लेत हैं, उततैं जननि बुलावै री।
ते होड़ करत आपुस मैं, स्याम खिलौना कीन्हौ री।
ास प्रभु ब्रह्म सनातन, सुत हित करि दोउ लीन्हौ री॥ ९८॥

॥ ७१६॥

* राग बिलावल

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए।
चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए।
कठुला-कंठ, बज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए॥ ९९॥

॥ ७१७॥

* राग रामकली

† खीझत जात माखन खात।
अरुन लोचन, भौंह टेढ़ी, बार-बार जँभात।
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत, नैन जल भरि जात।
कबहुँ तोतरे बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात॥ १००॥

॥ ७१८॥

) गूजरी। (क) * (क तथा कल्पद्रुम) बिलावल। † यह पद केवल (गो, व तथा राग-कल्पद्रुम) में है।

राग

† (माई) बिहरत गोपाल राइ, मनिमय रचे अंगनाइ

लरकत परिंगनाइ, घूटुरुनि डोलै।

निरखि निरखि अपनौ प्रति-बिंब, हँसत किलकत औ,

पाछैं चितै फेरि-फेरि मैया-मैया बोलै।

ज्यौं अलिगन सहित बिमल जलज जलहिं धाइ रहै,

कुटिल अलक बदन की छबि, अवनी परि लोलै।

सूरदास छबि निहारि, थकित रहीं घोष नारि

तन-मन-धन देतिं वारि, बार-बार ओलै ॥ १०१ ॥

॥ ७१६ ॥

* राग बि

बाल बिनोद खरो जिय भावत।

मुख प्रतिबिंब पकरिबे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत।

अखिल[1] ब्रह्मंड-खंड की महिमा, सिसुता माहिं दुरावत।

सब्द जोरि[2] बोल्यौ चाहत हैं, प्रगट बचन नहिं आवत।

कमल-नैन माखन माँगत हैं करि[3]-करि सैन बतावत।

सूरदास[4] स्वामी सुख-सागर, जसुमति-प्रीति बढ़ावत ॥ १०२ ॥

॥ ७२० ॥

ह पद केवल (वे, स, गो, जै) में है। इनमें ाठ ऐसा भ्रष्ट है कि न तो ठीक रह गया है और न । अंतिम चरण से कुछ पता लगाकर इसकी मात्राएँ समान कर दी गई हैं।

* (ना) ईमन। (क) आसावरी। (का) धनाश्री। (रा) सारंग।

(1) छिनक माँझ त्रिभुवन की लीला—१, ६, ११। कृत ब्रह्मंड—२। (2) एक ६, ११। (3) ग्वालिनि ६, ११, १२, १६। (4) सु सनेह मनोहर—१, सूरदास स्वामी ब्रजबासी फल पावत—२, १६,

राग सारंग

† मैं बलि स्याम, मनोहर नैन।
जब[1] चितवत मो तन करि अँखियनि, मधुप देत मनु सैन!
कुंचित अलक, तिलक गोरोचन, ससि[2] पर हरि के ऐन।
कबहुँक खेलत[3] जात घुटुरुवनि, उपजावत सुख चैन।
कबहुँक रोवत-हँसत बलि गई, बोलत मधुरे बैन।
कबहुँक ठाढ़े होत टेकि कर, चलि न सकत इक गैन।
देखत बदन करौं न्यौछावरि, तात-मात सुख-दैन।
सूर बाल-लीला के ऊपर, वारौं कोटिक मैन॥ १०२॥
॥ ७२१ ॥

* राग कान्हरौ

‡ आँगन खेलत घुटुरुनि धाए।
नील-जलद-अभिराम[4] स्याम तन, निरखि जननि दोउ निकट बुलाए।
बंधुक-सुमन-अरुन पद-पंकज, अंकुस प्रमुख चिह्न बनि आए।
नूपुर-कलरव मनु हंसनि सुत रचे नीड़, दै बाहँ बसाए।
कटि किंकिनि बर हार ग्रीवदर, रुचिर बाहु भूषन पहिराए।
उर श्रीबच्छ मनोहर हरि-नख, हेम-मध्य मनि-गन बहु लाए।

---

† यह पद (बे, स, ल, शा, गो, जौ) में है।

(१) अब (जब) चितवत न की—१, ३, ६, ११, १२। ससि परिहरि से ऐन—३। खेलन—३, ६।

* (क) आसावरी।

‡ यह पद (ना, लु, कौ, रा, स्या) में नहीं है। गोस्वामी तुलसीदासजी कृत 'गीतावली' में भी यह पद प्रायः इसी रूप में मिलता है। केवल दूसरी पंक्ति में 'स्याम' के स्थान पर 'राम' और 'दोउ' के स्थान पर 'मुख' कर दिया गया है तथा अंतिम पंक्ति 'सूरदास क्यौं करि बरनै जो छबि निगम नेति कहि गाए' के बदले 'तुलसिदास रघुनाथ रूप गुन तौ कहौं जो बिधि होहिं बनाए' रक्खी गई है। (गीतावली, ना० प्र० स० पद २३, पृ० २८८)

(४) तनु स्याम मुख—१। स्याम राम मुख—३, ६, ९, ११, १४, १७।

सुभग चिबुक, द्विज-अधर-नासिका, स्त्रवन-कपोल मोहिँ सुठि भाए।
भ्रुव सुंदर, करुना-रस-पूरन लोचन मनहु जुगल जल-जाए।
भाल बिसाल ललित लटकन मनि, बाल-दसा के चिकुर सुहाए।
मानौ गुरु-सनि-कुज आगैं करि, ससिहिँ मिलन तम के गन आए।
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीट उढ़ाए।
नील जलद पर[1] उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनु तड़ित छपाए।
अंग-अंग-प्रति मार-निकर मिलि, छबि-समूह लै-लै मनु छाए।
सूरदास सो क्यौं करि बरनै, जो छबि निगम नेति करि गाए॥ १०४॥

॥ ७२२ ॥

* राग धनाश्री

हौं बलि जाउँ छबीले लाल की।
धूसर धूरि घुटुरुवनि रेँगनि, बोलनि बचन रसाल की।
छिटकि रहीँ चहुँ दिसि जु लटुरियाँ, लटकन-लटकनि भाल की।
मोतिनि सहित नासिका नथुनी, कंठ-कमल-दल-माल की।
कछुक हाथ, कछु मुख माखन लै, चितवनि नैन बिसाल की।
सूरदास प्रभु-प्रेम-मगन भईं, ढिग न तजनि ब्रजबाल की॥ १०५॥

॥ ७२३ ॥

राग कान्हरौ

† आदर सहित बिलोकि स्याम-मुख, नंद अनंद-रूप लिए कनियाँ।

---

(१) ऊपर जौ निरखत—
, ६, ११, १४। ऊपर यौं
रखत—६।

* (ना) अड़ाना। (के, क, पू)
ावल। (कां, रा, श्या) सारंग।

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास की गीतावली में भी यह पद किंचित् शाब्दिक हेर-फेर से आया है। संवत् १७९२ की प्रति में भी, जो सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है यह पद प्राप्त है। (तुलसी-ग्रंथावली, नागरी-प्रचारिणी सभा, पद २१, पृष्ठ २६२)।

सुंदर स्याम-सरोज-नील-तन, अँग-अँग सुभग सकल सुखदनियाँ ।
अरुन चरन[1] नख-जोति जगमगति, रुन-झुन करति पाइँ पैजनियाँ ।
कनक-रतन-मनि-जटित-रचित कटि-किंकिनि कुनित[2] पीतपट तनियाँ[3] ।
पहुँची करनि, पदिक उर हरि-नख, कठुला कंठ मंजु गज-मनियाँ ।
रुचिर चिबुक-द्विज-अधर नासिका अति सुंदर राजति सुवरनियाँ[4] ।
कुटिल भृकुटि, सुख की निधि आनन, कल कपोल की छबि न उपनियाँ ।
भाल तिलक मसि-बिंदु बिराजत, सोभित सीस लाल चौतनियाँ ।
मन-मोहिनी तोतरी बोलनि, मुनि-मन हरनि सु हँसि मुसुकनियाँ ।
बाल सुभाव बिलोल बिलोचन, चोरति चितहिँ चारु चितवनियाँ ।
निरखतिँ ब्रज-जुवती सब ठाढ़ी, नंद-सुवन-छबि चंद-बदनियाँ ।
सूरदास प्रभु निरखि मगन भए, प्रेम-बिवस कछु सुधि न अपनियाँ ।॥१०६॥८

* राग क

† गोद[5] लिए जसुदा नँद-नंदहिँ ।
पीत झँगुलिया की छबि छाजति, बिज्जुलता सोहति मनु कंदहिँ ।
बाजीपति[6] अग्रज अंबा तेहिँ, अरक-थान-सुत माला गुंदहिँ ।
मानौ स्वर्गहिँ तैँ सुरपति-रिपु-कन्या-सौति आइ ढरि सिंदहिँ[7] ।
आरि करत कर चपल चलावत, नंद-नारि-आनन छुवै मंदहिँ ।
मनौ भुजंग अमी-रस-लालच, फिरि-फिरि चाटत सुभग सुचंदहिँ ।
गूँगी बातनि यौँ अनुरागति, भँवर गुंजरत कमल मौँ बंदहिँ ।
सूरदास स्वामी धनि तप किए, बड़े भाग जसुदा अरु नंदहिँ ॥ १०७ ॥ ७२५

---

(१) तरनि—१ । तरुन—२ । तरन—११ । (२) कलित—१, ६, ११ । (३) झनियाँ—२, ११, १४ (४) सोवनियाँ १ २, ६ ६, १७ ।

* (शा) बिलावल ।

† यह पद केवल (वे, ल, शा गो जै) में है

(५) बोलि लिए जसुम नंदहिँ—१, ११, १२ । (६ पति अग्रज अंबा ते अर ११ १२ । (७) सिंधहिँ

* राग ध

कहाँ लौं बरनौं सुंदरताई ?

खेलत कुँवर कनक-आँगन मैं नैन निरखि छवि[1] पाई।
कुलही लसति सिर स्यामसुंदर[2] कैं, बहु बिधि सुरँग[3] बनाई।
मानौ नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढ़ाई।
अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन मोहन-मुख बगराई।
मानौ प्रगट कंज पर मंजुल अलि-अवली फिरि आई।
नील, सेत, अरु पीत, लाल मनि लटकन भाल रुलाई[4]।
सनि, गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई।
दूध-दंत-दुति कहि[5] न जाति कछु अदभुत उपमा पाई।
किलकत-हँसत दुरति प्रगटति मनु, घन मैं बिज्जु छटाई[6]।
खंडित बचन देत पूरन सुख अलप-अलप जलपाई।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, सूरदास बलि जाई॥१०८॥७

राग नट

† हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि।

सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि[7] डरनि।

(ना) बिहागरौ। (काँ,) नट।
छबि छाई—१, ११। —२, ६, १६। ② सुभग १, ३, ६, ११, १५। ③ -२, १६। ④ रुनाई—१, राई - ६, १७। ⑤ देत अधिक छबि अद्‌भुत इह उपमाई—६, १७। ⑥ छपाई—३। लताई—२, ६, १७, १६।

† यह पद (ना, वृ, काँ, श्या) में नहीं है। यह भी गोस्वामीजी की गीतावली में 'रघुबर बाल-छबि कहौं बरनि' शीर्षक पद के रूप में है। बहुत थोड़ा अंतर, ...ाय था, पाया जा (गीतावली ना० प्र० स०

⑦ दुति—१, ३, १४, १५, १७।

मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि ।
मनहुँ सुभग सिँगार-सिसु-तरु, फर्‌यौ अदभुत फरनि ।
चलत पद-प्रतिबिंब मनि आँगन घुटुरुवनि करनि[१] ।
जलज-संपुट-सुभग-छबि भरि लेति उर जनु धरनि ।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिँ बिलोकि कै नँद-घरनि ।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि ॥१०६॥७२७॥

※ राग धनाश्री

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत ।
मनिमय कनक नंद कैँ आँगन, बिंब पकरिबैँ धावत ।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कौँ, कर सौँ पकरन चाहत ।
किलकि हँसत राजत[२] द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिँ अवगाहत ।
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति ।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति ।
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति ।
अँचरा तर लै ढाँकि, सूर के प्रभु कौँ दूध पियावति ॥११०॥७२८॥

※ राग बिलावल

नंद-धाम खेलत हरि डोलत ।
जसुमति करति रसोई भीतर, आपुन किलकत बोलत ।
टेरि उठी जसुमति मोहन कौँ, आवहु काहेँ[२] न धाइ ।
बैन सुनत माता पहिचानी, चले घुटुरुवनि पाइ ।

चलनि–२ ।
(ना) बेसकार । (गो)
ल ।
दँतुली दुति राजति पुनि-
पुनि यह अवगाहत—२ ।
※ (ना) देवगिरि । (क)
धनाश्री ।
(२) घुटुरुनि धाइ—१, २,
६, ११, १४, १२, १७ । चरन
चलाइ—१६ ।

लै उठाइ अंचल गहि पोंछै, धूरि भरी सब देह।
सूरज प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह? ॥१११॥९

पाँवों चलना

* राग सूहौ।

धनि जसुमति बड़भागिनी, लिए कान्ह[1] खिलावै।
तनक-तनक भुज पकरि कै, ठाढ़ौ होन सिखावै।
लरखरात गिरि परत हैं, चलि घुटुरुनि धावैं।
पुनि क्रम-क्रम भुज टेकि कै, पग द्वैक चलावैं।
अपने पाइनि कबहिं लौं, मोहिं देखन धावै।
सूरदास जसुमति इहै बिधि सौं जु मनावै ॥११२॥ ७

* राग

हरि कौ बिमल जस गावति गोपँगना।
मनिमय आँगन नंदराइ कौ, बाल गोपाल करैं तहँ रँगना।
गिरि-गिरि परत घुटुरुवनि रेंगत, खेलत हैं दोउ छगना-मगना।
धूसरि धूरि दुहूँ तन मंडित, मातु जसोदा लेति उछँगना।
बसुधा त्रिपद करत नहिं आलस तिनहिं कठिन भयौ देहरी उलँघना?
सूरदास प्रभु ब्रज-बधु निरखतिं, रुचिर हार हिय सोहत बघना ॥११३॥

× राग सूहौ

चलन[2] चहत पाइनि गोपाल।
लए लाइ अँगुरी नँदरानी, सुंदर[3] स्याम तमाल।
डगमगात गिरि परत पानि पर, भुज भ्राजत नँदलाल।

---

* (ना) आसावरी।
(१) गोद—२, १६, १८, १६।
* (ना) गुनकली।

× (ना, गो, कां, स्या) बिलावल। (के, क, पू) सूहौ। (रा) भैरव।

(२) चलन पैय गोपाल—२, १६, ११
मोहन—१, ३, ६, १

जनु[1] सिर पर ससि जानि अधोमुख, धुकत नलिनि नमि नाल ।
धूरि-धौत तन, अंजन नैननि, चलत लटपटी चाल ।
चरन[2] रनित नूपुर-धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल ।
लट[3] लटकनि सिर चारु चखौड़ा, सुठि सोभा सिसु भाल ।
सूरदास ऐसौ सुख निरखत, जग जीजै बहु काल ॥११४॥७२२॥

* राग बिलावल

सिखवति चलन जसोदा मैया ।
अरबराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरै पैया ।
कबहुँक[4] सुंदर बदन बिलोकति, उर आनँद भरि लेति बलैया ।
कबहुँक कुल-देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर[5] कन्हैया ।
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति, इहिँ आँगन खेलौ दोउ भैया ।
सूरदास[6] स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया ॥११५॥७२३॥

* राग सूहौ बिलावल

मनिमय आँगन नंद कैँ, खेलत दोउ भैया ।
गौर-स्याम जोरी बनी, बलराम[7] कन्हैया ।
लटकतिँ ललित लटूरियाँ, मसि-बिंदु-गोरोचन ।
हरि-नख उर अति राजहीँ, संतनि दुख मोचन ।

जनु सरवर ससि जानि धुकत मनो लम नाल—औधर औधरत अधोमुख नि (मानौ) नमि नाल—, १४, १९, १७ । ज्यौं र जात अधोमुख दुःखित ल—१६ । ② जनु पग ी बिखरी गति बहुरत (बिहरत) बाल मराल—२, १६ । ③ अलक तिलक अरु चारु चखौड़ा सुठि सोभा अ भाल—१६ ।

* (कॉ, रा, श्या) देवगंधार ।

④ कबहुँक ढाढ़ी मुख तन चितवति मन उछाह हँसि लेति बलैया—२, ३, १६ । ⑤ बाल—१, ४, ११ । लाल—१४ । ⑥ सूरदास प्रभु सब सुखदायक अति प्रताप बालक नँदरैया—१, ११, १९ ।

* (ना) रामकली ।

⑦ बल कुँवर—२, ३, १४ १७, १८, १६ ।

सँग-सँग जसुमति-रोहिनी, हितकारिनि मैया।
चुटकी देहिँ[1] नचावहीँ, सुत जानि नन्हैया।
नील-पीत पट ओढ़नो[2] देखत जिय भावै।
बाल-बिनोद अनंद सौं, सूरज जन गावै॥ ११६॥

॥७३४॥

* राग धनाश्री

† आँगन खेलैँ नंद के नंदा। जदुकुल-कुमुद-सुखद-चारु-चंदा।
संग-संग बल-मोहन सोहैँ। सिसु-भूषन भुव[3] कौ मन मोहैँ।
तन-दुति मोर-चंद जिमि झलकै। उमँगि-उमँगि अँग-अँग छबि छलकै।
कटि किंकिनि, पग पैँ जनि[4] बाजै। पंकज पानि पहुँचिया राजै।
कठुला कंठ बघनहाँ नीके। नैन-सरोज मैन-सरसी के।
लटकतिँ ललित ललाट लटूरी। दमकतिँ दूध[5] दँतुरियाँ रूरी।
मुनि-मन हरत मंजु मसि-बिंदा। ललित बदन बल-बालगुबिंदा।
कुलही चित्र-बिचित्र झँगूली। निरखि जसोदा-रोहिनि फूली।
गहि मनि-खंभ डिंभ[6] डग डोलैँ। कल-बल बचन तोतरे बोलैँ।
निरखत झुकि, झाँकत प्रतिबिंबहिँ। देत परम सुख पितु अरु अंबहिँ।
ब्रज-जन निरखत हिय हुलसाने। सूर स्याम-महिमा को जाने॥११७

॥ ७३५ ।

---

(१) दहै—२। (२) बपु बनै। पेहनी—१६, १६।
* (ना) गूजरी। (रा) [वल]।
† यह पद भी तुलसी-गीता-में आया है। अंतर उतना है जितना कृष्ण-कथा को राम-कथा के रूप में परिणत कर देने के लिये अनिवार्य था। प्रथम द्वितीय और अंतिम पंक्तियों में ही कुछ परिवर्तन मिलता है, शेष प्राय: ज्यों की त्यों हैं।

(३) सब—१, ११, १२ (४) नूपर—१, ६, ११, १२। (५) द्वै द्वै—१, ११, १४। दोय-२, १६। द्वैक—३। (६) देह-२, १६।

* राग नटनाराय-

बलि गइ बाल-रूप मुरारि ।
पाइ-पैँ जनि रटति[1] रुन-झुन, नचावति नँद-नारि ।
कबहुँ हरि कौँ[2] लाइ अँगुरी, चलन सिखवति ग्वारि ।
कबहुँ हृदय लगाइ हित करि, लेति अंचल डारि ।
कबहुँ हरि कौँ चितै चूमति, कबहुँ गावति गारि ।
कबहुँ लै पाछे दुरावति, ह्याँ नहीँ बनवारि ।
कबहुँ अँग भूषन बनावति, राइ-लोन उतारि ।
सूर सुर-नर[3] सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि ॥ ११८ ॥
॥ ७२६ ॥

* राग बिलावल

भावत हरि कौ बाल-बिनोद ।
स्याम[4]-राम-मुख निरखि-निरखि, सुख-मुदित रोहिनी, जननि जसोद ।
आँगन[5]-पंक-राग तन सोभित, चल नूपुर-धुनि सुनि मन मोद ।
परम सनेह बढ़ावत मातनि,[6] रबकि-रबकि हरि बैठत गोद ।
आनँद[7]-कंद, सकल सुखदायक, निसि-दिन रहत केलि-रस ओद ।
सूरदास[8] प्रभु अबुंज-लोचन, फिरि-फिरि चितवत ब्रज-जन-कोद ॥११९॥
॥ ७२७ ॥

(ना) देवगिरि ।
① चलत—२, १६ । रुरत-बजति—११ । ② की—१६, १८, १९ । ③ —२ ३, ४, १४ ।
(ना) गौरी । (काँ, रा, कान्हरा ।

④ लै लै गोद निरखि मुख हरषति—१९ । ⑤ आँगन पंक परस तन मंडित चलत कुनित (बनत) नूपुर मन मोद—३, ४, १४, १७ । ⑥ पाइनि रीगि रीगि करि बैठत गोद—२ । मन मन निर्विकार बैठत चढ़ि गोद—३, ४, १४ । बातनि रँगि रँगि कै—१९ । ⑦ अतिसय चपल—१, ११, १६, १८, १९ । ⑧ सूर स्याम अंबुज दल लोचन फिरि चितवत ब्रज बनिता कोद—१, ११, १२ ।

राग सूहौ

† सूच्छम चरन चलावत बल करि ।

अटपटात, कर देति सुंदरी, उठत तबै[1] सुजतन तन-मन धरि ।
मृदु पद धरत धरनि ठहरात न, इत-उत भुज जुग लै-लै भरि-भरि ।
पुलकित सुमुखी भई स्याम-रस ज्यौं जल मैं काँची गागरि गरि ।
सूरदास सिसुता-सुख जलनिधि, कहँ लौं कहौं नाहिं कोउ समसरि ।
बिबुधनि[2] मन तर मान रमत ब्रज, निरखत जसुमति सुख छिन-पल-घरि ॥ १२० ॥
॥ ७३८ ॥

* राग बिलावल

बाल-बिनोद आँगन की[3] डोलनि ।

मनिमय भूमि नंद[4] कैं आलय, बलि-बलि जाउँ तोतरे बोलनि ।
कठुला कंठ कुटिल केहरि-नख, बज्र-माल बहु लाल अमोलनि ।
बदन सरोज तिलक गोरोचन, लट लटकनि मधुकर-गति डोलनि ।
कर[5] नवनीत परस आनन सौं, कछुक खात, कछु लग्यौ कपोलनि ।
कहि[6] जन सूर कहाँ लौं बरनौं, धन्य नंद जीवन जग तोलनि ॥ १२१ ॥ ७३९ ॥

* राग बिलावल

गहे अँगुरिया ललन[7] की, नँद चलन सिखावत ।
अरबराइ गिरि परत हैं, कर टेकि उठावत ।

---

† यह पद केवल (ना, स, ख) है ।

(१) जननि मुख इंदु मौन—३ । (२) विविधिल सन्तु करन सुमति के ब्रज छिन घरि—२ । विबिधन मुनि नर ने रमसि ब्रज जसुमति छिन घर—३ ।

* (ना) देवसाख ।

(३) मधि—२, १८ । मैं—१७, १६ । (४) सुभग नँद आलय—१४ । (५) लीनौं कर आनन परसत हैं कछुक खाइ—१, ११, १२ । (६) यह सुख सूर कहाँ लौं बरनौं धनि जसुमति—२, १६, १८, १९ ।

* (ना) गौरी । (रा) धनाश्री ।

(७) लाल—१, ११, १२ । सुवन—३, १४, १७, १८, १९ ।

बार-बार बकि[1] स्याम सौं, कछु बोल बुलावत ।
दुहुँघाँ द्वै दँतुली भईँ, मुख अति छबि पावत ।
कबहुँ कान्ह-कर छाँड़ि नँद, पग द्वैक रिँगावत ।
कबहुँ धरनि पर बैठि कै[2], मन मैँ कछु गावत ।
कबहुँ उलटि चलैँ धाम कौँ, घुटुरुनि करि धावत ।
सूर स्याम-मुख लखि महर, मन हरष बढ़ावत ॥ १२२ ॥ ७४० ॥

* राग धनाश्री

कान्ह चलत पग द्वै-द्वै धरनी ।
जो मन मैँ अभिलाष करति ही, सो देखति नँद-घरनी ।
रुनुक-झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि[3] अतिहीँ मन-हरनी ।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीँ, सो छबि जाइ न बरनी ।
ब्रज-जुवती सब देखि थकित भइँ, सुंदरता की सरनी ।
चिरजीवहु जसुदा कौ[4] नंदन, सूरदास कौँ तरनी ॥ १२३ ॥ ७४१ ॥

* राग बिलावल

चलत स्यामघन राजत, बाजति पैँजनि पग-पग चारु मनोहर ।
डगमगात डोलत आँगन मैँ, निरखि बिनोद[5] मगन सुर-मुनि-नर ।
उदित[6] मुदित अति जननि जसोदा, पाछैँ फिरति गहे अँगुरी कर ।
मनौ धेनु तृन छाँड़ि बच्छ-हित, प्रेम द्रवित चित[7] स्रवत पयोधर ।

---

(१) बलि---३ । कहि---१६ । जात मन मैँ कछु आवत---२, ३, १४, १७, १६ ।

* (ना) कल्यान । (के, पू) गावल ।

(३) यह अति है---१, ११, १२ । यह अति मन है---२ । यह है अति---३ । यह गति है---६ । है यह अति---१६ । (४) नँद---६ ।

* (ना) कामोद । (कां) केदार । (रा) कान्हरा ।

(५) निरखि मोहे मुनि सुर नर---६ । (६) अरु मन मुदित जसोदा जननी---१, ३, ११, १४ । (७) जो द्रवत---२, ३ । चित परत---६, १७ । चित द्रवत--१४ । अति---१६ ।

त लोल कपोल विराजत, लटकति ललित लटुरिया भ्रू पर ।
याम-सुंदर अवलोकत[1] विहरत बाल-गोपाल नंद-घर ॥१२४॥७४२॥

राग गौरी

भीतर तैं बाहर लौं[2] आवत ।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत ।
गिरि-गिरि परत, जात नहिं उलँघी, अति स्रम होत नघावत[3] ।
अहुँठ[4] पैग[5] बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत ।
मनहीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत ।
सूरदास-प्रभु-अगनित-महिमा, भगतनि कैं मन भावत ॥१२५॥७४३॥

* राग धनाश्री

चलत देखि जसुमति सुख पावै ।
ठुमुकि-ठुमुकि पग[6] धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै ।
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि-फिरि इतहीं कौं आवै ।
गिरि-गिरि परत, बनत नहिं नाँघत सुर-मुनि सोच करावै ।
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै ।
ताकौं लिए नंद की रानी, नाना खेल[7] खिलावै ।
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौ, क्रम-क्रम करि उतरावै ।
सूरदास प्रभु देखि[8]-देखि, सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै ॥१२६॥७४४॥

अवलोकनि—६, १४,
(२) कौं—२, ४, १७ । पुनि-
(३) नकावत—३, ४, १४,
धावत—६ । लखावत-
(४) हूँठ—२, ३, १४ । (५)
पैर—१, ११, १५ । परग—२ ।
पैंड़—१६ ।
* (ना) अल्हैया बिलावल ।
(६) धानीधर—१, २, ११,
१५ । धर धरनी—३ । धरि
धरनी—६ । (७) रूप—१, ३,
४, ११, १५, १७ । (८) देर
सुर मुनि मन बुधि बात न आवै-
१६ ।

* राग भैर

सो बल कहा[1] भयौ भगवान ?

जिहिँ बल मीन-रूप जल थाह्यौ, लियौ निगम, हति असुर-परान ।
जिहिँ बल कमठ-पीठि पर[2] गिरि धरि, सजल सिंधु मथि कियौ बिमान ।
जिहिँ बल रूप बराह दसन पर, राखी[3] पुहुमी पुहुप समान ।
जिहिँ बल हिरनकसिप-उर फारयौ, भए भगत कौं कृपानिधान ।
जिहिँ बल बलि बंधन करि पठयौ, बसुधा त्रैपद करी प्रमान ।
जिहिँ बल बिप्र तिलक दै थाप्यौ, रच्छा करी आप बिदमान ।
जिहिँ बल रावन के सिर काटे, कियौ बिभीषन नृपति निदान ।
जिहिँ बल जामवंत-मद[4] मेट्यौ, जिहिँ बल भू[5]-बिनती सुनी कान ।
सूरदास अब धाम-देहरी चढ़ि न सकत प्रभु खरे अजान ! ॥१२७॥७४

राग आसाव

† देखौ अद्भुत अबिगत की गति, कैसौ रूप धरयौ है (हो) !
तीनि[6] लोक जाकैं उदर-भवन, सो सूप कैं कोन परयौ है (हो) !
जाकैं[7] नाल भए ब्रह्मादिक, सकल जोग ब्रत साध्यौ (हो) !
ताकौ नाल छीनि ब्रज-जुवती, बाँटि तगा सौं बाँध्यौ (हो) !
जिहिँ[8] मुख कौं समाधि सिव साधी आराधन ठहराने (हो) !
सो मुख चूमति महरि जसोदा, दूध-लार लपटाने (हो) !
जिन स्रवननि[9] जन की बिपदा सुनि, गरुड़ासन तजि धावे (हो) !

---

* (ना, रा) धनाश्री। (कां, ।) बिलावल ।
(१) कहां गयौ---१, ११, १२। । गिरि राख्यौ सिंधुहिँ मथि ौ परमान---१८, १९ । (३) धरा करि---३, ८, १४, १७ । । प्रन राख्या---२, ६, १८, १९ । मद मरद्यौ---१४, १७ । (५) भूप बिपति---३, १४, १७ ।
† यह पद (ना, वृ, श्या) में नहीं है ।
(६) जल थल पंच चतुर त्रै उदर सु सूप के कोन परयौ है---३, १४, १७ । (७) जिनके खोज बिरंचि बिकल नहिँ अंत कहूँ साध्यौ हो---८, ९, १४ । (८) मुख को ब्रह्मादिक लोचन समाधि लगाए हो---१४ । कानन गज संकट सुनि कै गरुड़ बिसरावै---१ ।

तिन स्रवननि[1] ह्वै निकट जसोदा, हलरावै अरु गावै (हो) !
बिस्व-भरन-पोषन, सब समरथ, माखन-काज अरे हैं (हो) !
रूप बिराट कोटि प्रति रोमनि, पलना माँझ परे हैं (हो) !
जिहिं भुज बल प्रहलाद उबार्‌यौ, हिरनकसिप उर फारे (हो) !
सो भुज पकरि कहति ब्रजनारी, ठाढ़े होहु लला रे (हो) !
जाकौ ध्यान न पायौ सुर-मुनि, संभु[2] समाधि न टारी (हो) !
सोई[3] सूर प्रगट या ब्रज मैं, गोकुल-गोप-बिहारी (हो) ! ॥१२८॥७४६

राग अहीरी

† साँवरे बलि-बलि बाल-गोबिंद । अति सुख पूरन परमानंद ।
तीनि पैंड़ जाके धरनि न आवै । ताहि जसोदा चलन सिखावै ।
जाकी चितवनि काल डराई । ताहि महरि कर-लकुटि दिखाई ।
जाकौ नाम कोटि भ्रम टारै । तापर राई - लोन उतारै ।
सेवक सूर कहा कहि गावै । कृपा भई जो भक्तिहिं पावै ॥१२९॥७४७

* राग आसावरी

आनँद-प्रेम उमंगि जसोदा, खरी गुपाल खिलावै ।
‖ कबहुँक हिलकै-किलकै जननी मन-सुख-सिंधु बढ़ावै ।
दै करताल बजावति, गावति, राग अनूप मल्हावै ।
कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिँगावै ।

---

(१) कानन—१। (२) शेष मुख गाए हो—१४। सो है सूरदास कौ—३, ६। अब प्रगट भए प्रभु ब्रज मैं प बलिहारी हो—६। सोई र धरि आए गोकुल गोप कहाए हो—१४।

† यह पद केवल (ना) में है।

* (ना) केदारो।

‖ (ना, श्या) में इस चरण के स्थान पर यह पंक्ति मिलती है—'बसुधा अटल-सुकृत कीन्यौ है मन मैं मोद बढ़ावै।' अन्य प्रतियों में यह चरण सातवें स्थान पर है परंतु इसका प्रसंग यहीं ठीक बैठता है। अतएव इसे यहीं रक्खा गया है।

बदन छोटियै झिँगुली, कटि किंकिनी-ब
। जंत्र - हार, केहरि - नख, पहुँची रतन - ज
तिलक पख स्याम चखौड़ा, जननी लेति ब
: लाल नवनीत लिए कर, सूरज बलि-बलि जाइ ॥१

आँगन स्याम नचावहीँ, जसुमति नँदरानी ।
तारी दै-दै गावहीँ, मधुरी[1] मृदु बानी ।
पाइनि नूपुर बाजई, कटि किंकिनि कूजै ।
नान्हीँ एड़ियनि अरुनता, फल-बिंब न पूजै ।
जसुमति गान सुनै स्रवन, तब आपुन गावै ।
तारी बजावत देखई, पुनि आपु बजावै ।
केहरि-नख उर पर रुरै, सुठि सोभाकारी ।
मनौ स्याम घन मध्य मैँ, नव ससि-उजियारी ।
गभुआरे सिर केस हैँ, बर घूँघरवारे ।
लटकन लटकत भाल पर, बिधु मधि गन तारे ।
कठुला कंठ चिबुक-तरैँ, मुख दसन[2] बिराजैँ ।
खंजन बिच सुक आनि कै, मनु पर्यौ दुराजैँ ।
जसुमति सुतहिँ नचावई, छबि देखति जिय तैँ ।
सूरदास प्रभु स्याम कौ, मुख[3] टरत न हिय तैँ ॥

) ललित । (का)
। । (कौं) धनाश्री ।
ाळ ।

(१) मधुरे सुर—२, ३, १७, १४ १७, १८, १६ । (२) हँसनि—१, ११ । (३) सुख—१, २, ६, ६, ११,

राग आ

†मैं देख्यौ जसुदा कौ नंदन, खेलत आँगन वारौ री।
ततछन प्रान पलटि गयौ मेरौ, तन-मन ह्वै गयौ कारौ री।
देखत आनि सँच्यौ उर अंतर, दै पलकनि कौ तारौ री।
मोहिँ भ्रम भयौ सखी, उर अपनैं, चहुँ[1] दिसि भयौ उज्यारौ री।
जौ गुंजा सम तुलत सुमेरहिँ, ताहू तैं अति भारौ री।
जैसैं बूँद परत बारिधि मैं, त्यौं गुन ज्ञान हमारौ री।
हौं उन माहँ कि वै मोहिँ महियाँ, परत न देह सँभारौ री।
तरु मैं बीज कि बीज माहँ तरु, दुहुँ मैं एक न न्यारौ री।
जल[2]-थल-नभ-कानन-घर-भीतर, जहँ लौं दृष्टि पसारौ री।
तितही तित मेरे नैननि आगैं निरतत नंद-दुलारौ री।
तजी[3] लाज कुलकानि लोक की, पति गुरुजन प्यौसारौ री।
जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ, तिनमैं मूँड़ उघारौ री।
टोना-टामनि जंत्र मंत्र करि, ध्यायौ[4] देव-दुआरौ री।
सासु-ननद घर-घर लिए डोलतिं, याकौ रोग बिचारौ री।
कहौं[5] कहा कछु कहत न आवै, औ रस लागत खारौ री।
इनहिँ[6] स्वाद जो लुब्ध सूर सोइ जानत चाखनहारौ री॥१३५॥

*राग बि

‡जब तैं आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री।
तब तैं गृह सौं नातौ टूट्यौ, जैसैं काँचौ सूत री।

---

†यह पद केवल (ना, गो) ... दुहुँ—११। ② भवन ...२। ③ लोकलाज कुल- ...च डरु पति पुरजन—२। ④ धावैं—२। ⑤ सोभा सिंधु अगाध अंब निधि पर मति नहीं करारौ री—२। ⑥ स्वाद लुब्ध हरि सूर भिखारी जानै चाखनहारौ री—२।

*(जै) बिला... केदारा।

‡यह पद (ना... रया) में नहीं है।

अति बिसाल बारिज-दल-लोचन, राजति काजर-रेख री।
इच्छा[1] सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री।
स्रवन सुनन[2] उतकंठ रहत हैं, जब बोलत तुतरात री।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री।
दमकतिँ दोउ दूध की दतियाँ, जगमग जगमग होति री।
मानौ[3] सुंदरता-मंदिर मैं रूप-रतन की ज्योति री।
सूरदास देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री।
मानौ कुमुद कामना-पूरन, पूरन इंदुहिं पाइ री ॥१२६॥

राग

अद्भुत इक[4] चितयौ हौं सजनी, नंद महर कैं आँगन री
सो मैं निरखि अपुनपौ खोयौ, गई मथानी माँगन री
बाल-दसा मुख-कमल बिलोकत, कछु जननी सौं बोलै री
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमकि दुरे दल ओलै री
सुंदर भाल-तिलक गोरोचन, मिलि मसि-बिंदुका लाग्यौ री
मनु[5] मकरंद अँचै रुचि कै, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री
कुंडल[6] लोल कपोलनि झलकत, मनु दरपन मैं झाईं री
रही बिलोकि बिचारि चारु छबि, परमिति कहूँ न पाई री
मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री
मनौ सरासन धरे कर स्मर, भौंह चढ़ै सर बरषै री

राखे हैं मकरंद पान। ② सुनन उतकंठ बोलत है—३। ③ . . . नोहर बिधुमंडल में सीप रतन की—१४, १७। ④ एक चितै धौं—२, ३, १४, १७, १८, १९। ⑤ मानौ ससि पर अलि सुत सोयो पीय पऊप नहि जाग्यौ ⑥ झलकति कुंचित अल ज्यौं—२।

जलधि थकित जनु काग पोत कौ कूल न कबहूँ आयौ री ।
ना जानौं किहिँ अंग मगन मन, चाहि रही नहिँ पायौ री ।
कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छबि,[1] निरखत मति-गति हारी री ।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री ॥१३७॥ ७५५॥

* राग धनाश्री

† जसोदा, तेरौ चिरजीवहु गोपाल ।
बेगि बढ़ै बल सहित बिरध लट, महरि मनोहर बाल ।
उपजि पर्यौ सिसु[2] कर्म-पुन्य-फल, समुद-सीप ज्यौं लाल ।
सब गोकुल कौ प्रान-जीवन-धन, बैरिनि[3] कौ उर-साल ।
सूर कितौ सुख[4] पावत लोचन, निरखत घुटुरुनि[5] चाल ।
झारत[6] रज लागै मेरी[7] अँखियनि रोग-दोष-जंजाल ॥१३८ ॥ ७५६॥

❀ राग आसावरी

‡ आजु गई हौं नंद-भवन मैं, कहा कहौं गृह-चैन री ।
चहूँ ओर चतुरंग लच्छमी, कोटिक दुहियत धैन री ।
घूमि रहीं जित-तित दधि मथनी, सुनत मेघ-धुनि लाजै री ।
बरनौं कहा सदन की सोभा, बैकुंठहुँ तैं राजै री ।
बोलि लई नव बधू जानि जहँ, खेलत कुँवर कन्हाई री ।
मुख देखत मोहिनी सी लागी, रूप न बरन्यौ जाई री ।

जितनी छबि निरखत—

(ना) गौरी । (के)
। (रा) बिलावल ।
ह पद (वृ, कां, श्या)
है ।
इहि कोष कर्म बस मुदी

सीप ज्यौं लाल—१ । ③ असु-
रन—१८ । ④ मन सुख पावत
है देखे स्याम तमाल—१, ११ ।
सुचि पावत हौं देखत स्याम
तमाल—२ । ⑤ स्याम तमाल—
६, १२, १८ । ⑥ रुजि आरति
लागो—१, ११ । आरत रज

लागौ इनि आँखिनि—२ । ⑦
मेरे उर—३ ।

* (का) बिलावल । (कां,
रा, श्या) सारंग ।

‡ यह पद (ल, के, पू) में
नहीं है ।

लटकन लटकि रहे भ्रू-ऊपर, रँग-रँग मनि-गन पोहे री।
मानहुँ गुरु-सनि-सुक्र एक ह्वै, लाल भाल पर सोहे री।
गोरोचन कौ तिलक, निकटहीं काजर-बिंदुका लाग्यौ री।
मनौ कमल कौ पी पराग, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री।
बिधु-आनन पर दीरघ लोचन, नासा लटकत मोती री।
मानौ सोम संग करि लीने, जानि आपने गोती री।
सीपज-माल स्याम-उर सोहै, बिच बघ-नहँ छबि पावै री।
मनौ द्वैज ससि नखत सहित है, उपमा कहत न आवै री।
सोभा-सिंधु अंग[1] अंगनि प्रति, बरनत नाहिँन ओर री।
जित[2] देखौं मन भयौ तितहिँ कौ, मनौ भरे कौ[3] चोर री।
बरनौं[4] कहाँ अंग-अँग-सोभा, भरी भाव जल-रास री।
लाल गोपाल बाल-छबि बरनत, कवि-कुल करिहैं हास री।
जौ मेरी अँखियनि रसना होती कहती रूप बनाइ री।
चिरजीवहु जसुदा कौ ढोटा, सूरदास बलि जाइ री ॥१२६॥

† मैं मोही तेरैं लाल री।

निपट निकट ह्वै कै तुम निरखौ, सुंदर नैन बिसाल री
चंचल दृग अंचल-पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम-चाल री
मुक्ता-बिद्रुम-नील-पीत-मनि, लटकत लटकन भाल[1] री

अगाध बोध बुध उपमा— १९। (२) रूप देखि तन [illegible]ी हौं भई भरे कौ चोर ११, १९। (३) घर—६। (४) इतनी कहौं जितनी मति मेरी क्यों रोकौं—३, ६, १८, १९।

† यह पद केवल (स) में है। इस प्रति में रागों का नाम नहीं लिखा।

(१) नास—।

मानौ सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि, ससि कैँ बीच रसाल री।
उपमा बरनि न जाइ सखी री, सुंदर मदन-गोपाल री।
सूर स्याम के ऊपर वारै तन-मन-धन ब्रजबाल री ॥१४०॥७५८॥

राग बिलावल

† कल बल कै हरि आरि[1] परे।
नव रँग बिमल नवीन जलधि[2] पर, मानहुँ द्वै ससि आनि अरे।
जे गिरि कमठ सुरासुर सर्पहिँ धरत न मन मैँ नैँकु डरे।
ते भुज-भूषन-भार परत कर गोपिनि के आधार धरे।
सूर स्याम दधि-भाजन-भीतर निरखत मुख मुख तैँ न टरे।
बिवि[3] चंद्रमा मनौ मथि काढ़े, बिहँसनि मनहुँ प्रकास करे॥१४१॥७५९॥

* राग बिलावल

‡ जब[4] दधि-मथनी टेकि अरै।
आरि करत मटुकी गहि मोहन, वासुकि संभु डरै।
मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत, फिरि जनि मथन करै।
प्रलय होइ जनि गहौ मथानी, प्रभु मरजाद टरै।
सुर अरु असुर ठाढ़े सब चितवत, नैननि नीर ढरै।
सूरदास मन मुग्ध जसोदा, मुख दधि-बिंदु परै ॥१४२॥७६०॥

राग बिलावल

§ जब दधि-रिपु हरि हाथ लियौ।
खगपति-अरि डर, असुरनि[5]-संका, बासर-पति आनंद कियौ।

यह पद (ना, शा, त्रृ, , श्या) मेँ नहीँ है। (1) हार—१, ३, ६, ११, ७। (2) जलद—१, ३, १, १२ १७। (3) चंद्र बदन मानो मथि काढ़्यौ—१, ११ १२। बिंब बदन मानौं मथि काढ़्यौ—६, ६, १४, १७।

* (ना) देवगिरि।

† यह पद (का, के क, पू) मेँ नहीँ है।

(4) मथत—१, ११, १२।

§ यह पद केवल (वे, के गो, जौ, पू) मेँ है।

(5) सुर कै संकत—१२

बिदुखि[1] सिंधु सकुचत, सिव सोचत, गरलादिक किमि जात पियौ ?
अति अनुराग संग[2] कमला-तन, प्रफुलित अँग[3] न समात हियौ ।
एकनि दुख, एकनि सुख उपजत, ऐसौ[4] कौन बिनोद कियौ ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे गहत ही एक-एक तैं होत बियौ ॥१४३॥७६१॥

* राग धनाश्री

जब[5] मोहन कर गही मथानी ।
परसत[6] कर दधि, माट, नेति, चित उदधि, सैल, बासुकि भय मानी ।
कबहुँक तीनि पैग भुव मापत, कबहुँक देहरि उलँघि न जानी ।
॥ कबहुँक सुर-मुनि ध्यान न पावत, कबहुँ खिलावति नंद की रानी ।
कबहुँक अमर[7] -खीर नहिं भावत, कबहुँक दधि-माखन रुचि मानी ।
सूरदास प्रभु[8] की यह लीला, परति न महिमा सेष बखानी ॥१४४॥७६२॥

❀ राग बिलावल

नंद जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ ।
† बार-बार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ ।
नैंकु रहौ माखन देउँ मेरे प्रान-धनियाँ ।
आरि जनि करौ, बलि बलि जाउँ हौं निधनियाँ[9] ।

---

(१) बिधि सिर धुनि—१, ११, १९ । (२) संकि—१७ । (३) अंग न अमित हियो—१, ११, १९ । (४) को ऐसो न बिनोद हियौ—१, ११, १९ । कौन बिनोद गुपाल कियौ—१७ ।

* (का, के, क, जै) बिलावल । (कॉ, रा, श्या) आसावरी ।

(५) तुम जिनि मोहन गहौ—२, १६, १८, १९ । (६) दही बिलोवन देहु नंद सुत मानि बबा की आनी—१६, १९ ।

॥ इस चरण के आगे (वे, का, गो, जै) में ये दो चरण और हैं—

"कबहुँक असर खार नहिं भावत कबहुँ मेखला उदर समानी । कबहुँक आर करत माखन की कबहुँक भेष दिखाइ बिनानी ।"

(७) जग्गि में त्रपिति न मानत—२ । खाँड खीर—६ । (८) बलि बलि बिनोद की रूप रास रचन बहु ठानी—२, १६, १८, १९ ।

❀ (ना) रामकली ।

† यह चरण (के) में नहीं है । इसके स्थान पर उसमें अंतिम पंक्ति यह है—"संग सखा सोभि है नंद के नँदनियाँ ।"

(९) न्यौछनियाँ—२, ३, १४, १७, १८ ।

जाकौं[1] ध्यान धरैं सबै, सुर-नर-मुनि जनियाँ।
ताकौं नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ।
सेष[2] सहस आनन गुन गावत नहिं बनियाँ।
सूर स्याम देखि सबै भूलीं गोप-धनियाँ ॥१४५।

* राग

जसुमति दधि मथन करति, बैठी वर धाम अजिर,
ठाढ़े हरि हँसत नान्हि दँतियनि छबि छाजै।
चितवत चित लै चुराइ, सोभा बरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन-काज मोहिनी दल साजै।
जननि कहति नाचौ तुम, दैहौं नवनीत मोहन
रुनुक-झुनुक चलत पाइ, नूपुर-धुनि बाजै।
गावत गुन सूरदास, बाढ़्यौ जस भुव-अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै ॥१४६

* राग

† (एरी) आनँद सौं दधि मथति जसोदा, घमकि[3] मथनियाँ घूमै।
निरतत लाल[4] ललित मोहन,[5] पग परत अटपटे भू मैं।
चारु चखौड़ा पर[6] कुंचित कच, छबि[7] मुक्ता ताहू मैं।
मनु मकरंद-बिंदु लै मधुकर, सुत-प्यावन-हित झूमै।

सुर नर जाको ध्यान धरैं
.वत) मुनि जनियाँ—१,
। ② सहसानन लखि
बरनत नहिँ बनियाँ—२।

* (ना) चरचरी।
* (क) बिलावल।
† यह पद केवल (स, शा, गो, क) में है।

③ झनक—३
१४। ④ कान्ह—३
लोचन—३,१४। ⑥
—३, १४। ⑦ सम

बोलत स्याम तोतरी बतियाँ, हँसि-हँसि दतियाँ दूमै ।
सूरदास वारी छबि[1] ऊपर, जननि कमल-मुख चूमै ॥१४७॥७६५॥

राग बिलावल

† त्यौं-त्यौं मोहन[2] नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ (री) ।
तैसियै किंकिनि-धुनि पग-नूपुर, सहज[3] मिले सुर दोइ (री) ।
कंचन कौ कठुला मनि-मोतिनि, बिच बघनहँ रह्यौ पोइ (री) ।
देखत बनै, कहत नहिँ आवै, उपमा कौं नहिँ कोइ (री) ।
‖ निरखि-निरखि मुख नंद-सुवन कौ, सुर-नर आनँद होइ (री) ।
सूर भवन कौ तिमिर नसायौ, बलि गइ जननि जसोइ (री) ॥१४८॥७६६॥

राग बिलावल

‡ प्रात समय दधि मथति जसोदा, अति सुख कमल-नयन-गुन गावति ।
अतिहिँ मधुर गति,[4] कंठ सुघर अति, नंद-सुवन-चित[5] हिततहिँ करावति ।
नील बसन तनु, सजल जलद मनु, दामिनि बिवि[6] भुज-दंड चलावति ।
चंद्र बदन लट लटकि छबीली, मनहुँ अमृत रस ब्यालि[7] चुरावति ।
गोरस मथत नाद इक उपजत, किंकिनि-धुनि सुनि स्रवन[8] रमावति ।
सूर स्याम अँचरा धरि ठाढ़े, काम कसौटी कसि दिखरावति ॥१४९॥७६७॥

* राग बिलावल

(माधव) तनक सौ बदन, तनक से चरन-भुज,
तनक से कर पर तनक सौ माखन ।

---

(१) मुख—३ । पल-पल—११ ।

† यह पद (के, पू) में ही है ।

(२) नाचो री मन मोहन धाम धुर सुर होइ—१, ११ । (३) रसहि—१, ३, ६, ११, १२, १६ ।

‖ (ना, स) में इस चरण के स्थान पर यह है—जसुदा गोपी ग्वाल बालहू मगन भए सब लोइ री ।

‡ यह पद (ना, ल, श्री, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

(४) सुर—३ । (५) के चित्त बढ़ावति—१४ । (६) बिच—१४ (७) राहु—१, ३, ११, १२ । (८) सुवन—६, १७ ।

* (कां, रा, श्या) केदारा

तनक सी बात कहै तनक तनकि रहै,

तनक सौ रीझि रहै तनक से साधन।

तनक कपोल, तनक सी दँतुली,

तनक हँसनि पर[1] हरत सबनि मन।

तनकहि तनक जु सूर निकट आवै,

तनक कृपा[2] कै दीजै तनकहि सरन ॥१५०॥९

र

‡ छोटी-छोटी गोड़ियाँ, अँगुरियाँ छबीली छोटी,

नख-ज्योती, मोती मानौ कमल[3]-दलनि पर।

ललित आँगन खेलै, ठुमुकि-ठुमुकि डोलै,

झुनुक-झुनुक बोलै पैजनी मृदु[4] मुखर॥

किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि,

मृदु कर-कमलनि पहुँची रुचिर बर।

पियरी पिछौरी झीनी, और उपमा न भीनी,

बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ बारि-धर॥

उर बघ-नहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार,

बेनी लटकन मसि-बुंदा मुनि-मनहर।

अंजन रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,

मुख-सोभा पर वारौं अमित असम-सर॥

हरि लेत तनक मन—
② मया—१४, १७।
ह पद (ना, शा, वृ,
श्या) में नहीं है।

गोस्वामी तुलसीदासजी की गीता-
वली (पृष्ठ २१२, पद ३०) में
भी यह प्रायः इसी रूप में
मिलता है।

③ कंज—१,
④ पगन पर—३।

चुटुकी बजावति नचावति जसोदा[1] रानी
बाल-केलि गावति मल्हावति सुप्रेम[2] भर ।
किलकि-किलकि हँसैं, द्वै-द्वै दँतुरियाँ लसैं,
सूरदास मन बसैं तोतरे बचन बर ॥ १५१ ॥ ७६९ ॥

* राग बिलावल

† (माधव) तनक चरन अरु तनक-तनक भुज, तनक बदन बोलै तनक सौ बोल ।
तनक कपोल, तनक सी दतियाँ, तनक हँसनि पर लेत हैं मोल ।
तनक करनि पर तनक माखन लिए, देखत तनक जाकैं सकल भुवन ।
तनक सुनैं सुजस पावत परम गति, तनक कहत तासौं नँद के सुवन ।
तनक रीझ पै देत सकल तन, तनक चितै चित बित के हरन ।
तनकहिं तनक तनक करि आवै सूर, तनक कृपा[3] कै दीजै तनक सरन ॥ १५२ ॥
॥ ७७० ॥

* राग कान्हरौ

‡ गोद खिलावति कान्ह सुनी, बड़भागिनि हो नँदरानी ।
आनँद की निधि मुख जु लाल कौ, छबि नहिं जाति बखानी ।
गुन अपार बिस्तार परत नहिं कहि निगमागम-बानी ।
सूरदास प्रभु कौं लिए जसुमति, चितै-चितै मुसुकानी ॥ १५३ ॥ ७७१ ॥

---

(१) नंदघरनि—१, ६, ११ ।

(२) प्रेम सुघर—१, ११ । प्रेम भर—६, १४ ।

* (ना) सुघराई ।

† यह पद (कां) में नहीं ।

(३) तनक—१, २, ४, ६, ११, १४ ।

* (क) बिलावल ।

‡ यह पद (ना, शा, वृ, कां, रा, स्या) में नहीं है । जिन प्रतियों में यह पद है उन सबों में इसका पाठ बड़ा गड़बड़ हो गया है, जिससे अर्थ तथा छंद दोनों बिगड़ गए हैं । (के) में छंद कुछ ठिकाने से है । उसी के आधार पर यह पाठ रक्खा गया है ।

राग गौरी

† मेरे माई, स्याम मनोहर जीवन ।

निरखि नैन भूले जु बदन-छबि, मधुर हँसनि पय-पोवन ।
कुंतल कुटिल, मकर कुंडल, भ्रुव नैन-बिलोकनि बंक ।
सुधा-सिंधु[1] तैं निकसि नयौ ससि, राजत मनु मृग-अंक ।
सोभित सुमन मयूर-चंद्रिका, नील नलिन तनु स्याम ।
मनहुँ नछत्र-समेत इंद्र-धनु, सुभग मेघ अभिराम ।
परम कुसल कोबिद लीला-नट, मुसुकनि मन हरि लेत ।
कृपा-कटाच्छ कमल-कर फेरत, सूर जननि सुख देत ॥१५४॥ ७७२॥

* राग देवगंधार

‡ कहन लागे मोहन मैया-मैया ।

नंद महर सौं बाबा-बाबा, अरु हलधर सौं भैया ।
ऊँचे चढ़ि-चढ़ि कहति जसोदा, लै-लै नाम कन्हैया ।
दूरि खेलन[2] जनि जाहु लला रे, मारैगी काहु की गैया ।
|| गोपी ग्वाल करत कौतूहल, घर-घर बजति बधैया ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, चरननि की[3] बलि जैया[4] ॥१५५॥७७३।

राग बिलावल

§ माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत, जानत आन परेख्यौ ।

ह पद (ना, शा, वृ, या) में नहीं है । मनौ संध्या—६ । सूर । ना) नट । इ पद (ल, का, के, क, पू) में नहीं है ।

② कहूँ—१, २, ११, १२ ।

|| इस चरण के आगे (वे, गो, जै) में दो चरण और हैं—
"मनि खंभनि प्रतिबिंब बिलोकत पुनि नवनीत कुँवर हरि पैया । नंद जसोदा जू के उर तैं यह छवि अनत न जैया ।"

③ पर—११ । ④ गइया—१, २, ११, १२ ।

§ यह पद केवल (शा) में है ।

मन मैं माष करत, कछु बोलत, नंद बबा पै आयौ।
वा घट मैं काहू कैं लरिका, मेरौ माखन खायौ।
महर कंठ लावत, मुख पोंछत, चूमत तिहिं ठाँ आयौ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कौं, तातैं अधिक रिसायौ।
कह्यौ जाइ जसुमति सौं ततछन, मैं जननी सुत तेरौ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ।
जसुमति बाल बिनोद जानि जिय, उहीं ठौर लै आई।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी, घट मैं नहिं छबि पाई।
कुँवर हँस्यौ आनंद-प्रेम-बस, सुख पायौ नँदरानी।
सूरज प्रभु की अद्भुत लीला, जिन जानी तिन जानी ॥१५६॥७७४।

* राग आसावरी

† बेद-कमल-मुख परसति जननी, अंक लिए सुत रति करि स्याम।
परम सुभग जु[1] अरुन कोमल-रुचि, आनंदित मनु पूरन-काम।
आलंबित जु पृष्ठ बल सुंदर, परसपरहिं चितवत हरि-राम।
झाँकि-उझकि बिहँसत दोऊ सुत, प्रेम-मगन भइ इकटक जाम।
देखि सरूप न रही कछू सुधि, तोरे[2] तबहिं कंठ तैं दाम।
सूरदास प्रभु सिसु लीला-रस, आवहु देखि नंद सुख-धाम ॥१५७॥७७५।

* राग गौरी

सोभा मेरे स्यामहिं पै सोहै।
बलि-बलि जाउँ छबीले मुख की, या उपमा कौं को है।

(ना) देवगिरी।
† यह पद केवल (वे, ना,) में है।
(१) जो अरुन कमल—२।
(२) टूटी—११।
* (ना, के) कान्हरा।
(काँ) बिलावल।

या छवि की पटतर दीबे कौं सुकवि कहा टकटोहै ?
देखत अंग-अंग-प्रति बानक, कोटि मदन-मन छोहै[1]।
ससि-गन गारि रच्यौ विधि आनन, बाँके[2] नैननि जोहै।
सूर[3] स्याम सुंदरता निरखत, मुनि-जन कौ मन मोहै ॥१५८॥७७६॥

* राग सारंग

बाल गुपाल खेलौ मेरे तात।
|| बलि-बलि जाउँ मुखारबिंद की, अमिय-बचन बोलौ तुतरात।
दुहुँ[4] कर माट गह्यौ नँदनंदन, छिटकि बूँद-दधि परत अघात।
मानौ गज-मुक्ता मरकत पर, सोभित सुभग साँवरे गात।
जननी पै माँगत जग-जीवन, दै माखन-रोटी उठि प्रात।
लोटत सूर स्याम पुहुमी पर, चारि पदारथ जाकै हाथ ॥१५९॥७७७॥

* राग बिलावल

† पलना झूलौ मेरे लाल पियारे।
सुसकनि की वारी हौं बलि-बलि, हठ[5] न करहु तुम नंद-दुलारे।
काजर हाथ भरौ जनि मोहन, ह्वैहैं नैना अति रतनारे।
सिर कुलही, पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे।

---

(१) मोहै—१, २, ३, १९। (२) क भौंह मिलि जो है—१, ३, १५। बंक नैन जो सोहै—४, १७। (३) सूरदास बलि सुंदरता जो मुनि जन मन—२, ३। सूरदास बलि निरखि सब सुर नर मन जो—६, १४।

* (का, क, जै, कां, पू) बिलावल।

|| इस चरण के उपरांत (बे, का, गो, जै) में ये दो चरण और हैं:—"उनिंदे नैन बिसाल की सोभा कहत न कहि आवै कछु बात। द्वार खरे सब सखा पुकारैं नैन मींड़ि आए परभात।"

(४) छांड़ौ माट मथौं दधि मोहन उचटि बूँद तन परत अघात—३, १६, १७, १८, १९।

* (का) सारंग। (कें) केदारा।

† यह पद (ना, स, बृ, कां, रा, स्या) में नहीं है।

(५) तिल तिल हट न करहु जु दुलारे—१, ६, ११, १५।

खत यह बिनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे।
र-नर-मुनि कौतूहल भूले, देखत सूर सबै[1] जु कहा रे ॥१६०॥७७८॥

राग बिलावल

† क्रीड़त प्रात समय[2] दोउ बीर।
माखन माँगत, बात न मानत, झँखत जसोदा-जननी-तीर।
जननी मधि, सनमुख संकर्षन, खैंचत कान्ह खस्यौ सिर[3]-चीर।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर।
सुंदर[4] स्याम गही कबरी कर, मुक्ता माल गही बलबीर।
|| सूरज भष लैवे अप अपनौ, मानहुँ लेत निबेरे सीर ॥१६१॥७७९

राग बिलावल

‡ कनक-कटोरा प्रातहीं, दधि घृत सु मिठाई।
खेलत खात गिरावहीं, झगरत दोउ भाई।
अरस परस चुटिया गहैं, बरजति है माई।
महा ढीठ मानैं नहीं, कछु लहुर-बड़ाई।
हँसि कै बोली रोहिनी, जसुमति मुसुकाई।
जगन्नाथ धरनीधरहिं, सूरज बलि जाई ॥१६२॥७८०।

* राग बिलावल

§ गोपालराइ[5] दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल[6] रोटी।

। स्याम हैं कारे—१,६,१९। यह पद (वे, स, ल, का, जै।) में है। । युगल यदुबीर—१४। —१, १९। ④ सूरज ३। सभी प्रतियों में यह पद

यहीं समाप्त हो जाता है परंतु (क) में इसके पश्चात् नीचे की दो पंक्तियाँ और हैं—
"सूर सु छबि यह बरनि न आवै उपमा कही परति नहिं धीर। सनक सनंदन नित उठि ध्यावत अरु गावत जाको मुनि कीर।"

‡ यह पद केवल (स, ल शा, धू, का, श्या) में है।
* (ना) विभास।
§ यह पद (के, पू) में नहीं।
⑤ कान्ह माइ माँगत है दधि रोटी—१४। ⑥ सुमंगल १, ३, ११, १९। समंगल—२

कत हौ आरि करत मेरे मोहन तुम आँगन मैं लोटी ?
जो चाहौ[1] सो लेहु तुरतहीं, छाँड़ौ यह मति खोटी।
करि[2] मनुहारि कलेऊ दीन्हौ, मुख चुपर्‌यौ अरु चोटी।
सूरदास[3] कौ ठाकुर ठाढ़ौ, हाथ लकुटिया छोटी ॥१६३॥७८१॥

राग बिलावल

† हरि कर राजत माखन-रोटी।
मनु बारिज ससि बैर जानि जिय, गह्यौ सुधा ससुधौटी।
मेली सजि मुख-अंबुज-भीतर, उपजी उपमा मोटी।
मनु बराह भूधर-सह-पुहुमी धरी दसन की कोटी।
नगन गात मुसुकात तात-ढिग, नृत्य करत गहि चोटी।
सूरज प्रभु की लहैं[4] जु जूठनि, लारनि ललित लपोटी[5] ॥१६४॥७८२

राग बिलावल

‡ दोउ भैया मैया पै माँगत, दै री मैया, माखन रोटी।
सुनत भावती बात सुतनि की, झूठहिं धाम के काम अगोटी।
बल जू गह्यौ नासिका-मोती, कान्ह कुँवर गही दृढ़ करि चोटी।
मानौ हंस मोर भष लीन्हे, कबि उपमा बरनै कछु[6] छोटी।
यह छबि देखि[7] नंद-मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी।
सूरदास मन[8] मुदित जसोदा, भाग बड़े, कर्मनि की मोटी ॥१६५॥७८३॥

---

(१) माँगहु सो देहुँ मनोहर ...त तेरी खोटी—१, २, ३, १६। (२) प्रातकाल उठि ...लेऊ बदन चुपरि अरु चोटी ..., १५। (३) सूरदास ठाकुर कौं भावत—२, ३, १६।

† यह पद केवल (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है।

(४) इहै—१, ६, १५। (५) पलोटी—६।

‡ यह पद (का, जौ) में नहीं है।

(६) अति—२। (७) निरखि नंद आनंदे प्रेम मगन भए लोटप पोटी—१४। (८) जसुमति सुख बिलसति—१४।

* राग आसावरी

† तनक दै री माइ, माखन तनक दै री माइ।
तनक कर पर तनक रोटी, माँगत चरन चलाइ।
कनक-भू पर रतन रेखा, नेति पकर्‌यौ धाइ।
कँप्यौ गिरि अरु सेष संक्यौ, उदधि चल्यौ अकुलाइ।
तनक मुख की तनक बतियाँ, बोलत हैं तुतराइ।
जसोमति के प्रान-जीवन, उर लियौ लपटाइ।
मेरे मन कौ तनक मोहन, लागु मोहिं बलाइ।
स्याम सुंदर नँद कुँवर पर, सूर बलि-बलि जाइ ॥१६६॥७८४॥

❀ राग बिलावल

‡ नैंकु रहौ, माखन द्यौं तुमकौं।
ठाढ़ी मथति जननि[1] दधि आतुर, लौनी नंद-सुवन कौं।
मैं बलि जाउँ स्याम-घन सुंदर, भूख लगी तुम्हैं[2] भारी।
बात कहूँ की बूझति स्यामहिं, फेर करत महतारी।
कहत बात[3] हरि कछू न समुझत, झूठहिं भरत[4] हुँकारी।
सूरदास प्रभु कैं गुन तुरतहिं, बिसरि गई नँद-नारी ॥१६७॥७८५

× राग बिलावल

§ बातनि ही सुत लाइ लियौ।
[त]ब लौं मथि दधि जननि जसोदा, माखन करि हरि-हाथ दियौ।

---

[*] (क) रामकली।
[‡ य]ह पद केवल (वे, शा,
[...]ती) में है।
[‡ (]ना) धनाश्री।

† यह पद (शा, का) में नहीं है।
(1) जसोदा—२, ३, १६।
(2) कछु—२, ३, १६, १८,
१६। (3) माय—३। (4) देत
१, २, ११।
× (ना) धनाश्री।
§ यह पद (का) में नहीं है

ते अधर-परस करि जेँवत, देखत फूल्यौ मात[1]-हियौ ।
पुहिँ खात प्रसंसत आपुहिँ, माखन-रोटी बहुत प्रियौ ।
प्रभु सिव-सनकादिक-दुर्लभ, सुत-हित जसुमति[2] नंद कियौ ।
सुख निरखत सूरज प्रभु कौ, धन्य-धन्य पल[3] सुफल जियौ ॥१६८॥७८६

-वर्णन * राग बिलावल

† बरनौं बाल-बेष मुरारि ।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंद-लाल निहारि ।
केस सिर बिन बपन के, चहुँ दिसा छिटके झारि ।
सीस पर धरि[4] जटा, मनु सिसु-रूप कियौ त्रिपुरारि ।
तिलक ललित ललाट केसरि-बिंदु सोभाकारि ।
रोष-अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जारि ।
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि ।
गरल ग्रीव, कपाल उर, इहिँ भाइ भए मदनारि ।
कुटिल हरि-नख हिऐँ हरि[5] के हरषि निरखति नारि ।
ईस जनु रजनीस राख्यौ भाल तैँ जु उतारि ।
सदन[6]-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिँ अनुहारि ।
मनहुँ अंग-बिभूति-राजित संभु सो मधुहारि ।
त्रिदस-पति-पति[7] असन कौँ, अति जननि सौँ करै आरि ।
सूरदास बिरंचि जाकौं जपत निज[8] मुख चारि ॥१६९॥७८७॥

त—१, ११, १२ ।
नंद त्रियो—१, ६,
(3) बलि—२, ३ ।
सोरठ । (का, क)
(रा) केदारा ।

† यह पद (वृ, कां, श्या) में नहीं है ।
(4) बर—३, १४ । (5)
सोभित सुभग इहै अनुहारि—१, १७ । (6) लसित चंदन स्याम के
अँग देखि हरषित नारि—६, १७
(7) तब जसुमती सौं असन दे करै रारि—२ । (8) है—२, ६
जस—३, १४ ।

* राग [illegible]

सखि री, नंद-नंदन देखु ।
धूरि-धूसर जटा जुटली, हरि किए हर-भेषु ।
नील पाट[1] पिरोइ मनि-गन, फनिग धोखैं जाइ ।
खुनखुना कर, हँसत[2] हरि, हर नचत डमरु बजाइ ।
जलज-माल गुपाल पहिरे, कहा कहौं बनाइ ।
मुंड-माला मनौ हर-गर, ऐसी सोभा पाइ ।
स्वाति-सुत-माला बिराजत स्याम तन इहिं भाइ ।
मनौ गंगा गौरि-डर हर लई कंठ लगाइ ।
केहरी-नख निरखि हिरदै, रहीं नारि बिचारि ।
बाल-ससि मनु भाल तैं लै, उर धर्‍यौ त्रिपुरारि ।
देखि अंग अनंग झझक्यौ[3], नंद-सुत हर[4] जान ।
सूर[5] के हिरदै बसौ नित, स्याम-सिव कौ ध्यान ॥१७०॥

र

† हरि-हर संकर, नमो नमो ।
अहिसायी, अहि-अंग-बिभूषन; अमित-दान, बल-बिष-हारी
नीलकंठ, बर नील कलेवर; प्रेम-परस्पर, कृतहारी
चंद्रचूड़, सिखि-चंद्र-सरोरुह; जमुना-प्रिय, गंगा-धारी
सुरभि-रेनु-तन, भस्म बिभूषित; बृष-बाहन, बन-बृष-चारी

ना) सोरठ । (का, क)
१ । (के, कां, रा, स्या)

कठुला पोइ मनि गन फनिग ज्यौं लपटाइ—३, १४ । ② लिए मोहन—२, १६ । ③ डरप्यौ—१, ६, ११, १५ । लजित—२, १६ । ④ को—१, ६, ११, १५ । ⑤ हृदय बसि रह्यौ—१

† यह पद केवल [illegible] कां, स्या) में है ।

अज-अनीह-अबिरुद्ध-एकरस, यहै अधिक ये अवतारी ।
सूरदास सम, रूप-नाम-गुन अंतर अनुचर-अनुसारी ॥१७१॥७८६॥

* राग बिलावल

† देखौ[1] माई दधि-सुत मैं दधि जात ।
एक अचंभौ देखि सखी री, रिपु मैं रिपु जु समात ।
दधि पर कीर, कीर पर पंकज, पंकज के द्वै पात ।
यह सोभा देखत पसु-पालक, फूले अँग न समात ।
बारंबार बिलोकि सोचि चित, नंद महर मुसुक्यात ।
यहै[2] ध्यान मन आनि स्याम कौ, सूरदास बलि जात ॥१७२॥७६०

* राग धनाश्री

‡ दधि-सुत जामे नंद-दुवार ।
निरखि नैन अरुझ्यौ मनमोहन, रटत देहु कर बारंबार ।
दीरघ मोल कह्यौ ब्यौपारी, रहे ठगे सब कौतुक हार ।
कर ऊपर लै राखि रहे हरि, देत[2] न मुक्ता परम सुढार ।
गोकुलनाथ बए जसुमति के आँगन भीतर, भवन मँझार ।
साखा-पत्र भए जल मेलत, फूलत-फरत न लागी बार ।
जानत नहीं मरम सुर-नर-मुनि, ब्रह्मादिक नहिं परत बिचार ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, ब्रज-बनिता पहिरे गुहि हार ॥१७३॥७६१॥

ना) सोरठ । (के, पू)

ह पद (स) में नहीं

(१) देखौ मैं—१, ३, ११, १२ । देखौ—२ ।

* (गो, कां) बिलावल । (रा) नट ।

‡ यह पद (ना, शा, ... श्या) में नहीं है ।

(२) देखत—३ ।

* राग धनाश्री

† कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि[1] बढ़ै ।
जैसैं देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै ।
यह सुनि कै हरि पीवन लागे, ज्यौं त्यौं लयौ लढ़ै ।
अँचवत पय तातौ जब लाग्यौ, रोवत जीभि डढ़ै ।
पुनि पीवत हीं कच टकटोरत, झूठहिं जननि रढ़ै ।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै ॥१७४॥७६२॥

❀ राग रामकली

मैया[2], कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती[3] बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी !
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं, ह्वैहै लाँबी-मोटी ।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै[4] नागिनि सी भुइँ लोटी ।
काँचौ[5] दूध पियावति पचि-पचि,[6] देति न माखन-रोटी ।
सूरज[7] चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी ॥१७५॥७६३॥

× राग सारंग

‡ मैया, मोहिं बड़ौ करि लै री ।
दूध-दही-घृत-माखन-मेवा, जो माँगौं सो दै री ।

(ना) देवगंधार ।
यह पद (वृ, काँ, श्या) में है ।
(१) चोटी—१, ११, १२ ।
(ना) देवगंधार । (का) । (काँ) बिलावल ।
(२) जसोदा—१, ६, ११, १२ । (३) कितौ बेर—३, १४ । किते दिवस मोहिं दूध पियत भए—१६, १८, १९ । (४) औछत—१, ६, ११, १२ । (५) धूति-धूति मुहि दूध पिवायौ—१९ । (६) है मोहि—२ । (७) सूर बाल रस त्रिभुवन मोहे—२, ३, १९ । सूरदास त्रिभुवन मन मोहन—१, १७ ।
× (ना, क) बिलावल ।
‡ यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है ।

कछू हौंस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहिँ रुचै री ।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं, सदा रहौं निरभै री ।
रंगभूमि मैं कंस पछारौं, घोसि[1] बहाऊँ बैरी ।
सूरदास स्वामी की लीला, मथुरा राखौं जै री ॥१७६॥७६४॥

* राग रामकली

हरि अपनैं आँगन[2] कछु गावत ।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं[3] मनहिं रिझावत ।
बाहँ उठाइ[4] काजरी-धौरी गैयनि टेरि बुलावत ।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत ।
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक-बदन मैं नावत ।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए[5] खवावत ।
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत ।
सूर स्याम के बाल-चरित, नित नितही देखत भावत ॥१७७॥७६५॥

* राग बिलावल

आजु सखी, हौं प्रात समय दधि मथन उठी अकुलाइ ।
भरि भाजन मनि-खंभ निकट धरि, नेति लई कर जाइ ।
सुनत सब्द तिहिं छिन समीप मम हरि हँसि आए धाइ ।
मोह्यौ बाल-बिनोद-मोद अति, नैननि नृत्य दिखाइ ।
चितवनि चलनि हर्यौ चित चंचल, चितै रही चित लाइ ।

कहौं कहाँ लौं मैं री—कहति कहा तू मेरी——१६ ।
...ना) कल्यान ।

(२) आगे—१, ३, ११, १२ । अंगनि—२ । (३) मन हरि लेत—१० । (४) उचाइ—१, ११ । (५) लै दिखरावत—१४ ।

* (के, पू) केदारा । (... ललित । (कां, रा) आसावरी

पुलकत[1] मन प्रतिबिंब देखि कै, सबही अंग सुहाइ।
माखन पिंड बिभागि दुहूँ कर, मेलत[2] मुख मुसुकाइ।
सूरदास-प्रभु-सिसुता[3] कौ सुख, सकै न हृदय समाइ ॥१७८॥७६६॥

* राग बिलावल

बलि-बलि जाउँ मधुर सुर गावहु[4]।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया, नंदहिं नाचि दिखावहु।
तारी[5] देहु आपने कर की, परम प्रीति उपजावहु।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु।
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु।
बाहँ उचाइ कालिह की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु।
नाचहु नैंकु, जाउँ बलि तेरी, मेरी साध पुरावहु।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु।
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु।
सूर[6] स्याम मेरे उर तैं कहुँ टारे नैंकु न भावहु ॥१७९॥७६७॥

छेदन

* राग धनाश्री

† कान्ह कुँवर कौ कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की।
बिधि बिहँसत, हरि हँसत हेरि हरि, जसुमति की धुकधुकी सु उर की।

---

(१) भूलि सु नन प्रतिबिंब [?]कत रीझी सहज सुभाइ—, १७। (२) आपत—१, ११, । (३) ता सुत के सुख—१, १२, १६, १९। या सुत कौ सखी, हृदय न समाइ—२।
* (ना) कान्हरा।

(४) गाउ—२, १६, १८। (५) हेरी देउ पिता के आगै प्रेम—१९। (६) परमानंद सूर के उर तैं यह छबि अंत न जाउ—२, १६, १८, १९। परम दयाल सूर के उर ते हरि टारे नहिं भावहु—१४।
* (ना) टोड़ी।

† यह पद (वे, ना, गो, औ, कां, रा, स्या) में 'घुटुरुवनि-चलन' लीला के पूर्व में पाया जाता है परंतु (स, का, के, क, पू) में यह इसी स्थान पर मिलता है। यहीं यह संगत भी जान पड़ता है।

रोचन भरि लै देत सींक सौं, स्रवन-निकट अतिही चातुर की ।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए, कहौं कहा छेदनि आतुर की ।
लोचन भरि-भरि दोऊ माता, कनछेदन देखत जिय मुरकी ।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कौं घुरकी[1] ।
हँसत नंद, गोपी सब बिहँसीं, झमकि चलीं सब[2] भीतर दुरकी[3] ।
सूरदास नँद करत बधाई, अति आनंद बाल ब्रज-पुर की ॥१८०॥७९८॥

* राग धनाश्री

जबहिं भयौ कनछेदन हरि कौ ।
सुर-बनिता सब कहतिं परस्पर, ब्रजबासी-दासी-समसरि को ?
गोपी मगन भईं सब गावति, हलरावति सुत लेति महरि कौ ।
जो सुख मुनि जन ध्यान न पावत, सो सुख करत नंद सब खरिकौ ।
मनि-मुकता-गन करत निछावरि, तुरतहिं देत बिलंब न घरि कौ ।
सूर नंद ब्रज-जन पहिरावत, उमँगि चल्यौ[4] सुखसिंधु लहरि कौ ॥१८१॥७९९

राग धनाश्री

† पाहुनी, करि दै तनक मह्यौ ।
हौं लागी गृह-काज-रसोईं, जसुमति बिनय कह्यौ ।
आरि करत मनमोहन मेरौ, अंचल आनि गह्यौ ।
व्याकुल मथति मथनियाँ रीती, दधि भुव ढरकि रह्यौ ।
माखन जात जानि नँदरानी, सखी सम्हारि कह्यौ ।
सूर स्याम-मुख निरखि मगन भई, दुहुनि सँकोच सह्यौ ॥१८२॥८००॥

---

(१) मुरकी—३, ११ । ढुरकी—१७ । (२) छबि—२, ३, ६, ११ । (३) ढुरकी—१, २, १९ ।

* (कां) सारंग ।

(४) बढ़यौ—३, ६ ।

† यह पद (ना, शा, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

राग

† कान्हर[1], बलि आरि न कीजै। जोइ[2]-जोइ भावै सोइ लीजै।
यह कहति जसोदा रानी। को खिझवै सारँगपानी।
जो मेरैं लाल खिझावै। सो अपनौ कीनौ पावै।
तिहिं देहौं देस-निकारौ। ताकौ ब्रज नाहिंन गारौ।
अति रिसही तैं तनु छीजै। सुठि कोमल अंग पसीजै।
बरजत-बरजत बिरुझाने। करि क्रोध मनहिं अकुलाने।
कर[3] धरत धरनि पर लोटैं। माता कौ चीर निखोटैं[4]।
अँग-आभूषन सब तोरैं। लवनी-दधि-भाजन फोरैं।
देखत सुतत जल तरसैं। जसुदा के पाइनि परसैं।
तब महरि बाहँ गहि आने। लै तेल उबटनौ साने।
तब गिरत-परत उठि भागे। कहुँ नैंकु निकट नहिं लागे।
तब नंद-घरनि चुचकारै। आवहु बलि जाउँ तुम्हारै।
नहिं आवहु तौ भलैं लाला। समुझौगे मदन गोपाला।
तुम मेरी रिस नहिं जानौ। मोकौं नहिं तुम पहिचानौ।
मैं आजु तुम्हैं गहि बाँधौं। हा-हा करि-करि अनुराधौं।
बाबा नँद उत तैं आए। कौनैं हरि अतिहिं खिझाए ?
मुख चूमि हरषि लै आए। लै जसुमति पै पहुँचाए।
मोहन कत खिझत अयानौ। लिए लाइ हिऐं नँदरानौ।

---

† यह पद (ना, वृ, कां,) में नहीं है। ① कान्ह बलि जाउँ ऐसी कीजै—१, ११। कान्ह बलि गई आरि न कीजै हो—३, ६, १४। ② जोइ जोइ भावै सोइ सोइ लीजै—१, ११। जोई जोई भावै सोई सोई लीजै हो—३, ६, १४। ③ धरत लोटे—१, ११। धरत लोटै—३, ६, १४। ④ ३। झकौटै—६।

क्यौं हूँ जतन-जतन करि पाए। तन उबटन तेल लगाए।
तातौ जल आनि समोयौ। अन्हवाइ दियौ, मुख[1] धोयौ।
अति सरस बसन तन पोंछे। लै कर मुख-कमल अँगोछे।
अंजन दोउ दृग भरि दीन्हौ। भ्रुव चारु चखौड़ा कीन्हौ।
आभूषन अँग जे बनाए। लालहिँ क्रम-क्रम पहिराए।
ऐसी रिस करौ न कान्हा। अब खाहु कुँवर कछु नान्हा।
तुतरात कह्यौ का है री। जो मोहिँ भावै सो दै री।
जोइ-जोइ भावै मेरे प्यारे। सोइ-सोइ तोहिँ देहुँ लला रे।
है कर्‌यौ सिरावन सीरा। कछु हठ न करहु बलबीरा।
सद दधि-माखन ल्यौं आनी। ता पर मधु मिसिरी सानी।
खोवा-मय मधुर मिठाई। सो देखत अति रुचि पाई।
कछु बलदाऊ कौं दीजै। अरु दूध अधावट पीजै।
सब हेरि धरी है साढ़ी। लई ऊपर-ऊपर काढ़ी।
अति प्योसर सरस बनाई। तिहिँ सोंठ-मिरिच रुचि नाई।
दधि दूध बरा दहिरौरी। सो खात अमृत पककौरी[2]।
सुठि सरस जलेबी बोरी। जिहिँ जेँवत रुचि नहिँ थोरी।
अरु खुरमा सरस सँवारे। ते परसि धरे हैँ न्यारे
सक्करपारे सद - पागे। ते जेँवत परम सभागे
सेव लाडू रुचिर सँवारे। जे मुख मेलत सुकुमारे

) अँगा—३, ६, १७। (२)
ी हैं—१, ६, ६, ११,
, १७।

सुठि मोती लाडू मीठे । वै खात न कबहुँ उबीठे
खिर-लाडु लवंगनि नाए । ते करि बहु जतन बनाए
सूफा बहु पूरन पूरे । भरि-भरि कपूर रस चूरे
अरु तैसियै गाल मसूरी । जो खातहिँ सुख-दुख दूरी
अरु हेसमि सरस सँवारी । अति स्वाद परम सुखकारी
बाबर बरने नहिँ जाई । जिहिँ देखत अति सुख पाई
मृदु मालपुआ मधु साने । जे तुरत तपत करि आने
सुंदर अति सरस अँदरसे । ते घृत-दधि-मधु मिलि सरसे
घेवर अति घिरत-चभोरे । लै खाँड़ सरस रस बोरे
मधुरी अति सरस खजूरी[1] । सब परसि धरी घृत-पूरी
जब पूरी सुनि हरि हरष्यौ । तब भोजन पर मन करष्यौ
सुनि तुरत जसोदा ल्याई । अति रुचि समेत हरि खाई
बलदाऊ टेरि बुलाए । यह सुनि हलधर तहँ आए
षटरस परकार मँगाए । जे बरनि जसोदा गाए
मनमोहन हलधर बीरा । जेँवत रुचि राख्यौ सीरा
सीतल जल लियौ मँगाई । भरि झारी जसुमति ल्याई
अँचवत तब नैन जुड़ाने । दोउ हरषि-हरषि मुसुकाने
हँसि जननी चुरू भराए । तब कछु-कछु मुख पखराए
तब बीरी तनक मुख नायौ । अति लाल अधर ह्वै आयौ
छबि सूरदास बलिहारी । माँगत कछु जूठनि थारी
हरि तनक-तनक कछु खायौ । जूठनि सब भक्तनि पायौ ।

---

[1] खजूरी—१, ६, ११ ।

* राग नट

† बिहरत बिबिध बालक-संग ।

डगनि[1] डगमग पगनि डोलत, धूरि-धूसर अंग ।

चलत मग, पग बजति पैजनि, परसपर किलकात ।

मनौ मधुर मराल-छौना बोलि बैन सिहात ।

|| तनक कटि पर कनक-करधनि, छीन[2] छबि चमकाति[3] ।

|| मनौ कनक कसौटिया पर, लीक सी लपटाति ।

दुर दमंकत सुभग स्रवननि, जलज जुग डहडहत ।

मनहुँ बासव बलि पठाए, जीव-कवि कछु कहत ।

ललित लट छिटकाति मुख पर, देति सोभा दून ।

मनु मयंकहिँ अंक लीन्हौ सिंहिका कैँ सून ।

कबहुँ द्वारैँ दौरि आवत, कबहुँ नंद-निकेत ।

सूर प्रभु कर गहति ग्वालिनि, चारु-चुंबन-हेत[4] ॥१८४॥

राग

‡ मोहन, आउ तुम्हैँ अन्हवाऊँ ।

जमुना तैँ जल भरि लै आऊँ, ततिहर तुरत चढ़ाऊँ ।

केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ ।

सूर कहै कर नैँकु जसोदा, कैसैँहु पकरि न पाऊँ ॥१८५॥

❀ राग

सुमति जबहिँ कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत रो

) सारंग । (जै)
स्या) कान्हरौ । (रा)

पद (के, पू) मेँ

(१) डगर—१, ६, ११, १२ ।
|| ये दो चरण (चे, का, गो जै) मेँ नहीँ हैँ ।
(२) अंग सुभग सोहात—३ ।
(३) छपि जात—१६, १८, १९ ।

(४) लेत—१६ ।
‡ यह पद केवल है ।
* (ना) ललि बिलावल ।

तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत-पोटत री।
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिनु काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै उबटन-तेल-समाजैं री।
महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत नहीं कन्हैया री।
सूर स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अंत न पैया री ॥१८६॥८०४।

राग सूहौ बिलावल

† देखि माई हरि जू की लोटनि।
यह छबि निरखि रही[1] नँदरानी, अँसुवा ढरि-ढरि परत करोटनि।
परसत आनन मनु रवि-कुंडल, अंबुज स्रवत सीप-सुत जोटनि।
चंचल अधर, चरन-कर चंचल, मंचल[2] अंचल गहत बकोटनि।
लेति छुड़ाइ महरि कर सौं कर, दूरि भई देखति दुरि ओटनि।
सूर निरखि मुसुकाइ जसोदा, मधुर-मधुर बोलति मुख होटनि ॥१८७॥८०५।

द्र-प्रस्ताव

* राग कान्हरौ

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं, हरिहिं लिए चंदा दिखरावत।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी, देखौं धौं भरि नैन जुड़ावत।
चितै रहे तब आपुन ससि-तन, अपने कर लै-लै जु बतावत।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ, देखत अति सुंदर मन भावत।
मनहीं मन हरि बुद्धि करत हैं माता सौं कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख, चंद मैं खैहौं, देहि-देहि रिस करि बिरुझावत।
जसुमति कहति कहा मैं कीनौ, रोवत मोहन अति दुख पावत।
सूर[3] स्याम कौं जसुमति बोधति, गगन चिरैयाँ उड़त दिखावत ॥१८८॥८०६

† यह पद केवल (स, ल, क) में है।
(१) निरखि—३, ११, १४।
(२) मंजुल—३।
* (ना) केदारा। (रा) बिलावल।
(३) ता सुख देखत सुर मुनि भूले सूरदास जस इहै जु गावत—१७।

* राग ब

किहिँ विधि करि कान्हहिँ समुझैहौँ ?

मैं ही भूलि चंद दिखरायौ, ताहि कहत[1] मैं खैहौँ !
अनहोनी कहुँ भई[2] कन्हैया, देखी-सुनी न बात।
यह तौ आहि खिलौना सबकौ, खान कहत तिहिँ तात !
यहै देत लवनी नित मोकौँ, छिन-छिन साँझ-सवारे।
बार-बार तुम माखन माँगत, देउँ कहाँ तैं प्यारे ?
देखत रहौ खिलौना चंदा, आरि न करौ कन्हाई।
सूर स्याम लिए हँसति जसोदा, नंदहिँ कहति बुझाई[3] ॥१८६॥८

* राग

† (आछे मेरे) लाल हो, ऐसी आरि न कीजै।

मधु - मेवा - पकवान - मिठाई, जोइ भावै सोइ लीजै।
सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु[4] मीठौ पय पीजै।
पालागौँ[5] हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैं तन छीजै।
आन[6] बतावति, आन दिखावति, बालक तौ न पतीजै।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तैं, सुसुकि सुसुकि मन खीजै।
जल-पुट आनि धरयौ आँगन मैं, मोहन नैंकु तौ लीजै।
सूर स्याम हठि चंदहिँ माँगै, सु[7] तौ कहाँ तैं दीजै ॥१९०॥८

ना) ईमन।
दै—६। (२) होत—१,
। होइ—१६। (३)
१६।
ना) ईमन। (के, पू)

कान्हरा।
† यह पद (वृ, कां, रा, स्या) में नहीं है।
(४) काजरि कौ—२। (५) कमलनैन अलि आरि करौ जिन

खीझत तन मन—१७।
बावरै इती कह आवै द
न—२। (७) चंद—१
१५।

* राग ब

बार-बार जसुमति सुत बोधति, आउ चंद तोहिँ लाल बुलावै ।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, आपुन खैहै, तोहिँ खवावै ।
हाथहिँ पर तोहिँ लीन्हे खेलै, नैँकु नहीँ धरनी बैठावै ।
जल-बासन[1] कर लै जु उठावति, याही मैँ तू तन धरि आवै ।
जल-पुट आनि धरनि पर राख्यौ, गहि आन्यौ वह चंद दिखावै ।
सूरदास प्रभु हँसि मुसुक्याने, बार-बार दोऊ कर नावैँ ॥१९१॥

❀ राग

† (मेरी[2] माई) ऐसौ हठी बाल गोविंदा ।
अपने[3] कर गहि गगन बतावत खेलन कौँ माँगै चंदा ।
बासन[4] मैँ जल धर्‍यौ जसोदा, हरि कौँ आनि दिखावै ।
रुदन करत, ढूँढ़त नहिँ पावत, चंद धरनि क्यौँ आवै !
मधु[5] - मेवा - पकवान - मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना ।
चकई[6]-डोरि पाट के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना ।
संत-उबारन, असुर-सँहारन, दूरि करन दुख-दंदा ।
सूरदास बलि गई जसोदा, उपज्यौ कंस-निकंदा ॥१९२॥८

राग

‡ मैया, मैँ तौ चंद-खिलौना लैहौँ ।
जैहौँ लोटि धरनि पर अबहीँ, तेरी गोद न ऐहौँ ।

रा) केदारौ ।
भाजन—१, ११ ।
का) बिलावल ।
ह पद (ना, के, क, पू, नहीँ है ।
अरटो री मेरा—३, १६ ।
मेरा माई औ हठ—६ । अरको री मेरौ—१६ । ③ कर पल्लव गहि गहि देखरावत खेलन माँगै चंदा—३, १६ । ④ भाजन मैँ जल धरि जसोमति या बिधि चंद— ३, १६ । ⑤ दूध दही पकवान मिठाई जु (जे) कछु छौना—१, ६, ११, भौरा चकई लाल पाट माँगु खिलौना—१, ६,
‡ यह पद केव मेँ है ।

चंद्र-प्रस्ताव

सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं ।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं ।
आगैं आउ, बात सुनि मेरी, बलदेवहिं न जनैहौं ।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं ।
तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं ।
सूरदास ह्वै कुटल बराती, गीत सुमंगल गैहौं ॥१६३॥८११॥

* राग रामकली

[1] मैया[1] री मैं चंद लहौंगौ ।
कहा करौं जलपुट भीतर कौ, बाहर ब्यौंकि[2] गहौंगौ ।
यह तौ झलमलात झकझोरत, कैसैं कै जु लहौंगौ ।
वह तौ निपट निकटहीं देखत, बरज्यौ हौं न रहौंगौ ।
तुम्हरौ[3] प्रेम प्रगट मैं जान्यौ, बौराएँ न बहौंगौ ।
सूर स्याम कहै कर गहि ल्याऊँ, ससि[4]-तन-दाप दहौंगौ ॥१६४॥८१२॥

* राग धनाश्री

लै लै मोहन[5], चंदा लै ।
कमल नैन बलि जाउँ[6] सुचित ह्वै, नीचैं नैंकु चितै ।
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर, कीन्ही इती अरै ।
सोइ सुधाकर[7] देखि कन्हैया,[8] भाजन माहिं परै ।

) ईमन ।
ह (ब्रू, काँ, रा, श्या)
।
हौं री माँ चंदा
६, ९ । ② ओकि-
१, ६, ११ । श्रंग—२ । चौंकि—
१४ । ③ तेरौ प्रेम उदित भयौ
माता—२ । ④ अविध ताप—२ ।
ससि तन ताप—१७ ।
* (ना, काँ) कान्हरो । (रा)
केदारा ।
⑤ माधौ—२ । ⑥ जाइ
जसोदा नीचे—१, ३, ६, ११ ।
⑦ सुधि करि तू देखि—२ । ⑧
मनोहर—२ ।

नभ तैं निकट आनि राख्यौ है, जल-पुट जतन जुगै।
लै अपने कर काढ़ि चंद कौं, जो भावै सो कै।
गगन-मँडल तैं गहि आन्यौ है, पंछी एक पठै।
सूरदास प्रभु इती बात कौं, कत मेरौ लाल हठै ॥१६५॥८१३॥

* राग बिहागरौ

† तुव मुख देखि डरत ससि भारी।
कर करि कै हरि हेर्‌यौ चाहत, भाजि पताल गयौ अपहारी[1]।
वह ससि तौ कैसैंहु नहिं आवत, यह ऐसी कछु बुद्धि बिचारी।
बदन देखि बिधु बुधि सकात मन, नैन कंज कुंडल उजियारी।
सुनौ स्याम, तुमकौं ससि डरपत, यहै कहत मैं सरन तुम्हारी।
सूर स्याम बिरुझाने सोए, लिए लगाइ छतिया महतारी ॥१६६॥८१४॥

* राग केदारौ

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति।
मेरौ[2] आजु अतिहिं बिरुझानौ, यह कहि-कहि मधुरैं[3] सुर गावति।
पौढ़ि गई हरुएँ करि आपुन, अंग मोरि तब हरि जँभुआने।
कर सौं ठौंकि सुतहिं दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने।
पौढ़ौ लाल, कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी।
यह सुनि सूर स्याम मन हरषे, पौढ़ि गए हँसि देत हुँकारी ॥१६७॥८१५॥

---

* (का, के, क, पू) बिला- [illegible]।

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

(१) अवहारी —६।

* (ना) ईमन। (रा) कान्हरा।

(२) आजु कान्ह अतिही —२। (३) मधुरे सुर सौं—६, १७-१८

* राग केदारौ

† सुनि सुत, एक कथा कहौं प्यारी ।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ, चतुर सिरोमनि देत हुँकारी ।
दसरथ नृपति हुतौ रघुबंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी ।
तिनमैं मुख्य राम जो कहियत, जनक-सुता ताकी बर नारी ।
तात-बचन लगि राज तज्यौ तिन, अनुज,घरनि सँग भए बनचारी ।
धावत कनक-मृगा के पाछैं, राजिव-लोचन परम उदारी ।
रावन हरन सिया कौ कीन्हौ, सुनि नँद-नंदन नींद निवारी ।
चाप-चाप करि उठे सूर प्रभु,लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी ॥१६८॥८१६॥

❀ राग बिहागरौ

‡ नंद-नँदन, इक[1] सुनौ कहानी ।
पहिली कथा पुरातन सुनो[2] हरि जननि-पास[3] मुख बानी ।
रामचंद्र दसरथ-सुत, ताकी जनक-सुता गृह-रानी ।
कहे[4] तात के, पंचबटी बन, छाँड़ि चले रजधानी ।

(ना) कान्हरौ । (र्का)
(रा) कल्यान ।
यह पद सभी प्रतियों में
परंतु इसके चरणों की
था पाठ में बड़ा भेद
से लेकर २० चरण तक
पाए जाते हैं । कुछ
में १८ चरण मिलते हैं
) में २० हैं । परंतु जिन
में ८ से अधिक चरण हैं
ने से यह स्पष्ट लक्षित
होता है कि किसी ने कथा को विस्तृत करने के निमित्त मनमानी गढ़ंत की है । (ना, र्का, रा, श्या) में इसमें ८ चरण मिलते हैं और वही सूरदास-कृत प्रतीत होते हैं । अतः इन्हीं प्रतियों के अनुसार इस संस्करण में चरणों की संख्या तथा पाठ रक्खे गए हैं । नवलकिशोर प्रेस के सूरसागर तथा राग-कल्पद्रुम में इस पद के अंतिम चरण पर परमानंददासजी की छाप है । वह चरण इस प्रकार है—"परमानँद प्रभु चाप रटत कर लक्ष्मण देहु जननि भ्रम भारी ।"

❀ (रा) कल्यान ।

‡ यह पद (स, वृ, के, क, र्का, पू, श्या) में नहीं है ।

(1) तुम—१, ६, ११, १९ । (2) सुनियत—२ । (3) बात मुख जानी—२ । (4) कहि पंचतत्त्व अरु पंचबटी—१, ६, ११, १९ । कहूँ गंगातट पंचबटी—२ ।

ँ बसत सीता हरि लीन्ही, रजनीचर अभिमानी ।
छमन, धनुष देहु[1], कहि उठे हरि, जसुमति सर डरानी ॥१६६॥८१७।

* राग केदार

जसुमति मन-मन यहै बिचारति ।
उझ्यौ सोवत हरि अबहीँ, कछु पढ़ि-पढ़ि तन-दोष निवारति ।
मैँ कोउ दीठि लगाई, लै-लै राई-लौन उतारति ।
तैँ अतिहीँ[2] बिरुझानौ, चंदहिँ देखि करी अति आरति ।
कुलदेव मनावति, दोउ कर जोरि सिरहिँ[3] लै धारति
जसुमति नँदरानी, निरखि बदन, त्रयताप बिसारति[4]॥२००॥८१८॥

* राग ललि

† नाहिँनै जगाइ सकति, सुनि सुबात सजनी ।
अपनै जान अजहुँ कान्ह मानत हैँ रजनी ।
जब-जब हौँ निकट जाति, रहति लागि लोभा ।
तन की गति बिसरि जाति, निरखत मुख-सोभा ।
बचननि कौँ बहुत करति, सोचति जिय ठाढ़ी ।
नैननि न[5] बिचारि परत देखत रुचि बाढ़ी ।
इहिँ बिधि बदनारबिंद, जसुमति जिय भावै ।
सूरदास सुख की रासि, कापै[6] कहि आवै ॥२०१॥८१६॥

करि उठि—१, ६,
न दै धावहु—२
) बिहागरौ ।
—१, ११ । (२) सीस
वारति—२, ३, ६,

१४, १६ ।
* (ना, रा) भैरौ । (क) बिभास । (जै) केदार । (कां, श्या) बिलावल ।
† यह पद (का) मेँ नहीँ है ।

(५) न विचार करत—३
विचार करति (करत)—११, १६
सुविचार करति—१७ । (६) कह
न बनि—१, ११, १६ ।

मनहुँ मथत सुर सिंधु, फेन फटि, दयौ दिखाई पूर[1]
जाकौं[2] ईस-सेष-ब्रह्मादिक, गावत नेति-नेति स्तुति
सोइ[3] गोपाल ब्रज मैं सुनि सूरज, प्रगटे पूरन परमानंद।

† जागिए गोपाल लाल, आनँद-निधि[4] नंद-बाल,
जसुमति कहै बार-बार, भोर भयौ प्यारे।
नैन कमल-दल बिसाल, प्रीति-बापिका-मराल,
मदन ललित बदन उपर कोटि वारि डारे
उगत अरुन बिगत सर्वरी, ससांक किरन-हीन,
दीपक सु मलीन, छीन-दुति समूह तारे
मनौ ज्ञान-घन-प्रकास, बीते सब भव-बिलास,
आस-त्रास-तिमिर तोष-तरनि-तेज जारे
बोलत खग-निकर मुखर, मधुर होइ[5] प्रतीति सुनौ,
परम प्रान-जीवन-धन मेरे तुम बारे
मनौ बेद बंदीजन[6] सूत-बृंद मागध-गन,
बिरद बदत जै जै जै जैति कैटभारे
बिकसत कमलावली, चले प्रपुंज[7]-चंचरीक,
गुंजत कलकोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे

---

(1) नूतन—३, १४। (2) जस ब्रह्मादिक सुनिगन नेति गावत स्तुति छंद—१. ६, १६। (3) सोइ गोपाल सु ज्ञ भीतर सूर सु प्रगटे परमा- —३, १४।

* (ना) चर्चरी। (का) बिलावल। (रा) भैरो।

† यह पद कतिपय शब्दों के हेर-फेर से श्रीतुलसीदासजी की गीतावली में भी प्राप्त है। परंतु यह सूरसागर की सभी उपस्थित प्रतियों में विद्यमान है। यहाँ तक कि (के) अर्थात् सं० १७५३ की

लिखी (गीत ३६,

होइ ६, ६ १, २

मानौ[1] बैराग पाइ, सकल सोक[2]-ग्रह बिहाइ,
प्रेम-मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे।
सुनत बचन प्रिय रसाल, जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल-जाल, दुख-कदंब टारे।
त्यागे भ्रम-फंद-द्वंद निरखि कै मुखारबिंद,
सूरदास अति अनंद, मेटे[3] मद भारे॥ २०५॥८२३॥

* राग ललित

† प्रात भयौ, जागौ गोपाल।
नवल सुंदरी आईं, बोलत तुमहिं सबै ब्रजबाल।
प्रगट्यौ भानु, मंद भयौ उड़पति फूले तरुन तमाल।
दरसन कौं ठाढ़ी ब्रजबनिता, गूँथि कुसुम बनमाल।
मुखहिं धोइ सुंदर बलिहारी, करहु कलेऊ लाल।
सूरदास प्रभु आनँद के निधि, अंबुज-नैन बिसाल॥२०६॥८२४॥

* राग ललित

‡ जागौ, जागौ हो गोपाल।
नाहिँन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल।
फिरि-फिरि जात निरखि मुख छिन-छिन, सब गोपनि के बाल।
बिन[4] बिकसे कल कमल-कोष तैं मनु मधुपनि की माल।

---

(१) मनो बिराग पाइ सकल
...प गृह बिहाइ—३,६,१४।
...ल—१, ११, १२। (३)
...द भारे—२, ३, ६।
* (ना) रामकली (गो
जौ, का, रा, श्या) बिलावल।

† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है।

* (ना, के, पू) रामकली। (क) बिभास

‡ यह पद (बू, का, र... श्या) में नहीं है।

(४) दिन बिकसत मनौ कम... कोष प्रति (छबि) ज्यौं मधु... के माल १ ११, १२।

तुम मोहिँ न पत्याहु सूर प्रभु, सुंदर स्याम[1] तमाल ।
तुमहीँ देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल ॥ २०७॥८२५ ॥

राग भैरव

उठौ[2] नँदलाल भयौ भिनुसार, जगावति नंद की रानी ।
झारी कैँ जल बदन पखारौ, सुख[3] करि सारँगपानी ।
माखन-रोटी अरु मधु-मेवा, जो भावै लेउ आनी ।
सूर स्याम मुख निरखि जसोदा, मनहीँ मन जु सिहानी ॥२०८॥८२६॥

राग बिलावल

† तुम जागौ मेरे लाड़िले, गोकुल-सुखदाई ।
कहति जननि आनंद सौँ, उठौ कुँवर कन्हाई ।
तुमकौँ माखन-दूध-दधि, मिस्री हौँ ल्याई ।
उठि कै भोजन कीजिऐ, पकवान मिठाई ।
सखा द्वार परभात सौँ, सब टेर लगाई ।
बन कौँ चलिऐ साँवरे, दयौ तरनि दिखाई ।
सुनत बचन अति मोद सौँ, जागे जदुराई ।
भोजन करि बन कौँ चले, सूरज बलि जाई ॥२०९॥८२७॥

* राग बिलावल

नंद कौ लाल उठत जब सोइ ।
[नि]रखि मुखारबिंद की सोभा, कहि, काकैँ मन धीरज होइ ?
[मु]नि-मन हरत, जुवति-जन[4] केतिक, रतिपति-मान जात सब खोइ ।

[...]इ के काल—३ । (२) [...]मार—१, २, ३, ११, ११, १४ । सुत कहि—६ । (३) कहि-कहि—१,

† यह पद केवल (क) में है ।

* (ना) देवगिरि । (४) को बपुरी—१६ ।

षद हास दंत-दुति बिगसति, मानिक[1]-मोती धरे जनु पोइ।
'गर नवल[2] कुँवर बर सुंदर, मारग जात लेत मन गोइ।
ूरदास[3] प्रभु मोहनि-मूरति, ब्रजबासी मोहे सब लोइ ॥२१०॥८२८॥

वर्णन — राग भैरव

† उठिए स्याम, कलेऊ कीजै। मनमोहन-मुख निरखत जीजै।
खारिक, दाख, खोपरा, खीरा। केरा, आम, ऊख-रस, सीरा।
श्रीफल मधुर, चिरौंजी आनी। सफरी चिउरा, अरुन खुबानी।
घेवर-फेनी और सुहारी। खोवा-सहित खाहु, बलिहारी।
रचि पिराक लाडू दधि आनौं। तुमकौं भावत पुरी सँधानौं।
तब तमोल रचि तुमहिं खवावौं। सूरदास पनवारौ पावौं ॥२११॥८२९।

* राग बिलावल

कमल-नैन हरि करौ कलेवा।
माखन-रोटी, सद्य[4] जम्यौ दधि, भाँति-भाँति के मेवा।
खारिक, दाख, चिरौंजी, किसमिस, उज्ज्वल गरी बदाम।
सफरी, सेव, छुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम।
अरु मेवा बहु भाँति-भाँति हैं षटरस के मिष्टान्न[5]।
सूरदास प्रभु करत कलेवा, रीझे स्याम सुजान ॥२१२॥८३०॥

मनिगन ओपि धरे जनु , ६, ६, ११, १२। ② सोर कुँवर प्रभु—२, ३, द सुवन सुनि सजनी—) सूर स्याम मन हरन ाकुल बस—१. ६, ६, ११, १२, १७। सूर स्याम हरि मोहन मूरति गोकुल बसि -३।

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै) में है।

* (ना) सुघरई। (कं, पू, रा) धनाश्री। (क) भैरव। (कां) आसावरी।

④ सद यह जेंवौ—२ संग सजो दधि—३। ⑤ सिघ-रान—२। मिष्टान—१७।

※ राग

खेलत स्याम ग्वालनि संग ।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग ।
हाथ तारी देत भाजत, सबै करि करि होड़ ।
बरजै हलधर, स्याम, तुम जनि चोट लागै गोड़ ।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत, बहुत बल मो गात ।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात ।
उठे[1] बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि ।
आगै हरि पाछै श्रीदामा, धर्‌यौ स्याम हँकारि ।
जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं ।
सूर हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह ॥२१३

※

सखा कहत हैं स्याम खिसाने ।
आपुहिं आपु[2] बलकि[3] भए ठाढ़े, अब तुम कहा रिसाने
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब याके माइ न बाप
हारि-जीत कछु नैंकु न समुझत[4], लरिकनि लावत पाप
आपुन हारि सखनि सौं झगरत यह कहि दियौ पठाइ
सूर स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति[5] धाइ ॥२१४॥

ना) सुघराई। (के, पू) ※ (ना) बिलावल। बिलग—२,१४। (
कहि उठे तबही—१४। ② आनि—१, २, ११,१५, १४। ③ ललकि—१, ११। १,११। ⑤ पूँछत

* राग

मैया मोहिँ दाऊ बहुत खिझायौ ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिँ जात ।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात ।
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू[1] कत स्यामल गात ।
चुटकी दै-दै ग्वाल[2] नचावत, हँसत सबै मुसुकात ।
तू मोहीँ कौँ मारन सीखी, दाउहिँ कबहुँ न खीझै ।
मोहन[3]-मुख रिस की ये बातैँ, जसुमति सुनि-सुनि रीझै ।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत ।
सूर स्याम मोहिँ गोधन की सौँ, हौं माता तू पूत ॥२१५॥८२

⊛ रा

† मोहन, मानि मनायौ मेरौ ।
हौँ बलिहारी नंद-नँदन की, नैँकु इतै हँसि हेरौ ।
कारौ कहि-कहि तोहिँ[4] खिझावत, बरजत खरौ[5] अनेरौ ।
इंद्रनील[6] मनि तैँ तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ ?
न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ न्यारी गाइ निबेरौ ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ, बहुतै कान्ह[7] बड़ेरौ ।

ना) धनाश्री । (क, रा)

तुम कत स्याम सरीर—
१, १६ । ② हँसत
सिखै देत बलबीर—१,
१६ । ③ मोहन कौ
मुख रिस समेत लखि—११ ।
मोहन कौ मुख रिस समेत ये
बातैँ सुनि सुनि रीझै—१, १४ ।

* (ना) सारंग ।

† यह पद (का, के, पू) मेँ नहीँ है ।

④ मोहिँ—१, १.
⑤ खेरा तेरौ—३ । ⑥
बिमल ससि तैँ तन सु
११, १२ । ⑦ गाइ बहे

बन मैं जाइ करौ कौतूहल, यह अपनौ है खेरौ
सूरदास द्वारैं गावत है, बिमल-बिमल जस तेरौ ॥ २१६ ॥ ८

※ ग

खेलन अब मेरी जाइ[1] बलैया ।
जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग तबहिं खिझत बल भैया
मोसौं कहत तात[2] बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया
मोल लियौ कछु दै करि तिनकौं, करि-करि जतन बढ़ैया
अब बाबा कहि कहत नंद सौं, जसुमति सौं कहै मैया
ऐसैं कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया
पाछैं नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैया
सूर नंद बलरामहिं धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया ॥ २१७ ।

※ राग

† खेलन चलौ[3] बाल गोबिंद ।
सखा प्रिय द्वारैं[4] बुलावत, घोष-बालक-बृंद ।
तृषित हैं सब दरस-कारन, चतुर चातक दास ।
बरषि छबि नव बारिधर तन, हरहु लोचन-प्यास ।
बिनय बचननि सुनि कृपानिधि, चले मनहर चाल ।
ललित लघु-लघु चरन-कर, उर-बाहु-नैन-बिसाल ।
अजिर पद-प्रतिबिंब राजत, चलत उपमा-पुंज ।
प्रति चरन मनु हेम बसुधा, देति आसन कंज[5] ।

(ना) नट। (क)
ल ।
) जात—१,६, ११। ②
११ ।

※ (ना) देवगिरी। (रा) बिलावल।

† यह पद तुलसीदासजी की गीतावली में (पृ० २६५,पद३८) प्रायः इसी रूप में

③ चलिए—
सब द्वार बोलत—
३, १४ ।

सूर प्रभु की निरखि सोभा, रहे सुर अवलोकि।
सरद चंद चकोर मानौ, रहे थकित बिलोकि ॥ २१८ ॥ ८३६ ॥

* राग धनाश्री

खेलन कौं हरि दूरि गयौ री।
संग-संग धावत डोलत हैं, कह धौं बहुत अबेर भयौ री।
पलक ओट भावत नहिं मोकौं, कहा कहौं तोहिं बात!
नंदहिं तात-तात कहि बोलत, मोहिं कहत हैं मात।
इतनी कहत स्याम-घन आए, ग्वाल सखा सब[1] चीन्हे।
दौरि जाइ उर लाइ सूर प्रभु, हरषि जसोदा लीन्हे ॥२१९ ॥८३७॥

⊛ राग बिहागरौ

खेलन दूरि जात कत कान्हा?
आजु सुन्यौ मैं[2] हाऊ आयौ, तुम नहिं जानत नान्हा।
इक लरिका अबहीं भजि आयौ, रोवत[3] देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि।
चलौ न, बेगि सवारैं जैयै, भाजि आपनैं धाम।
सूर स्याम यह बात सुनतही बोलि लिए बलराम ॥ २२० ॥ ८३८

× राग जैतश्री

दूरि खेलन जनि जाहु लला मेरे[4], बन मैं आए हाऊ!
तब हँसि बोले कान्हर, मैया, कौन[5] पठाए हाऊ?

(ना) सारंग।
सँग—२, ३, १६।
(ना) बिलावल। (१६,
) धनाश्री।
बन—१, ११। ③ बोलि बुझावहु ताहि—१, ११।
× (ना) केदारा।
④ बन मेरे हाऊ आयौ है—१, ११, १२। मेरे हाऊ आए हैं—२, ३, ६, १४। बन हाऊ आए हैं—६। ⑤ कि[illegible] पठायौ है—१, ११। कि[illegible] पठाए हैं—२, ३, ६, १४।

अब डरपत सुनि-सुनि ये बातैं, कहत हँसत बलदाऊ।
सप्त रसातल सेपासन रहे, तब की सुरति भुलाऊ?
चारि बेद लै गयौ संखासुर, जल[1] मैं रह्यौ लुकाऊ।
मीन रूप धरि कै जब[2] मारयौ, तबहिँ रहे कहँ हाऊ?
मथि समुद्र सुर असुरनि कैँ हित, मंदर जलधि धसाऊ[3]।
कमठ रूप धरि धरयौ पीठि पर, तहाँ[4] न देखे हाऊ!
जब हिरनाच्छ जुद्ध अभिलाष्यौ, मन मैं अति गरबाऊ।
धरि बाराह रूप सो[5] मारयौ, लै छिति दंत-अगाऊ।
बिकट रूप अवतार धरयौ जब, सो प्रहलाद[6] बचाऊ।
हिरनकसिप[7] बपु नखनि बिदारयौ, तहाँ न देखे हाऊ!
बामन रूप धरयौ बलि छलि कै, तीनि परग बसुधाऊ।
स्रम जल ब्रह्म-कमंडल राख्यौ, दरसि चरन परसाऊ।
मारयौ मुनि बिनहीँ अपराधहिँ, कामधेनु लै आऊ।
इकइस बार निछत्र करी छिति, तहाँ न देखे हाऊ!
राम-रूप रावन जब मारयौ, दस-सिर बीस-भुजाऊ।
लंक जराइ छार जब कीनी, तहाँ न देखे हाऊ!
भक्त-हेत अवतार धरे, सब असुरनि मारि बहाऊ।
|| सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाऊ ॥२२१॥८

---

(1) तिनके डर न डराऊ—— (2) तिहिँ मारयौ तहाँ न देखे ... २। (3) धराऊ——२। (4) ...यौ सहराऊ (सहिराऊ)—— ... ११, १२, १७, १८। सुर ...—६। (5) रिपु——१, ३, ६, ...१४। (6) प्रहलादहि नाऊँ— ...। प्रहलाद बताऊ——२, ६, १४। प्रहलाद हिताऊ——६। (7) धरि नृसिंह जब असुर—— १, ३, ६, ११, १४। धरि नृसिंह बपु असुर——१६।

|| कुछ प्रतियों में ये ६ चरण और हैं परंतु ये प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं—माटी के मिस बदन बिकारयौ, जब जननी डरपाऊ। मुख भीतर त्रैलोक्य दिखाए, तऊ ... आऊ। जमुना कैँ तट ... जहाँ सघन बन झाऊ। ... व्याल गहि नाथ्यौ, त... हाऊ। नृपति भीम है... स्पर, तहँ वह भाव बत... चीर द्वै टूक कियौ धर, ... बन राऊ॥

* राग रामकली

जसुमति कान्हहिँ यहै[1] सिखावति ।
सुनहु स्याम, अब बड़े भए तुम, कहि[2] स्तन-पान छुड़ावति ।
ब्रज-लरिका तोहिँ पीवत देखत, हँसत, लाज नहिँ आवति ।
जैहैँ बिगरि दाँत ये आछे, तातैँ[3] कहि समुझावति ।
अजहूँ छाँड़ि, कह्यौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति ।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिँ लुकावत ॥२२२॥८४०॥

* राग सारंग

नंद बुलावत हैँ गोपाल ।
आवहु बेगि बलैया लेउँ हौँ, सुंदर[4] नैन बिसाल ।
परस्यौ थार धर्‌यौ मग जोवत, बोलति[5] बचन-रसाल ।
भात सिरात तात दुख पावत, बेगि[6] चलौ मेरे लाल ।
हौँ[7] वारी नान्हे पाइनि की दौरि दिखावहु चाल ।
छाँड़ि देहु तुम लाल अटपटी,[8] यह गति-मंद-मराल ।
सो राजा जो अगमन[9] पहुँचै, सूर सु भवन उताल ।
जौ जैहैँ बलदेव पहिलैँ[10] ही, तौ हँसिहैँ सब ग्वाल ॥२२३॥८४१॥

ना) देवगंधार । यह समुझावनि—२, ३ ② अस्तन पान छुड़ा- । यह कहि चूची छुड़ा- , ४, १६, १७, १८, चूँची पियन छुड़ावति— १९ । यह कहि स्तन १४ । ③ बातै कहि बहरावति—१३ ।

* (ना) ललित । (कां, रा, श्या) धनाश्री ।

④ हो घनस्याम तमाल— ३ । मोहन स्याम तमाल—१४ । ⑤ बेगि चलौ तुम लाल—१, ११, १४ । सुनि घनस्याम तमाल—२, १६, १८, १९ । ⑥ क्यौं न चलौ ततकाल—१, ११, १२ । ⑦ हौं वारी इन विधि चरननि की—२ । हौं वारी इन प्रिय पाइनि की (पर)—३, १४ । ⑧ लटपटी—१३ । ⑨ आगम दौरै—१ । पहिले पहुँचै— २, १३ । अगमन दौरै—४, ११ ⑩ अगमनै—२, ४, १४, १६

* २

जेँवत कान्ह नंद इकठौरे ।
कछुक खात लपटात[1] दोउ[2] कर बालकेलि अति भोरे ॥
बरा[3] कौर मेलत मुख भीतर, मिरिच दसन टकटौरे ।
तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे ॥
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी, लिए लगाइ अँकोरे ।
सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हे तात निहोरे ॥ २२४ ॥

६

† हरि के बाल-चरित अनूप ।
निरखि रहीँ ब्रजनारि इकटक अंग-अँग-प्रति रूप ।
बिथुरि अलकैँ रहीँ मुख[4] पर बिनहिँ बपन[5] सुभाइ ।
देखि कंजनि चंद के बस मधुप करत सहाइ ।
सजल लोचन चारु नासा परम रुचिर बनाइ ।
जुगल खंजन करत[6] अबिनति, बीच कियौ[7] बनराइ ।
अरुन अधरनि दसन झाईँ कहौँ उपमा थोरि ।
नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन[8] बोरि ।
सुभग बाल मुकुंद की छबि बरनि कापै जाइ ।
भृकुटि पर मसि-बिंदु सोहै सकै सूर न गाइ ॥ २२५ ॥

(ना) धनाश्री। (कां, रा, ... बिलावल ।
(१) लपटावत—३ । (२) ... १, २, ११, १४ । (३) ... १, ११ ।

* (क) बिलावल ।
† यह पद (ना, शा, का, कां, रा, श्या) में नहीँ है ।
(४) बदन—१, ३, ६, ११, १४ । (५) बिपिनि—१, ३, ६, ११ । पवन—१४ ... १, ११ । (७) किये ... (८) चंदन—१, ६

* राग कान्हरौ

साँझ भई घर आवहु प्यारे ।
दौरत कहा चोट लगिहै कहुँ पुनि खेलिहौ[1] सकारे ।
आपुहिँ जाइ बाहँ गहि ल्याई, खेह[2] रही लपटाइ ।
धूरि झारि तातौ जल ल्याई, तेल परसि अन्हवाइ ।
सरस बसन तन पोंछि स्याम कौ, भीतर गई लिवाइ ।
सूर स्याम कछु करौ बियारी[3], पुनि राखौं पौढ़ाइ ॥२२६॥८४४॥

❀ राग बिहागर

कमल-नैन हरि[4] करौ बियारी ।
लुचुई लपसी, सद्य जलेबी, सोइ जेँवहु जो लगै पियारी ।
घेवर, मालपुआ, मोतिलाडू, सघर सजूरी सरस सँवारी ।
दूध बरा, उत्तम दधि बाटी, गाल-मसूरी की रुचि न्यारी ।
आछौ दूध औटि धौरी कौ, लै[5] आई रोहिनि महतारी ।
सूरदास बलराम स्याम दोउ जेँवहु जननि जाइ बलिहारी ॥२२७॥८४५॥

× राग बिहागरौ

बल-मोहन दोउ करत बियारी ।
प्रेम सहित दोउ सुतनि जिवावति, रोहिनि अरु जसुमति महतारी ।
दोउ भैया मिलि खात एक सँग, रतन-जटित कंचन की थारी ।
आलस सौं कर कौर उठावत, नैननि नींद झमकि रही भारी ।

(ना) जैतश्री ।
① खेलौगे होत सकारे—१, ६, ११, १६ । ② कंठ ११ । ③ बियारू १ ६ ११, १६ ।
* (ना) रामकली । (का) बिलावल । (रा) बिभास ।
④ कछु १ १ ११ १२ ।
⑤ ल्याई है—१ । मैं ल्याई ११ ।
× (ना) ईमन । (श्या) केदारा

दोउ माता निरखत आलस मुख, छबि पर तन-मन डारतिँ वारो ।
बार-बार जमुहात सूर प्रभु, इहिँ उपमा कवि कहै कहा रो ! ॥२२८॥८४६॥

* राग केदारौ

कीजै[1] पान लला रे यह लै आई दूध जसोदा मैया ।
|| कनक-कटोरा भरि लीजै, यह पय पीजै, अति[2] सुखद कन्हैया ।
|| आछैँ औट्यौ मेलि मिठाई, रुचि करि अँचवत क्यौं न नन्हैया ।
बहु[3] जतननि ब्रजराज लड़ैते, तुम कारन राख्यौ बलभैया ।
फूँकि-फूँकि जननी पय प्यावति, सुख पावति जो[4] उर न समैया ।
सूरज[5] स्याम राम पय पीवत दोऊ जननी लेतिँ बलैया ॥२२९॥८४७॥

राग केदारौ

बल-मोहन दोऊ अलसाने ।
कछु[6]-कछु खाइ दूध अँचयौ तब जम्हात जननी जाने
उठहु लाल कहि मुख पखरायौ, तुमकौं लै पौढ़ाऊँ
तुम सोवौ मैं तुम्हैं सुवाऊँ कछु मधुरैं सुर गाऊँ
तुरत जाइ पौढ़े दोउ भैया, सोवत आई निंद ।
सूरदास जसुमति सुख पावति पौढ़े बालगोबिंद ॥ २३० ॥ ८४८ ॥

---

* (ना) कान्हरा ।

(१) कीजै पय पान लला रे ल्याई है दूध जसुमति मैया—१, ११ ।

|| ये दो चरण (के) मे नहीं हैं ।

(२) अति सुख दीजै कन्हैया—१, ११ । अति सुख देय कन्हैया—१४ ।

(३) बहुत जतन करि राख्यौ ब्रजराज लड़ैते तुम कारन बल भैया—१, २, ६, १४ । बहुत जतन राख्यौ तुम कारन अरु बलिदाऊ भइया—२ ।

(४) आनँद उर न समैया—१, २, ६, ११, १४ । आनँद उर बस मैया—२ ।

(५) सूरदास प्रभु पय पीवत दोउ जननी लेति बलइया—२ ।

(६) कछुक खाइ दूध लै अँचयौ मुख जम्हात जननी जिय जाने—१, ११, १२ । कछु-कछु खाइ दू लै अँचयौ मुख जम्हात जन जिय जाने—२, ३ । कछु-क खाइ दूध अँचयो मुख जम्ह जननी जिय जाने—६ । कछु-व खाहु दूध लै आऊँ मुख जम्ह जननी जिय जाने—१४ ।

* राग सूहो

† माखन बाल गोपालहिं भावै ।

भूखे छिन न रहत मन मोहन, ताहि बदौं जो गहरु लगावै ।
आनि मथानी दह्यौ बिलोवौं, जौ लगि लालन उठन न पावै ।
जागत हो उठि रारि[1] करत है, नहिं मानै जौ इंद्र मनावै ।
हौं यह जानति बानि स्याम[2] की, अँखियाँ मीचे बदन चलावै ।
नंद-सुवन की लगौं बलैया, यह जूठनि कछु सूरज पावै ॥२३१॥८४९॥

* राग बिलावल

भोर भयौ मेरे लाड़िले, जागौ कुँवर कन्हाई ।
सखा द्वार ठाढ़े सबै, खेलौ जदुराई ।
मोकौं मुख दिखराइ कै, त्रय-ताप नसावहु ।
तुव मुख-चंद चकोर[3]-दृग मधु पान करावहु ।
तब हरि मुख-पट दूरि कै, भक्तनि सुखकारी[4] ।
हँसत उठे प्रभु सेज तैं, सूरज बलिहारी ॥ २३२ ॥८५० ॥

× राग बिलावल

‡ भोर भयौ जागे नँदनंदन । संग सखा ठाढ़े जग-बंदन ।
सुरभी[5] पय हित बच्छ पियावैं । पंछी तरु तजि दहुँ दिसि धावैं[6] ।
अरुन[7] गगन तमचुरनि पुकारयौ । सिथिल धनुष रति-पति गहि डारयौ ।

---

* (ना, के) जैतश्री । (जै) सुहाग । (रा) सारंग ।

† यह पद (स, बृ, का, श्या) में नहीं है ।

(१) आरि—२ । (२) कन्हा—६ ।

* (ना) विभास । (क) सूहो बिलावल । (पू) सूहो

(३) चकोरनी—२ । चकोर नैन—१, ३, ६, ११, १४, १६ । (४) भयहारी—२ । हित-कारी—३ ।

× (के, पू) सारंग ।

‡ यह पद (वे, ल, का, के, गो, जै, पू) में है । इससे मिलता-जुलता एक पद गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली में भी है जिसमें इसकी कई पंक्तियों का भाव पाया जाता है । (पृ० २६३ पद २१) ।

(५) सुरभिन सिसु पय पान कराए—६, १७ । (६) धाए—६, १७ । (७) मुनि सरगत—६, १७

निघटी रवि-रथ रुचि साजी । चंद मलिन चकई रति-रा
नि सकुची[1] वारिज फूले । गुंजत फिरत अली-गन झ
देहु मुदित नर नारी । सूरज[2] प्रभु दिन देव मुरारी ॥२ २ ३॥८५

* रा

खेलत स्याम अपनैं रंग ।

नंद-लाल निहारि सोभा, निरखि थकित अनंग ।
चरन की छवि देखि डरप्यौ अरुन[3], गगन छपाइ ।
जानु करभा की सबै छवि, निदरि, लई छड़ाइ ।
जुगल जंघनि खंभ-रंभा, नाहिँ समसरि ताहि ।
कटि निरखि केहरि लजाने, रहे बन-घन चाहि ।
हृदय हरि-नख अति बिराजत, छवि न बरनी जाइ ।
मनौ बालक बारिधर नव, चंद दियौ दिखाइ ।
मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ ।
मनौ तारा-गननि[4] वेष्टित गगन निसि रह्यौ छाइ ।
अधर अरुन, अनूप नासा, निरखि जन-सुखदाइ ।
मनौ सुक, फल बिंब कारन, लेन बैठ्यौ आइ ।
कुटिल अलक बिना बपन के, मनौ अलि-सिसु-जाल ।
सूर प्रभु की ललित सोभा, निरखि रहीं[5] ब्रज-बाल ॥२ २ ४॥८

* रा

न्हात नंद सुधि करी स्याम की, ल्यावहु बोलि कान्ह बलराम

) सकुचि अंबुज दल फूले—
। ② सूर सु दीनदयाल
—६, १७ ।
(ना) सोरठ ।
) गगन रह्यौ—११ । ④
गगन छुष्ठित गगन रह्यौ छपाइ—
१, ११, १५ । गगन निसरत
निसि गगन रह्यौ छाइ—२ । गगन
बे निसि गगन रह्यौ छपाइ—३ ।
गण निवेखित—६ । गगन वेष्टित—
१४ । ⑤ बस—२ ।
* (ना) टोड़ी ।
कां, पु, रा, श्या) सो
बिलावल ।

खेलत बड़ी[1] बार कहुँ लाई, ब्रज-भीतर, काहू कैं धाम ।
मेरैं संग आइ दोउ बैठैं, उन बिनु भोजन कौने काम ।
जसुमति सुनत चली अति[2] आतुर, ब्रज-घर-घर टेरति लै नाम ।
आजु अबेर भई कहुँ खेलत, बोलि[3] लेहु हरि कौं कोउ बाम ।
ढूँढ़ि फिरी नहिँ पावति हरि कौं, अति अकुलानी, तावति[4] घाम ।
बार-बार पछिताति जसोदा, बासर बीति गए जुग जाम ।
सूर स्याम कौं कहूँ न पावति, देखे बहु बालक के[5] ठाम ॥२३५॥८५३॥

* राग सारंग

कोउ माई बोलि लेहु गोपालहिँ ।
मैं अपने कौ पंथ निहारति, खेलत बेर भई नँदलालहिँ ।
टेरत[6] बड़ी बार भई मोकौं, नहिँ पावति घनस्याम तमालहिँ ।
सिध जेँवन सिरात, नँद बैठे, ल्यावहु बोलि कान्ह ततकालहिँ ।
भोजन करै नंद सँग मिलि कै, भूख लगी ह्वैहै मेरे बालहिँ ।
सूर स्याम-मग जोवति जननी,[7] आइ गए सुनि बचन रसालहिँ ॥२३६॥८५४॥

* राग नटनारायन

हरि कौं टेरति है नँदरानी ।
बहुत अबार भई कहँ खेलत, रहे मेरे सारँग पानी ?
सुनतहिँ टेर, दौरि तहँ आए, कब के निकसे लाल ।

---

(१) कान्ह बार बड़ि लागी—१, ११, १२ । (२) आतुर ह्वै—१, ११ । (३) टेरि—२ । (४) आवति घाम—१, ११ । बतावति बाम ६ । चितवत धाम—१४ । (५) इक—१, २, ११, १४, १६ ।

* (ना) गौरी । (का, के, क, पू) नटनारायन । (कॉं, रा, स्या) नट ।

(६) हेरत—१, ११, १२ (७) जसोदा—१, ११ । जसुमति-२, ३, १६ ।

* (ना) सारंग । (का, क रा, स्या) नट । (क) बिलावल

जेँवत नहीँ नंद तुम्हरे बिनु, वेगि चलौ, गोपाल ।
स्यामहिँ ल्याई महरि जसोदा, तुरतहिँ पाइँ पखारे ।
सूरदास प्रभु संग नंद कैँ बैठे हैँ दोउ बारे ॥ २३७ ॥ ८५५ ॥

* राग सारंग

जेँवत स्याम[1] नंद की कनिया ।
कछुक खात, कछु धरनि गिरावत, छबि निरखति नँद-रनियाँ ।
बरी, बरा, बेसन, बहु भाँतिनि, ब्यंजन बिबिध, अगनिया ।
डारत, खात, लेत अपनैँ कर, रुचि मानत[2] दधि दोनियाँ[3] ।
मिस्री, दधि, माखन मिस्रित करि, मुख नावत छबि धनिया[4] ।
आपुन खात, नंद-मुख नावत, सो छबि कहत न बनिया ।
|| जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिँ तिहूँ भुवनिया ।
भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ, माँगत सूर जुठनिया ॥ २३८ ॥ ८५६ ॥

* राग कान्हरौ

बोलि लेहु हलधर भैया कौँ ।
मेरे आगैँ खेल करौ कछु, सुख[5] दीजे मैया कौँ ।
मैँ मूँदौँ हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैँ लुकाई ।
हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि मुँदाई ।
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा ।
सूर स्याम लए जननि खिलावति, हरष सहित मन मोदा ॥ २३९ ॥ ८५९

---

* (ना) टोड़ी ।
(१) कान्ह—३, ६, १४ । (२) माखन दधि दुनियाँ—२, ३, ... , १४ । (३) दनिया—६ । (४) गनिया—२ । छनिया—३ ।
|| यह चरण (स) में नहीँ है ।
* (ना) गौरी । (क) सारंग ।
(५) नैननि सुख—१, २, ६, ११, १४, १६ ।

* रा

हरि तब अपनी आँखि मुँदाई।
सखा सहित बलराम छपाने, जहँ-तहँ गए भगाई।
कान लागि कह्यौ जननि जसोदा, वा घर मैं बलराम।
बलदाऊ कौं आवन दैहौं, श्रीदामा सौं काम।
दौरि-दौरि बालक सब आवत, छुवत महरि कौ गात।
सब आए रहे सुबल श्रीदामा, हारे अब[1] कैं तात।
सोर[2] पारि हरि सुबलहिं धाए, गह्यौ श्रीदामा जाइ।
दै-दै सौहैं नंद बबा की, जननी पै लै आइ।
हँसि-हँसि तारी देत सखा सब, भए श्रीदामा चोर।
सूरदास हँसि कहति जसोदा, जीत्यौ है सुत मोर ॥२४०॥

* राग

चलौ लाल कछु करौ बियारी।
रुचि नाहीं काहू पर मेरी, तू कहि, भोजन करौं कहा री ?
बेसन मिले सरस[3] मैदा सौं, अति कोमल पूरी है भारी।
जेँवहु स्याम मोहिं सुख दीजे, तातैं[4] करी तुम्हैं ये प्यारी।
निबुआ, सूरन, आम, अथानो[5] और करौंदनि की रुचि न्यारी।
बार-बार यौं कहति जसोदा, कहि, ल्यावै रोहिनि महतारी।
जननी सुनत तुरत लै आई, तनक-तनक धरि कंचन-थारी।
सूर स्याम कछु[6]-कछु लै खायौ, अरु अँचयौ जल बदन पखारी॥२४१॥

ना) ईमन। (क)
(का) केदारा।
एकै बात —२। ② सोर
६, १४। बहुरि दौरि-

२। बहुरि बार —१६।
* (ना) कल्यान।
③ उरस —२। ④ तातौ
करी तुम्हैं हित भारी—२।

तातैं लगति तुम्हैं अति
१६ ⑤ सँधाना —१।
यक ९, ३।

* राग केदारौ

पौढ़िए[1] मैं रचि सेज बिछाई ।
अति उज्वल है सेज तुम्हारी, सोवत मैं[2] सुखदाई ।
खेलत तुम निसि अधिक गई, सुत, नैननि नींद झँपाई[3] ।
बदन जँभात, अंग ऐंडावत, जननि पलोटति पाई ।
मधुरैं सुर गावत केदारौ, सुनत स्याम चित लाई ।
सूरदास प्रभु नंद-सुवन कौं नींद गई तब आई ॥२४२॥८६०॥

* राग सारंग

खेलन जाहु बाल[4] सब टेरत ।
यह सुनि कान्ह भए अति आतुर, द्वारैं तन फिरि हेरत ।
बार-बार हरि मातहिं बूझत[5], कहि चौगान कहाँ है ।
दधि-मथनी के पाछैं देखौ, लै मैं धर्‌यौ[6] तहाँ है ।
लै चौगान-बटा[7] अपनैं कर, प्रभु आए घर[8] बाहर ।
सूर स्याम पूछत[9] सब ग्वालनि, खेलौगे किहिं ठाहर ॥२४३॥८६१॥

× राग सारंग

खेलत बनै घोष निकास ।
सुनहु स्याम, चतुर सिरोमनि, इहाँ है घर पास ।
कान्ह हलधर बीर दोऊ, भुजा[10] बल अति जोर ।

ना) कान्हरो ।
पौढ़िऐ लाल मैं रचि ...ई—१, २, ३, ११, ...ढ़िऐ लाल मैं रुचि करि ...ई—६ । पौढ़िऐ लाल ... रचि सेज बिछाई—६ । ...—२, ३, ६, ६, १४ ।
③ झपाई—१, ३, ६, ११, १३ । जम्हाई—२ ।
* (ना) रामकली ।
④ ग्वाल तोहिं—२, ३, १३ । ⑤ कहि कहि मेरी—१, ११, १२ । ⑥ धरी—१, ११, १२ । ⑦ बटा करि आगे—१, ११, १२ । ⑧ जब—१, १२ । ⑨ बूझत—२, ३, ६, ११
× (ना) गूजरी । (का, क, कौ, पू, श्या) नट ।
⑩ अति भुजा दुहुँ जोर २, ६, १४ । अति दुहुँन : जोर—३ ।

सुबल, श्रीदामा, सुदामा वै भए इक ओर।
और सखा बँटाइ[1] लीन्हे, गोप-बालक-बृंद।
चले ब्रज की खोरि खेलत, अति उमँगि नँद-नंद।
बटा धरनी डारि दीनौ, लै चले ढरकाइ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ[2] बनाइ।
सखा जीतत स्याम जाने, तब करी कछु पेल।
सूरदास कहत सुदामा, कौन ऐसौ खेल ॥२४४॥८६२॥

* राग सारंग

† खेलत मैं को काकौ गुसैयाँ।
हरि[3] हारे, जीते श्रीदामा, बरबस हीं कत करत रिसैयाँ[4]।
जाति-पाँति हमतैं बड़ नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं जातैं[5] अधिक तुम्हारैं गैयाँ।
रुहठि[6] करै तासौं को खेलै, रहे बैठि[7] जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्यौइ चाहत, दाउँ दियौ[8] करि नंद-दुहैयाँ ॥२४५॥८६३॥

* राग कान्हरौ

आवहु, कान्ह, साँझ की बेरिया।
गाइनि माँझ भए हौ ठाढ़े, कहति जननि, यह बड़ी कुबेरिया।
लरिकाई कहुँ नैंकु न छाँड़त, सोइ रहौ सुथरी सेजरिया।
आए हरि यह बात सुनतहीं, धाइ लए जसुमति महतरिया।

---

(१) बराइ—११, १२। (२) यौ—३।
* (का, के, क, कां, पू,) बिलावल।
† यह पद (ना) में नहीं।
(३) खेलन मैं कह बड़ो बड़ाई जासों कहत खिलैया—६। (४) रुसैया—१६। (५) अधिक तुम्हारे हैं कछु गैयाँ—१, ११, १२। (६) रोट करै ३, ११। रोइयै करै—६। रूठि करै—१४।
(७) पैठि—१, ११, १२। (८) दबो—१, १२। दबी—११।
* (ना, कां) गौरी। (जै) सारंग। (रा) बिलावल। (स) आसावरी।

लै पौढ़ो आँगन हीँ सुत कौं, छिटकि रही आछी उजियरिया।
सूर स्याम[1] कछु कहत-कहत ही बस करि लीन्हे[2] आइ निँदरिया॥२४६॥८६४॥

* राग कान्हरौ

† आँगन मैँ हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै, हरुऐँ करि, सेज सहित तब भवन लए री।
नैँकु नहीँ घर मैँ बैठत हैँ, खेलहिँ के अब रंग रए री।
इहिँ बिधि स्याम कबहुँ नहिँ सोए, बहुत नीँद के बसहिँ भए री।
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत दौरत हारि गए री।
सूरदास प्रभु कौ मुख निरखत हरषत जिय नित नेह नए री॥२४७॥८६५॥

पाँड़े-आगमन

* राग धनाश्री

महराने[3] तैँ पाँड़े आयौ।
ब्रज घर-घर बूझत नँद-राउर पुत्र भयौ, सुनि कै, उठि धायौ।
पहुँच्यौ आइ नंद के द्वारैँ, जसुमति देखि अनंद बढ़ायौ।
पाँइ धोइ भीतर बैठार्‌यौ, भोजन कौं निज भवन लिपायौ।
जो भावै सो भोजन[4] कीजै, बिप्र मनहिँ अति हर्ष बढ़ायौ।
बड़ी बैस बिधि भयौ दाहिनौ, धनि जसुमति ऐसौ सुत जायौ।
धेनु दुहाइ, दूध लै आई, पाँड़े रुचि करि खीर चढ़ायौ।
घृत, मिष्टान्न, खीर मिस्रित करि, परुसि कृष्न-हित ध्यान लगायौ।
नैन उघारि बिप्र जौ देखै, खात कन्हैया देखन[5] पायौ।
देखौ आइ जसोदा, सुत-कृति, सिद्ध पाक इहिँ आइ जुठायौ।

---

(१) दास—१, ३, ११, १२। (२) लिए आइ नीँदरिया—१, २, ६, ११, १२।
* (ना) श्री। (के, पू) केदारा।
† यह पद (शा) में नहीँ है।
* (ना) मालकौंस।
(३) मथुरा तैँ पाँड़े इक आयो ६, १७। (४) जेवन कीजै—६ १७। (५) भोजन—२।

हरि विनय करि दुहुँ कर जोरे, घृत-मधु-पय फिरि बहुत मँगायौ ।
सूर स्याम कत करत अचगरी, बार-बार बाम्हनहिँ खिझायौ ॥२४८॥८६६॥

* राग रामकली

पाँड़े[1] नहिँ भोग लगावन पावै ।
करि-करि पाक जबै अर्पत है, तवहीं[2] तब छ्वै आवै ।
इच्छा करि मैं बाम्हन न्यौत्यौ, ताकौं[3] स्याम खिझावै ।
वह अपने ठाकुरहिँ जिँवावै, तू ऐसैं[4] उठि धावै ।
जननी[5] दोष देति कत मोकौं, बहु विधान करि ध्यावै ।
नैन मूँदि, कर जोरि, नाम लै बारहिँ बार बुलावै ।
कहि[6], अंतर क्यौँ होइ भक्त सौँ, जो मेरैँ मन भावै ?
सूरदास बलि[7]-बलि बिलास[8] पर, जन्म-जन्म जस गावै ॥२४९॥८६७॥

* राग बिलावल

सफल जन्म, प्रभु[9] आजु भयौ ।
धनि गोकुल, धनि नंद[10]-जसोदा, जाकैँ हरि अवतार लयौ ।
प्रगट भयौ अब पुन्य[11]-सुकृत-फल, दीन-बंधु[12] मोहिँ दरस दयौ ।
बारंबार नंद कैँ आँगन, लोटत द्विज आनंद[13] मयौ ।
मैँ अपराध कियौ बिनु जानैँ, को जानै किहिँ भेष[14] जयौ[15] ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-बस जसुमति-गृह[16] आनंद लयौ[17] ॥२५०॥८६८॥

---

* (ना) बिलावल । (कां) [illegible]ग । (श्या) सोरठ ।

(१) पाँड़े भोग न लावन [illegible]—२, ६, १४, १६, १८ । [illegible] तबहीँ छ्वै छ्वै आवै—२ । [illegible]हिँ ताहि छ्वै आवै—३, ४, [illegible] । (३) तू गोपाल खिझावै—११ । ताहि गोपाल—२ । (४) तबहीँ छ्वै आवै—२ । (५) जननी दोष देहु जनि मोकौं करि विधान बहु ध्यावै—१, ११ । (६) ऐसी भक्ति करत बड़भागी माधौजी जिय भावत—२ । (७) बलि-बलि हौं ताकी जो जनम पाइ जस गावै (गावत)—१, ३, ११, १५ । (८) नँद-सुत—२ ।

* (ना) देवगिरी ।

(९) हरि—२, ३, १८ । (१०) महरि—२ । (११) तो—२ । (१२) जानि—४ । (१३) आनंद भयौ—१, २, ११, १२ । (१४) भाँति—१६, १८ । (१५) छयौ—२ । (१६) हित—१, २, ४, ११, १४, १५ । (१७) नयौ—४ ।

* राग धनाश्री

अहो नाथ जेइ-जेइ सरन आए तेइ-तेइ भए पावन ।
महा पतित-कुल-तारन, एक नाम अघ जारन, दारुन[1] दुख बिसरावन ।
मोतैं को हो अनाथ, दरसन तैं भयौ सनाथ, देखत नैन जुड़ावन ।
भक्त-हेत देह धरन, पुहुमी कौ भार-हरन, जनम[2]-जनम मुक्तावन ।
दीनबंधु, असरन के सरन, सुखनि जसुमति के कारन देह धरावन ।
हित कै चित की मानत सबके जिय की जानत सूरदास मन भावन॥२५१॥८६६

❀ राग बिलावल

† मया करिऐ कृपाल, प्रतिपाल संसार उदधि जंजाल तैं परौं पार ।
काहू के ब्रह्मा, काहू के महेस, प्रभु मेरे तौ तुमहीं अधार ।
दीन के दयाल हरि, कृपा मोकौं करि, यह कहि-कहि लोटत बार-बार ।
सूर स्याम अँतरजामी स्वामी जगत के, कहा कहौं करौ निरवार ॥२५२॥८७०

माटी-भक्षण-प्रसंग

× राग बिलावल

खेलत स्याम पौरि कैं बाहर, ब्रज लरिका सँग[3] जोरी ।
तैसेई आपु तैसेई लरिका, अज्ञ[4] सबनि मति थोरी ।
गावत, हाँक देत, किलकारत, दुरि देखति नँदरानी ।
अति पुलकित गदगद मुख[5]बानी मन[6]-मन महरि[7] सिहानी ।
माटी लै मुख मेलि दई हरि, तबहिं जसोदा जानी ।

---

* (ना) मालकौस ।

① कारन—१, ३, ४, ११, १५, १७ । तारन—६, १६, १६ ।
② जन्म-जन्म जम को मुक्तावन— ६, १८ ।

❀ (ना) श्री । (का, के. कां, पू, रा, श्या) कान्हरा । (क) धनाश्री ।

† प्रायः सभी प्राप्त प्रतियों में इस पद का छंद शुद्ध नहीं था । कई चरणों में अनावश्यक शब्द जुड़ गए थे । इस संस्करण में उन्हें निकालकर शुद्ध पाठ रखने की चेष्टा की गई है ।

× (ना) सारंग ।

③ सोहत संग जोरी—१, २, ३, ६, ९, ११, १६ । ④ स[illegible] अति अज्ञ—१, २, ३, ६, ९, ११, १६ । ⑤ मृदुबानी—१, ११, १५ । ⑥ मन मैं—२ । ⑦ हरषि—११, १४, १५ ।

साँटो लिए दौरि भुज पकरयौ, स्याम लँगरई ठानी ।
लरिकनि कौं तुम सब दिन झुठवत, मोसौं कहा कहौगे ।
मैया मैं माटी नहिं खाई, मुख देखैं निबहौगे ।
बदन उघारि दिखायौ त्रिभुवन, बनघन-नदी-सुमेर ।
नभ-ससि-रवि मुख भीतर हीं सब सागर-धरनी-फेर ।
यह देखत जननी मन ब्याकुल, बालक-मुख कहा आहि ।
नैन उघारि, बदन हरि मूँद्यौ, माता-मन अवगाहि ।
झूठैं लोग लगावत मोकौं, माटी मोहिं न सुहावै ।
सूरदास तब कहति जसोदा, ब्रज-लोगनि यह भावै ॥२५३॥८७१॥

* राग धनाश्री

मोहन काहैं[1] न उगिलौ माटी ।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिए साँटी ।
महतारी सौं[2] मानत नाहीं, कपट-चतुरई ठाटी ।
बदन उघारि[3] दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी ।
बड़ी बार भई, लोचन उघरे,[4] भरम-जवनिका[5] फाटी ।
सूर निरखि[6] नँदरानि[7] अमित[8] भई, कहति न मीठी-खाटी ॥२५४॥८७२॥

※ राग रामकली

मो देखत जसुमति तेरैं ढोटा,[9] अबहीं माटी खाई ।
यह सुनि कै रिस करि उठि धाई, बाहँ पकरि लै आई ।

---

* (ना) सारंग । (कां)
[...]ारा ।
(१) क्यौं नहिं—६, १४, । (२) को कह्यौ न मानत—११, १५ । (३) पसारि—१, २, ११, १५ । (४) मूँदै—२, ६, १४, १७ । (५) या मन की—१, ११, १५ । तजि तन मन—३ । जामिनि सी—६ । जननि मन—१७ । (६) दास—१, ११ । (७) नँदनारि—६, १७ । (८) चकित—३, ६, १७ । थकित—१४ ।
* (ना) नट ।
(९) बालक—२, १६ ।

इक कर सौं भुज गहि गाढ़ैं करि, इक कर लीन्ही[1] साँटी।
मारति हौं तोहिं अबहिं कन्हैया, बेगि न उगिलै माटी॥
ब्रज-लरिका सब तेरे आगैं, झूठी कहत बनाइ।
मेरे कहैं नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाइ॥
अखिल ब्रह्मंड-खंड की महिमा, दिखराई मुख माँहि।
सिंधु-सुमेर-नदी-बन-पर्वत चकित भई मन चाहि[2]॥
कर तैं साँटि गिरत नहिं जानी, भुजा छाँड़ि अकुलानी।
सूर कहै जसुमति मुख मूँदौ, बलि गई सारँगपानी॥२५५॥

※ र

नंदहिं कहति जसोदा रानी।
माटी कैं मिस मुख[3] दिखरायौ, तिहूँ लोक रजधानी।
स्वर्ग, पताल, धरनि, बन, पर्वत, बदन माँझ रहे आनी।
नदी सुमेर देखि चकित भई, याकी अकथ कहानी।
चितै रहे तब नंद जुवति-मुख मन-मन करत बिनानी।
सूरदास तब कहति जसोदा गर्ग कही यह बानी॥२५६॥

❀

कहत नंद जसुमति सौं[4] बात।
कहा[5] जानिऐ, कह तैं देख्यौ, मेरैं कान्ह रिसात।

) लीन्हे—१, ६, ११, १४, ६।
② माहीं—१, २, ३, ६,
(ना) बिहागरौ। (का, पू) धनाश्री। (कां, रा, श्या) सोरठ।
③ बदन दिखायौ—२, ३, १४।
※ (वे) बिलावल। (ना) केदारा।
④ सुनु (... १, ३, ६, ११, १...
⑤ ना जानिए कहा ... कान्हहिं लावति ... १, ३, ६, ११, १...

पाँच बरष का मेरौ नन्हैया[1], अचरज तेरी बात ।
बिनहीं काज साँटि लै धावति, ता पाछैं बिललात ।
कुसल रहैं बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात-अन्हात ।
सूर स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल-गात ॥२५७॥८७५॥

* राग बिलावल

† देखौ री जसुमति बौरानी ।
घर-घर हाथ दिखावति[2] डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी ।
जानत नाहिँ जगतगुरु माधौ, इहिँ आए आपदा नसानी ।
जाकौ नाउँ, सक्ति पुनि जाकी, ताकौं देत मंत्र पढ़ि पानी ।
अखिल ब्रह्मंड उदर गत जाकैं, जाकी जोति जल-थलहिँ समानी ।
सूर सकल साँची मोहिँ लागति, जो कुछ कही गर्ग मुख बानी॥२५८॥८७६॥

राग धनाश्री

‡ गोपाल राइ चरननि हौं काटी ।
हम अबला रिस बाँचि न जानी, बहुत लागि गई साँटी ।
वारौं कर जु कठिन अति, कोमल नयन जरहु जिनि डाँटी ।
मधु, मेवा, पकवान छाँड़ि कै, काहैं खात हौ माटी ।
सिगरोइ दूध पियौ मेरे मोहन, बलहिँ न दैहौं बाँटी ।
सूरदास नँद लेहु दोहिनी, दुहहु लाल की नाटी ॥ २५९ ॥ ८७७ ॥

---

(१) कन्हैया—१, २, ३, १४ ।
* (ना) भोपाली ।
† यह पद (स, ल, का, के) में इस स्थान पर नहीं है। परंतु उलूखल-बंधन के प्रसंग में मिलता है । (वे, ना, गो, जै, श्या) आदि में यह दोनों स्थानों पर पाया जाता है । इस संस्करण में यहीं रक्खा गया है ।
(२) दिखावति—२ ।
‡ यह पद (वे, ल, श का, गो, जै) में है ।

* राग राम

† करि अस्नान नंद घर आए ।
लै जल जमुना कौ झारी भरि, कंज[1] सुमन बहु ल्याए ।
पाइँ धोइ मंदिर पग धारे, प्रभु-पूजा जिय दीन्ह[2] ।
अस्थल लीपि, पात्र सब धोए, काज देव के कीन्ह[3] ।
बैठे नंद करत हरि-पूजा, बिधिवत औ[4] बहु भाँति ।
सूर स्याम खेलत तैं आए, देखत पूजा न्याति ॥ २६० ॥ ८७

* राग

‡ नंद करत पूजा, हरि देखत ।
घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल चंदन लै भेटत[5] ।
पट अंतर दै भोग लगायौ, आरति करी बनाइ ।
कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ, देव नहीं कछु खाइ ।
चितै रहे तब नंद महरि-मुख सुनहु कान्ह की बात ।
सूर स्याम देवनि कर जोरहु, कुसल रहै जिहिं[6] गात ॥२६१॥८

× राग

§ जसुदा देखति है ढिग ठाढ़ो ।
बाल दसा अवलोकि स्याम की, प्रेम-मगन चित बाढ़ो ।

(ना) सूहै। (रा) ल।

यह पद (वे, जै) में है।

(1) कुंज—१६। (2) जानि—६, ११, १४। (3) गान—कानि—२. ६, १४। (4) सौं—२, ३, ६। सो—११, १७।

* (ना) धनाश्री। (रा) बिलावल।

‡ यह पद (वे, गो) में नहीं है।

(5) भेपत—२, ३, ६, ११। लेपत—१४। (6) यह—२। जैसे—३, १४।

× (ना) बिला केदारा)।

§ यह पद (वे, नहीं है।

पूजा करत नंद रहे बैठे, ध्यान समाधि लगाई।
चुपकहिँ आनि कान्ह मुख मेल्यौ, देखौं देव-बड़ाई।
खोजत नंद चकित चहुँ दिसि तैँ अचरज सौ कछु भाई।
कहाँ गए मेरे इष्ट[1] देवता को लै गयौ उठाई।
तब[2] जसुमति सुत-मुख दिखरायौ, देखौं बदन कन्हाई।
मुख[3] कत मेलि देवता राख्यौ, घाले सबै नसाई।
बदन[4] पसारि सिला जब दीन्ही[5], तीनौ लोक दिखाए।
सूर[6] निरखि मुख नंद चकित भए, कछू बचन नहिँ आए ॥२६२॥

* राग

† हँसत गोपाल नंद के आगैँ, नंद सरूप न जान्यौ।
निर्गुन ब्रह्म[6] सगुन लीलाधर, सोई सुत करि मान्यौ।
एक समय पूजा कैँ अवसर, नंद समाधि लगाई।
सालिग्राम मेलि मुख भीतर, बैठि रहे अरगाई।
ध्यान बिसर्जन कियौ नंद जब, मूरति आगैँ नाहीँ।
कह्यौ गोपाल देवता कह भयौ, यह बिसमय मन माहीँ।
मुख तैँ काढ़ि तबै जदुनंदन, दियौ नंद कैँ हाथ।
सूरदास स्वामी[7] सुख-सागर खेल रच्यौ ब्रज-नाथ ॥२६३॥८८

आगे ही तैँ—३। ② देखि बदन तैँ भीतर हरि र मुसुकाई—६, ११। ; लाल बलि जाइ जननि लड़ु कुँवर कन्हाई— ④ कमलनैन मोहन

हँसि बोले कहा व्याकुल हौ तात —६, ११। ⑤ देख्यौ—२, ११। ⑥ सूर स्याम कछु कहत न आवै इह अचरज की बात—६, ११।

* (ना) बिलावल। (क) आसावरी। (कां, रा, श्या) धनाश्री।

† यह पद (वे, उं... नहीँ है।

⑥ रूप—३। ⑦ ... दिखराई अविगत गो... नाथ—१६।

बन-चोरी   * राग

मैया री, मोहिँ माखन भावै ।
जो मेवा पकवान कहति तू, मोहिँ नहीँ रुचि आवै ।
ब्रज-जुवती इक पाछैँ ठाढ़ी, सुनत स्याम की बात ।
मन-मन कहति कबहुँ अपनैँ[1] घर, देखौँ[2] माखन खात ।
बैठैँ जाइ मथनियाँ कैँ ढिग, मैँ तब रहौँ[3] छपानी ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, ग्वालिनि मन की जानी ॥२६४॥८८

⊛ राग

गए स्याम तिहिँ ग्वालिनि कैँ घर ।
देख्यौ द्वार नहीँ कोउ, इत-उत चितै, चले तब[4] भीतर ।
हरि आवत गोपी जब[5] जान्यौ, आपुन रही छपाइ ।
सूनैँ सदन मथनियाँ कैँ ढिग, बैठि रहे अरगाइ ।
माखन भरी कमोरी देखत, लै-लै लागे खान ।
चितै रहे मनि-खंभ-छाहँ-तन, तासौँ करत सयान ।
प्रथम आजु मैँ चोरी आयौ, भलौ बन्यौ है[6] संग ।
आपु खात, प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग ?
जौ चाहौ सब देउँ कमोरी, अति मीठौ कत डारत ।
तुमहिँ देखि मैँ अति सुख पायौ, तुम जिय कहा बिचारत ?
सुनि-सुनि बात स्याम के मुख की, उमँगि हँसी ब्रजनारी[7] ।
सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि-मुख तब भजि चले मुरारी ॥२६५॥

(ना) गूजरी ।
मेरे—१, २, ३, ६, ६, । ② देखौ—२, ११ । —१, २, १४

* (ना) देवगंधार ।
④ धर—१, ११, १२ । ⑤ तब—१, ११, १२ । मन—२, ३, ६, १७ । ⑥ यह—२, ३, ११ । ⑦ तब नारी १७ । बर—३ । सु १४ ।

* राग गौरी

फूली फिरति ग्वालि मन मैं री।
पूछति सखी परस्पर बातैं, पायौ पर्यौ कछू कहुँ तैं री ?
पुलकित रोम-रोम, गदगद, मुख बानी कहत न आवै।
ऐसौ कहा आहि सो सखि री, हमकौं क्यौं न सुनावै।
तन न्यारौ, जिय एक हमारौ, हम तुम एकै रूप।
सूरदास कहै ग्वालि सखिनि सौं; देख्यौ रूप अनूप ॥२६६॥८८४॥

⊛ राग गूजरी

आजु[1] सखी मनि-खंभ-निकट हरि,[2] जहँ गोरस कौं गो री।
निज प्रतिबिंब सिखावत ज्यौं सिसु, प्रगट करै जनि चोरी।
अरध बिभाग आजु तैं हम-तुम, भली बनी है जोरी।
माखन खाहु कतहिँ डारत हौ, छाँड़ि देहु मति भोरी।
बाँट न लेहु, सबै चाहत हौ, यहै बात है थोरी।
मीठौ अधिक, परम रुचि लागै, तौ[3] भरि देउँ कमोरी।
प्रेम[3] उमँगि धीरज न रह्यौ, तब प्रगट हँसी मुख मोरी।
सूरदास प्रभु सकुचि निरखि मुख, भजे कुंज की खोरी ॥२६७॥८८५

× राग बिलावल

प्रथम करी हरि माखन-चोरी।
ग्वालिनि मन इच्छा करि पूरन, आपु भजे ब्रज-खोरी।
मन मैं यहै बिचार करत हरि, ब्रज-घर-घर सब जाउँ[5]।

ना) अहीरी।
ना) बंगाली। (कां,
बिलावल।
रखि—२ १६, १८ १९।

② है—२, १६, १८, १९। ③ दैहौं काढ़ि कमोरी—१, २, ३, ६। ④ सुनि प्रभु बचन—१६, १८, १९। सुनि प्रिय बचन—१७।

× (ना) गौड़। (के, गूजरी।
⑤ गाऊँ—१। गाउँ ९, ११, १४। गावँ—३।

गोकुल जनम लियौ सुख-कारन, सबकैं माखन खाउँ ।
बाल-रूप जसुमति मोहिँ जानै, गोपिनि मिलि सुख भोग[1] ।
सूरदास प्रभु कहत प्रेम सौं, ये[2] मेरे ब्रज-लोग ॥२६८॥८८६॥

* राग रामकली

करैं हरि ग्वाल संग बिचार ।
चोरि माखन खाहु सब मिलि, करहु बाल-बिहार ।
यह सुनत सब सखा हरषे, भली कही कन्हाइ ।
हँसि परस्पर देत तारी, सौंह करि नँदराइ ।
कहाँ तुम यह बुद्धि पाई, स्याम चतुर सुजान ।
सूर प्रभु मिलि ग्वाल-बालक, करत हैं अनुमान ॥२६९॥८८७॥

* राग गौरी

सखा सहित गए माखन-चोरी ।
देख्यौ स्याम गवाच्छ-पंथ ह्वै, मथति एक दधि भोरी ।
हेरि मथानी धरी माट तैं, माखन हो उतरात ।
आपुन गई कमोरी माँगन, हरि पाई ह्याँ घात ।
पैठे सखनि सहित घर सूनैं, दधि माखन सब खाए ।
छूछी छाँड़ि मटुकिया दधि की, हँसि सब बाहिर आए ।
आइ गई कर लिए कमोरी, घर तैं निकसे ग्वाल ।
माखन कर, दधि मुख लपटानौ, देखि रही नँदलाल ।
कहँ आए ब्रज-बालक सँग लै, माखन मुख लपटान्यौ ।
खेलत तैं उठि भज्यौ सखा यह, इहिँ घर आइ छपान्यौ ।

ागु—१ । ② थैरो रे
-१ ।

* (ना) सोरठि ।
* (क) बिलावल ।

भुज गहि लियौ कान्ह इक बालक, निकसे ब्रज की खोरि ।
सूरदास ठगि रही ग्वालिनी, मन हरि लियौ अँजोरि ॥२७०॥८८८।

* राग गौरी

† चकित भई ग्वालिनि-तन हेरौ ।
माखन छाँड़ि गई मथि वैसैं हि, तब तैं कियौ अबेरौ ।
देखै[1] जाइ मटुकिया रीती, मैं राख्यौ कहुँ[2] हेरि ।
चकित भई ग्वालिनि मन अपनैं, ढूँढ़ति घर फिरि फेरि ।
देखति पुनि-पुनि घर के बासन, मन हरि लियौ गोपाल ।
सूरदास रस भरी ग्वालिनी, जानै हरि कौ ख्याल ॥२७१॥८८९॥

❀ राग बिलावल

ब्रज घर-घर प्रगटी यह बात ।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात ।
ब्रज-बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारैं आवैं ।
माखन खात अचानक पावैं, भुज भरि उरहिं छुवावैं ।
मनहीं मन अभिलाष करतिं सब हृदय धरतिं यह ध्यान ।
सूरदास प्रभु कौं घर तैं लै, दैहौं माखन खान ॥२७२॥८९०

× राग कान्हरौ

चली ब्रज घर-घरनि यह बात ।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात ।
कोउ कहति, मेरे भवन भीतर, अबहिं पैठे धाइ ।

) बिलावल ।
नट (ना, वृ, कां, रा,
हीं है ।

(१) देखै—१ । (२) कहुँ है री—१, ११ । बहु हेरि—३ ।
❀ (श्या) रामकली ।

× (ना) नट । (के, कां पू) बिलावल ।

कोउ कहति, मोहिं देखि द्वारें, उतहिं गए पराइ।
कोउ कहति, किहिं भाँति हरि कौं, देखौं अपनैं धाम।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम।
कोउ कहति, मैं देखि पाऊँ, भरि धरौं अँकवारि।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि।
सूर प्रभु के मिलन कारन, करतिं बुद्धि बिचार।
जोरि कर बिधि कौं मनावतिं, पुरुष नंद-कुमार ॥२७३॥८

※ राग

गोपालहिं माखन खान दै।
सुनि री सखी, मौन[1] ह्वै रहिऐ, बदन दही लपटान दै।
गहि[2] बहियाँ हौं लैकै जैहौं, नैननि तपति बुझान दै।
याकौं[3] जाइ चौगुनौ लैहौं, मोहिं जसुमति लौं जान दै।
तू जानति हरि कछू न जानत, सुनत मनोहर कान दै।
सूर[4] स्याम ग्वालिनि बस कीन्हौ, राखतिं तन-मन-प्रान दै॥२७४॥

⊛ राग

ग्वालिनि घर गए जानि साँझ की अँधेरी।
मंदिर मैं गए समाइ, स्यामल तनु लखि न जाइ,
देह गेह रूप, कहौ को सकै निबेरो ?

(के, जै) बिलावल।
) कोउ जनि बोलै—१, ५। (२) बाँह पकरि लै न पै—६, १७। (३) वापै जाइ—१, ११। याको चाहि चौगुनौ लैहौं अब जसुदा तू दान दै—६, १७। (४) सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन को राखौंगी—१, ११, १२। सूरदास प्रभु कौं राखो—१६।
※ (के, क, पू, वल। (कां, स्या) ं

दीपक गृह दान कर्‍यौ, भुजा चारि प्रगट धर्‍यौ,
देखत भई चकित ग्वालि इत-उत कौं हेरी।
स्याम हृदय अति बिसाल, माखन-दधि-बिंदु-जाल,
मोह्यौ मन नंदलाल, बाल[1] हीँ बझेरी।
जुवती अति भई बिहाल, भुज भरि दै अंकमाल,
सूरदास प्रभु कृपाल, डार्‍यौ तन फेरी।
कर सौं कर लै लगाइ, महरि पै गई लिवाइ,
आनँद उर नहिँ समाइ, बात है अनेरी ॥२७५॥८६

* राग

जसुमति धौं देखि आनि, आगैँ ह्वै लै पिछानि,
बहियाँ गहि ल्याई कुँवर और कौ कि तेरौ ?
अब लौं मैं करी कानि, सही दूध-दही-हानि,
अजहूँ जिय जानि मानि, कान्ह है अनेरौ।
दीपक मैं धर्‍यौ बारि, देखत भुज भए चारि,
हारी हौं धरति करति दिन-दिन कौ झेरौ।
देखियत नहिँ भवन माँझ, जैसोइ तन तैसि साँझि,
छल सौं कछु करत फिरत महरि कौ जिठेरौ
गोरस तन छीँटि रह्यौ, सोभा नहिँ जाति कह्यौ,
मानौ जल-जमुन बिंब उड़गन पथ[2] केरौ।

---

[1] बाल ही बुझे री—१, ११। बझेरी —२। बाल ही ... ३। बालक ही बेरी ... १४।

* (के, क, कां, पू, रा) बिलावल।

[2] पथ फेरौ —१, १२, १७। रथ फेरौ— १८, १९।

इन दिन देउँ काहि, कहैं तू इतौ रिसाइ,
नाहीं ब्रज-बास, सास, ऐसी बिधि मेरौ।
ो निरखति सुमार[1], जसुमति कौ है कुमार,
भूली भ्रम रूप मनौ आन कोउ हेरौ।
-मन बिहँसत गोपाल, भक्त-पाल, दुष्ट-साल,
जानै को सूरदास चरित कान्ह केरौ! ॥२७६॥८

※

देखि फिरे हरि ग्वाल दुवारैं।
तब इक बुद्धि रची अपनैं मन, गए[2] नाँघि पिछवारैं।
सूनैं भवन कहूँ कोउ नाहीं, मनु याही कौ राज।
भाँड़े धरत, उघारत, मूँदत दधि माखन कैं काज।
रैनि जमाइ धर्‌यौ हो[3] गोरस, पर्‌यौ स्याम कैं हाथ।
लै-लै खात अकेले आपुन, सखा नहीं कोउ साथ।
आहट सुनि जुवती घर आई, देख्यौ नंदकुमार।
सूर स्याम मंदिर अँधियारैं, निरखति बारंबार ॥२७७॥

※

अँधियारैं घर स्याम रहे दुरि।
अबहीं मैं देख्यौ नँदनंदन, चरित भयौ सोचति फुरि।
पुनि-पुनि चकित होति अपनैं जिय, कैसी है यह बात।
मटुकी कैं ढिग बैठि रहे हरि, करैं आपनी घात।

र—३। | १९। भीतर गए ताकि—२। भीतर | १४। (३) सो—
) केदारौ। | गए नाक—६। भीतर माँझ | ※ (ना) क
र साँझ परे—१, | परे—११। भीतर नाघि परे— |

सकल जीव जल-थल के स्वामी, चींटी दई उपाइ ।
सूरदास[1] प्रभु देखि ग्वालिनी, भुज पकरे दोउ[2] आइ ॥२७८॥८९६॥

* राग गौरी

स्याम[3] कहा चाहत से डोलत ?
पूछे[4] तैं तुम बदन दुरावत, सूधे[5] बोल न बोलत ।
पाए[6] आइ अकेले घर मैं दधि-भाजन मैं हाथ ।
अब[7] तुम काकौ नाउँ लेउगे, नाहिं न कोऊ साथ !
मैं जान्यौ यह मेरौ[8] घर है, ता धोखैं मैं आयौ ।
देखत हौं गोरस मैं चींटी, काढ़न कौं कर नायौ ।
||सुनि[9] मृदु बचन, निरखि मुख-सोभा, ग्वालिनि मुरि मुसुकानी ।
||सूर[10] स्याम तुम हौ अति नागर बात तिहारी जानी ॥२७९॥८९७॥

* राग सारंग

जसुदा[11] कहँ लौं कीजै कानि ।
दिन-प्रति कैसैं सही परति[12] है, दूध[13]-दही की हानि ।
अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि ।
गोरस खाइ, खवावै[14] लरिकनि, भाजत भाजन भानि ।

...ाम तब—२, ३, ...तब—१, ११ । ...पंचम । (काँ) ... कहा चाहत हौ ...१९ । (४) बूझे ...११, १४, १५ । ...बोलत—२, ३ । ...खत—६, १७ । ...अँध्यारे मंदिर— ...१२ १७ । (७) अब काहि कहा बनैहौ उत्तर—१, ६, ११, १२ । अब काकौ तुम उत्तर करिहौ—६, १४, १७ । (८) अपनौ—१, ११, १२ ।

|| इन दोनों चरणों के बीच (पू) में ये दो पंक्तियाँ और हैं—कोमल कमल समीप जु आनन गजगति राजत आनी । जलरुह मानौ बैरी बिसरयौ लजित सुमन मन हानी ॥

(९) ये सब बचन कहे मन-मोहन—२, ३ । सुनि-सुनि बचन चतुर मोहन के—६, १४, १७ । (१०) सूरदास प्रभु चतुर-सिरोमनि जाहु जाहु मैं (हम) जानी—२, ३, १६, १८, १९ ।

* (ना) गौरी । (काँ, रा) देवगंधार ।

(११) जसोदा—१, ३, ११ । (१२) जाति—२, ३ । (१३) दधि गोरस—६ । (१४) ढूढ़ि सब बासन भली करी यह बानि—१, ६, ११, १२ ।

मैं अपने मंदिर के कोनैं[1], राख्यौ माखन छानि[2]।
सोई जाइ तिहारैं ढोटा[3], लीन्हौ है पहिचानि।
बूझि[4] ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैंकु न संका मानि।
सूर स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि ॥२८०॥८६८॥

* राग सारंग

† माई हौं तकि लागि रही।
जब[5] घर तैं माखन लै निकस्यौ, तब मैं बाहँ गही।
तब[6] हँसि कै मेरौ मुख चितयौ, मीठी बात कही।
रही ठगी, चेटक सौ लाग्यौ, परि गई प्रीति सही।
बैठौ[7] कान्ह, जाउँ बलिहारी, ल्याऊँ और दही।
सूर स्याम पै ग्वालि सयानी सरबस दै निबही ॥२८१॥८६९॥

* राग गौरी

आपु गए हरुएँ सूनैं घर।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर।
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात, धरत अधरनि पर।
सैन देइ सब सखा बुलाए, तिनहिं देत भरि-भरि अपनैं कर।
छिटकि रही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन मैं डर।
उठत ओट लै लखत सबनि कौं, पुनि लै खात लेत ग्वालनि बर।

कौरा—१४। ② जानि ; ३, ४, ११। ③ -१, ११, १५। ④ बूझी घर मैं आयौ नैंकु न ती—१, ११, १५। पूछे बात न मानै क्यौं हूँ यही सक्ति करि जानि—२, ३, १४।

* (ना) गूजरी।

† यह पद केवल (ना, स, ल, गो, पू) में है।

⑤ जब घर मैं तै लै निकस्यौ दधि —२, ३। ⑥ हँसि दीन्हौ—११। ⑦ टाढ़े होहु—११

* (ना) नट।

आँखें भरि लीनी उराहनौ देन लाग्यौ ।
तेरौ री सुवन मेरी मुरली लै भाग्यौ ।
दै री मोकौं ल्याइ बेनु, कहि, कर गहि रोवै ।
ग्वालिनी डराति जियहिँ, सुनै जनि जसोवै ।
तू जो कह्यौ ऐसौ बेनु, इहाँ नाहिँ तेरौ ।
मुरली मैं जीव-प्रान बसत अहै मेरौ ।
मेवा मिष्टान्न और बंसी इक दीनी ।
लागी तिय चरन औ बलैया झुकि लीनी ॥२८४

※

ग्वालिनि जौ घर देखै आइ ।
माखन खाइ चोराइ स्याम सब[२], आपुन रहे छपाइ ।
ठाढ़ी भई मथनियाँ कैं ढिग, रीती परी कमोरी ।
अबहिँ गई, आई इनि पाइनि, लै गयौ को करि चोरी ?
भीतर गई, तहाँ हरि पाए, स्याम रहे गहि पाइ ।
सूरदास प्रभु ग्वालिनि आगैं, अपनौ नाम सुनाइ ॥२८

६

जौ तुम सुनहु जसोदा गोरी ।
-नँदन मेरे मंदिर मैं आजु करन गए चोरी ।
भई जाइ अचानक ठाढ़ी, कह्यौ भवन मैं को री ॥

। ② तब—१, २, ३, ६, ※ (ना) काप
ौरी ।(के,पृ)धनाश्री । ११, १६ । देवगंधार ।

रहे[१] छपाइ, सकुचि, रंचक ह्वै, भई सहज[२] मति भोरी ।
मोहिं भयौ माखन पछितावौ, रीती देखि कमोरी ।
जब गहि बाहँ कुलाहल कीनी, तब गहि चरन निहोरी ।
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी ।
सूरदास प्रभु देत दिनहिं[३] दिन ऐसियै लरिक-सलोरी ॥२८६॥६०४॥

* राग सारंग

† जानि जु पाए हौं हरि नीकैं ।
चोरि-चोरि दधि-माखन मेरौ, नित प्रति गीधि रहे[४] हौ छीकैं ।
रोक्यौ भवन-द्वार ब्रज-सुंदरि, नूपुर मूँदि अचानक ही कै ।
अब कैसैं जैयतु अपनैं बल, भाजन भाँजि, दूध दधि पी कै ?
सूरदास प्रभु भलैं परे फँद, देउँ न जान भावते जी कैं ।
भरि गंडूष, छिरक दै नैननि, गिरिधर भाजि चले दै कीकै ॥२८७॥६०५

❀ राग रामकली

‡ माखन-चोर री मैं पायौ ।
बहुत दिवस मैं कौरैं लागी, मेरी घात न आयौ ।

---

(१) हेरि छपाय सकुचि तजि गहि मनौ भई मति भोरी—२ । रहे छपाय तनक मेचक (मुचुक) ह्वै भई सहज मति भोरी—६, ११। (२) मनहुँ—१, १४, १७ । सकल—१६ । (३) निसा दिन हरि गुन सकल समोरी—२ । निसा दिन ऐसिऐ अलक सकोरी—३ । निसा दिन ऐसिऐ अलक सलोरी—६, १४, १७ ।

* (ना) गूजरी । (जौ) कान्हरा ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

(४) या छीके–१, ६, ११, १२ ।

* (ना) सारंग । (जौ) गौरी ।

‡ (वे, का, गो, जौ, कां, स्या) में इस पद का पाठ कुछ भिन्नता लिए हुए है । इन प्रतियों के पाठों में कोई विशेष अंतर नहीं है । नीचे (गो) के अनुसार पाठ दिया जाता है—

माषनचोर री मैं पायो ।
मैं जु कही सखी होतु कहा है, भाजन लगत भुँकायो ।
जो चाहौं तौ जान क्यौ पावै बहुत दिननु हौं पायो ।
बार-बार हौं ढूँका लागी, मेरी घात न आयो ।
नोइ नेत की करौं चमोटी, घूँघट मैं डरवायो ।
बिहसत निकसि रही दोउ दतियाँ तब लै कंठ लगायो ।
मेरे लाल को मारि सकै को रोहिनि गहि हलरायो ।
सूरदास प्रभु बालक लीला बिमल-बिमल जस गायो ॥

ते रोती देखि कमोरी मोहिँ अति लगत भुँ
ँ कह्यो, जानि हौं पाई कौन चोर है
र सौं कर गह्यौ, कह्यौ तब, मैं नहिँ माखन
उघरि गईँ दँतियाँ, लै सूर स्याम उर लायौ ॥

देखी ग्वालि जमुना जात ।
आपु ता घर गए पूछत, कौन है, कहि बात ।
जाइ देखे भवन भीतर[1], ग्वाल-बालक दोइ ।
भीर देखत अति डराने, दुहुँनि दीन्हौ रोइ ।
ग्वाल के काँधैं चढ़े तब, लिए छीँके उतारि ।
दह्यौ-माखन खात सब मिलि, दूध दीन्हौ डारि ।
बच्छ लै सब छोरि दीन्हे, गए बन समुहाइ[2] ।
छिरकि लरिकनि मही सौं भरि[3], ग्वाल दए चलाइ ।
देखि आवत सखी घर कौं, सखिनि[4] कह्यौ जु दौरि
आनि देखे स्याम घर मैं, भई ठाढ़ी पौरि
प्रेम अंतर, रिस भरे मुख, जुवति बूझति बात
चितै मुख तन सुधि बिसारी, कियौ उर नख-घात
अतिहिँ रस[5]-बस भई ग्वालिनि, गेह देह बिसारि
सूर प्रभु भुज गहे ल्याई, महरि पै अनुसारि ।

ज़री । —१। ③ तब—१। ④ सखनि रिस —१,
.। ② समुदाइ कीन्हौ दौरि—४, १७। ⑤ सौं अनुह

* राग गौरी

महरि तुम मानौ मेरी बात ।
ढूँढ़ि[1]-ढाँढ़ि गोरस सब घर कौ, हरयौ तुम्हारैं तात ।
कैसैं[2] कहति लियौ छींके तैं, ग्वाल-कंध दै लात ।
घर नहिँ पियत दूध धौरी कौ, कैसैं तेरैं खात ?
असंभाव[3] बोलन आई है, ढीठ ग्वालिनी प्रात ।
|| ऐसौ नाहिँ अचगरौ मेरौ, कहा बनावति बात ।
का मैं कहौं कहत सकुचति हौं, कहा दिखाऊँ गात !
हैं[4] गुन बड़े सूर के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात ॥२६०॥६०८॥

राग गौरी

† साँवरेहिँ बरजति क्यौं जु[5] नहीँ ।
कहा करौं दिन[6] प्रति की बातैं, नाहिँ न परतिँ सही[7] ।
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही ।
ता पाछैं घरहू के लरिकनि, भाजत[8] छिरकि मही ।
जो कछु धरहिँ दुराइ, दूरि लै, जानत ताहि तहीँ ।
सुनहु[9] महरि, तेरे या सुत सौं, हम पचि हारि रहीँ ।
¶ चोरी अधिक चतुरई सीखी जाइ न कथा कही ।
ता पर सूर बछुरवनि ढोलत, बन-बन फिरतिँ बही ॥२६१॥६०९॥

ह, कां, रा, श्या)
नौ) नट ।
ढूँढ़ि—१, १४ ।
सीके तैं लीनो--
और कहति सीके
, ३ । ③ दुष्ट भाव
है—६, १७ । कपट

|| (वे, का, गो, जौ) में इस चरण के पश्चात् यह एक पंक्ति अधिक है—चितवत चकृत ओट भए ठाढ़े जसुदा तन मुसुकात ।

④ ह्वा—२ ।

* (ना) सूहौ ।

† यह पद (वृ, कां, रा, श्या) में नहीँ है ।

⑤ तु—११ । ⑥ नित—
२ । ⑦ कही—२ । ⑧ मारत
—१४ । ⑨ कहा करैं—२ ।

¶ इस चरण के पश्चात (स. क) में ये दो चरण और हैं—जब बन जात छपाइ (छुड़ाइ) मटुकिया रचि-रचि बात कही अपने जिय के डरते तब जो कहु कही सो सही ॥

* राग

† अब ये झूठहु बोलत लोग ।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ, कब भयौ चोरी जोग ।
इहिँ[1] मिस देखन आवति ग्वालिनि, मुँह फाटे जु गँवारि ।
अनदोषे[2] कौं दोष लगावतिँ, दई[3] देइगौ टारि[4] ।
|| कैसैँ करि याकी भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयौ ?
|| ऊखल ऊपर आनि, पीठि दै, तापर सखा चढ़ायौ ।
जौ न पत्याहु चलौ सँग जसुमति देखौ नैन निहारि ।
सूरदास प्रभु नैँकु न बरजौ, मन मैँ महरि विचारि ॥२६२॥

* राग

मेरौ[5] गोपाल तनक सौ, कहा करि जानै दधि की चोरी
हाथ नचावत आवति ग्वारिनि, जीभ करै किन थोरी
कब सीकैँ[6] चढ़ि माखन खायौ, कब दधि-मटुकी फोरी
अँगुरी करि[7] कबहूँ नहिँ चाखत, घरहीँ भरी कमोरी
इतनी सुनत घोष की नारी, रहसि[8] चली मुख मोरी
सूरदास जसुदा कौ नंदन, जो कछु करै सो थोरी ॥२६३॥

(काँ, श्या) बिलावल।
ह पद (ना, रा) में
।
दिन प्रति दोष लगावति
—१६, १६। (२) अन-
। (३) गोद्यौ दै-दै
गारि—१६, १६। (४) ढारि
—११।
|| ये दो चरण (कां, श्या) मे नहीँ हैँ।
* (ना) बिलावल।
† यह पद (के, पू) मेँ नहीँ है।
(५) कहा करि
चोरी—२, ३, १६
(६) तेरे घर—२, ३
भरि—२, ३, १६।
—१, ६, ११, १५

राग सारंग

† कहै जनि ग्वारिनि झूठी बात ।
कबहूँ नहिं मनमोहन मेरौ, धेनु चरावन जात ।
बोलत है बतियाँ तुतरौहीं, चलि चरननि न सकात ।
कैसैं करै माखन की चोरी, कत चोरी दधि खात ।
देहीँ लाइ तिलक केसरि कौ, जोबन-मद इतराति ।
सूरज दोष देति गोबिँद कौं, गुरु लोगनि न लजाति ॥२६४॥६१२॥

* राग नटनारायन

‡ मेरे[1] लाड़िले हो तुम जाउ न कहूँ ।
तेरेही काजैं गोपाल, सुनहु लाड़िले लाल, राखे हैं भाजन भरि सुरस छहूँ ।
काहे कौं पराऐं जाइ, करत इते उपाइ, दूध-दही-घृत अरु माखन तहूँ[2] ।
करति कछू न कानि, बकति हैं कटु बानि, निपट निलज बैन बिलखि सहूँ ।
ब्रज की ढीठो[3] गुवारि, हाट की बेचनहारि, सकुचैं न देत गारि झगरत[4] हूँ ।
कहाँ लगि सहौं रिस, बकत भई हौं कृस, इहिं मिस सूर स्याम-बदन चहूँ ॥
॥२६५॥६१३॥

* राग कान्हरौ

§ इन अँखियनि आगैं तैं मोहन, एकौ पल जनि होहु नियारे ।
हौं[5] बलि गई, दरस देखैं बिनु, तलफत हैं नैननि के तारे ।

---

† यह पद केवल (गा) में है, जो फारसी लिपि में लिखी हुई है। अतः इसका शुद्ध पाठ कठिनता से निर्धारित किया जा सका है।

* (ना) टोड़ी।

‡ यह पद (स, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

(1) मेरे लाड़िले हो जननी कहति जिनि जाहु कहूँ—१, ११, १५। सांवरे हो तुम जिनि जाउ कहूँ—२। मेरे लाड़िले हो जनि जाहु कहूँ—६, १७। (2) चहूँ—२, ६, १४, १७। (3) माती—२। बाढ़ी—६, १४, १७। ढेढ़ी—११। (4) झगरि कहूँ—१। झगर गहूँ—६, ११, १७।

* (ना) केदारो।

(5) बलि बलि जाउँ (गई) मुखारविंद की तरसत हैं नैननि के तारे—२, ३। बलि बलि जाउँ बदन देखे बिनु तरसत हैं नैनन के तारे—१, १४, १७।

औरौ सखा बुलाइ आपने, इहिँ आँगन खेलौ मेरे बारे ।
निरखति[1] रहौं फनिग की मनि ज्यौं, सुंदर बाल-विनोद तिहारे ।
मधु, मेवा, पकवान, मिठाई, ब्यंजन खाटे, मीठे, खारे ।
सूर स्याम[2] जोइ-जोइ तुम चाहौ, सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे ॥२६६॥

॥ ६१४ ॥

* राग धनाश्री

चोरी करत कान्ह धरि पाए ।
निसि-बासर मोहिँ बहुत सतायौ अब हरि हाथहिँ आए ।
माखन-दधि मेरौ सब खायौ, बहुत अचगरी कीन्ही ।
अब तौ घात[3] परे हौ लालन, तुम्हैँ भलैँ मैँ चीन्ही ।
दोउ भुज पकरि, कह्यौ कहँ जैहौ, माखन लेउँ मँगाइ ।
तेरी सौं मैँ नैँकुँ न खायौ[4], सखा गए सब खाइ ।
मुख तन चितै, बिहँसि हरि दीन्हौ, रिस तब गई बुझाइ ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी, सूरदास बलि जाइ ॥२६७॥६१५॥

राग धनाश्री

† मथति ग्वालि हरि देखी जाइ ।
ए हुते माखन की चोरी, देखत छवि रहे नैन लगाइ ।
लत तनु सिर-अंचल उघर्‌यौ, बेनी पीठि डुलति[5] इहिँ भाइ ।
दन-इंदु पय-पान करन कौं, मनहुँ उरग उड़ि[6] लागत धाइ ।

---

१) चितवति—१४ । (२) दास (३) आय—२ । (४) चाख्यौ— श्या) में नहीं है ।
मन इच्छा—१,६,११,१५ । १, ६, ११, १५ । (५) डुरत—२ । (६) उठि
(ना) भोपाली । † यह पद (ना, वृ, का, रा, १, ४, १७ ।

खे स्याम-अँग-अँग-प्रति-सोभा, भुज भरि धरि, लीन्हौ उर लाइ।
रही जुवती हरि कौ मुख, नैन-सैन दै, चितहिँ चुराइ।
मन को गति-मति बिसराई, सुख दीन्हौ कछु माखन खाइ।
ास प्रभु रसिक-सिरोमनि तुम्हरो लीला को कहै गाइ ॥२६८॥६१६॥

* राग बिलावल

† दधि लै मथति ग्वालि गर्वीली।
रुनक-झुनक कर कंकन बाजै, बाहँ डुलावत ढीली।
भरी गुमान बिलोवति ठाढ़ी, अपनैँ रंग रँगीली।
छबि की उपमा कहि न परति है, या छबि की जु छबीली।
अति विचित्र गति कहि न जाइ अब, पहिरे सारी नीली।
सूरदास प्रभु माखन माँगत, नाहिँन देति हठीली ॥२६६॥६१७॥

राग ललित

‡ देखौ[1] हरि मथति ग्वालि दधि ठाढ़ी।
जोबन मदमाती इतराती, बेनि ढुरति कटि लौँ, छबि बाढ़ी।
दिन थोरी, भोरी, अति गोरी[2], देखत ही जु स्याम भए चाढ़ी।
करषति है, दुहुँ करनि मथानी, सोभा-रासि भुजा सुभ[3] काढ़ी।
इत-उत अंग मुरत झकझोरत, अँगिया बनी कुचनि सौँ माढ़ी[4]।
सूरदास प्रभु रीझि थकित भए मनहुँ काम साँचे भरि काढ़ी ॥३००॥६१८

के, पू) रामकली।
ह पद केवल (के, गो,
है।
ह पद (ना वृ कां, रा
श्या) मेँ नहीँ है।

① देखौ हरि मथति ग्वालि दधि भेद सो ठाढ़ी—१, २, ४, १ १४। ② कोरी १ ४, ११, १४, १७। ③ गहि गाढ़ी—१, ६, ११, १४, १५। जे काढ़ी—६, १७। ④ गाढ़ी—२ ६ १४, १७। ⑤ सौँ—२

राग बिलावल

† गए स्याम तिहिँ ग्वालिनि कैँ घर ।

देखी जाइ मथति दधि ठाढ़ी, आपु लगे खेलन द्वारे पर ।
फिरि चितई, हरि दृष्टि गए परि, बोलि लए हरुएँ सूनैँ घर ।
लिए लगाइ कठिन कुच कैँ बिच, गाढ़ैँ चाँपि रही अपनैँ कर ।
उमँगि अंग अँगिया उर दरकी, सुधि बिसरी तन की तिहिँ औसर ।
तब भए स्याम बरष द्वादस के, रिझै लई जुवती वा छबि पर ।
मन हरि लियौ तनक से ह्वै गए देखि रही सिसु-रूप मनोहर ।
माखन लै मुख धरति स्याम कैँ सूरज प्रभु रति-पति नागर-वर ॥२०१॥६१९

राग रामकली

‡ देखौ मेरे भाग की सुभ घरी ।

नवल रूप, किसोर मूरति, कंठ लै भुज भरी ।
जाके चरन-सरोज गंगा, संभु लै सिर धरी ।
जाके चरन-सरोज परसत, सिला सुनियत तरी ।
जाके बदन-सरोज निरखत आस सिगरी भरी ।
सूर प्रभु के संग बिलसत सकल कारज सरी ॥ २०२॥६२० ।

* राग बिलावल

§ ग्वालिनि उरहन कैँ मिस आई ।
नंद-नँदन तन-मन हरि लीन्हौ, बिनु देखैँ छिन रह्यौ न जाई ।

---

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, ...) मेँ नहीँ है ।
(१) भीतर—६ ।

‡ यह पद केवल (स, क) मेँ है ।
* (रा) गौरी ।

§ यह पद (ना, वृ, कां, श ...) मेँ नहीँ है ।

सुनहु महरि अपने सुत के गुन, कहा कहौं किहि भाँति बनाई ।
चोली फारि, हार गहि तोरयौ, इन बातनि कहौ[1] कौन बड़ाई ।
माखन खाइ, खवायौ ग्वालनि, जो उबरयौ सो दियौ लुढ़ाई ।
सुनहु सूर, चोरी सहि लीन्ही, अब कैसैं सहि जाति ढिठाई[2] ॥२०३॥६२१॥

राग सारंग

† झूठेहिं मोहिं लगावति ग्वारि ।
खेलत तैं मोहिं बोलि लियौ इहिं, दोउ भुज भरि दीन्ही अँकवारि ।
मेरे कर अपनैं उर[3] धारति, आपुन ही चोली धरि फारि ।
माखन आपुहिं मोहिं खवायौ, मैं धौं कब दीन्हौ है डारि ।
कह जानै मेरौ बारौ भोरौ, झुकी महरि दै-दै मुख गारि ।
सूर स्याम ग्वालिनि मन मोह्यौ, चितै रही इकटकहिं निहारि ॥२०४॥६२२॥

* राग गौरी

कबहिं करन गयौ माखन चोरी ।
जानै[4] कहा कटाच्छ तिहारे, कमल नैन मेरौ इतनक सो री ।
दै-दै दगा बुलाइ भवन मैं भुज भरि भेंटति उरज-कठोरी ।
उर नख चिन्ह दिखावत डोलति, कान्ह चतुर भए[5] तू अति भोरी ?
आवति नित-प्रति उरहन कैं मिस, चितै रहति ज्यौं चंद चकोरी ।
सूर सनेह ग्वालि[6] मन अँटक्यौ अंतर प्रीति जाति नहिं तोरी ॥२०५॥६२३॥

---

(१) कह होत—३, ६, ६, ३, १७ । (२) खुटाई—६, १२ । ...ाई—१७ । झुटाई—१८ ।
† यह पद (ना, वृ, काँ, रा, ...ा) में नहीं है।
(३) कुच—१, ६, ११, १२ ।
* (ना) बिलावल । (काँ, रा, स्या) सारंग ।
(४) जानति हौं तु—१, ६, ११, १२ । (५) भए राधा—२ । ग्वारिनि तुम—३ । राधा तुम गोरी—१३ । (६) जात नहिं हटक्यौ नैननि—१, ११, १२ स्याम—२, ३ ।

* राग गौरी

† कहा कहौं हरि के गुन तोसौं।
सुनहु महरि अबहीं मेरैं घर, जे रँग कीन्हे मो सौं।
मैं दधि मथति आपनैं मंदिर, गए तहाँ इहिं भाँति।
मो सौं कह्यौ बात सुनु मेरी, मैं सुनि कै मुसुकाति।
बाहँ पकरि चोली गहि फारी, भरि लीन्ही अँकवारि।
कहत न बनै सकुच की बातैं, देखौ हृदय उघारि।
माखन खाइ निदरि नीकी विधि, यह तेरे सुत की घात।
सूरदास प्रभु तेरे आगैं, सकुचि तनक ह्वै जात ॥२०६॥६२४॥

⊛ राग गौड़ मलार

‡ स्याम तन देखि री आपु तन देखिए।
भीति जौ होइ तौ चित्र अवरेखिए !
कहाँ मेरे कुँवर पाँचही बरष के, रोइ अजहूँ सु पै-पान माँगैं।
तू[1] कहाँ ढीठ, जोबन-प्रमत सुंदरी, फिरति इठलाति गोपाल आगैं।
कहाँ मेरे कान्ह की तनक सी आँगुरी, बड़े बड़े नखनि के चिह्न तेरैं।
मष्ट[2] करु, हँसैंगे लोग, अँकवारि भरि[3] भुजा पाई कहाँ स्याम मेरैं।
नैननि[4] झुकी सु मन मैं हँसी नागरी, उरहनौ देत रुचि अधिक बाढ़ी।
सुनि[5] सखी सूर सरबस हर्यौ साँवरैं, अनउतर महरि कैं द्वार ठाढ़ी॥२०७॥६२

* (रा) जैतश्री।
† यह पद (ना, वृ, कां, [illegible]) में नहीं है।
·· (ना) सोरठि।
‡ यह पद (वृ, कां, रा, श्या) [illegible] नहीं है।
(१) तू महामस्त अति ढीठ सी सुंदरी, फिरति ऐंडाति गोपाल आगैं—१४। (२) कहा गोपाल कह देखि तू आपको कहा तैं लगावत है कान्ह मेरे—१, १७। (३) को—२, १४। (४) ठग ठगै सुख झुकी नैनहू नागरी—१, ११, १५। मुख रिसानी नैननि हँसी नागरी—२। ठग ठगै नैन बैनी[illegible] हँसी ग्वालिनी मुख देखै सोभा—१४। (५) इक सुनो सूर सरब[illegible] हर्यौ साँवरे अनउतर सुनति ह[illegible] को जु ठाढ़ी—१, १७।

* राग

कत हो कान्ह काहु कैं जात ।
ये सब ढीठ गरब गोरस कैं, मुख सँभारि बोलतिं नहिँ बात ।
जोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात ।
ज्यौँ-ज्यौँ बचन सुनौँ मुख अमृत, त्यौँ-त्यौँ सुख पावत सब गात ।
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन कैं मिस आवतिँ प्रात ।
सूर सु[1] कत हठि दोष लगावतिँ घरही कौ माखन नहिँ खात ॥२०८॥

† घर गोरस जनि जाहु पराए ।
दूध भात भोजन घृत अंमृत अरु आछौ करि दह्यौ जमाए ।
नव लख धेनु खरिक घर तेरैँ, तू कत माखन खात पराए ।
निलज ग्वालिनी देतिँ उरहनौ, वै झूठैँ करि बचन बनाए ।
लघु-दीरघता कछू न जानैँ, कहुँ बछरा कहुँ धेनु चराए ।
सूरदास प्रभु मोहन नागर, हँसि-हँसि जननी कंठ लगाए ॥२०९॥

* राग [illegible]

‡ (कान्ह कौं) ग्वालिनि दोष लगावति जोर[2] ।
इतनक दधि माखन कैं कारन कबहिँ गयौ तेरो ओर ।
तू तौ धन-जोबन की माती, नित[3] उठि आवति भोर ।
लाल कुँवर मेरौ कछू न जानै, तू है तरुनि किसोर ।

(ना) देवगिरि। (के, पू) [illegible]ाँ, रा, श्या) बिलावल ।
सकति—१,६,६,१७ । [illegible]-२ । सहज—३ । मटकि [illegible] सक्ति ११

† यह पद केवल (ल) में है ।

* (ना) देवगिरि । (काँ, रा, श्या) गौरी ।

‡ यह पद (ब शा का, के, पू) में नहीं है ।

② चोर—१, ११, निलज भई उठि आवति २, ३, ११, १६ ।

ऊपर नैन चढ़ाए डोलति, ब्रज[1] मैं तिनुका तोर ।
सूरदास जसुदा अनखानी, यह जीवन-धन मोर ॥२१०॥६२८॥

* राग देवगंधा

† कान्हहिं बरजति किन[2] नँदरानी ।
एक गाउँ कैं बसत कहाँ लौं, करैं नंद की कानी ।
तुम जो कहति हौ, मेरौ कन्हैया, गंगा कैसौ पानी ।
बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट कौ दानी ।
बचन बिचित्र, कमल-दल-लोचन, कहत सरस बर[3] बानी ।
अचरज महरि तुम्हारे आगैं, अबै जीभ तुतरानी ।
कहैं मेरौ, कान्ह कहाँ तुम ग्वारिनि, यह बिपरीति न जानी ।
आवति सूर उरहने कैं मिस, देखि कुँवर मुसुकानी ॥२११॥६२

राग धना

‡ माखन माँगि[4] लियौ जसुमति सौं ।
माता सुनत तुरत लै आई, लगी[5] खवावन रति सौं ।
मैया मैं अपनैं कर खैहौं, धरि दै मेरैं हाथ ।
माखन खात चले उठि खेलन, सखा जुरे सब साथ ।
मथुरा जात ग्वालिनी देखी, चरचि लई हरि आइ ।
सूर स्याम ता घर के पाछैं, बैठि रहे अरगाइ ॥२१२॥६३०

ब्रज में तिनुका सो
, ३, ११, १६ ।
) सूहो ।
द (का, के, ५) में नहीं है ।
② क्यों न—१, २, ३, ११ ।
③ रस—१६ ।
‡ यह पद (ना-बू कां, श्या) में नहीं है ।
④ माँगत है—१, १
१५ । ⑤ देति खवाय मगन
रति सौं—१, ३, ४, ११, १५

* राग

मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ ।
मेरे घर कौ द्वार, सखी री, तब लौं देखति रहियौ ।
॥ दधि-माखन द्वै माट अछूते[1] तोहिं सौंपति हौं सहियौ ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ, नंद[2]-सुवन सखि लहियौ ।
॥ ये[3] सब बचन सुने मन-मोहन, वहै राह मन गहियौ ।
सूर पौरि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे दै धहियौ[4] ॥२१३॥६

२

† देख्यौ जाइ स्याम घर भीतर ।
अबहीं निकसि कहत भई सोई, फिरि आई तुम्हरैं घर ।
सखा साथ के चमकि गए सब, गह्यौ स्याम कर धाइ ।
औरनि जानि जान मैं दीन्हौ, तुम कहँ जाहु पराइ ?
बहुत अचगरी करत फिरत हौ, मैं पाए करि घात ।
बाहँ पकरि लै चली महरि पै, करत रहत उतपात ।
देखौ महरि, आपने सुत कौं, कबहूँ नहिं पतियाति ।
बैठे स्याम भवन हीं अपनैं, चितै-चितै पछिताति ।
बाहँ पकरि तू ल्याई काकौं, अति बेसरम गँवारि ।
सूर स्याम मेरे आगे[5] खेलत, जोबन-मद-मतवारि ॥२१४॥६

लजित । (कां, श्या)
रा) बिलावल ।
चरण (कां, रा) में
है—६, १४, १७ ।

(२) नँद कौ आवन लहियौ—२, ३, १६ । (३) ये सुभ बचन निकट है मोहन सुनि कर उर सब गहियो—१, ११, १२ । वाके बचन सुनत हैं बैठे मनहीं मन दै बहियो—६, १४, १७ । (४) ठहियै बहियौ—१६ ।

† यह पद (ना, वृ, श्या) में नहीं है ।

(५) आँगन—२ ।

* राग ९

† जसुदा तू जो कहति ही मोसौं ।

दिन प्रति देत उरहनौ आवति, कहा तिहारैं कोसौं ।
वहै उरहनौ सत्य करन कौं, गोविंदहिं गहि ल्याई ।
देखन चली जसोदा सुत कौं ह्वै गए सुता पराई ।
तेरे नैन, हृदय, मति नाहीं, वदन देखि पहिचानै ।
सुनु[1] री सखी कहति डोलति है या कन्या सौं कान्है ।
तैं तौ नाम स्याम मेरे कौ, सूधौ करि है पायौ ।
सूरदास प्रभु[2] देखि खरिक तैं अबहीं आपै[3] आयौ ॥२१५॥६

❀ राग

‡ रही ग्वालि हरि कौ मुख चाहि ।

कैसे चरित किए हरि अबहीं बार-बार सुमिरति करताहि ।
बाहँ पकरि घर तैं लै आई, कहा चरित कीन्हे हैं स्याम ।
जात[4] न बनै कहत नहिं आवै, कहति महरि तू ऐसी बाम ।
जानी बात तिहारी सबकी, जसुमति कहति इहाँ तैं जाहि ।
सूरदास प्रभु के गुन ऐसे, बुधि[5] बल करि को जीतै ताहि ॥२१६॥१

× राग

§ गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं[6] ।

माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए[7] सब चूनै ।

(ना) काफी । (का, रा, नाश्री ।
ह पद (के, पू) में ।
देखौ—३ । ② स्वामी तुरत त्रिया ह्वै आयौ—१ १२ । स्वामी नटनागर देखि खरिक तैं—१३ । ③ है यह—३ ।

❀ (क) नट ।

‡ यह पद (ना, वृ, काँ, रा श्या) में नहीं है ।

④ जानत—३ । ⑤ बुधि करी तब जीतौ ताहि—१, ३, ६, ११, १४ ।

× (रा) धनाश्री

§ यह पद (वृ, का में नहीं है ।

⑥ सूनो—१, २, ⑦ सोक हठ दूनो—१ । कीने—३ । सबै दुरि

बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि[२] कर्‌यौ दस टूक।
सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक।
आइ गई ग्वालिनि तिहिँ औसर, निकसत हरि धरि पाए।
देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए।
दोउ भुज धरि गाढ़ैँ करि लीन्हे, गई महरि के आगैँ।
सूरदास अब बसै कौन ह्याँ, पति रहिहै ब्रज त्यागैँ ॥२१७॥६३५॥

राग बिलावल

† ऐसो हाल मेरैँ घर कीन्हौ, हौं ल्याई तुम पास पकरिकै।
फोरि[१] भाँड़ दधि माखन खायौ, उबर्‌यौ सो डार्‌यौ रिस करिकै।
लरिका छिरकि मही सौं देखै, उपज्यौ पूत सपूत महरि कै।
बड़ौ माट घर धर्‌यौ जुगनि कौ, टूक-टूक कियौ सखनि पकरि कै।
पारि सपाट चले तब पाए, हौं ल्याई तुमहीँ[३] पै धरि कै।
सूरदास प्रभु कौं[४] यौं राखौ, ज्यौं राखिए गज मत्त जकरि कै॥२१८॥६३६॥

राग कान्हरौ

‡ करत कान्ह ब्रज-घरनि अचगरी।
खीझति महरि कान्ह सौं पुनि-पुनि, उरहन लै आवति हैँ सगरी।
बड़े बाप के पूत कहावत, हम वै बास बसत इक बगरी।
नंदहु तैँ ये बड़े कहैहैँ फेरि बसैहैँ यह ब्रज नगरी।

सोर हठि कीनो—११। कूने—१४। ③ तासु—१, १२।

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, ...) में नहीँ है।

① फोरि सब बासन घर के दधि माखन खायौ जो उबर्‌यौ सो डार्‌यौ रिस करि कै—१, २, ६, ११। ② सोऊ टूक पाँच दस करि कै—१, ६, ११, १२। ③ तुम पास पकरि कै—१, ११। तुम ही पै पकरि कै—१४। ④ ऐसे राखौ जैसे राखत गज मत्त जकरि कै—६, १७।

‡ यह पद (ना, ल, वृ, का, रा, श्या) में नहीँ है।

नी कैं खीझत हरि रोष, झूठहिं मोहिं लगावति धगरी।
स्याम मुख पोंछि जसोदा, कहति सबै जुवती हैं लँगरी ॥२१९

रा

† नितही नित उठि आवति मोर।
मेरे बारेहिं दोष लगावति, ग्वालिनि जोबन जोर।
दूध दही माखन कैं कारन, कब गयौ तेरी ओर।
धन माती इतराती डोलै, सकुच नहीं करै सोर।
मेरौ कन्हैया कहाँ तनक सौ, तू है कुचनि कठोर।
तेरे मन कौ यहाँ कौन है, लह्यौ[1] कटक कौ छोर।
का पर नैन चलावलि आवति, जाति[2] न तिनका तोर।
सुनौ सूर ग्वालिनि की बातैं, त्रासति कान्ह[3] जु मोर ॥२२०

‡ मेरौ माई कौन कौ दधि चोरै।
मेरैं बहुत दई कौ दीन्हौ लोग पियत हैं औरै।
कहा भयौ तेरे भवन गए जो पियौ तनक लै भोरै।
ता ऊपर काहैं गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरै।
माखन खाइ, मह्यौ सब डारै, बहुरौ भाजन फोरै।
सूरदास यह रसिक ग्वालिनी, नेह नवल सँग जोरै ॥२२१

पद (ना, ल, वृ, कां,
(नहीं है।
यौ आजु कटक कौ

छोर—१, ३, ६, ११। ② जाति
नहीं ब्रज तिनका तोर—१, २,
६, ११। ③ कान्ह जीवन धन

मोर—१, २, ६, १
‡ यह पद (वे,
गो, जै) में है।

राग

अपनौ गाउँ लेउ नँदरानी।
बड़े बाप की बेटी,[1] पूतहिँ भली पढ़ावति बानी।
सखा-भीर लै पैठत घर मैँ आपु खाइ तौ सहिऐ।
मैँ जब चली सामुहैँ पकरन, तब के गुन कहा कहिऐ।
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैँ घर पौढ़ी आइ।
हरैँ-हरैँ बेनी गहि पाछैँ, बाँधी पाटी लाइ।
सुनु मैया, याके गुन मोसौँ, इन मोहिँ लयौ बुलाई।
दधि मैँ पड़ी सेँत की मोपै चींटी सबै कढ़ाई।
टहल करत मैँ याके घर की यह पति सँग मिलि सोई।
सूर बचन सुनि हँसी जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई[2] ॥३२२॥

रा[illegible]

† महरि तैँ ब्रज चाहति कछु और।
बात एक मैँ कही कि नाहीँ, आपु लगावति झौर।
जहाँ बसैँ पति नाहिँ आपनी, तजन कह्यौ सो ठौर।
सुत के भएँ बधाई पाई, लोगनि देखत[3] हौर।
कान्ह पठाइ देति घर लूटन, कहति करौ यह गौर।
ब्रज घर समुझि लेहु महरैटी,[4] कहत सूर कर जोर ॥३२३॥

[illegible]ी तातैँ पूतहिँ भले [illegible]ढ़ावति बानी—१, ६, ② जोइ—२। [illegible] पद (वृ, का, श्या) मेँ नहीँ है।

③ देखति हौर—१। खेदति हौर—६, १७। खेदत हौर—१४। ④ महरि जू इहा करति कर जोरी—१। महरेठी कर जोर—३। महरेटी ह[illegible] जोर—६, ११, १९। कहत किए कर जोर—

राग नटना

† लोगनि कहत[1] कुकति तू बौरी।
दधि-माखन गाँठी दै राखति, करत फिरत सुत चोरी।
जाके घर की हानि होति नित, सो नहिँ आनि कहै री ?
जाति-पाँति के लोग न देखति, और बसैहै नैरी।
घर-घर कान्ह खान कौं डोलत, बड़ी कृपन तू है री।
सूर स्याम कौं जब जोइ भावै, सोइ तबहीँ तू दै री ॥३२४॥६

* राग

महरि तैँ बड़ी कृपन है माई।
दूध-दही बहु बिधि कौ दीनौ, सुत सौँ धरति छपाई।
बालक बहुत नहीँ री तेरैँ, एकै कुँवर कन्हाई।
सोऊ तौ घरही घर डोलतु, माखन खात चोराई।
बृद्ध बयस, पूरे पुन्यनि तैँ, तैँ बहुतै निधि पाई।
ताहू के खैबे-पीबे कौँ, कहा करति[2] चतुराई।
सुनहु न बचन चतुर नागरि के जसुमति[3] नंद सुनाई।
सूर[4] स्याम कौँ चोरी कैँ मिस, देखन है यह आई ॥३२५।

❀

अनत[5] सुत गोरस कौं कत जात ?
घर[6] सुरभी कारी धौरी कौ माखन माँगि न खात।

पद (ना, बृ, कॉ, रा,
नहीँ है।
कतहि बुझावत—३।
त—१, १७।
ना) नट (क) राम-
ी, रा, स्या) सोरठ।

② इती—२, ३, ६, १४,
१७। ③ नंद महरि मुसुकाई—
१६, १८। नंद नारि मुसुकाई—
११। ④ सूरदास प्रभु के देखन कौ
इहिँ मिस ग्वालिनि आई—२।
* (ना) टोड़ी। (कॉ, रा,

स्या) धनाश्री।
⑤ कान्ह प्रातह
जात—२। कान्ह प
जात—३, १६, १८,
घर सुरभी नव लाख
गसी नहिँ जात—५
११, १४, १७।

दिन प्रति सबै उरहने कैं मिस, आवति हैं उठि प्रात ।
अनलहते[1] अपराध लगावतिँ; बिकट बनावतिँ बात ।
निपट निसंक बिवादतिँ सम्मुख, सुनि-सुनि[2] नंद रिसात ।
मोसौँ कहतिँ कृपन तेरैँ घर ढोटाहू न अघात ।
करि मनुहारि उठाइ गोद लै, बरजति सुत कौँ मात ।
सूर स्याम नित सुनत उरहनौ, दुख पावत तेरौ[3] तात ॥३२६॥६४४॥

* राग बिलावल

† भाजि गयौ मेरे भाजन फोरि ।
लरिका सहस एक सँग लीन्हे, नाचत फिरत साँकरी खोरि ।
मारग[4] तौ कोउ चलन न पावत, धावत गोरस लेत अँजोरि ।
सकुच न करत, फाग सी खेलत, तारी[5] देत, हँसत मुख मोरि ।
बात कहौँ तेरे ढोटा की, सब ब्रज बाँध्यो प्रेम की डोरि ।
टोना सौ पढ़ि नावत सिर पर, जो भावत सो लेत[6] है छोरि ।
आपु खाइ सो[7] सब हम मानैँ, औरनि देत सिकहरैँ तोरि ।
सूर सुतहिँ[8] बरजौ नँदरानी, अब तोरत चोली-बँद-डोरि[9] ॥३२७॥६४५।

❀ राग नट

‡ हरि सब भाजन फोरि पराने ।
हाँक देत पैठे दै पेला, नैँकु न मनहिँ डराने ।

अनसमुझे—१, २, ११। —६, १७ । बिन १६। ② मोहिँ—१६। —१६।
(गो) नट (क) धनाश्री।
ह पद (ना वृ कां रा, श्या) में नहीं है।

④ माखन खाइ जगाइ बालकनि बनचर सहित बछरुवन छोरि—१, ११, १५। ⑤ गारी—१, ११, १५। ⑥ लेत अजोरी—१ ११ १५। ले है छोरि—३।

⑦ तौ—१, ११, १५। ⑧ सुनहु—३। ⑨ जोरी—१, ३, ११, १५।

* (क) बिलावल।

‡ यह पद (ना, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

सौं के छोरि, मारि लरिकनि कौं, माखन-दधि सब खाइ ।
भवन मच्यौ दधि काँदौ, लरिकनि रोवत पाए जाइ ।
सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तेरौ सौ कहुँ नाहिँ ।
हाटनि-बाटनि, गलिनि कहूँ कोउ, चलत नहीँ डरपाहिँ ।
रितु आए कौ खेल, कन्हैया सब दिन खेलत फाग ।
रोकि रहत गहि गली साँकरी, टेढ़ो बाँधत पाग ।
बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीँ मनहिँ सिहाति ।
सुनैं[1] सूर ग्वालिनि की बातैं, सकुचि महरि पछिताति ॥३२८

*

† कन्हैया[2] तू नहिँ मोहिँ डरात ।
षटरस धरे[3] छाँड़ि कत पर घर, चोरी करि करि खात ।
बकत-बकत तोसौं पचिहारी, नैंकुहुँ लाज न आई ।
ब्रज-परगन-सिकदार[4] महर, तू, ताकी करत नन्हाई ।
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात ।
सूर स्याम अब लौं तुहिँ बकस्यौ, तेरी जानी घात ॥३२९

*

‡ सुनु री ग्वारि कहौं इक बात ।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ, जबहीँ पावौ घात ।
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहिँ खिझायौ ।

नहु—१, ६, ११, १७ ।
।
ा) धनाश्री ।
पद (वृ, कां, स्या)
। ।

② कन्हैया तू ताकी करत न बात—३ । ③ धरयौ—३, ६, १७ । परेउ—१४ । ④ सिरदार—१, ११, १५ ।
* (ना) जैतश्री । (गो)

बिलावल । (रा
‡ यह पद (
में नहीं है ।

साँटिनि मारि करौं पहुनाई, चितवत कान्ह डरायौ ।
अजहूँ मानि, कह्यौ करि मेरौ, घर-घर तू जनि जाहि ।
सूर स्याम कह्यौ, कहूँ न जैहौं, माता मुख-तन चाहि॥३२०॥६४८

* राग बिलावल

† तेरैं लाल मेरौ माखन खायौ ।
दुपहर दिवस जानि[1] घर सूनौ, ढूँढ़ि-ढँढ़ोरि आपही आयौ ।
खोलि किवार, पैठि मंदिर मैं, दूध-दही सब सखनि खवायौ ।
ऊखल[2] चढ़ि, सींके कौ लीन्हौ, अनभावत भुइँ मैं ढरकायौ ।
दिन प्रति हानि होति गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ ।
सूर[3] स्याम कौं हटकि न राखै, तैं ही पूत अनोखौ जायौ ॥३२१॥६४९

राग बिलावल

‡ हौं वारी रे मेरे तात ।
काहे कौं लाल पराए घर कौ, चोरि-चोरि दधि माखन खात ?
गहि-गहि पानि मटुकिया रीती, उरहन कैं मिस आवत-जात ।
करि मनुहार, कोसिबे कैं डर, भरि-भरि देति जसोदा मात ।
फूटी चुरी गोद भरि ल्यावैं, फाटे चीर दिखावैं गात ।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि पूछति बात ॥३२२॥६५०॥

❀ राग रामकली

§ माखन खात पराए घर कौ ।
नित प्रति सहस मथानी मथिऐ, मेघ-सब्द दधि-माट घमरकौ ।

ना) टोड़ी । (कां, रा,
रंग ।
पद (के, पू) में
देखि २ ३ ② सींके

तैं काढ़ि खाट चढ़ि मोहन कछु खायौ कछु लै ढरकायौ—१, ६, ११, १९ । ③ सूरदास कहतीं ब्रजनारी पूत अनोखौ तैं ही जायौ—६ १९

‡ यह पद केवल (शा) में है ।
* (के, क, पू) धनाश्री ।
§ यह पद (ना, वृ, कां, रा, स्या) में नहीं है ।

|| कितने अहिर जियत मेरैं घर, दधि मथि लै बेंचत महि मरकौ[1]।
नव लख धेनु दुहत हैं नित प्रति, बड़ौ नाम है नंद महर कौ।
ताके पूत कहावत हौ तुम, चोरी करत उघारत फरकौ।
सूर स्याम कितनौ तुम खैहौ, दधि-माखन मेरैं जहँ-तहँ ढरकौ ॥३३३॥९५१॥

राग रामकली

† मैया मैं नहिं[2] माखन खायौ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि, मेरैं मुख लपटायौ।
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि[3] लटकायौ।
हौं[4] जु कहत नान्हे कर अपनैं मैं कैसैं करि पायौ।
मुख दधि पोंछि, बुद्धि[5] इक कीन्ही, दोना पीठि[6] दुरायौ।
डारि साँटि, मुसुकाइ[7] जसोदा,[8] स्यामहिं कंठ लगायौ।
बाल-बिनोद-मोद[9] मन मोह्यौ, भक्ति-प्रताप दिखायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख, सिव[10] बिरंचि नहिं पायौ॥३३४॥९५२॥

राग बिलावल

‡ तेरी सौं सुनु सुनु मेरी मैया
आवत उबटि पर्‌यौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया।
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति, हौं पय पियत पतूखिनि लैया।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी, भाजि चल्यौ कहि दैया दैया।

|| यह 'चरण' (स) में नहीं।

(१) ढरकौ—१४।

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, [illegible]) में नहीं है।

(२) नाहीं दधि—१, ६, ११, [illegible]। (३) धर—१, ६, १४। (४) तहाँ निरखि तू नान्हे पाइन कहु कैसे करि पायौ—६, १७। (५) कहत नँदनंदन—१, ६, ११, १५। (६) पाछु—६, १४, १७। (७) मुख चूमि—१४। (८) तबहि गहि सुत कौ—१, ६, ११, १५। (९) भाव करि मोह्यौ (मोहन) माता मनहिं रिझायौ—२, ६, १४, १७। (१०) सिव विरंचि बौरायौ—१, ६, ११, १५। देवनि दुर्लभ पायौ—२। देवनि दुर्लभ गायौ—१४।

‡ यह पद केवल (शा) में है।

सीँग बिच ह्वै हौँ आयौ, जहाँ न कोऊ हो रखवैया।
पुन्य सहाय भयौ है, उबर्यौ बाबा नंद-दुहैया।
चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया।
दास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि लेति बलैया॥२३५॥६५

राग रामकली

† जसुमति तेरौ बारौ कान्ह अतिहीं जु अचगरौ।
दूध-दही-माखन लै डारि देत सगरौ।
भोरहिँ नित प्रतिही उठि, मोसौँ करत झगरौ।
ग्वाल-बाल संग लिए घेरि रहै डगरौ।
हम-तुम सब बैस एक, कातैं को अगरौ।
लियौ दियौ सोई कछु, डारि देहु झगरौ।
सूर स्याम तेरौ अति, गुननि माहिँ अगरौ।
चोली अरु हार तोरि छोरि लियौ सगरौ॥२३६॥६५४॥

* राग गौरी

‡ हाँ लगि नैँकु चलौ नँदरानी।
मेरे सिर की नई बहनियाँ, लै गोरस मैँ सानी।
हमैँ-तुम्हैँ रिस-बैर कहाँ कौ, आनि दिखावत ज्यानी।
देखौ आइ पूत कौ करतब, दूध मिलावत पानी।
या ब्रज कौ बसिबौ हम छाँड़्यौ, सो अपनैँ जिय जानी।
सूरदास ऊसर की बरषा थोरे जल उतरानी॥२३७॥६५५॥

(बे, ल, शा, का, ... है। * (रा) बिलावल। ... मेँ है।
‡ यह पद केवल (शा, रा)

राग रामकली

† देखौ माई या बालक[1] की बात ।

बन-उपबन, सरिता-सर[2] मोहे, देखत[3] स्यामल गात ।

मारग चलत अनीति करत हैं, हठ करि माखन खात ।

पीतांबर[4] वह सिर तैं ओढ़त, अंचल दै मुसुकात ।

तेरी सौं कहा कहौं जसोदा, उरहन देति लजात ।

जब हरि आवत तेरे आगैं सकुचि तनक ह्वै जात ।

कौन-कौन गुन कहौं स्याम के, नैंकु न काहुँ[5] डरात ।

सूर[6] स्याम मुख निरखि जसोदा, कहति कहा यह बात ॥३३८॥९५६॥

* राग बिलावल

‡ सुनि-सुनि री तैं महरि जसोदा तैं सुत बड़ौ[7] लड़ायौ ।

इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं, कछु बिथरयौ कछु खायौ ।

काकैं नहीं अनोखौ ढोटा, किहिं न कठिन करि जायौ ।

मैं हूँ अपनैं औरस पूतैं बहुत दिननि मैं पायौ ।

तैं जु गँवारि पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायौ ।

सूरदास[8] ग्वालिनि अति झूठी[9] बरबस कान्ह बँधायौ ॥३३९॥९५७॥

❀ राग नट

§ नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ ।

ब्रज-बीथिनि, पुर-गलिनि, घरै-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ ।

ह पद (ना, वृ, कॉ, रा, नहीं है ।
ढोटा—३ । लरिका—६,
) सब—१, ३, ६, ११ ।
ऊखल पात—३ । मोहे
। गात—६, १७ । ④
ारी ओढ़ि लेत है—६,
१७ । ⑤ कहूँ—६ । ⑥ सूरदास प्रभु ठगी ग्वारिनी बरजे है जु रिसात—३ ।

* (कॉ) सूहौ ।

‡ यह पद (ना, के, क, पू, रा) में नहीं है ।

⑦ अधिक—३ । भलो—६, ११ । खरो—१६, १९ । ⑧ सूरदास ग्वालिनी बरबट कान्ह बाह उर लायौ—३ । ⑨ रूठी—१ ११, १२ । छूटी—१६ ।

❀ (क) बिलावल ।

§ यह पद (ना, वृ, कॉ, रा श्या) में नहीं है ।

लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ ।
काहू कैं घर करत भँड़ाई,[1] मैं ज्यौं त्यौं करि पकरन पायौ ।
अब तौ इन्हैं जकरि धरि[2] बाँधौं, इहि सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ[3] ।
सूर स्याम भुज गही नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनैं ढँग[4] लायौ ॥३४०॥९५८॥

उलूखल-बंधन

* राग गौरी

† ऐसी रिस मैं जौ धरि पाऊँ ।
कैसे हाल करौं धरि हरि के, तुमकौं प्रगट दिखाऊँ ।
सँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस[5] गात ।
मारे बिना आजु जौ छाँड़ौं, लागै मेरैं तात ।
इहिं अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति ।
भली महरि सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति ।
रिस मैं रिस अतिहीं उपजाई, जानि जननि अभिलाष ।
सूर स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माष[6] ॥३४१॥९५९॥

* राग सोरठ

‡ जसुमति रिस करि-करि रजु करषै ।
सुत हित क्रोध देखि माता कैं, मनहीं मन हरि हरषै ।
उफनत छीर जननि करि ब्याकुल, इहिं बिधि भुजा छुड़ायौ ।
भाजन फोरि दही सब डार्‌यौ, माखन कीच[7] मचायौ ।

---

(१) बड़ाई—१, ३, ११ । (२) बाँधौगी—१, ११, १२ । कै बाँधौं—३ । (३) भँड़ायौ—१, ११, १२ । मँगायौ—१४ । (४) ढिग आयौ—१, ११, १४, १२ । हठि आयौ—६, १७ ।

* (क) बिलावल ।

† यह पद (ना, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

(५) सब—२, १४ । (६) भाष—३, ६, ६, १७ ।

* (ना) ललित । (का) सारंग । (क) धनाश्री ।

‡ यह पद (वे, ना, स, शा, वृ, गो, जै, कां, रा, श्या) में किंचित् रूपांतर से दो स्थानों पर मिलता है । किंतु इस संस्करण में यह एक ही स्थान पर रक्खा गया है ।

(७) मुँह लपटायौ—१, ११, १२ । मुइ लपटायौ—६, १७, १६ ।

लै आई जेँवरि अब बाँधौं, गरब जानि न बँधायौ।
अंगुर द्वै घटि होति सबनि सौं, पुनि-पुनि और मँगायौ।
नारद-साप भए जमलार्जुन, तिनकौं अब जु उधारौं।
सूरदास प्रभु कहत भक्त-हित जनम[1]-जनम तनु धारौं॥३४२॥९६०॥

राग रामकली

† जसोदा एतौ कहा रिसानी।
कहा भयौ जौ अपने सुत पै, महि ढरि परी मथानी ?
रोषहिँ[2] रोष भरे दृग तेरे,[3] फिरत पलक पर पानी।
मनहुँ सरद के कमल कोष पर मधुकर मीन सकानी।
स्रम जल किंचित निरखि बदन पर, यह छबि अति[4] मन मानी।
मनौ चंद नव उमँगि सुधा, भुव ऊपर बरषा ठानी।
गृह-गृह गोकुल दई दाँवरी बाँधति भुज नँदरानी।
आपु बँधावत, भक्तनि छोरत, बेद बिदित भई बानी।
गुन लघु चरचि करति स्रम जितनौ, निरखि बदन मुसुकानी।
सिथिल अंग सब देखि सूर प्रभु-सोभा-सिंधु-तिरानी॥३४३॥९६१॥

* राग सारंग

बाँधौं आजु कौन[5] तोहिँ छोरै।
बहुत लँगरई कीन्हौ मोसौं, भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै।
जननी अति रिस जानि बँधायौ, निरखि बदन, लोचन जल ढोरै।
यह सुनि ब्रज-जुवतीँ सब धाईँ कहतिँ कान्ह अब क्यौं नहिँ छोरै[6]।

---

(१) जुग-जुग मैं—१, ११।
† यह पद (वे, ल, शा, का, के, गो, क, जै) में है।
(२) रोस रोस भरे अंग तेरे फिरत पयलरा पानी—११। (३) तारे—६। (४) कहत मन मानी—१। कहत न मानी—११।
* (क) धनाश्री।
(५) तोहि को छोरै—२
(६) चोरै—१, २, ११, १४।
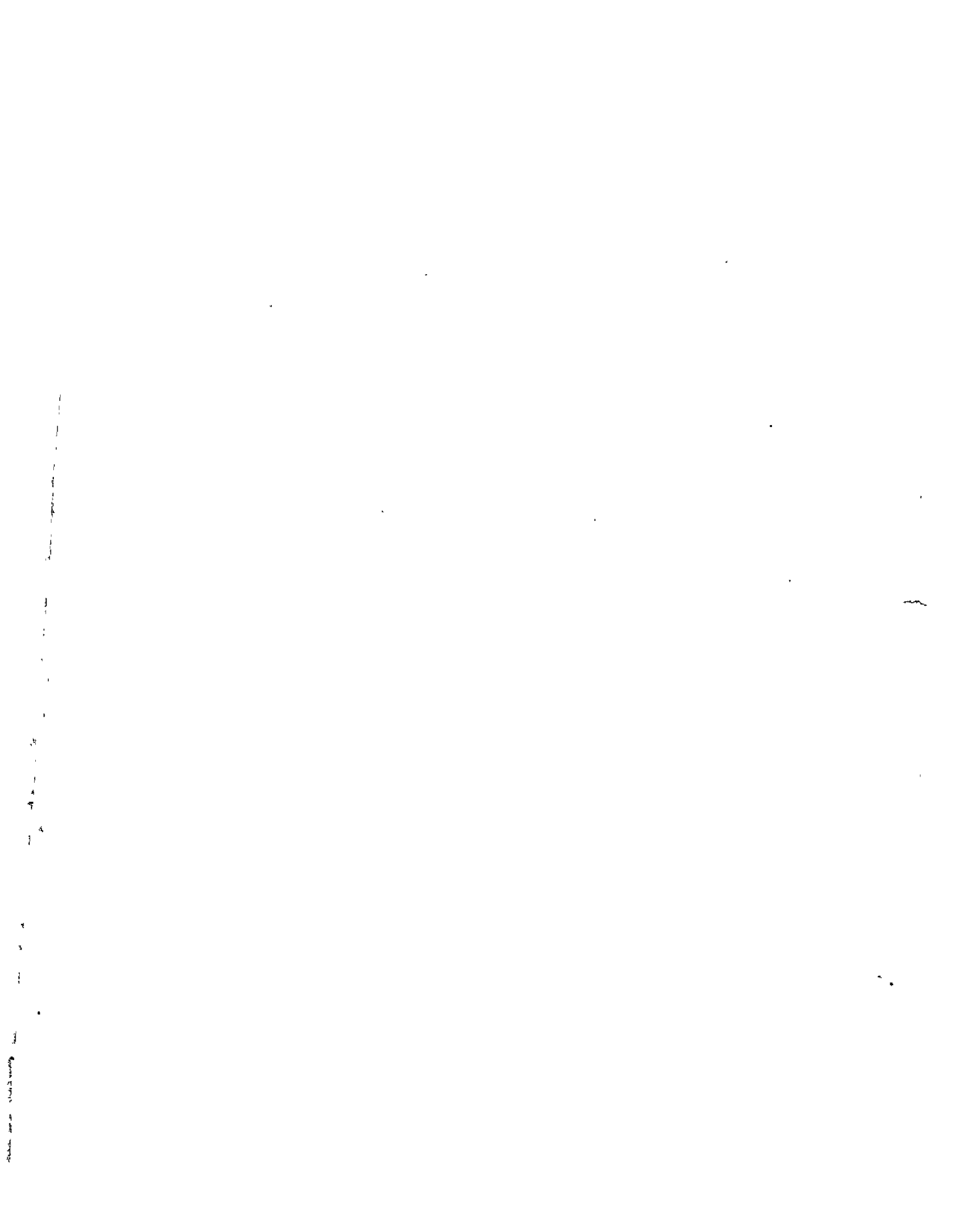
उलूखल-बंधन

ल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै।
ो देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भईं जहँ-तहँ मुख मोरै।
हु महरि ऐसी न बूझिऐ सुत बाँधति माखन दधि थोरै।
स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक[1] परी हम तैं यह भोरैं ॥३४४॥९६२॥

* राग आसावरी

जाहु चली अपनैं-अपनैं घर।
तुम[2]हीं सबनि मिलि ढीठ करायौ, अब आईं छोरन बर।
मोहिं अपने बाबा की सौहैं, कान्हहिं अब न पत्याउँ।
भवन जाहु अपनैं-अपनैं सब, लागति हौं मैं पाउँ।
मोकौं जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, बड़े नंद के लाल ॥३४५॥९६३॥

* राग सोरठ

जसुदा तेरौ मुख हरि जोवै।
कमलनैन हरि हिचिकिनि[3] रोवै, बंधन छोरि जसोवै।
जौ तेरौ सुत खरौ अचगरौ, तऊ कोखि कौ जायौ।
कहा भयौ जौ घर कैं ढोटा, चोरी माखन खायौ।
कोरी[4] मटुकी दह्यौ जमायौ, जाख[5] न पूजन पायौ।

कित री हम नैननि ही ।

(ना) गूजरी। (कां, श्या) (रा) बिहागरा।

तुमहीं सब मिलि ढीठ करयौ अति अब आई बंधन छोरे पर—२।

* (ना, रा) ललित। (के, कां, पू, श्या) नट। (क) बिलावल।

(३) सुसुकनि—२। (४) तुरत दोहनी..—२, ३, १६, १७, १८, १९। (५) जापु—१। चाष—३। चोकु—६, १७, १८। जाखन—१४।

तिहिँ[1] घर देव पितर काहे कौं, जा घर कान्हर[2] आयौ ।
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटै, कर्म-फंद सब काटै ।
सोई इहाँ जेँवरी बाँधे, जननि साँटि लै डाँटै ।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के, ऊखल आपु बँधायौ ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत ही देह धारि कै आयौ ॥३४६॥९६४॥

* राग बिहागरौ

† देखौ माई कान्ह हिलकियनि रोवै ।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ, डरनि आँसुवनि धोवै ।
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ, सकल लोग ब्रज जोवै ।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिस, लाजनि अँखियनि गोवै ।
ग्वाल कहैँ धनि जननि हमारी, सुकर सुरभि नित नोवै ।
बरबस[3] ही बैठारि गोद मैँ, धारैँ बदन निचोवै ।
ग्वालि कहैँ या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै ?
आनि देहिँ अपने घर तैँ हम, चाहति जितौ जसोवै ।
जब-जब बंधन छोर्‌यौ चाहतिँ, सूर कहै यह को वै ।
मन माधौ-तन, चित गोरस मैँ, इहिँ बिधि महरि बिलोवै ॥३४७॥९६

राग सा

‡ (माई) नैँकुहूँ न दरद करति, हिलकिनि हरि रोवै ।
बज्रहु तैँ कठिन हियौ, तेरौ है जसोवै ।

---

(1) ता—२, ३, ६, १४, ...१७ ।
(2) ऐसौ आयौ—२, ६,
* (ना) मलार ।
† यह पद (वे, ना, शा, गो, जौ) में है ।
(3) चटपट—११ ।
‡ यह पद (ना, वृ, रा, श्या) में नहीँ है ।

पलना पौढ़ाइ जिन्हैं विकट बाउ काटै।
उलटे भुज बाँधि तिन्हैं लकुट लिए डाँटै।
नैं कुहूँ न थकत पानि, निरदई अहीरी।
अहो नंदरानि, सीख कौन पै लही री।
जाकौं सिव सनकादिक सदा रहत लोभा।
सूरदास प्रभु कौ मुख निरखि देखि सोभा ॥३४८॥९६६॥

* राग बिहागरौ

कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत।
बालक[1] बदन बिलोकि जसोदा, कत रिस करति अचेत।
छोरि उदर[2] तैं दुसह दाँवरी, डारि कठिन कर बेँत।
कहि धौं[3] री तोहिँ क्यौं करि आवै, सिसु पर तामस एत।
मुख आँसू अरु माखन-कनुका, निरखि नैन छबि देत।
मानो स्रवत सुधानिधि मोती, उडुगन अवलि समेत।
ना जानौं किहिँ पुन्य प्रगट भए इहिँ ब्रज नंद-निकेत।
तन-[4]मन-धन न्यौछावरि कीजै सूर स्याम कैं हेत ॥३४९॥९६७॥

* राग केदारौ

हरि के बदन तन धौं चाहि।
तनक दधि कारन जसोदा इतौ कहा रिसाहि।
लकुट कैं डर डरत ऐसैं[5] सजल सोभित डोल।

पंचम। (कां) कल्यान। नट।
[1] दर—२, ३, १६, बारिज—१४। [2] कमर—१, ११, १२। [3] तोकौं कैसैं आवत है—१, ११, १२। [4] सरबस तौ—१, ११, १२। सरबस नित—६, १७।
* (ना, पू) नट नारायनी—(के. क) नट।
[5] जैसै—१, ११, १२ १७।

नील-नीरज-दल[1] मनौ अलि-अंसकनि[2] कृत लोल।
बात बस समृनाल जैसैं प्रात पंकज-कोस।
नमित मुख इमि अधर सूचत, सकुच मैं कछु रोस।
कितिक गोरस हानि, जाकौं करति है अपमान।
सूर ऐसे बदन ऊपर वारिऐ तन[3]-प्रान ॥३५०॥६

* २

मुख-छबि देखि हो नँद-घरनि।
सरद निसि कौ अंसु अगनित इंदु आभा हरनि।
ललित श्री गोपाल-लोचन-लोल-आँसू-ढरनि।
मनहुँ बारिज बिथकि[4] बिभ्रम, परे पर-बस परनि।
कनक-मनि-मय-जटित-कुंडल-जोति जगमग करनि।
मित्र-मोचन मनहुँ आए, तरल गति ह्वै तरनि।
कुटिल कुंतल, मधुप मिलि मनु, कियौ चाहत लरनि।
बदन कांति बिलोकि सोभा सकै सूर न बरनि ॥३५१॥

† मुख-छबि कहा कहौं बनाइ।
निरखि निसि-पति बदन-सोभा, गयौ गगन दुराइ।
अमृत अलि मनु पिवन आए, आइ रहे लुभाइ।
निकसि सर तैं मीन मानौ, लरत कीर छुराइ।

—१। ② ओस-
ल—१, ११ १०,
कृत जो डोल —६,
धन—१, ११, १२।

* (ना) नट नारायनी।
(गो) रामकली। (क) नट। (का,
श्या) बिलावल।
④ बिलखि—१, ६, ११,

१२, १३, १८, १
† यह पद के
है।

कनक-कुंडल-स्रवन बिभ्रम कुमुद निसि[1] सकुचाइ ।
सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ ॥३५२॥९७०॥

राग केदारौ

† हरि-मुख देखि हो नँद-नारि ।
महरि ऐसे सुभग सुत सौं, इतौ कोह निवारि ।
सरद[2]-मंजुल-जलज-लोचन लोल, चितवनि दीन ।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर, मकरध्वज द्वै मीन ।
ललित कन-संजुत कपोलनि लसत कज्जल अंक ।
मनहुँ राजत रजनि, पूरन कलापति[3] सकलंक ।
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि, लै हिय लाइ ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, सूर जन बलि जाइ ॥३५३॥९७१॥

* राग बिहागरौ

कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तैं ।
जा कारन तू छोरति नाहीं, लकुट न डारति कर तैं ।
सुनहु[4] महरि ऐसी न बूझियै, सकुचि गयौ मुख डर तैं ।
ज्यौं[5] जल-रुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिँन सर तैं ।
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी,[6] मोहनि मूरति बर तैं ।
सूर स्याम-लोचन जल बरषत जनु मुकुता हिमकर तैं ॥३५४॥९७२॥

---

(१) मिस ।

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै) में है ।

(२) जलज मंजुल लोल लोचन सरद—१, ६, ११, १५ ।

(३) कला अति अकलंक—१, ११, १५ । ससि कला निकलंक—६ ।

* (ना) देवसाख । (के, पू) कान्हरा । (क) धनाश्री । (कां, रा, श्या) नट ।

(४) महरि तोहिँ ऐसी न बूझिऐ स्रमित अमित तो डर तैं—६ । देखि जसोदा बदन कमल की शोभा चढ़ी जो तेरे डर ते—१६, १६ । (५) मनहुँ कमल दधि सुत समयो तकि—१, ३, ६, ११, १५, १७ । (६) बांधे मोहन—१, ३, ६, ११, १५, १७ ।

* राग कल्यान
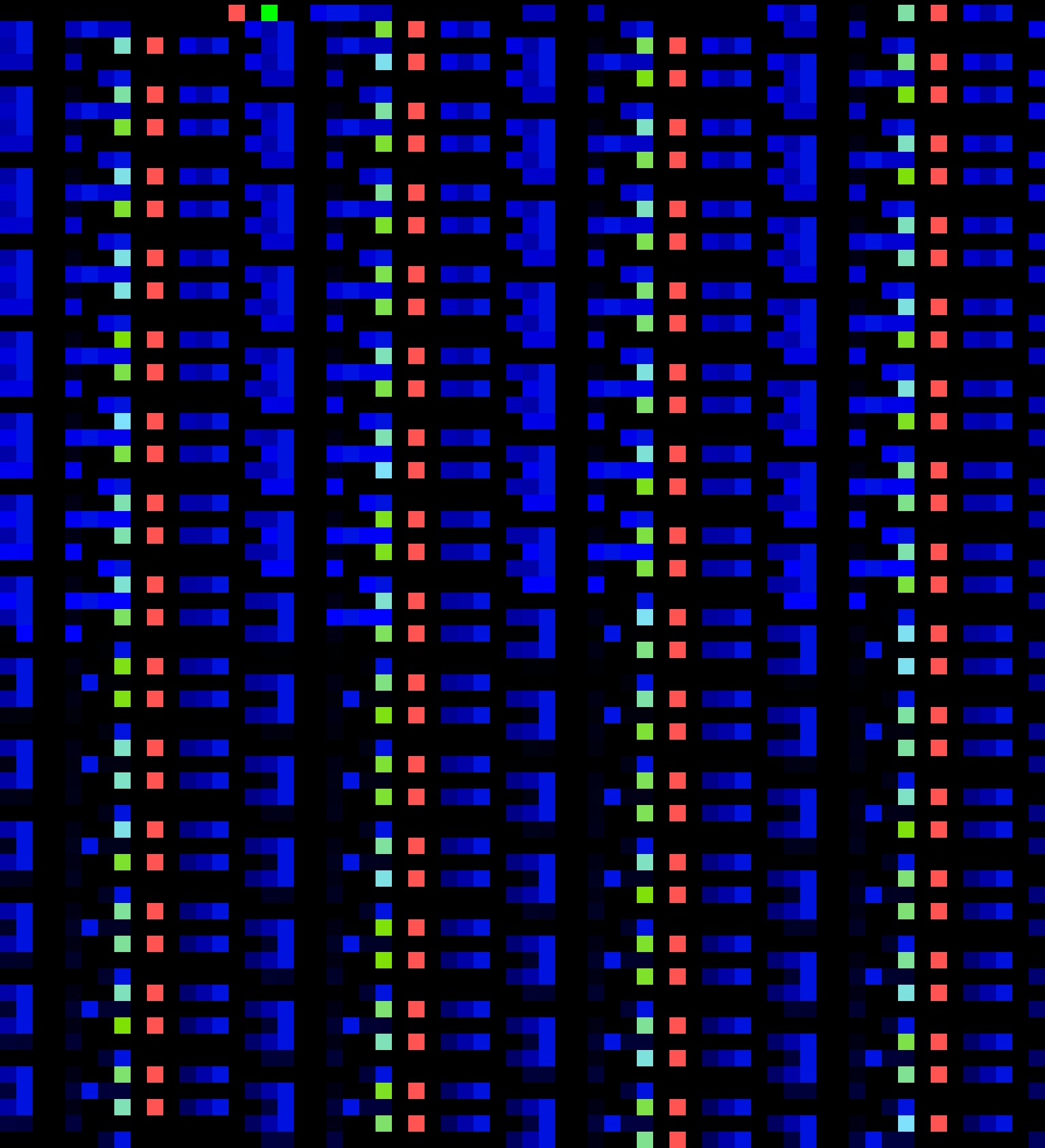
कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात ।
ढोटा मेरौ तुमहिं बँधायौ, तनकहिं माखन खात ।
अब मोहिं माखन देति मँगाए, मेरैं घर कछु नाहिं !
उरहन कहि-कहि साँझ-सबारैं, तुमहिं बँधायौ याहि ।
रिसही मैं मोकौं गहि दीन्हौ, अब लागीं पछितान ।
सूरदास अब[1] कहति जसोदा, बूझ्यौ सबकौ ज्ञान ॥३५५॥६७३॥

⊛ राग धनाश्री

† कहा भयौ जौ घर कैं लरिका चोरी माखन खायौ ।
अहो जसोदा कत त्रासति हौ यहै कोखि कौ जायौ ।
बालक अजौं अजान न जानै केतिक दह्यौ लुटायौ ।
तेरौ[2] कहा गयौ ? गोरस कौ गोकुल अंत न पायौ ।
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन[3] पास बँधायौ ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन[4] छायौ ।
पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछैं बिलखि बदन मुरझायौ ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि, हँसि करि कंठ लगायौ ॥३५६॥६७४

× राग धनाश्री

‡ चित दै चितै तनय मुख ओर ।
[अ]त सीत भीत जलरुह ज्यौं, तुव कर लकुट निरखि सखि घोर ।

[...] देसकार । (क) धनाश्री ।
[...]सि—१, ११, १२ ।
[...]) देवसाख । (का) नट ।
[...] पद (ख, का, के, पू)
[...]है ।

② तेरौ सखि कह खायौ—१, ११, १२ । तेरौ कह खायौ—१६ । ③ आपन—१, २, ११, १२ । ④ तन—१, ११, १२ । बन—३ ।

× (ना) कल्यान ।
‡ यह पद (वृ, का, रा, श्या[...] में नहीं है ।

|| आनन ललित स्रवत जल सोभित, अरुन चपल लोचन की कोर।
¶ कमल-नाल तैँ मृदुल ललित भुज ऊखल बाँधे दाम कठोर।
लघु अपराध देखि बहु[1] सोचति, निरदय हृदय बज्र सम तोर।
सूर[2] कहा सुत पर इतनी रिस कहि[3] इतनै कछु माखन-चोर ॥३५७॥९७५॥

* राग बिलावल

† जसुदा देखि सुत की ओर।
बाल बैस रसाल पर, रिस इती कहा कठोर।
बार बार निहारि[4] तुव तन, नमित[5] -मुख दधि-चोर।
तरनि किरनहिँ परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर।
त्रास तैँ अति चपल गोलक, सजल सोभित छोर।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर।
% देत छबि अति गिरत उर पर अंबु-कन के जोर।
≠ ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरति[6] टूटैँ डोर।
⊥ नंद-नंदन जगत-बंदन करत आँसू कोर।
दास[7] सूरज मोहिँ सुख-हित निरखि नंदकिसोर ॥३५८॥९७६॥

|| इस चरण के उपरांत कुछ प्रतियों में यह एक चरण और मिलता है—डारत मनौ गंडूष सुधा भरि बिधु मंडल तैँ उभय चकोर।

¶ इस चरण के पश्चात् भी कुछ प्रतियों में यह अतिरिक्त चरण मिलता है—मनहुँ भुजंग फिरत बाँबी पर उरझि रहे कंचुरि के जोर।

① मन सोचत है सम कुलिस कठिन उर तोर—३, ९, १४। ② सूरदास सुखरासि जगत गुरु बरबस कहति जु माखन चोर—२। ③ बिलपति कहत न माखन चोर—३, ९, १४, १७।

* (ना) भैरव।

† यह पद (वृ, के, कां, पू, रा, श्या) में नहीं है।

④ डरात तो तैँ—२। ⑤ निमिष दधि मुख = चोर—१, १२। भीत दधि मुख चोर—११।

% यह चरण (वे, का) में नहीं है।

≠ यह चरण (वे, स, का) में नहीं है।

⑥ गिरत तट की ओर—२।

⊥ यह चरण (स) में नहीं है।

⑦ सूरदास सु (जु) महरि मुख (सुख) हित—१, ११, १२। दास सूरज महरि मुख हित—२।

* राग

† चितै धौं कमल-नैन की ओर ।
कोटि चंद वारौं मुख-छबि पर ए हैं साहु के चोर ।
उज्ज्वल अरुन असित दीसति[1] हैं, दुहुँ नैननि की कोर ।
मानौ सुधा पान कैं कारन, बैठे निकट चकोर ।
कतहिं[2] रिसाति जसोदा इनसौं, कौन ज्ञान है तोर ।
सूर[3] स्याम बालक मनमोहन, नाहिंन तरुन किसोर ॥ ३५९ ॥

राग नट

‡ देखि री देखि हरि बिलखात ।
अजिर लोटत राखि जसुमति, धूरि-धूसर गात ।
मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत, छिनक मौन रहात ।
कमल मधि अलि उड़त, सकुचत, पच्छ दल-आघात ।
चपल दृग, पल भरे अँसुवा, कछुक ढरि-ढरि जात ।
अलप जल पर सीप द्वै लखि, मीन मनु अकुलात ।
लकुट कैं डर ताकि तोहिं तब पीत पट लपटात ।
सूर प्रभु पर वारियै ज्यौं, भलेहिं माखन खात ॥ ३६०

※

§ कब के बाँधे ऊखल दाम[4] ।
कमल-नैन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम ।

ना) गौरी । १२। देखति हौ—२,३। ② * (क) ध
ह पद (वृ, कां, रा, सुनि जसुदा ऐसी न बूझिऐ—२। मलार। (रा,
' नहीं है। ③ सूरदास स्वामी बालक हैं—२। § यह पद (
देखति है ॥ ‡ यह पद केवल (ना) में है ④ स्याम

कौन जाने कौन पुन्य प्रगटे हैं तेरैं आनि
जाकौं दरसन काज जपै मुख-चारि।
केतिक गोरस हानि जाकौ सूर तोरै कानि
डारौं तन स्याम रोम-रोम पर वारि ॥३६२॥६८०॥

* राग सोरठ

(जसोदा) तेरौ भलौ[1] हियौ है माई।
कमल[2]-नैन माखन कैं कारन, बाँधे ऊखल ल्याई।
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ, सपनैं हु देइ न दिखाई।
याही तैं तू गर्ब भुलानी,[3] घर बैठे निधि पाई।
जा मूरति जल-थल मैं व्यापक निगम न खोजत पाई।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई।
तब[4] काहू सुत रोवत देखति, दौरि लेति हिय लाई।
अब[5] अपने[6] घर के लरिका सौं इती करति निठुराई!

ऐसौ सुत कौन
पायौ मोहन मुरारि।
ऐसी निरमोही माई
महरि जसोदा को जानै कौन
पुन्य प्रगटे जाके मुख
देखे दुख हरत हमार।
सूर स्याम सुख रासि
कहौं कहा अद्भुत
जाकौ मुख-दरसन
काज जपै मुख चारि॥
(गौ) का पाठ जो (वे,
का, जै) से प्रायः मिलता है—
वारौं हो वे कर जिन
हरि कौ बदन छुवौ
वारौं वह रसना जिन
बोल्यौ है तुतकारि।
ऐसी निर्मोही भई
जसुदा न तोसी निरमोही।
देख्यौ गोपाल लाल
आयौ क्यौं हाथ पसारि।
कुलिस तैं कठिन बाहँ
वै तेरी छतिया
अजहूँ न द्रवति ज्यौं
देखत उपर मुरारि।
केतिक गोरस हानि
जाकौ तू तोरति कानि
डारयौ तुहिँ सूर स्याम
के रोम रोम पर वारि॥
* (ना, श्या) नट। (क
कौं, रा) धनाश्री।
(१). कठिन—२। (२) सुंद
स्याम कमल दल लोचन—२
(३) करति है—२। भरी है-
६, १४, १७। (४) औरन
सुत रोवति देखति—२, १६।(
यह तौ है वरही कौ ढोटा या
कहा निठुराई—२। (६) काहे
६, १४, १७।

बारंबार[1] सजल लोचन करि[2] चितवत कुँवर कन्हाई।
कहा करौं, बलि जाउँ, छोरि तू, तेरी सौंह दिवाई।
सुर[3] पालक, असुरनि[4] उर सालक, त्रिभुवन जाहि डराई।
सूरदास[5] प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ॥३६३॥९८१॥

* राग केदारौ

† देखि री नंद-नंदन-ओर।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर।
बार बार डरात तोकौं, बरन बदनहिँ थोर।
मुकुर-मुख, दोउ नैन ढारत, छनहिँ छन छबि-छोर।
|| सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसैं डोर (ल)।
रस[6] भरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर।
¶ लकुट कैं डर देखि जैसे भए स्रोनित ओर।
¶ लाइ उरहिँ, बहाइ रिस जिय, तजहु प्रकृति कठोर।
कछुक करुना करि जसोदा, करतिँ निपट निहोर।
% सूर स्याम त्रिलोक[7] की निधि, भलैँ हि माखन-चोर ॥३६४॥९८२॥

बार बार जल लोचन रोवत कुँवर-कन्हाई—
(२) भरि—१; ११, १२। मुनि पालक असुर सँहा· १७। (४) सब असुर —१, ११, १४। (५) बलि बलि चरनन की कहा बसाई—२, १६। (ना) ललित। (के, क,

† यह पद (वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।
|| यह चरण (ना) में नहीं है।
(६) सरस अंबुज भँवर भीतर भ्रमत है जनु भोर—१। रस भरे अंबुज फिरे फिरि भ्रमत है भ्रम भोर—२। रस भरे अंबुज भवर भीतर भ्रमत जानो (जनु) भोर—३, ११।
¶ ये दो चरण (स के क) में नहीं हैं।

% (के, पू) में अंतिम चरण के पश्चात् ये दो चरण अधिक लिखे हैं:—
सषिनि बहु विधि देखि सोभा दियौ प्रान अकोर।
स्याम सुभग सरोज आनन चारु चित के चोर।
(७) बिलोकि जसुमति कहति माखन चोर—१, ६, ११, १२।

* राग धना

† तब तैं बाँधे ऊखल आनि ।
बालमुकुंदहिँ कत तरसावति, अति कोमल अँग जानि ।
प्रातकाल तैं बाँधे मोहन, तरनि चढ्यो मधि आनि ।
कुम्हिलानौ मुख चंद दिखावति, देखौ धौं नँदरानि ।
तेरैं[1] त्रास तैं कोउ न छोरत, अब छोरौ तुम आनि ।
कमलनैन बाँधेही छाँड़े, तू बैठी मनमानि ।
जसुमति के मन के सुख-कारण आपु बँधावत पानि ।
जमलार्जुन कौं मुक्त करन हित, सूर स्याम जिय[2] ठानि॥ ३६५॥ ६

❀ रा

‡ कान्ह[3] सौं आवत क्यौंऽब[4] रिसात ।
लै लै लकुट कठिन कर अपनैं परसत कोमल गात ।
देखत[5] आँसू गिरत नैन तैं यौं सोभित ढरि जात ।
मुक्ता मनौ चुगत खग खंजन, चोँच पुटो न समात ।
डरनि लोल[6] डोलत हैं इहिँ बिधि, निरखि भ्रुवनि[7] सुनि बात ।
मानौ सूर सकात[8] सरासन, उड़िबे कौं अकुलात ॥ ३६६॥ ६

(क) नट ।
[य]ह पद (ना, वृ, कां, रा, [...]ँ नहीँ है ।
[...]) तेरी—६,१४,१७ । ② [...],३,११,१४,१५ ।
(ना) देवगंधार ।

‡ यह पद (वृ, कां, रा, श्या) मेँ नहीँ है ।
③ कैसे आवत तोहिँ रिसात —२ । ④ क्यौं बिरसात—१ । क्यौंहि रिसात—११ । ⑤ अँसुवा टूटि परत नैननि तै सोभित अर जल-
जाल—२ । ⑥ डोल[...] ११,१२, १७ । ⑦ सु[...] ६,११। सुमुख—१४ । [...]—१,३,६,११ ।

* राग रामकली

जसुदा यह न बूझि कौ काम ।
कमलनैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैँ दाम ।
पुत्रहु तैं प्यारौ[1] कोउ है री, कुल-दीपक मनि-धाम ।
|| हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन गोरस अरु ग्राम ।
देखियत कमल बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम ।
¶ बैठी है मंदिर सुख छहियाँ, सुत दुख पावत घाम ।
% येई हैं सब ब्रज के जीवन सुख पावति लिएँ नाम ।
सूरदास प्रभु भक्तनि कैं बस यह[2] ठानी घनश्याम ॥३६७॥६८५

※ राग धनाश्री

† ऐसी रिस तोकौं नँदरानी ।
भली बुद्धि तेरैं जिय उपजी, बड़ी बैस अब भई सयानी ।
ढोटा एक भयौ कैसैँहु करि, कौन कौन करबर बिधि भानी ।
क्रम-क्रम करि अब लौं उबरयौ है, ताकौं[3] मारि पितर दै पानी !
≠ को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठै आनी ।

(ना) देवगंधार । (कां) (रा) बिलावल ।
प्रीतम नहिं कोऊ—१, १५ ।
यह चरण (ना, स, के, में नहीं है ।
इस चरण के उपरांत कुछ में ये दो चरण और हैं—
सुकुमार मनोहर मूरति ताहि करति तू ताम ।
ये सुनि ग्वालि, जगत के बोहित पतितपावन है नाम ॥
% यह चरण (ना, का, कां, रा, श्या) में नहीं है ।
② हैं जग के बिस्राम—१, ३, ४, ११, १५, १७ ।
※ (ना) कल्यान ।
† यह पद (व्र, कां, श्या) में नहीं है ।
③ ताकौं मारति निरदइ बानी — २ ।
≠ (के, पू) में इस चरण के उपरांत ये तीन चरण मिलते हैं—
बहुतै कहि कहि हम पचिहारीं चलीं घरनि बिरुझानी ।
जसुदा हठ कीयौ बहु भारी कह्यौ न काहू मानी ।
सूर स्याम निजु सैन बतायौ, ग्वारिनि तुम जिनि जाहु रिसानी ।

सुनहु सूर कहि-कहि पचिहारीँ, जुवती चलीँ घरनि बिरुझानी॥२६८॥९८६

* राग सारंग

† हलधर सौँ कहि ग्वालि सुनायौ।
प्रातहिँ तैँ तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ।
काहू के लरिकहिँ हरि मारयौ, भोरहिँ आनि तिनहिँ गुहरायौ।
तबहीँ तैँ बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौँ आनि जनायौ[१]।
हम बरजी, बरज्यौ नहिँ मानति, सुनतहिँ बल आतुर ह्वै धायौ।
सूर स्याम बैठे ऊखल लगि,[२] माता उर तनु अतिहिँ त्रसायौ॥२६९॥९८७

* राग सारंग

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए[३]।
देखि स्याम ऊखल सौँ बाँधे, तबहीँ दोउ लोचन भरि आए।
मैँ बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए।
स्यामहिँ छोरि मोहिँ बाँधै बरु, निकसत सगुन भले नहिँ पाए।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा, तिनके भुज मोहिँ बँधे दिखाए।
माता सौँ कह करौँ ढिठाई, सो[४] सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत[५] पाए॥२७०॥९८८

---

* (ना) कल्यान। (क) ...ी।
† यह पद (पू) में नहीं।
(१) सुनायै।—२, ६। (२) लखि माता डरनि अतिहिँ तरसायै।—२।
* (ना) रामकली।
(३) आए—२, ३, ६, १४, १७। (४) सेष रूप—१, ३, ११, १२, १३। सिंह—२। (५) आए—१, ११, १२। मत आ ३, ६, १७। ह्वै आए—१४।